परस्त्री

परस्त्री

विमल मित्र



राजकमल प्रकाशन
दिल्ली • पटना

समर्पण

बन्धुवर डा० पशुपति राय, एम०बी०—

पशुपति भाई, 'आसामी हाजिर' के लेखन की परिश्रान्ति से जब मैं मृतप्राय हो उठा था, उस समय तुम्हारी निस्वार्थ चिकित्सा ने मुझे फिर से कार्य करने की क्षमता प्रदान की। उसी के फलस्वरूप 'परस्त्री' का लेखन सम्भव हुआ। उस कृतज्ञता की स्वीकृति को इस पुस्तक के साथ लिखित रूप में सम्बद्ध करने के लिए तुम्हें ही यह पुस्तक समर्पित की है। इति २१ अगस्त, १९७४।

तुम्हारा
विमल मित्र

परस्त्री

मौत के पहले मनुष्य क्या सोचता है? कौन-सी बात उसके मन में पैदा होती है? वह क्या फिर नये प्रकार से जीवित रहना चाहता है? वह क्या फिर से नये रूप से शुरू करना चाहता है अपनी जिन्दगी? वह क्या फिर से वापस पाना चाहता है अपना यौवन? जो दु:ख, जो शोक, जो यन्त्रणा वह सारे जीवन भोग करता आया है उसी दु:ख-शोक-यन्त्रणा में वह क्या फिर नये क्रम से चक्कर लगाने को राजी होता है?

जीवन में जिस प्रकार दु:ख है उसी प्रकार सुख भी तो है। शोक जैसे है वैसे ही आराम भी है। और जैसे यन्त्रणा है वैसे ही है आनन्द।

इतने दिनों के बाद सुललित से भेंट होगी, यह मैंने सोचा नहीं था।

और भेंट होने के बाद उसकी ऐसी मर्मान्तिक परिणति भी मुझे देखनी होगी, यह भी मैंने सोचा नहीं था।

मैं घर-गिरिस्ती का मनुष्य हूँ। वर्तमान को बचाकर भविष्य सोचकर काम करता हूँ। ऐसा कोई काम नहीं करता जिससे लोक-समाज के सामने मुझे लज्जित होने का कारण पैदा हो। अर्थात् मैं कीचड़ बचाकर रास्ते में चलता हूँ। बस के लोहे के खोंचे से मेरे कपड़े न फट जायें इसलिए बस में बैठने और उससे उतरने के समय सतर्क रहता हूँ। कहीं जेब न कट जाये इसलिए चारों तरफ नजर रखता हूँ। लेकिन कहाँ मेरा धर्म बचा कहाँ नहीं बचा यह तो मैं नहीं देखता। कहाँ सत्य बचा कहाँ नहीं बचा उस तरफ तो मैं नजर नहीं रखता।

लेकिन ये सब बातें करना आज के जुग में शायद अन्याय है। आज के जुग में हमारे समान व्यक्ति के लिए अपने अस्तित्व की रक्षा कर लेना ही ऐसी जिम्मेदारी हो गयी है कि सत्य बचा या नहीं, धर्म की रक्षा हो पायी या नहीं

यह ख्याल हम रक्खें कब ?

और मेरा दोस्त ? मेरा दोस्त सुललित ?

सुललित की बात कहने के लिए ही मैं आज यह कहानी लिख रहा हूँ सुललित चैटर्जी। अर्थात् सुललित चट्टोपाध्याय।

सुललित चट्टोपाध्याय शायद इस जुग की जिज्ञासा है। माने नोट-आफ-इंटेरोगेशन।

इस जुग का कुछ भी पसन्द न आता सुललित को। बीच-बीच में वह कहता—तुम लोग कनपटी में इतनी बड़ी कलम क्यों रखते हो रे ?

हम लोग इसके जवाब में क्या बोलते ! मैं सिर्फ कहता—इस ज़माने में कलम रखने का फैशन जो है, सभी तो कलम रखते हैं—

सुललित कहता—सब रखते हैं तो तुम लोग भी रखोगे ?

हम लोग चुप रह जाते। इसका जवाब हमारे मुँह में नहीं आता। मुहल्ले के सब लड़के जिस डिजाइन के पैंट-शर्ट पहनते, हम भी वैसा ही पहनते। लेकिन सुललित मानो मगरमच्छ के समान उसका प्रतिवाद था।

सुललित कहता—इसी तरह बंगाली एक दिन मिट्टी में मिल जायेंगे, देखना—

बंगालियों के मिट्टी में मिल जाने पर मानो सुललित के माथे पर गाज गिर पड़ेगी। देश के मनुष्य का कुछ खराब हुआ तो मानो उसका ही सर्वनाश होगा। सो उसी सुललित से इतने दिनों के बाद इस हालत में भेंट हो जायेगी, यह जिस तरह मैंने नहीं सोचा था, सुललित भी उसी प्रकार कल्पना नहीं कर सका था।

और भेंट भी हुई अन्त में तो लखनऊ शहर की एक गली में।

मुझे मानो एक तरह का सन्देह हुआ था। नजदीक जाकर मैंने पूछा—आपका नाम क्या सुललित चट्टोपाध्याय है ?

सुललित ने कहा—हाँ, लेकिन......

मैंने ज्यों ही अपना नाम बताया, वह मेरी तरफ मुँह फाड़कर, ताककर देखता रह गया।

लेकिन मैं भी उस समय सुललित की तरफ एक दृष्टि से ताककर देखता रहा था। वही सुललित, जो हमारी इतनी बड़ी जुल्फें रखने का विरोध करता, उसने खुद ही तो इतनी बड़ी दाढ़ी-मूँछें रख ली हैं ! और यह कैसा चेहरा हो गया है उसका ?

थोड़ी देर के बाद मानो मुझे पहचान पाया सुललित।

उसने पूछा—तुम यहाँ ?

उलटकर प्रश्न किया मैंने ही। मैं बोला—लेकिन तुम ? तुम ही आखिर यहाँ क्यों हो ?

सुललित बोला—यहाँ आने का मेरा एक कारण है। लेकिन वह बात तो रास्ते में खड़े होकर कही नहीं जा सकेगी।

मैंने पूछा—तुम्हारा आफिस कहाँ है?

सुललित बोला—आफिस? आफिस तो है नहीं? आफिस कैसे रहेगा? मैंने तो नौकरी छोड़ दी है—

मैं बोला—यह क्या? सुना था तुम तो नौकरी करते थे। बिलासपुर में या कहीं रहते थे!

—हाँ, वहीं रहता था। लेकिन अब मेरी वह नौकरी नहीं है, मैंने नौकरी छोड़ जो दी है—

—तो फिर अब क्या करते हो?

—कुछ भी नहीं करता।

बोलते-बोलते सुललित का मुँह जाने कैसा तो फीका पड़ गया। रास्ते में चारों तरफ गाड़ी-घोड़े, लोगों की भीड़-भाड़, सुललित मानो उन सबके नीचे दब-सा गया। सुललित को देखकर लगा मानो वह सिर से पैर तक बदल गया है। उसका पहले का-सा चेहरा भी अब नहीं रह गया है, अपना वह मन भी मानो उसने उसी तरह खो दिया है।

मैं बोला—लेकिन नौकरी छोड़ी क्यों तुमने? तुमने खुद नौकरी छोड़ी, या आफिस ने तुम्हें नौकरी से निकाल दिया?

सुललित बोला—मैंने खुद ही नौकरी छोड़ दी है—

—क्यों?

सुललित बोला—मैंने झूठ बात कही थी—

बात सुनकर मैं स्तम्भित उसकी तरफ देखता रह गया। जो झूठ बोलता है उसे आफिस ही तो नौकरी से छुड़ा देता है, वह खुद क्यों नौकरी छोड़ेगा? तब क्या उसके झूठे आचरण की बात खुल गयी थी?

—तुम तो गवर्नमेंट के एंटी करप्शन में नौकरी करते थे?

सुललित बोला—हाँ, घूस पकड़ने की नौकरी। सरकारी नौकरों का घूस देना-लेना सबकुछ बन्द करना ही मेरा काम था। लेकिन ऐसा एक मामला आ गया जिसके बाद मैं नौकरी में रह नहीं सका—

मैं बोला—तो अब क्या करते हो?

—कुछ भी नहीं।

—तो फिर यहाँ लखनऊ में क्यों आये?

सुललित बोला—मैं तो अब यहीं रहता हूँ।

—तुम्हारे साथ यहाँ कौन रहता है?

सुललित बोला—मेरा भगीरथ।

.ही भगीरथ ! भगीरथ की वात भी याद आयी । छुटपन म

. देखा था भगीरथ को । भगीरथ था चैटर्जी के घर का पुराना नौकर । , में नौकर होने पर भी वह नौकर नहीं था । भगीरथ की इज्जत थी उस में ।

मैंने पूछा—अव फिर तुमसे कव भेंट होगी ?

सुललित ने पूछा—तुम कहाँ रहते हो ?

मेरा पता सुनकर सुललित शायद कुछ चिन्ता में पड़ गया । मैंने कहा—झे तुम सव समय नहीं पाओगे । आफिस के काम से मैं लखनऊ आया हूँ, कव कहाँ रहूँगा, इसका कुछ ठीक नहीं है, इसके वदले तुम अपना पता वताओ, मैं हीं एक दिन आऊँगा—

इतने दिनों के वाद सुललित से भेंट हुई । मेरे मन में उससे भेंट करने के लिए वड़ा कौतूहल था । जिस सुललित को हम छुटपन से देखते आये, जिसे वरावर हम लोगों ने अपने से ज्ञान-गुण-चरित्रवल में वड़ा माना है उसी सुललित की यह परिणति देखकर उसके वारे में वहुत-कुछ जानने का आग्रह हो रहा था ।

सुललित का मन शायद अपने घर का पता देने का नहीं था । लगा, शाय उसके मन में कुछ संकोच है ।

उसके वाद उसके अपना पता वताते ही मैंने कहा—कव रहते हो तुम में ?

सुललित बोला—मैं सव समय रहता हूँ—कल ही आओ न—

—ठीक है—यह कहकर मैं चला आ रहा था । दो-चार पल में पीछे कर मैंने देखा, सुललित अपने में डूवा फिर सामने वढ़ा जा रहा है । लं कुछ कुवड़े के समान झुका हुआ चल रहा है । कहाँ गया उसका लम्वा कद ? शरीर के कपड़े भी मैले-मैले । पाजामा भी मानो कुछ फटा-फटा-स के जूते—उन पर भी मानो धूल जमी हुई, तमाम दिनों से उन पर पालि हुई थी ।

सुललित को देखते-देखते तमाम वातें मुझे याद आने लगीं । यही सुललित है ? इसी सुललित के लिए क्या हमारे स्कूल के मास्टर को था ? इसी सुललित को क्या हमने अपने क्लव का प्रेसिडेंट वनाया सुललित क्या हम सव दोस्तों में आदर्श था ?

सोच-सोचकर मैं कुछ भी ठीक नहीं कर पा रहा था । क्यों ऐ ऐसा क्या हुआ था जिसके लिए सुललित को झूठ वोलना पड़ा ? व झूठी वात है ? और झूठ तो हम सव सारे जीवन वोलते चले आ र सिद्धि के लिए हम मामूली मनुष्य तो रोज ही झूठ वोलते हैं । झू वात दूर रही, प्रकारान्तर से हम कितने ही खून भी तो करते हैं ।

तो कोई भी नौकरी नहीं छोड़ता। घूस लेकर परम परितृप्ति से हम खाते-पीते, सोते हैं। हमारी तो उससे कहीं मन की शान्ति में बाधा नहीं पड़ती। लेकिन मुलत्लित का मन एक मामूली झूठ बोल देने पर ही इतना मलिन हो गया कि उसने नौकरी ही छोड़ दी! अपने किये अपराध के लिए अपने सिर पर को. इतनी बड़ी सजा का भार उठा लेता है?

तमाम सोचकर भी मैं कुछ भी ठीक नहीं कर सका। उसके बाद मैं अपने ठिकाने के रास्ते से चलने लगा।

शेष के बाद जैसे अशेष रहता है उसी तरह आरम्भ के पहले भी रहती है एक भूमिका। इस उपन्यास की उसी भूमिका में एक बात कह रक्खूं। कुछ पाठक ऐसे होते हैं जो शुरू करते ही एकदम आखिरी पत्ता तक पढ़ डालते हैं। लेकिन मैं कहता हूँ तीर्थयात्रा का तीर्थ ही यदि असल हो तो यात्रा क्या कुछ कम असल है? यात्रा किये बिना हम तीर्थ तक पहुँचेंगे कैसे? आइए, यह भूमिका छोड़कर हम अब यात्रा शुरू करें। अर्थात् मुलत्लित के जीवन के यात्रारम्भ से—

बचपन से हममें से सबके मन में एक ही चिन्ता प्रबल रूप से हम सबको कष्ट देती है। वह चिन्ता हुई आत्मरक्षा, छोटा बच्चा पैदा होते ही रो उठता है। उसे डर लगता है कि कोई मानो उसे मारने आ रहा है। वह असहाय है। वह निराश्रय है। वह अकेला है। आत्मरक्षा के तकाजे से वह रो पड़कर सहायता चाहता है, आश्रय चाहता है, एक का साथ चाहता है।

यह तो हुआ बचपन का मामला।

लेकिन जितने दिनों मनुष्य जीवित रहता है उतने ही दिनों उसकी यही आत्मरक्षा की समस्या है। उतने दिनों ही वह असहाय है, उतने दिनों ही वह निराश्रय है, उतने दिनों ही वह अकेला है, उतने दिनो ही उसका अपना कोई नहीं होता।

इसीलिए एक अंगरेज कवि ने कहा है—एक-एक मनुष्य एक-एक द्वीप के समान है। द्वीप के चारों तरफ जैसे पानी रहता है, मनुष्य के चारों तरफ भी उसी प्रकार रहती है शून्यता। इसीलिए सीमाहीन शून्यता में से मनुष्य अपना निजी अस्तित्व टिकाकर रखने के लिए सारे जीवन संग्राम करता रहता है।

मुलत्लित कहता—पृथ्वी की समस्त मनुष्यजाति की यही हुई अमोघ विधि-लिपि—

हम सब जब अपने छोटे-छोटे घेरे में सुख-दुःख की छोटी-छोटी समस्या लेकर डूबते-उतराते, अपने पढ़ने-लिखने या अपनी नौकरी के प्रोमोशन-डिमोशन की

कर आकाश-पाताल की दौड़ लगाते, अन्याय के साथ समझौता कर...
...त के ऊँचे शिखर पर चढ़ने के लिए प्रतियोगिता की मृग-मरीचिका में
करते तव सुललित हँसता। हमारी छोटी इच्छाओं की माप-जोख
वह करुणा की हँसी हँसता।

...हता—तुम लोग वहुत छोटी चीज के पीछे पगला गये हो रे—

...ौर कहता—देखो, छोटे में सुख नहीं है, है वृहत् में—

...ुम लोग सुललित की वात समझ न पाते। कहते—वृहत् माने?

सुललित कहता—वृहत् माने विराट्।

हम लोग और भी अवाक् हो जाते। कहते—विराट् माने?

सुललित कहता—न, तुम लोगों से अव वात नहीं करूँगा। तुम लोग कु... पढ़ोगे नहीं, कुछ भी समझोगे नहीं, तो फिर मुझसे वात करने क्यों आते हो?

सुललित ये सव वातें कहता जरूर, लेकिन हम लोगों से मिले-जुले बिना ...ह भी नहीं पाता।

पृथ्वी के मनुष्य के सामने सुललित की सवसे वड़ी अधिकार-घोषणा थी ...तता। वचपन से ही सुललित चाहता सव सत् हों।

इस जुग में यह एक जिद ही तो है! जव संसार के सवकुछ में मिलावट है तव हम लोग माने समान उम्र के हम सव सत् कैसे रह पायेंगे?

हम लोग देखते चारों तरफ जैसे भी हो सव अपना-अपना मतलव ह... करने में लगे हैं। कोई खुशामद करके, या कोई घूस देकर—काम सफल कर... ही इस जुग में सवका व्रत है। कहा जाये तो हम सव आपस के लोग उ... कौशल से काम वनाने का व्रतपालन कर रहे थे। हम वड़ा आदमी दे... ही उसकी ज्यादा खातिर करते। हमारे आत्मीयों में से जिनके पास रुपय... गाड़ी है, वड़ा घर है, क्षमता है, नाम है, हम उसकी ज्यादा खातिर करते। हमारे आत्मीयों में से जो लोग मामूली वावूगिरी श्रेणी के हैं, जिनका नाम... से कोई पहचानता नहीं, उनके घर हम भूलकर भी नहीं जाते। यह सव... किसी ने सिखाया नहीं। चारों तरफ की आवहवा देखकर ही हम सम... थे कि जीवन में उन्नति करने के लिए खूंटी का जोर रहना जरूरी है वड़े आदमी ही हुए यह खूंटी।

असल में सुललित को भी हम उस समय एक खूंटी के समान सुललित के परिवार के लोग सात पुरखों से वड़े आदमी थे। सात वड़े आदमी के समान टिके रहना सहज वात नहीं है। लेकिन सु... परिवार उस समय भी टिका था।

सुललित का घर इस किनारे से उस किनारे तक फैला था। श... डाल-पत्तों से भरा हुआ। एकतल्ले में विराट् एक वैठकखाना था। ह...

सुललित से परिचित हुए तब उस बैठकखाने में उतनी चमक-दमक नहीं रही थी। सारे कमरे के काठ के फर्श पर एक फटी हुई शतरंजी बिछी रहती। उस पर धूल जमी रहती एक इंच। हम लोग उसी शतरंजी पर आकर बैठते। और कैरम बोर्ड खेलते। दोपहर को गर्मी के मारे हम सब पसीने-पसीने हो उठते। लेकिन उस समय छत पर एक पंखा भी नहीं था। किसी समय शायद पंखा था, लेकिन पंखा रखना गैरजरूरी मानकर उसे कोई हिस्सेदार उठा ले गया था। इतने बड़े बैठक-खाने में उस समय सिर्फ पंखा न रहा हो इतना ही नहीं, तमाम कुछ नहीं था। एक समय घर के मालिकों की आयलपेंटिंग दीवालों में टंगी रहती। मालिक लोग वहाँ बैठकर हुक्के की नली मुँह में लगाये गाव-तकिये के सहारे बैठे टिककर बैठे हुए दावा खेलते। एक पुश्त के बाद और एक पुश्त आयी, और उस बैठक-खाने का स्वरूप बदल गया। हुक्के की गड़गड़ी से आया सिगरेट। दावा से आखिर में गप-शप। एक जमाने में जहाँ वेतनभोगी पण्डितों ने आकर मालिकों को गीता पाठ करके सुनाया है, अखबार पढ़कर सुना गये हैं, वहीं उस समय मोटी एक तह धूल जम गयी है। मालिक तब बुढ़ापे के भार से एकतल्ले के बैठकखाने में उतर नहीं पाते थे। वे सब अपने-अपने कमरों की चारपाई पर पड़े-पड़े सोये हुए अतीत की स्मृति की जुगाली करते और आयुर्वेदी मकरध्वज खाकर परमायु बढ़ाने की चेष्टा करते। और परिवार के शामिल-शरीक छोकरे उस समय उसी बैठकखाने में बैठे मोहनबागान और ईस्ट बंगाल के फुटबाल खेल के तर्क-वितर्क में मशगूल छत कँपा देते।

ऐसा ही होता है। इसी प्रकार सुललित का घर हिस्से-हिस्से में टुकड़े-टुकड़े में बँटकर भी बाहर के ठाट की रक्षा किये हुए चल रहा था। इन्हीं तमाम भागों में से एक भाग का मालिक सुललित हम सबके साथ अपने बैठकखाने में बैठा कैरम बोर्ड खेलता। खेलते-खेलते अगर किसी खेल में हो-हल्ला हुआ है तो भीतर से दूसरे किसी हिस्सेदार के नौकर ने आकर सावधान कर दिया है। कहा है—दादा बाबू, बड़े बाबू गोलमाल करने को मना करते हैं—

बड़े बाबू! बड़े बाबू नाम सुनकर हम लोग समझ नहीं पाते उस समय।

पूछते—बड़े बाबू कौन हैं रे सुललित?

सुललित कहता—हमारे सँझले ताऊजी—

सिर्फ बड़े ताऊजी, मझले ताऊजी, सँझले ताऊजी नहीं, सुललित के कितने ताऊ और कितने चाचा थे इसका ठिकाना नहीं था। कहना होगा कि सबके नाम या चेहरे याद रखना भी मुश्किल था हमारे लिए।

हम लोग बराबर उन लोगों के घर को शक्तिधर चाटुज्जे का घर ही समझते। आदि पूर्वपुरुष कोई अवश्य थे इस नाम के। लेकिन हमने उन्हें देखा नहीं। शक्तिधर चाटुज्जे ऐसे कोई महापुरुष नहीं थे। वे ऐसी कोई महाकीर्ति फैला

नहीं गये जिससे हमारे कानों में उनकी कीर्ति-कहानी भर उठती। लेकिन एक काम उन्होंने जी-जान लगाकर किया—वह हुआ धन जमाना। उस युग में वे इतना रुपया कमाकर जमा कर गये थे कि यह कथा प्रायः किंवदन्ती के समान फैल गयी थी। दो-एक किंवदन्तियाँ हमने भी सुनी हैं। जैसे वे रुपयों के बिछौने पर सोते थे। रुपयों का बिस्तर कैसा होता है? माने उनके पास इतना रुपया था कि सन्दूकों में नहीं समाता। तब शायद बैंकों की इतनी चलन नहीं थी। कच्चा रुपया सब। अर्थात् चाँदी का रुपया। रुपये तोशक के नीचे बिछा देते, उसके ऊपर चित्त पड़े रहते। किसी प्रकार की फिजूलखर्ची भी नहीं थी शक्तिधर चाटुज्जे में। बड़े आदमियों में कितने ही प्रकार के बदख्याल रहते हैं। कितने ही प्रकार के नशे-भांग का अभ्यास रहता है। वह भी कुछ नहीं था। दान-ध्यान की मंगल धारणा भी नहीं थी उनमें। जो हाथ में आता वह सब हाथ में आकर जमा हो जाता।

असल में रुपया भी उन्होंने भगवान् के आशीर्वाद से पाया था। बुरे लोग तमाम तरह की बातें करते। कोई कहता, वे शायद कहीं पड़ा हुआ पर-धन पा गये हैं। बड़े बाजार के एक मारवाड़ी की गद्दी में तीन रुपये माहवारी पर बैठे हुए वे खाता लिखने में रमे हुए थे। हठात् कहीं से एक साधु आकर हाजिर हो गये।

साधु जटाजूटधारी थे। यह लम्बा-चौड़ा चेहरा। वे बोले—बाबूजी—

शक्तिधर चाटुज्जे हिसाब-किताब से मुंह उठाकर साधु को देखते ही अवाक् रह गये।

बोले—क्या बाबा?

साधु ने कहा—मेरी यह पोटली अपने पास रख लेगा बाबा, मैं गंगा से स्नान करके आऊँगा।

शक्तिधर चाटुज्जे बोले—तो रखिए न बाबा, मैं यहाँ शाम तक हूँ—

साधु निश्चिन्त मन से स्नान करने चले गये। लेकिन गये सो गये। सवेरा बीता, दुपहर बीती, साँझ बीती—साधु फिर लौटे नहीं। मारवाड़ी की दुकान में खाता लिखने का काम। उस काम में समय का माप-जोख नहीं है। अन्त में जब रात को आठ बजे गये तब फिर और देरी न कर सके शक्तिधर। वे चिन्ता में पड़े। गद्दी-घर का दरबान आया बत्ती बुझाने। तब वे उठे। सोचा, पोटली घर लेते जायें। उसके बाद कल जब साधु लौट आयेंगे उस समय लौटा देने से ही काम चल जायेगा।

लेकिन घर में पोटली ले आने पर कैसा कौतूहल हुआ कौन जाने! वे उसे खोलकर, देखकर अवाक् रह गये। साधु की पोटली में साधारणतः आखिर रहता ही क्या है। कुछ भीख माँगा हुआ चावल, दो अन्नियाँ अथवा दुअन्नी

और हुई तो दो हड्डें। इसके बाद भी और कुछ हो तो एक फटा मैला गेरुए रंग का पहनने का कपड़ा।

लेकिन नहीं, शक्तिधर चाटुज्जे के बेहोश हो जाने की हालत हो गयी। उन्होंने देखा, पोटली के भीतर थक्की-थक्की नोट हैं। करेन्सी नोट। एक सौ रुपये के नोट थक्की-थक्की में सजे हुए!

पहले शक्तिधर को कुछ लोभ हुआ।

सोचा, रुपये वे ले लेंगे। किसी से यह बात नहीं बतायेंगे। दबा ही जायेंगे प्रसंग। मानो कुछ भी नहीं हुआ, कोई घटना ही नहीं घटी।

लेकिन उसके बाद ही सुमति ने उनका माथा ऊपर उठा दिया। डर भी लगा उन्हें। साधु-संन्यासी मनुष्य के कोपानल में पड़ने पर शायद उनका असली भविष्य ही न नष्ट हो जाये। अन्त में जो कुछ है वह भी न चला जाये। उसके बदले आशीर्वाद पा लेना ही अच्छा है।

दूसरे दिन वे फिर गद्दी-घर गये। गये पोटली संग लेकर। सोचा, साधु जी के आने पर उनकी पोटली उन्हें ही लौटाल देंगे।

लेकिन सारे दिन रास्ता देखने पर भी साधुजी नहीं आये।

उसके दूसरे दिन भी नहीं आये। और उसके दूसरे दिन भी नहीं।

अन्त में क्या करें कुछ ठीक नहीं कर पाये। एक महीना कट गया। उसके छह महीने भी बीत गये। उसके बाद सोचा, साधुजी शायद उन्हें रुपया दे ही गये हैं। असल में शायद स्वयं भगवान् ही साधुजी के वेश में उनके पास आकर रुपया उन्हें दान कर गये हैं। रुपये पर उनका ही सोलहो आने अधिकार है। वह रुपया उनका ही रुपया है। वह रुपया उनका जैसा मन हो उसी तरह वे खर्च करेंगे। उसके लिए किसी के सामने जवाबदेही करने की जरूरत नहीं है उन्हें।

सो आखिर में रुपया उनका ही हो गया।

यह सब हमारी सुनी हुई बात है। सुललित का विराट् घर जिन्होंने देखा है वे ही यह किंवदन्ती जानते थे। ईश्वर के आशीर्वाद के बिना इतना ऐश्वर्य भी जैसे किसी को नहीं होता, और ईश्वर के अभिशाप के बिना इतनी दुर्दशा भी शायद किसी की नहीं होती।

नहीं तो सुललित की इतनी दुर्दशा ही आखिर क्यों हुई?

सुललित के पूर्वपुरुष शक्तिधर चाटुज्जे बड़े आराम से ही दिन काट गये हैं। घर में बड़े समारोह से अन्नपूर्णा-पूजा होती उस जुग में। उस पूजा में हो न हो मुहल्ले-भर के लोगों को झाड़कर न्यौता दिया जाता। सब लोग चाटुज्जे परिवार में पेट भरकर टैंपुर का प्रसाद खाकर लौटते और धन्य-धन्य कहते सुललित को। सब

ईर्ष्या करते सुललित-परिवार पर, सबका सुललित-परिवार के समान बड़े होने का मन करता।

सुललित के बचपन में भी उस ऐश्वर्य का बहुत-कुछ बाकी था। नहीं-नहीं कर-करके भी उस समय भी घटा होती खूब। दूसरे सब दोस्तों के साथ में भी उसके घर में न्यौता खाने जाता। बीस-इक्कीस प्रकार की शाकाहारी तरकारी। कौन-सी छोड़कर कौन-सी खायें, यही होती हमारी चिन्ता। उसके बाद ठाकुर-विसर्जन होता गंगा में।

याद है एक घटना से हम लोग खूब विचलित हुए थे उस समय। उस बार अन्नपूर्णा-पूजा में चार-पाँच सौ लोग घर में आये और खा गये। तीसरे पहर से खाना शुरू हुआ था, उसके बाद रात को ग्यारह बजे तक वही खाने की भीड़। खाने के लिए कहना होगा कि सुललित के घर में लाइन लग जाती।

उस समय सब खाने में मगन थे। हठात् नीचे हो-हल्ले की आवाज से लोग चमक उठे। जाने कौन किसी को चिल्ला-चिल्लाकर बक-झक कर रहा है। खाते-खाते सब झाँककर नीचे मुँह बढ़ाकर देखने लगे। लेकिन कुछ भी देख सकने का उपाय नहीं था। चारों तरफ पाल ढँके थे।

और सब जो वहाँ थे वे घटना देखने को दौड़ पड़े। कौन? कौन किसको मार रहा है? हुड़हुड़ाकर सब सीढ़ियों से नीचे उतरने लगे।

नीचे उस समय अवाक् काण्ड; मझले बाबू एक भले आदमी को पकड़कर मुट्ठी बाँधे चाँटे-घूँसे जमाये जा रहे हैं। भला आदमी बढ़िया साज-पोशाक पहने था।

मझले बाबू की बात लेकर कौन और बोलेगा? एक-एक घूँसा मार रहे हैं मझले बाबू और वह आदमी पीछे हट-हटकर अपने को बचा ले रहा है। अधेड़ उमर का था वह। सिर और कनपटी के बाल थोड़े-थोड़े पक रहे थे।

लेकिन सब यह सोचकर अवाक् रह गये कि इतने लोगों के होते हुए इनको मार क्यों रहे हैं मझले बाबू? क्या किया है इन्होंने?

यह एकतरफा मार-पीट जिस समय चल रही थी उस समय आसपास के सब खड़े-खड़े बड़ा मजा लूट रहे थे। मानो किसी को कुछ करना नहीं है, किसी को कुछ बोलने या करने का अधिकार भी नहीं है।

हठात् कहाँ था सुललित! वह काण्ड सुनकर दौड़ आया। आते ही मझले बाबू को एकदम सरासर चैलेंज किया उसने। बोला—उसे मार क्यों रहे हो काका? उसने क्या किया है?

मझले बाबू ने कहा—तू ठहर—

सुललित भी वैसा ही है। वह बोल उठा—वाह रे, मैं ठहरूँगा क्यों? तुम उसे मार डालोगे और मैं चुप रह जाऊँगा?

मझले बाबू ने कहा—हाँ, उसे मैं मार ही डालूँगा—

सुललित बोला—ना, मैं उसे मार डालने नहीं दूँगा। उसने अगर कोई अपराध किया हो तो उसे पकड़कर तुम पुलिस को दे दो—मारोगे क्यों?

मझले बाबू ने कहा—अच्छा करूँगा, मैं मारूँगा—

सुललित छाती फुलाकर खड़ा हुआ। बोला—ना, तुम फिजूल-फिजूल उसे मार नहीं पाओगे, उसने क्या किया है यह पहले मुझसे बताना होगा—

—इसके माने? तेरा हुक्म मानकर चलना होगा क्या हमें?

सुललित ने कहा—नहीं, ऐसा क्यों होगा? पहले उसने क्या किया है, यही मुझसे बताना होगा—

मझले बाबू बोले—क्या किया है उसने, यह तू उससे ही पूछ न? वह तो तेरे सामने ही खड़ा है—

सुललित ने व्यक्ति से पूछा—आपने क्या किया है बोलिए तो?

इतनी देर के बाद भले आदमी को थोड़ी साँस लेने की फुरसत मिली। चादर से उसने मुँह का पसीना पोंछ लिया। मानो यहाँ से भाग सकने पर ही वह बच पायेगा।

—बोलिए? क्या किया है आपने, बोलिए?

भले आदमी की दोनों आँखें उस समय आँसुओं से छलछला उठी थीं। वह बोला—अब मैं ऐसा नहीं करूँगा सर, मुझे दया करके छोड़ दीजिए—

सुललित बोला—लेकिन क्या किया था आपने?

भला आदमी बोला—मैं भूख की जलन से यहाँ खाने आया था—

मझले बाबू बीच में धमका उठे—लेकिन किसने तुम्हें खाने का न्यौता दिया था?

—जी, मैं कह तो रहा हूँ, मैं भूख की ज्वाला सँभाल नहीं सका—

सुललित ने पूछा—तुम कहाँ रहते हो?

व्यक्ति ने कहा—श्यामबाजार में—

—श्यामबाजार में—

—श्यामबाजार से यहाँ इतनी दूर खाने आये हो?

भले आदमी ने कहा—हर साल तो आता हूँ, कोई मुझे पहले पकड़ नहीं पाया, इसीलिए इस बार भी आया हूँ—

मझले बाबू ने कहा—हर साल आते हो? तब तो तुम एक दागी आसामी हो, तुम्हें तो फाँसी मिलनी चाहिए—

उसके बाद सुललित ने किया क्या, वह उसे भीड़ से सबसे अलग सबके सामने से हटाकर बाहर निकाल ले गया। उसके बाद उसने एक पोटली में भात, तरकारी, मिठाई बाँधकर व्यक्ति के हाथों में दिया। फिर बोला—

जाओ, यह सब घर ले जाओ—फिर अगले वरस इसी दिन आना—

व्यक्ति की आँखों से उस समय और भी जोर से आँसू वह उठे। वह कहने लगा—मैं वहुत गरीब आदमी हूँ हुजूर, मुझे इस तरह लोभ मत दिखाइए—

सुललित वोला—तुम अकेले ही तो गरीव नहीं हो कलकत्ता में, कलकत्ता में तुम्हारे समान और भी तमाम गरीव हैं, उन सवकी तुम्हारी-सी ही दशा है।

व्यक्ति रोते-रोते वोला—उन सवकी वात अलहदा है—

—क्यों, अलहदा क्यों ?

व्यक्ति फिर रोने लगा। रोते-रोते वोला—जी, मेरी औरत के कैन्सर—

कैन्सर ? कैन्सर की वात सुनते ही सुललित का मुँह जाने कैसा फीका पड़ गया। वह कुछ ठहरकर वोला—ठीक है, तुम अव जाओ—

कहकर वह फिर वहाँ ठहरा नहीं।

कैन्सर। कैन्सर किसे कहते हैं यह सुललित जानता था, उसकी यन्त्रणा की वात भी जानता था। वह व्यक्ति भी सुललित से यह व्यवहार पाकर थोड़ा अवाक् हो गया था। ऐसा विपरीत व्यवहार भी वह पायेगा यह कल्पना तक वह नहीं कर सका था।

लेकिन उस व्यक्ति का जो भी हो, उस घटना को उस दिन प्रसन्न मन से मन में रख नहीं सके मझले वावू। यह तो वहुत-कुछ थप्पड़ मारकर थप्पड़ हजम करने का-सा मामला हो गया। जो आघात वाहर के व्यक्ति के पाने की वात थी वह मानो इसी घर पर आ लगा। और यह आघात मझले वावू को लगने के साथ-साथ ही उससे चाटुज्जे-भवन की पुरानी फटी छत में और एक छोटी दरार कर गया।

ऐसा ही होता है। एक दिन शक्तिधर चाटुज्जे के समान शक्तिधर पुरुप आकर एक वंश की प्रतिष्ठा कर गये और उस वंश की प्रतिष्ठा में शुरू से ही ध्वंस का वीज गड़ गया। उस समय से ही एक तरफ शुरू हुई वृद्धि और उसके आसपास ही शुरू होने लगा ध्वंस। पहले ध्वंस समझ में नहीं आ सका, वृद्धि की तेजोद्दीप्त डालों-पत्तों में छिपा वह एक किनारे के अँधेरे में ढँका पड़ा रहा। कालक्रम से जव वह तेज कम होने लगा तभी अन्धकार के फटे हिस्से से उसके किल्ले माथे पर चढ़कर सामने आ खड़े हुए। तभी सवकी नजर में आया कि जो देखा था वह पूरा सत्य नहीं है, आंशिक सत्य है।

सुललित के जीवन में भी यही घटा था। वचपन में जव किसी तरफ किसी की नजर नहीं रहती तव वह मन में सोचता था कि इस घर का सारा मालिकाना हक उसका है। उसमें और सवका जो अधिकार है वही अधिकार शायद उसका

भी है। इसीलिए जब जहाँ वह थोड़ा-सा भी अन्याय-अविचार देखता वहीं उसका प्रतिकार करने की चेष्टा करता।

लेकिन भीतर-भीतर कब वह सब बँट-बँटा गया इसकी खबर उसे नहीं लग पायी। घर की चौहद्दी के भीतर ताऊ-चाचा के वे सब लड़के खेलते-खेलते कब अनात्मीय हो गये यह वह जान नहीं सका।

अन्नपूर्णा-पूजा की उस घटना के दूसरे दिन ही मझले बाबू ने अपने निजी कमरे में सुललित को बुला भेजा।

सुललित जाकर खड़ा हुआ। पूछा उसने —मुझे तुम बुला रहे हो काका?

मझले काका का मुंह गम्भीर। गड़गड़ी की नली उस समय भी मुंह में लगी है।

वे बोले —देख, तुझसे एक बात कहने के लिए मैंने बुलाया है। अपनी नौकरानी को थोड़ा सावधान कर देना—

नौकरानी! नौकरानी को सावधान कर देना होगा सुललित को!

मझले बाबू ने कहा — न जाने क्या तुम्हारी नौकरानी का नाम है?

सुललित बोला—कौन-सी नौकरानी? घर में तो बहुतेरी नौकरानियाँ हैं—किसकी बात तुम कह रहे हो काका, मैं ठीक समझ नहीं पा रहा हूँ—

मझले काका ने कहा — लेकिन तुम लोगों की नौकरानी तो एक ही है।

—हम लोगों की एक नौकरानी?

—हाँ-हाँ, तुम्हारी दस नौकरानियाँ फिर कब हो गयीं? वह आँगन में मैला फेंक जाती है, हमारे आँगन में मैला फेंकने को उसे मना कर देना—

सुललित अवाक् हो गया मझले काका की बात सुनकर। घर की नौकरानी आँगन में मैला फेंके तो सुललित से कहने की क्या जरूरत? सीधे-सादे ढंग से एकदम सौदामिनी से ही कहा जा सकता है। मामला कुछ समझ नहीं पाया सुललित। माँ से जाकर उसने सब घटना सुनायी।

माँ ने कहा—देखो, यह बात लेकर तुम कुछ कहना मत, मझले मालिक ने जो कहा है ठीक ही तो कहा है। जहाँ-तहाँ आखिर वह मैला फेंकती ही क्यों है? मैं होती तो मैं भी तो यही कहती—

सुललित ने कहा—लेकिन यह बात मझले काका मुझसे क्यों कहने गये? सीधे-सीधे नौकरानी से भी तो कह सकते थे—

इस बात के जवाब में माँ ने और कुछ नहीं कहा।

रात को सन्दीपबाबू से यह बात उठायी उन्होंने। रात को ही कष्ट ज्यादा होता है सन्दीपबाबू को। सारी रात प्रायः जगते ही रहते हैं वे। कब रात बीते सिनेमा टूटने पर लोगों के चलने-फिरने की आवाज होती है, सब उनके कानों में सुनायी पड़ता है। उसके बाद घर में कब एक बजा, दो बजे, यह भी उनके

जाओ, यह सब घर ले जाओ—फिर अगले बरस इसी दिन आना—

व्यक्ति की आँखों से उस समय और भी जोर से आँसू बह उठे। वह कहने लगा—मैं बहुत गरीब आदमी हूँ हुजूर, मुझे इस तरह लोभ मत दिखाइए—

सुललित बोला—तुम अकेले ही तो गरीब नहीं हो कलकत्ता में, कलकत्ता में तुम्हारे समान और भी तमाम गरीब हैं, उन सबकी तुम्हारी-सी ही दशा है।

व्यक्ति रोते-रोते बोला—उन सबकी बात अलहदा है—

—क्यों, अलहदा क्यों ?

व्यक्ति फिर रोने लगा। रोते-रोते बोला—जी, मेरी औरत के कैन्सर—

कैंसर ? कैन्सर की बात सुनते ही सुललित का मुँह जाने कैसा फीका पड़ गया। वह कुछ ठहरकर बोला—ठीक है, तुम अब जाओ—

कहकर वह फिर वहाँ ठहरा नहीं।

कैन्सर। कैन्सर किसे कहते हैं यह सुललित जानता था, उसकी यन्त्रणा की बात भी जानता था। वह व्यक्ति भी सुललित से यह व्यवहार पाकर थोड़ा अवाक् हो गया था। ऐसा विपरीत व्यवहार भी वह पायेगा यह कल्पना तक वह नहीं कर सका था।

लेकिन उस व्यक्ति का जो भी हो, उस घटना को उस दिन प्रसन्न मन से मन में रख नहीं सके मझले बाबू। यह तो बहुत-कुछ थप्पड़ मारकर थप्पड़ हजम करने का-सा मामला हो गया। जो आघात बाहर के व्यक्ति के पाने की बात थी वह मानो इसी घर पर आ लगा। और यह आघात मझले बाबू को लगने के साथ-साथ ही उससे चाटुर्ज्जे-भवन की पुरानी फटी छत में और एक छोटी दरार कर गया।

ऐसा ही होता है। एक दिन शक्तिधर चाटुर्ज्जे के समान शक्तिधर पुरुष आकर एक वंश की प्रतिष्ठा कर गये और उस वंश की प्रतिष्ठा में शुरू से ही ध्वंस का बीज गड़ गया। उस समय से ही एक तरफ शुरू हुई वृद्धि और उसके आसपास ही शुरू होने लगा ध्वंस। पहले ध्वंस समझ में नहीं आ सका, वृद्धि की तेजोद्दीप्त डालों-पत्तों में छिपा वह एक किनारे के अँधेरे में ढँका पड़ा रहा। कालक्रम से जब वह तेज कम होने लगा तभी अन्धकार के फटे हिस्से से उसके किल्ले माथे पर चढ़कर सामने आ खड़े हुए। तभी सबकी नजर में आया कि जो देखा था वह पूरा सत्य नहीं है, आंशिक सत्य है।

सुललित के जीवन में भी यही घटा था। बचपन में जब किसी तरफ किसी की नजर नहीं रहती तब वह मन में सोचता था कि इस घर का सारा मालिकाना हक उसका है। उसमें और सबका जो अधिकार है वही अधिकार शायद उसका

भी है। इसीलिए जब जहाँ वह थोड़ा-सा भी अन्याय-अविचार देखता वहीं उसका प्रतिकार करने की चेष्टा करता।

लेकिन भीतर-भीतर कब वह सब बँट-बँटा गया इसकी खबर उसे नहीं लग पायी। घर की चौहद्दी के भीतर ताऊ-चाचा के वे सब लड़के खेलते-खेलते कब अनात्मीय हो गये यह वह जान नहीं सका।

अन्नपूर्णा-पूजा की उस घटना के दूसरे दिन ही मझले बाबू ने अपने निजी कमरे में सुललित को बुला भेजा।

सुललित जाकर खड़ा हुआ। पूछा उसने —मुझे तुम बुला रहे हो काका?

मझले काका का मुँह गम्भीर। गडगडी की नली उस समय भी मुँह में लगी है।

वे बोले —देख, तुझसे एक बात कहने के लिए मैंने बुलाया है। अपनी नौकरानी को थोड़ा सावधान कर देना—

नौकरानी! नौकरानी को सावधान कर देना होगा सुललित को!

मझले बाबू ने कहा — न जाने क्या तुम्हारी नौकरानी का नाम है?

सुललित बोला—कौन-सी नौकरानी? घर में तो बहुतेरी नौकरानियाँ हैं—किसकी बात तुम कह रहे हो काका, मैं ठीक समझ नहीं पा रहा हूँ—

मझले काका ने कहा — लेकिन तुम लोगों की नौकरानी तो एक ही है।

—हम लोगों की एक नौकरानी?

—हाँ-हाँ, तुम्हारी दस नौकरानियाँ फिर कब हो गयी? वह आँगन में मैला फेंक जाती है, हमारे आँगन में मैला फेंकने को उसे मना कर देना—

सुललित अवाक् हो गया मझले काका की बात सुनकर। घर की नौकरानी आँगन में मैला फेंके तो सुललित से कहने की क्या जरूरत? सीधे-सादे ढंग से एकदम सौदामिनी से ही कहा जा सकता है। मामला कुछ समझ नहीं पाया सुललित। माँ से जाकर उसने सब घटना सुनायी।

माँ ने कहा—देखो, यह बात लेकर तुम कुछ कहना मत, मझले मालिक ने जो कहा है ठीक ही तो कहा है। जहाँ-तहाँ आखिर वह मैला फेंकती ही क्यों है? मैं होती तो मैं भी तो यही कहती—

सुललित ने कहा—लेकिन यह बात मझले काका मुझसे क्यों कहने गये? सीधे-सीधे नौकरानी से भी तो कह सकते थे—

इस बात के जवाब में माँ ने और कुछ नहीं कहा।

रात को सन्दीपबाबू से यह बात उठायी उन्होंने। रात को ही कष्ट ज्यादा होता है सन्दीपबाबू को। सारी रात प्रायः जगते ही रहते हैं वे। कब रात बीते सिनेमा टूटने पर लोगों के चलने-फिरने की आवाज होती है, सब उनके कानों में सुनायी पड़ता है। उसके बाद घर में कब एक बजा, दो बजे, यह भी उन्हें

कानों में आता है। आखिरी पहर में शायद थोड़ी तन्द्रा आती है। लेकिन वह भी सिर्फ थोड़े-से पलों के लिए। लेकिन उस समय भी केवल अतीत की कथाएँ उन्हें याद हो आतीं। शक्तिधर चाटुज्जे के विराट् भवन के लम्बे दिनों के ऐश्वर्य के चित्र एक-एक करके उनकी आँखों के सामने उतराने लगते। उन्हें याद आता जिस दिन उनका सुललित हुआ, उस दिन कैसी घटा थी। सारे घर में शंख-बाजे की धूम थी। कितनी संख्या में लोग आये थे बच्चे के अन्नप्राशन के दिन। तब भाइयों-भाइयों में कितना मेल, कितना सौहार्द था! जब सब मिलकर बरामदे में खाने बैठते तब वह देखने योग्य एक दृश्य होता। इस किनारे से उस किनारे तक एक पाँत में खाने बैठे हैं सब मालिक और उनके सामने की पाँत में बैठे हैं लड़के, नाती सब। घर की बहुएँ खाने की चीजों का बन्दोबस्त कर रही हैं और परोस रही हैं छह-सात बहुएँ।

हठात् सन्दीपबाबू का ध्यान भंग हो गया।

पूछा—हमसे कुछ कहा?

ज्ञानदामयी बोलीं—आज मझले मालिक ने हमारी नौकरानी को उनके आँगन में मैला फेंकने से मना किया है—

—क्या कहा—

ज्ञानदामयी ने बात फिर एक बार कही।

सन्दीपबाबू बोले—मझली बहू ने कहा है या मझले मालिक ने कहा है?

ज्ञानदामयी बोलीं—मझले मालिक ने।

सन्दीपबाबू ने पूछा — तो तुम सुनकर क्या बोलीं?

ज्ञानदामयी बोलीं—मुझसे तो कहा नहीं, कहा है खोका से।

—खोका? सुललित? उससे क्यों कहा?

ज्ञानदामयी बोलीं—वही जो अन्नपूर्णा-पूजा के दिन की वह घटना—याद नहीं है तुम्हें?

सन्दीपबाबू को याद थी। लेकिन उन्होंने मुँह से और कुछ नहीं कहा। सिर्फ सन्दीपबाबू क्यों, सबको याद थी। घर के लोगों को जैसे याद थी, वैसे ही मुहल्ले के लोगों को भी याद थी। उस दिन की घटना के बाद से मुहल्ले के लोगों के सामने भी सब बातें खुल गयीं थीं।

ये सब घटनाएँ वही बचपन की हैं। जीवन में हमने अनेक उत्थान देखे हैं, अनेक पतन भी देखे हैं। लेकिन चाटुज्जे परिवार का ऐसा पतन भगवान न करे किसी को देखना पड़े। अन्त में ऐसा हो गया था कि कोई किसी का मुँह तक नहीं देखता था।

लेकिन आश्चर्यजनक है सुललित का धैर्य !

एक दिन मैंने पूछा था—क्यों रे, इतना गम्भीर क्यों है तेरा मुँह ?

सुललित प्रश्न के साथ-साथ ही हँस उठा । बोला—बोल सकते हो मा.] संसार आखिर इतना जघन्य क्यों है ? पृथ्वी-भर के लोग इतने भिखारी क्यों है ?

—क्यों ? किसकी बात कह रहा है ?

सुललित बोला—किसकी बात नहीं करता, यही तू पूछ—

उसके बाद बार-बार उससे अनुरोध करता, लेकिन सुललित उस बात का कोई जवाब नहीं देता । और पीछे कोई जवाब देना पड़ेगा, इसीलिए हम लोगों के सामने से भाग जाता ।

एक दिन सुना कि इतने बड़े परिवार के भीतर हो न हो सबके हाँड़ी चूल्हे अलग-अलग हो गये हैं । हम लोग जब उसके घर में जाते तब देखते कि उनके एकतल्ले की बैठक में झाड़ू-बुहारी तक नहीं लगी है । बहुत दिनों पहले जब मालिक लोग वहाँ बैठते तब उसके भीतर कितनी साज-सज्जा थी । बड़े बड़े आयलपेंटिंग टँगे रहते दीवालों में । झालरें-रोशनदानियाँ झूलतीं कड़ी खूँटियों में । मुहल्ले के विशिष्ट व्यक्ति या गण्यमान्य व्यक्ति के आने पर इसी बैठकखाने में उनकी अभ्यर्थना की जाती ।

वह सब एक दिन था सुललित के घर में । हम सब, उसके दोस्त, बगल के छोटे कमरे में बैठे हुए दरवाजे के झरोखे से वह सब देखते, और उसके परिवार के ऐश्वर्य के, उनके बड़प्पन के और परम्परा-इतिहास के दर्शक होते ।

आज इतने दिनों के बाद वे सब बातें सोचने पर ही मानो शंका होती है । आँखें मूँदने पर भी मानो वह सब दृश्य देख पायें । लगता है मानो वह सब यही उस दिन की बात है ।

लेकिन इतिहास के कक्ष-परिवर्तन के साथ-साथ एक दिन सबकुछ कैसे बदल गया ! वह सुललित कहाँ चला गया, कहाँ गुम हो गया, यह सब ख्याल रखने का समय भी हम लोग उस समय नहीं पा सके ।

भगीरथ था सुललित का पुराना नौकर । नौकर माने परिचारक । परिचारक होने पर भी, कहना होगा, वह सुललित का एक प्रकार से अभिभावक भी है । हम लोग जब उसके घर में जाते तब सुललित को पुकारते ही भगीरथ बाहर निकल आता ।

हम कहते—भगीरथ, अपने छोटे बाबू को एक बार बुला दो तो—

भगीरथ गम्भीर प्रकृति का मनुष्य है । छोटी उमर से ही वह गम्भीर है । कहता—छोटे बाबू नहीं हैं—

बात कहकर ही वह चला जाता। लेकिन हम लोग छोड़ते नहीं।

कहते—छोटे बाबू नहीं हैं माने? कहाँ गये हैं?

भगीरथ कहता—कहाँ गये हैं यह मैं क्या जानूँ? छोटे बाबू कहाँ जाते हैं यह क्या मुझे बताकर जाते हैं?

हम लोग भगीरथ की बात से नाराज नहीं होते। क्योंकि हम जानते थे कि सुललित से भगीरथ का क्या सम्पर्क है। कब एक आत्मीय के साथ भगीरथ अपने बचपन में इस घर में आ पहुँचा था। पिता-माताहीन लड़का। असंख्य नौकर-नौकरानियों के साथ एक कोने में पड़ा रहता वह। उसके बाद जब बड़े बाबू के लड़का हुआ तब उसे लेकर खेलना ही एकमात्र काम हुआ भगीरथ का। जब सुललित की उम्र एक बरस की थी तब भगीरथ प्रायः छह बरस का था। भगीरथ का एकमात्र काम हुआ सुललित के साथ-साथ रहना। वह जो इस घर में घुसा, फिर निकल नहीं सका। चिरकाल के समान सचमुच वह निकला तब जब सुललित ने घर छोड़कर बाहर अपना अड्डा जमाया, कहना होगा कि सुललित के साथ ही वह बाहर निकल गया।

लेकिन ये सब बातें अभी रहने दें।

पहले, याद है, हम लोग जब बैठकखाने में बैठकर सुललित के साथ अड्डा जमाते तब भगीरथ बीच-बीच में हठात् वहाँ उदय होता। कहता—तुम लोग सब समय खोका के साथ अड्डा क्यों जमाते हो, बोलो तो? तुम सबके घर-द्वार नहीं है? तुम लोगों को लिखना-पढ़ना नहीं है?

सुललित डाँट देता भगीरथ को। कहता—तू चुप तो रह भगीरथ, तुझे किसने सरदारी करने को कहा है?

सुललित गला ऊँचा कर देता। कहता—जरूर करूँगा सरदारी, तुम सारे दिन यार-दोस्तों से गप-शप करोगे। गप-शप करने से ही तुम्हारा काम चल जायेगा? लिखना-पढ़ना नहीं होगा?

भगीरथ मानो था सुललित का गार्जियन। वह समझता मानो वही सुललित के असल भले-बुरे का धारक-वाहक है। सुललित के पिता-माता, काका-काकी की बनिस्बत हम लोग सबसे ज्यादा भगीरथ से डरते।

सुललित जब घर से बाहर निकलता तब भगीरथ बार-बार उसे सावधान कर देता—जल्दी-जल्दी लौट आना दादा बाबू, देरी करोगे तो आज अब दरवाजा नहीं खोलूँगा, यह बताये देता हूँ—

हम लोग भगीरथ की बात सुनकर हँसते। हम सुललित से कहते—पिछले जन्म में भगीरथ निश्चय तेरा मास्टर था—

सुललित हँसता नहीं। सिर्फ हम लोगों की बातें सुनता। जिस घर में एक दिन सुललित का अखण्ड प्रताप था, उस घर में घुसने पर उस समय खराब

लगता था।

एक दिन एक अद्भुत काण्ड देखा। हमारे हेडमास्टर, हेमन्त बाबू बाजार से लौट रहे थे। वे भी बड़े गम्भीर मनुष्य हैं। लेकिन दूसरी दृष्टि से बड़े सीधे-सादे। लड़कों से बहुत प्रेम करते। लेकिन साथ-ही-साथ लड़के उनसे बहुत डरते भी। भविष्य जीवन में हम लोगों में से जो मनुष्य-समाज में माथा ऊँचा करके खड़े हो सके हैं वे केवल छुटपन के स्कूल के हेडमास्टर, हेमन्त बाबू के कारण ही। कोई लड़का बीमार होता तो हेमन्त बाबू सीधे उसके घर जा पहुँचते। कोई परीक्षा में फेल हो जाता तो उसे निराश होने से मना करते। उसे उत्साहित करते—इससे क्या हुआ, इस बार मन लगाकर पढ़ो, जरूर पास होओगे—

सुललित ने रास्ते से लौटते-लौटते देखा कि हेडमास्टर साहब बाजार करके लौट रहे हैं। उनके दोनों हाथों में बड़ी-बड़ी दो थैलियाँ हैं। थैलियों के बोझ से उन्हें चलने में कष्ट हो रहा है।

पास आकर सुललित के उनके पैर छूते ही वे चमक उठे।

—कौन ?

उसके बाद अच्छी तरह सुललित को देखकर बोले—ओ तुम ! रहने दो बेटा, रास्ते में पैर छूने की जरूरत नहीं है—

कहकर थोड़ी आपत्ति करने की चेष्टा करने लगे। लेकिन सुललित वह आपत्ति सुननेवाला लड़का नहीं था, उसने तब तक हेडमास्टर साहब के पैरों की धूल माथे से लगाकर उनकी दोनों थैलियाँ खींचकर अपने हाथों में रख ली थीं। बोला—दीजिए मास्टर साहब, मैं ये दोनों आपके घर पहुँचा आता हूँ—

यह कहकर हेडमास्टर साहब की दोनों थैलियाँ लेकर उनके घर पहुँचा आया।

हम लोगों ने दूर से लुक-छुककर घटना देखी थी। लौटते हुए बात करते ही वह गुस्सा हो गया।

बोला—देखो, गुरुजन का सम्मान करना न जानने से अपने-आपका भी सम्मान नहीं किया जा सकता, यह जान रक्खो—

हम लोग सुललित की बात सुनकर चकित रह गये। हम लोग बोले—लेकिन तू ? तूने ही क्या उस दिन मझले काका को सम्मान दिखाया था ?

सुललित के मुँह का रंग हठात् लाल हो उठा।

वह बोला—किसने कहा कि मैंने मझले काका का सम्मान नहीं किया ?

हम लोगों ने कहा—मझले काका का सम्मान करने पर क्या उनके मुँह पर ऐसी बातें कर पाता ?

[illegible] है और [illegible] री बात है। सम्मान

दिखाने पर ही क्या अन्याय भी सहन करना होगा ?

यह बात कहकर वह हम सबकी तरफ अवज्ञा की भंगिमा से देखते हु उसने फिर कहा—गुरुजन की श्रद्धा करेंगे इसीलिए जो लोग अन्याय का पाल करते हैं उन्हें मैं मनुष्य नहीं कहता—

कहता हुआ फिर वह हम लोगों के पास खड़ा नहीं हुआ। दनदनाक अपने घर की तरफ चल पड़ा।

यही है सुललित। जिसके साथ इतने दिनों के बाद इस लखनऊ के रास्ते भेंट हुई।

लेकिन असल में जिसकी बात अब तक करता आ रहा हूँ वह सुललि हमारे उपन्यास का प्रधान पात्र होने पर भी आरती यदि कलकत्ता में आक उदय न होती तो इस उपन्यास की भूमिका ही न रची जा सकती। सुख-दुः में मनुष्य का जीवन कट ही जाता है। सचमुच, किसका जीवन फिर नहीं कटता ! लेकिन सुललित के समान इस तरह किसका जीवन कटता है !

सुललित के जीवन में इस आरती गांगुली के आने के पहले तक ऐसा हं चल रहा था। सुललित तब हमारे क्लब और अपने लिखने-पढ़ने में व्यस्त था कहा जाये तो सुललित ही था हमारे क्लब का सबकुछ। सुललित ने ही हमा क्लब की प्रतिष्ठा की थी। पहले-पहल हम सब मुहल्ले के लड़के मिलक सरस्वती पूजा करते। उसका आधा खर्च सुललित ही देता, वही था पहले समय का प्रेसिडेंट।

लेकिन छुटपन की उस सरस्वती-पूजा से शुरू करके किस तरह हमारा अड्ड धीरे-धीरे एक क्लब में बदल गया, यह हम लोगों ने खुद भी ख्याल नहीं किया सुललित ही सब काम करता। हम लोग सिर्फ उसका हुकुम तामील करते आर्टिस्ट जब आते तब उन्हें देखने-सुनने, उनका आदर-सम्मान करने का भा ले लेता सुललित। आखिर में सुललित ने कह दिया कि हर साल इसी तरह का फंक्शन करना होगा—

हम लोगों ने कहा—रुपया ? रुपया कौन देगा ?

सुललित बोला—मैं कुछ दूंगा और बाकी टिकिट बेचकर जमा करना होगा—

तो फिर यही तय हुआ। दूसरे बरस टिकिट बेच कर फंक्शन हुआ। बड़ी भीड़ हुई। रुपये भी आये बहुत। हम लोगों का उत्साह बढ़ गया। सुललित का उत्साह भी बढ़ गया। लेकिन जब फिर स्कूल की परीक्षा का नतीजा निकला तब देखा गया कि प्रथम आया वही सुललित। सुललित किस समय लिखता-पढ़ता,

इसका अन्दाज ही हम लोगों को न लग पाता। देख-सुन-सोचकर हम लोगों को लगता मानो सुललित मैजिक जानता है।

ठीक इसी समय सुललित के घर मे शुरू हुआ पारिवारिक गोलमाल।

हम लोग सुनते कि काका लोग भीतर-भीतर अलग हो गये हैं। इस बात ने हम लोग कुछ चकित हुए। इतने दिनों का घर, इतने दिनों का पुराना वंश, इतने दिनों का सम्मानित बड़ा परिवार, उसमें भी ऐसा हुआ! तो फिर हमारे समान मध्यवित्त समाज किस भरोसे संसार चला ले जायेगा!

इसी समय से सुललित ने मानो हम लोगों से थोड़ा कटकर रहना शुरू किया था। घर जाने पर भी उसे ठीक समय में न पाते। और जाने पर भी आमने-सामने सुललित की तमाम कड़ी बातें हम लोगों को सुननी पड़ती। और दुर्घटना क्या ठीक इसी समय घटती थी?

हाँ, दुर्घटना ही तो है। सुललित के जीवन में आरती गांगुली का आविर्भाव सचमुच एक दुर्घटना है। और सब एक दिन विवाह करते हैं, विवाह करके संसार चलाते हैं और सन्तान को जनम देते हैं। उसके बाद नौकरी से रिटायर होकर पेंशन से अपना जीवन काटते हैं। और एक प्रकार के लोग जो एक दिन प्रेम करके किसी लड़की से विवाह करते हैं, वे भी उसी तरह निभाते हैं। एक प्रकार की परिणति ही अधिकांश लोगों की है।

लेकिन यह सुललित? जिसे लेकर आज यह उपन्यास लिख रहा हूँ?

क्यों लखनऊ शहर से उस समय भूधर गांगुली कलकत्ता आये, और अपने साथ ले आये आरती गांगुली को कौन जाने! हम लोग तो पहले कुछ भी नहीं जान सके। कुछ कल्पना भी नहीं कर सके।

हवड़ा स्टेशन गया था सुललित। घड़ी का काँटा पकड़कर आ खड़ा हुआ था वह। लेकिन ट्रेन आने की बात थी सवेरे छह बजे, वह देर से पहुँची।

भूधर बाबू के चहरे का एक वर्णन किया था पिता ने। ट्रेन के आकर रुकते ही सुललित सब पैसिंजर के मुँह रत्ती-रत्ती देखने लगा। तमाम लोगों की भीड़ मे ठीक कौन पिताजी के दोस्त हैं सो वह ठीक नही कर पाया।

एक व्यक्ति को देखकर मानो कुछ सन्देह हुआ। ठीक वैसा ही चेहरा, ठीक वही उमर। साथ में एक लड़की।

सुललित भीड़ ठेलकर आगे बढ़ गया। उसने पूछा—आप क्या लखनऊ से आ रहे हैं?

भूधर बाबू रुककर खड़े हुए। कुली सामान लेकर हनहनाता हुआ बढ़ा जा रहा था। उसे उन्होंने बुलाया—ए कुली—कुली—ठहरो बाबा, थोड़ा ठहरो—

उसके बाद सुललित की तरफ देखकर बोले—तुम क्या सन्दीप के लड़के ?

सुललित वोला—हाँ—

कहकर भीड़ से भरे प्लेटफार्म पर ही भूधर वावू के पैरों की धूल सुललित ापने माथे पर लगायी।

—आहा, हो गया, हो गया, हो गया,—कर क्या रहे हो, कर क्या रहे हो ?

कहकर पैर हटा लेने की चेष्टा की भूधर वावू ने। पास में जो लड़की खड़ी ।, वह इस घटना से मानसिक रूप से जाने कैसी चंचल हो उठी।

भूधर वावू ने लड़की की तरफ देखकर कहा—इसे पहचान गयी न आरती ? ।ह सन्दीप का लड़का है।

उसके वाद सुललित की तरफ देखकर वोले—तुम्हारा नाम सुललित है न ?

सुललित वोला—हाँ, पिताजी ने मुझे स्टेशन आने को कहा था।

भूधर वावू ने पूछा—तुम्हारे पिताजी कैसे हैं अव ? वीच में तो वहुत वीमार हो गये थे—

इसके वाद ज्यादा वात करने का समय भी नहीं था, तिस पर वातचीत-चर्चा की जगह भी वह नहीं थी। सुललित सीधे टैक्सी वुलाकर भूधर वावू को विठालकर एकदम अपने घर ले आया। पहले से सव इन्तजाम पक्का हो चुका था। वाहर से कलकत्ता आकर कहाँ-कहाँ राँधेंगे, कहाँ ठहरेंगे इसका कु ठीक नहीं था, इसीलिए सन्दीप वावू ने यह सव इन्तजाम पहले से क रक्खा था।

सन्दीप वावू उस समय वहुत अस्वस्थ थे। तो भी वहुत दिनों के वाद पुरा दोस्त को देखकर खुश हो उठे।

वोले—उसके वाद ? अन्त में इसी कलकत्ता में आना पड़ा न ?

उसके वाद आरती की तरफ देखा। वोले—यही वह रानू है ?

भूधर वावू ने कहा—नहीं, रानू नहीं, यह आरती है।

—आरती ? सन्दीप वावू अवाक् हो गये। आरती ! आरती कव यह वे याद नहीं कर सके।

—तो फिर तुम्हारी रानू ? तुम्हारी वह रानू कहाँ है ? उसका क्या f हो गया है ?

वात सुनते ही भूधर वावू का मुँह जाने कैसा गम्भीर हो गया। न क्या वे वोलने जा रहे थे, आरती ने ही उनकी तरफ से जवाव दिया। वं मेरी दीदी मर गयी है—

सन्दीप वावू का मन वात सुनकर करुण हो उठा। वोले—मर ग कव ? मैंने तो कुछ सुना नहीं।

भूधर वावू वात घुमाकर कुछ और कहने जा रहे थे, लेकिन सन्

उसके पहले ही बोले—लेकिन तुमने मुझे तो कुछ लिखा नहीं, भूधर ! मैं तो कुछ भी जानता नहीं था। क्या हुआ था उसे ?

भूधर बाबू बोले—होगा और क्या, नियति भाई, नियति—

सन्दीप बाबू बोले—नियति तो समझा लेकिन तुम तो खुद ही डाक्टर हो, तुम लड़की को बचा नहीं सके ?

उसके बाद कुछ ठहरकर बोले—लेकिन जो जाने के लिए आया है, उसे तुम रोक कैसे सकते हो—

यह कहकर उन्होंने एक लम्बी साँस ली।

ऐसे ही समय भीतर से बुलावा आया। सुललित ने कहा—आइए काका बाबू, आप लोगों का भोजन परोस दिया गया है—

इस घर में बचपन में भूधर बाबू कितनी ही बार आये हैं। इसी बैठकखाने में बैठकर कितनी बार उन्होंने तास खेला है। छिप-छिपकर मालिकों के हुक्के से कितनी तम्बाकू पी है। वे सब बातें उन्हें अब भी याद थीं। उसके बाद डाक्टरी पास करके और कहीं नौकरी न पाने पर अन्त में मिलिटरी की नौकरी लेकर भूधर बाबू ने कलकत्ता छोड़ा। और उसके बाद एक दिन कलकत्ता आकर बाल-बच्चों को लेकर वे अपनी नौकरी पर चले गये। उस समय वे जो गये, फिर कलकत्ता नहीं लौटे।

वे सब बहुत दिनों की बातें हैं। वह सस्ता जमाना था। जरूर आज के समान कालाबाजारी नहीं थी, लेकिन उस जमाने में भी अभावी दु:ख-दुर्दशा और अभाव का सामना करना पड़ता था। लड़के नौकरी के लिए मारे-मारे आफिसों के दरवाजे-दरवाजे के चक्कर लगाया करते थे। मेदिनीपुर में हर वर्ष अकाल पड़ता। तीन रुपये मन चावल का भाव था, उस चावल के लिए उन दिनों भी हाहाकार मच जाता था बाजार में।

सन्दीप बड़े घर का लड़का ठहरा। उसे उस समय कोई चिन्ता नहीं थी। बैठकखाने में तास-पाशा-दावा-तम्बाकू इत्यादि के मजे में उसके दिन कट जाते।

लेकिन भूधर ? भूधर गांगुली कलकत्ता के सामान्य मध्यवित्त घर के लड़के थे। उनके परिवार की हमेशा तमाम समस्याएँ थीं। तिस पर उन्होंने माँ के गहनों से मेडिकल कालेज की फीस का जुगाड़ किया है। और वही डाक्टरी पास करके क्या अन्त तक बेकार रहना होगा ?

इस बीच बूढ़ी माँ ने उनका विवाह भी कर दिया था। माँ कहती—मैं कब तक हूँ कब तक नहीं, विवाह कर ले फिर जहाँ तेरा मन हो तू वहाँ जा।

विवश भूधर गांगुली को विवाह करना पड़ा। और उसके साथ ही माँ की

इच्छा पूरी भी करनी पड़ी। रथ देखने और केले बेचने का काम एक संग पूरा कर लेने के कारण भूधर गांगुली निश्चिन्त हुए।

और माँ का भाग्य भी ऐसा निकला कि उन्हीं दिनों उन्होंने प्राण त्यागे।

सन्दीप ने कहा—तू फिर हमेशा के लिए चला जायेगा?

भूधर बोला—और गति ही क्या है? और माँ ही जब नहीं रहीं तब कलकत्ता से सम्पर्क रखने के कोई माने ही नहीं होते।

उसके बाद कुछ ठहरकर बोला—इसके अलावा कलकत्ता में घर रखने की भी आखिर क्या जरूरत है?

नयी शादी की बहू को लेकर एक दिन भूधर गांगुली घर छोड़कर बाहर जो गये उसके बाद कलकत्ता आने का सुयोग ही उन्हें नहीं मिला।

सन्दीप हवड़ा स्टेशन तक भूधर को रेल में बिठालने गये थे। गाड़ी जब छूट गयी तब भूधर ने नयी बहू से कहा था—यह है मेरा दोस्त।

दोस्त नहीं तो और क्या। परन्तु मनुष्य का संसार जिस प्रकार मनुष्य की ही परवा नहीं करता, उसी प्रकार मनुष्य मनुष्य के प्रेम की भी परवा नहीं करता। शायद इसका एकमात्र कारण प्रयोजन है। प्रीति की अपेक्षा प्रयोजन ने ही आज मनुष्य को सबसे अधिक ग्रस लिया है। प्रयोजन ही आज सबके सामने सर्वस्व हो उठा है। इसीलिए प्रयोजन की जिम्मेदारी सबसे बड़ी जिम्मेदारी है।

इसीलिए प्रयोजन की जिम्मेदारी लेकर वह भूधर गांगुली जो एक दिन कहीं चले गये, फिर उनका कुछ पता-ठिकाना नहीं लगा। उसके बाद बहुत दिनों के बाद एक चिट्ठी आयी बरेली या रावलपिंडी से। वह चिट्ठी पाकर ही सन्दीप जान सके कि भूधर अच्छे हैं और जीवित हैं। इसके बाद क्या हुआ कौन जाने, चिट्ठियां आने लगीं बार-बार। मनुष्य की जितनी उम्र बढ़ती है उतना ही वह अतीत की ओर लौट जाता है। सामने का भविष्यत् उसके सामने अस्पष्ट हो जाता है इसीलिए शायद सब लोग अतीत के विषय में ही बुढ़ापे में ज़्यादा हलचल करते हैं।

उसी प्रकार एक बार हठात् भूधर के पास से सन्दीप के नाम एक चिट्ठी आयी थी जिसमें उनकी स्त्री का मृत्यु-संवाद था। दो कन्याएं छोड़कर भूधर की स्त्री मर गयी थी।

उस बार सन्दीप ने कलकत्ता से सान्त्वना की एक चिट्ठी लिखी थी। शोक में जिस प्रकार मनुष्य बन्धु-बान्धव को सान्त्वना देते हैं।

उसके तमाम वर्षों के बाद एक दिन फिर एक चिट्ठी आयी लखनऊ से। भूधर ने लिखा था—जल्दी ही रिटायर हो रहा है वह। रिटायर होने के बाद भूधर ने कलकत्ता आने की बात ठीक की है, और आखिरी दिन कलकत्ता में

ही काटेंगे।

उस चिट्ठी के पाने के बाद एक घर ठीक कर रखा था सन्दीप ने। महीने में तीन सौ रुपये भाड़ा। तीन कमरे। खूब रोशनी-हवा है। सब बन्दोबस्त करके उन्होंने सुललित से हवड़ा स्टेशन जाकर उन लोगों को ले आने के लिए कहा था।

सो तमाम दिनों के बाद दोनों की पहली बार भेंट हुई, पुराने दिनों की बातें करते-करते ही तमाम समय कट गया।

अन्त में भूधर ने कहा—तो फिर अब जाऊँ भाई, जहाँ बराबर रहना होगा वहाँ जाने के लिए मन छटपट कर रहा है। उसके बाद न हो कल-परसों एक दिन आऊँगा।—कहकर वे उठे।

सन्दीप बाबू ने सुललित से आगे से ही कह रखा था। सुललित भी उन्हें ले जाकर ठीक-ठिकाने से पहुँचा आया।

ये सब बातें हमने तभी सुनी थी।

घर बहुत पसन्द आ गया भूधर बाबू को।

इतने दिनों के बाद कलकत्ता आना हुआ। यह मानो उनका पुनरागमन है। सारे जीवन बाहर-बाहर काटकर मानो घर का व्यक्ति घर लौट आया।

सुललित ने कहा—मैं अब जाऊँ काका बाबू!

भूधर बाबू सुललित की बात सुनकर बोले—अरी ओ आरती, इधर आ बेटी, सुललित चला जा रहा है।

आरती भीतर क्या कर रही थी पता नहीं। उसके आने में देर हो रही थी।

भूधर बाबू खुद भीतर गये लड़की को बुलाने। भीतर जाकर देखा उन्होंने, बिछौने पर पसरकर लेट गयी है।

भूधर बाबू बोले—ओ री, सुललित चला जा रहा है—आ उससे मिल ले।

आरती बोली—मुझे अच्छा नहीं लग रहा पिताजी, मैं बड़ी टायर्ड हूँ।

भूधर बाबू बोले—मिलने में और कितना समय लगेगा? हम लोगों के लिए लड़के ने कितना किया और तू थोड़ा मिल भी नहीं सकेगी? एक मिनिट का ही तो काम है।

आरती उठी। बोली—तुम्हारी जिद के मारे तो मुश्किल हो गयी, देखती हूँ। चलो।—कहकर सामने के कमरे में आयी। लेकिन क्या बोलेगी वह। सिर्फ पिता की बात माननी होती है वही उसने मानी। सुललित के सामने आकर

थोड़ा मुस्कुराने का यत्न किया आरती ने। बिल्कुल नपी-जुखी मुस्कुराहट।

लड़की की तरफ से भूधर बाबू ने माफी मांग ली सुललित से। वे बोले—तुम कुछ सोचना मत बेटा, मेरी लड़की ऐसी ही है। बराबर बाहर रहने से जो होता है।

आरती विरोध कर उठी। बोली—मेरे नाम पर दोष क्यों मढ़ रहे हैं पिताजी? दो दिन ट्रेन में चलकर टायर्ड हो गयी हूं, यह भी मेरा ही दोष हुआ?

उसके बाद सुललित की तरफ देखकर बोली—आप लेकिन कुछ सोचिए मत।

सुललित बोला—ना ना, मैं क्यों कुछ सोचने लगा? मैंने कुछ भी नहीं सोचा—मैं चलूं—आप लोगों को घर पसन्द आया इसीसे मैं खुश हूँ—

भूधर बाबू बोले—हाँ-हाँ, घर हम लोगों को खूब ही पसन्द आया। यह तुम्हारी वजह से ही हुआ, बेटा! सन्दीप ने तो खुद कुछ देखा नहीं, तुमने ही सबकुछ किया है।

आरती बोली—अब आप देर मत कीजिए, बहुत रात हो गयी है।

सुललित बोला—तो फिर कल किस समय आऊंगा?

भूधर बाबू बोले—क्यों बेटा, कल फिर क्यों तकलीफ करोगे?

सुललित बोला—पिताजी ने मुझसे कह दिया है कि मैं रोज एक बार आप लोगों को देख आया करूं।

भूधर बाबू बोले—जिस आदमी को तुमने दिया है वह, जब तुम कहते हो, खूब विश्वासी है तब तुम खुद क्यों कष्ट करोगे? बाहर का काम-काज, बाजार जाना, खाना बनाना सब तो वह कर सकता है।

सुललित बोला—वह कैसा काम करता है दो-चार दिन देखिए, उससे अगर काम न चले तो दूसरे आदमी का इन्तजाम करूंगा मैं।

उसके बाद कुछ ठहरकर बोला—और एक अच्छा घर ढूंढ़ रहा हूं आप लोगों के लिए, अगर उसे पाऊं तो यहाँ से आप लोगों को उठा ले जाऊंगा—

भूधर बाबू अवाक् हो गये। बोले—क्यों? अब दूसरे घर की क्या जरूरत? यही तो बहुत अच्छा घर है।

सुललित ने कहा—पिताजी ने कहा था कि हमारे घर के पास ही एक अच्छा घर किराये में ले लो, उससे आप लोगों की ठीक देख-भाल की जा सकती है। हमारे घर से आपका घर इतना दूर हो गया।

भूधर बाबू बोले—वह जब पाओगे तब ले लेना, अभी यहाँ रहने में हम लोगों को कुछ खराब नहीं लगेगा।

सुललित बोला—जो भी हो वह फिर सोचेंगे, मैं अब चलूं, मैं कल फिर

भूधर बाबू बोले—तुम फिर फिज़ूल-फिज़ूल क्यों कष्ट करने आओगे, टा ? तुमने तो सब इन्तजाम कर दिया है। जरूरत होने पर न हो मैं ही म्हें खबर दूंगा।

सुललित बोला—ना, आप लोगों की देख-भाल न करने पर पिताजी झसे नाराज होंगे।

भूधर बाबू बोले—तुम्हारे पिताजी सब कामों में इसी तरह खूब व्यस्त ो जाते हैं। जानते हो, तुम्हारे पिताजी हमेशा से ऐसे ही स्वभाव के हैं। बड़े नर्वस आदमी हैं। ट्रेन पकड़ने आयेंगे, रात को आठ बजे ट्रेन है, वे शाम ो सात बजे स्टेशन पर जाकर हाजिर हो जायेंगे।

सुललित फिर खड़ा नहीं हुआ, बातें करके बाहर के रास्ते में जा पहुँचा।

सुललित के चले जाने के बाद भूधर बाबू ने सदर दरवाजा बन्द कर देया। पास ही आरती खड़ी थी।

—क्यों री, कैसा देखा सुललित को ? बचपन में ही तो उसे देखा था, स समय खूब चंचल था, अब एकदम बड़ा होकर जेंटिलमेन बन गया है। बोल न तुझे कैसा लगा ?

आरती हँसने लगी। वह बोली—क्यों, तुम उसे दामाद बनाने की बात सोच रहे हो शायद ?

भूधर बाबू भी हो-हो करके हँसने लगे। बोले—देखता हूँ तू बड़ी इंटेलिजेंट है री।

आरती भी पिता के गले से गला मिलाकर हँस उठी। बोली—मैं तो तुम्हारा स्वभाव जानती हूँ। इतने दिनों से देख रही हूँ, और मैं तुम्हें पहचान नहीं पाऊँगी ?

भूधर बाबू को कौतूहल हुआ खूब। बोले—ना-ना, सच बोल न, तूने कैसे जान लिया ?

—वाह रे, उस दिन हवड़ा स्टेशन पर उतरने के बाद से ही तुम जिस मनोभाव से उसकी तरफ देख रहे थे, उससे और कोई लड़का होता तो तुरन्त यह बात समझ जाता।

भूधर बाबू लड़की की बुद्धि देखकर अवाक् हो गये। बोले—यह क्या बात है री, मैं किस प्रकार उसे देख रहा था ?

आरती बोली—यह तुम समझ नहीं पाओगे पिताजी।

भूधर बाबू बोले—मैं समझ नहीं पाऊँगा ? मैं डाक्टर मनुष्य होकर समझ नहीं पाऊँगा और जितना समझेगी सब तू ?

—वाह, डाक्टर हो जाने से ही मन की बात समझ में आ जाती है क्या ?

तुम तो सिर्फ रोगियों का शरीर लेकर कारोबार करते हो, तुम मन की खबर रक्खोगे कैसे ?

—तो तू ही फिर इतनी मन की खबर कैसे रख लेती है ?

आरती बोली—मैं तो लड़की की जात हूँ !

भूधर बाबू ने मानो एक नया ज्ञान अर्जित किया। बोले—लड़कियाँ शायद सबके मन की खबर पा जाती हैं ?

—हाँ।

—सबके मन की खबर ?

आरती बोली—हाँ, सबके मन की खबर का पता पा जाती हैं हम लोग।

भूधर बाबू ने पूछा—तो फिर बोल तो भला मैं इस समय मन-ही-मन क्या सोच रहा हूँ ?

आरती बोली—ठहरो, थोड़ा सोचूं।

फिर सोच-विचार कर उसने कहा—तुम क्या सोच रहे हो बताऊँ ? तुम सोच रहे हो कि तुम्हारे मित्र मेरे साथ अपने लड़के का विवाह करेंगे या नहीं, और करें तो कितने रुपयों का दहेज वे लेंगे।

भूधर बाबू हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये।

भूधर बाबू बोले—तेरी यह सब बदमाशी की बुद्धि है। मैंने कभी यह बात नहीं सोची।

—तो फिर कौन-सी बात सोच रहे थे तुम ?

भूधर बाबू बोले—तेरी सब बातें गलत-सलत हैं। मैं तो दूसरी बात सोच रहा था।

—कौन-सी बात ?

—सोच रहा था सन्दीप के घर की अवस्था उस समय कितनी अच्छी थी और अब क्या हो गया है ! जानती है, उनके बैठकखाने का कमरा उन दिनों कितना सजा-धजा रहता था। कितने ही दिनों वहाँ बैठकर हमने बड़े-बूढ़ों के हुक्के में तम्बाकू पी है छिप-छिपकर। और अब उस कमरे में देखता हूँ झाड़ू तक नहीं लगती। मनुष्य की अवस्था किस तरह बदल जाती है रातों-रात, यही सोच रहा था।

आरती उठी। बोली—फिर तुम तो वे सब बातें ही अब सोचो, मुझे नींद लग रही है, मैं सोना चाहती हूँ—

—हाँ-हाँ, तू जा, मैं भी सोऊँगा।—यह कहकर वे अपने कमरे में सोने चले गये।

आरती भी अपने कमरे में सोने चली गयी।

आस-पास ही दोनों के दो कमरे थे। ट्रेन में दो दिनों तक बैठकर आने का सारा धक्का दोनों पर बीता था। उसके बाद कलकत्ता में उतरते ही सीधे पहुँचे सन्दीप के घर। सन्दीप का चेहरा देखते ही भूधर बाबू अवाक् हो गये थे।

वह सुन्दर चेहरा आज ऐसा हो गया? कितना सुन्दर रूप था सन्दीप का। क्लास में सबकी नजर पड़ती सन्दीप पर। उसके बाद सन्दीप का एक दिन विवाह भी हुआ। वर देखने के लिए दौड़े सब। वर का चेहरा देखकर सब अवाक्। पुरुष-मनुष्य का ऐसा रूप भी होता है क्या!

उसके बाद सन्दीप के लड़का भी हुआ।

वह सुललित! छुटपन में सब सुललित को गोद में लेना चाहते। गोद में लेकर लाड़-प्यार करते, उसके गाल चूमते। मानो वह आलू से गढ़ी मूर्ति हो।

नौकरी से रिटायर करके भूधर बाबू मानो फिर अपने पुराने दिनों में लौट गये हैं। अब फिर उन्हें नये सिरे से इस शहर में ही रहना होगा। लेकिन जो कलकत्ता शहर वे छोड़कर चले गये थे, वह क्या वही शहर है। वे लोग ही जाने कहाँ चले गये? लोगों के साथ मिल-बैठकर कितना मजा किया है उन दिनों!

जब रिटायर होने की बात उठी तब लड़की से उन्होंने कहा था—कलकत्ता जाकर तू रह सकेगी न?

—कलकत्ते में? क्यों पिताजी?

भूधर बाबू बोले थे—तो क्या चिरकाल परदेस-परदेस में ही रहते आयेंगे? अपने देश में लौट जाने की इच्छा मनुष्य की नहीं होती?

आरती ने कहा था—हमारे यहाँ के कालेज की लड़कियाँ क्या कहती हैं जानते हो? कहती हैं कलकत्ता में लड़कियाँ केवल किसने कौन-सा गहना पहना है, कौन भात के साथ क्या-क्या खाता है ये ही बातें करती हैं। एक कोई अच्छी तरह रहने लगे तो शायद आत्मीय-स्वजन को रात को नींद नहीं आती।

—ऐसा है क्या? वे ये ही सब बातें करती हैं?

आरती ने कहा था—हाँ, वे लोग कहती हैं कि मैं बंगालियों के समान नहीं हूँ।

वे बोले थे—यह हो सकता है। लेकिन पूरी जात ही खराब है, यह कभी नहीं हो सकता। खराब और अच्छे सब मनुष्यों में हैं। बंगाली खराब है, मद्रासी अच्छे हैं इस प्रकार का विचार अविचार है। मैं कितने ही अच्छे बंगालियों को पहचानता हूँ, वे लोग कितने अच्छे हैं, तू नहीं जानती।

—तुम अपने मित्र की बात कह रहे हो न ?

—हाँ री हाँ, सन्दीप की बात कह रहा हूँ; उसी ने तो मुझे लिखा है कलकत्ता जाने के लिए। मैंने सोचा था रिटायर होकर यहीं लखनऊ में रहूँगा, लेकिन सन्दीप बहुत जिद कर रहा है, यह देख न सन्दीप की चिट्ठी।

इसलिए उसी समय उन्होंने सन्दीप से वादा किया था कि अगर सन्दीप एक अच्छे घर का इन्तजाम कर सके तो वे शेप जीवन में कलकत्ता जाकर अपने दोस्त के पास ही रहेंगे।

मिलिटरी की नौकरी। मिलिटरी की जरूरत के मुताबिक सारे जीवन कितनी ही जगहों में घूमे हैं। कितनी ही अजीब बुरी जगहों में। और कश्मीर के समान जगह में भी कुछ दिन बिताये हैं। यही रावलपिंडी, रायबरेली, हजारीबाग, पंजाब, राजस्थान वगैरह में। कोई जगह छूटी नहीं। यहाँ तक कि सिंगापुर, बर्मा, मलाया के समान जगहों में भी नौकरी की खातिर जाना पड़ा है। लड़कियाँ कभी रही हैं स्कूल-कालेज के होस्टेल में और कभी अपने कैंटूनमेंट के क्वार्टर में।

दो लड़कियाँ। लड़कियों के लिए कभी सोचना नहीं पड़ा उन्हें। पत्नी जरूर थी नहीं, लेकिन उसके लिए ऐसी कोई दुश्चिन्ता नहीं थी उनके मन में। लड़कियाँ जानती थीं कि उनके पिता की जिस प्रकार की नौकरी है उससे सब समय वे लोग पिता के पास रहने का सुयोग नहीं पायेंगी। उन्होंने लड़कियों के आराम में कोई कमी-खामी नहीं रखी। ट्यूटर रखकर पढ़ाने-लिखाने की व्यवस्था जिस प्रकार की थी, उसी प्रकार गाना-बजाना सीखने की व्यवस्था भी कर दी थी। रानू की बात भी याद आ गयी उन्हें। रानू जिस प्रकार इमनकल्याण की ठुमरी गाती, उसी प्रकार उसने भजन गाना भी सीखा था। और आरती ?

वे जब घर लौटते, आरती कहती—तुम मेरी बनिस्बत दीदी को ज्यादा प्यार करते हो पिताजी, मैं समझ गयी हूँ।

वे छोटी लड़की की बात सुनकर चमक उठते। कहते—यह कैसी बात है री, किसने कहा मैं तेरी दीदी की बनिस्बत तुझे कम प्यार करता हूँ ?

आरती कहती—तो फिर तुम खाली अकेले दीदी को ही क्यों चिट्ठी लिखते हो ?

आरती उन दिनों बहुत छोटी थी। बड़ी लड़की को चिट्ठी लिखना दोनों लड़कियों को चिट्ठी लिखने के समान हो जाता है, यह उसे कौन समझायेगा। उस समय से रानू की चिट्ठी में छोटी लड़की के लिए भी वे अलग एक चिट्ठी लिखते।

उसके बाद जाने कितने दिन कट गये, नौकरी की म्याद भी धीरे-धीरे पूरी

हो चली उनकी। उम्र बढ़ने के साथ-साथ लगता है मनुष्य का मन भी अतीत जीवन की ओर लौट जाना पसन्द करता है। इसीलिए वे एकान्त में रहने पर कलकत्ते की बात सोचते। वही मन्दीप के घर का अड्डा, वही श्याम बाजार, वही मेडिकल कालेज और बसन्त केबिन के सँकरे-अँधेरे कमरे में बैठकर टोस्ट के साथ चाय पीने की याद आती। वही पहले-पहल लुककर उनका सिगरेट के कश खींचना। सबकुछ मानो स्वप्न के समान उनकी आँखों के सामने नाच उठता।

सूबेदार हरवंशलाल पूछता—मेजर साहब, आप रिटायर होकर कहाँ रहियेगा?

मेजर भूधर गांगुली बोलते—क्यों, कलकत्ता में।

वे कहते—कलकत्ता मेरा बर्थ प्लेस है, मेरा जन्मस्थान, आखिरी जिन्दगी सब जन्मभूमि में ही काटना चाहते हैं। और उसके अलावा मुझे अपनी लड़कियों का विवाह भी तो करना होगा। इस देश में अच्छे बंगाली वर कहाँ मिलेंगे?

—यह तो ठीक है! जो कोई जहाँ कहीं भी नौकरी करे, लड़के-लड़कियों का विवाह करने के लिए तो जन्मभूमि में ही जाना होगा।

लेकिन सो फिर नहीं हो सका। फिर हो नहीं सका वह।

क्यों हो नहीं सका, यह सोचने से दिल के टुकड़े-टुकड़े होने लगते हैं। ऐसा भी होगा क्या वे यह कल्पना भी कर सके थे? उस विपद् के दिनों उनकी छोटी लड़की अगर उनके नजदीक न होती तो क्या होता?

रास्ते से तमाम लोगों के चलने-फिरने की आवाज कानों में पड़ी। इतनी रात को कौन चल रहे हैं? कहाँ जा रहे हैं? मेजर गांगुली के मन को लगा मानो फिर कहीं लड़ाई शुरू हो रही है। सब चुपचाप किसी पर आक्रमण करने के षड्यन्त्र कर रहे हैं। अभी मानो सिर पर कुछ फाइटर प्लेन आकर हाजिर हो जायेंगे! लेकिन साइरन क्यों नहीं बज रहा है? ओरी रानू, रानू, कहाँ हो तुम लोग? तुम लोग कहाँ गयी। ओ री—

—ओ पिताजी, पिताजी···पिता···.

हठात् नींद खुलते ही उन्होंने देखा आरती सामने खड़ी है। जाने कैसे अवाक् हो गये वे घर के चारों तरफ देखकर? यह कहाँ हैं वे? यह तो कलकत्ता है! अब तक वे सोच रहे थे कि वे अम्बाला के मिलिटरी हेडक्वार्टर में हैं। वे जो कल कलकत्ता में आ गये हैं, यह ख्याल नहीं था उन्हें।

आरती बोली—तुम दीदी को क्यों बुला रहे थे?

दोनों आँखें दोनों हाथों से पोंछकर वे बिछौने से उठ बैठे।

बोले—क्यों री, भोर हो गयी ? मैं कुछ भी समझ नहीं पाया।

आश्चर्य ! बाहर निकलते ही उन्होंने देखा, सुललित खड़ा है।

बोले—अरे तुम ? तुम इतने सवेरे आ गये हो ? कितने बज गये ?

सुललित बोला—पिताजी ने सवेरे ही मुझे जगा दिया। बोले, तुम अभी जाओ, नयी जगह है, क्या जरूरत-वरूरत है जाकर देख आओ।

—तुम आ गये, यह तुमने अच्छा ही किया। कहकर उन्होंने लड़की की तरफ देखा। बोले—सुललित को चा-वा पीने को दे। सब तयार-वयार कर लिया है क्या आज ?

लड़की ने कहा—मैं और क्या तैयार करूँगी, वे ही तो सब एकदम तैयार करके ले आये हैं।

—यह क्या ! सुललित तैयार कर लाया है ? इसके माने ?

आरती बोली—वह देखो न, उधर देखो—कहकर टेबुल की तरफ उंगली बढ़ाकर दिखाया। उन्होंने देखा, टेबुल पर कतार की कतार खाने की प्लेटें हैं—तिस पर नमकीन नाश्ता, मिठाई, फल, और भी कितनी ही चीजें !

—यह सब क्यों ले आये सुललित ? यह सब लाये क्यों ?

सुललित ने कहा—पिताजी बोले, पहला दिन ठहरा, हो सकता है शायद कोई इन्तजाम ही न हुआ हो, तुम खाने-पीने की सब चीजें ले जाओ, नये घर में सब इन्तजाम करना सम्भव नहीं होगा। इसीलिए सवेरे ही चला आया।

—लेकिन इतना कौन खायेगा ? लोग तो हम सिर्फ दो ही हैं।

सुललित ने इस बात का जवाब दिये बिना कहा—बाजार से क्या लाना होगा बोलिए, तो फिर मैं इकट्ठे आपके बाजार का लेना-देना खत्म करके लौटूं।

भुवन बाबू बोले—क्यों ? तुम बाजार क्यों करोगे ? बाजार मैं खुद ही कर ले सकूंगा। तुम्हें तकलीफ नहीं करनी होगी।

सुललित बोला—आप नये आदमी हैं, बाजार पहचानेंगे कैसे ? शुरू-शुरू में हो न हो मैं ही रोज बाजार कर दूंगा।

—ऐसा भी कभी होता है ? असम्भव, असम्भव। तुम जानते हो मैं मिलिटरी का आदमी हूँ, मुझे सब काम अपने हाथों से करने का मुहावरा है। तुमने मुझे समझा क्या है ? मैं बाजार कर नहीं सकूंगा ?

आरती बातों के बीच में बोल उठी—पिताजी, आप अभी बातें मत कीजिए, पहले मुँह-हाथ धो आइए तो। खाने की चीजें ठण्डी हुई जा रही हैं।

पिता के जाते ही आरती ने सुललित से कहा—क्यों, आप खड़े क्यों रह गये, बैठिए।

सुललित ने कहा—मैं अपने खाने के लिए तो यह लाया नहीं।

[illegible]
जने इतना खा सकेंगे ?

सुललित बोला—न हो कुछ रख दीजिए, बाद को जब भूख लगेगी तब खाइयेगा।

आरती बोली—लेकिन हम लोग खायेंगे और आप खड़े-खड़े देखियेगा, यह क्या हमको अच्छा लगेगा ?

सुललित बोला—तो फिर एक काम क्यों न करूँ, मैं अभी बाहर चला जाऊँ, आप खा लें तब फिर लौट आऊँगा।

आरती हँस उठी। बोली—आप तो बड़े मजेदार आदमी हैं, देखती हूँ...

सुललित बोला—क्यो ? यह क्यो कहती हैं ?

—नही, कहूँगी नही ? खाने के समय घर मे कोई आये तो कोई उसे भगा देता है ?

सुललित ने कहा—नहीं-नहीं, मैंने इसलिए आपसे वह बात नही कही।

—तो फिर क्यों वह बात आपने कही ?

इतने मे भूधर बाबू आ हाजिर हुए। वे बोले—यह क्या, आरती से तुम आप-जी लगाकर क्यों बात करते हो ? तुमसे वह कितनी छोटी है, यह जानते हो ?

उसके बाद लड़की की तरफ देखकर बोले—तेरा किस साल में जनम हुआ था री आरती ? बता तो किस साल ?

आरती बोल उठी—तुम ठहरो पिताजी, देखते हो वे कुछ खाना ही नहीं चाहते, मैं जोर करके उनसे खाने को कहती हूँ, और तुम अभी कौन बड़ा है कौन छोटा है यह बात लेकर सिर खपा रहे हो।

—यह बात है क्या ? सुललित खाना नही चाहता ? तुम्हें गैस्टिक ट्रबल है क्या सुललित ?

बात सुनकर आरती जितना हँस उठी, सुललित भी उतना ही हँसने लगा।

भूधर बाबू बोले—तुम हँसते हो सुललित ? गैसट्राइटिस रोग हँसने की चीज है क्या ? तुम कौन-सी दवा खाते हो ? एँ ? मैं डाक्टर मनुष्य हूँ, मुझसे बताओ न। मुझसे कहने में तुम्हें शर्म क्या है ? मैं एक डोज दवा देकर तुम्हें अभी अच्छा कर दूँगा।

—पिताजी ! तुम खाओ चलकर, अब बात मत करो, चलो—

भूधर बाबू बोले—तो सुललित नही खायेगा और मैं कैसे खाऊँ बोल तो !

सुललित बोला—मेरे लिए मत सोचिए, मैं घर जाकर खा लूँगा।

भूधर बाबू बोले—घर जाकर शायद बार्ली खाओगे ?

आरती उनकी बात पर कान न देकर सुललित के पास जा खड़ी हुई। वह बोली—आइए, आइए, आप अगर नहीं खाइयेगा तो मैं भी नहीं खाऊँगी यह कहे दे रही हूँ।

लेकिन सुललित के कुछ कहने के पहले ही भूधर बाबू लड़की की तरफ देखकर बोले—क्यों उससे खाने को कहती है बेटी, गैस्टिक ट्रबल रहने पर उसका क्या यह सब खाना वाजिब है?

—पिताजी, तुम अब कुछ मत बोलो।

यह कहकर आरती तब भी सुललित के मुँह की तरफ ताकती रही। फिर बोली—आप नहीं खाइयेगा तो सचमुच मैं नहीं खाऊँगी, यह बात कहे दे रही हूँ।

सुललित बोला—तो भी क्यों मुझसे खाने की जिद कर रही हैं?

आरती बोली—खाने से आपका क्या नुकसान होगा यही बताइए? यह तो आपका ही दिया हुआ नाश्ता है, हम लोग तो आपके ही मेहमान हैं। हम लोगों को खाने को देकर आप खड़े-खड़े देखें यह क्या अच्छा दिखता है, या हम लोग ही खा सकते हैं? और अगर नहीं ही खाइयेगा तो यह सब लाये क्यों? हम लोगों का अपमान करने के लिए?

भूधर बाबू चकित हो गये। बोले—यह क्या बोल रही है री तू? किससे क्या कह रही है? यह सब नाश्ता तो सन्दीप ने भेजा है। न खाने पर सन्दीप का ही तो अपमान करना होगा।

उसके बाद सुललित की तरफ ताककर बोले—और तुम भी कैसे लड़के हो सुललित? आरती इतना कह रही है और तुम उसकी मामूली बात नहीं रख पा रहे हो? क्या हुआ है तुम्हें बोलो तो भला? मुझसे ठीक-ठीक बताओ तो? मेरे बैग के भीतर दवा है, दूं?

सुललित बोला—आप बार-बार जब कह रहे हैं तब बिना बताये मैं रह नहीं सकता। असल में पूजा किये बिना मैं कुछ खाता नहीं। यहाँ तक कि पानी भी नहीं पीता।

—पूजा? तुम भी पूजा करते हो क्या?

सुललित बोला—हाँ काका बाबू, मैं सवेरे नींद से उठकर रोज पूजा करता हूँ।

सुललित की बात के साथ-साथ ही सारा वातावरण जाने कैसी गम्भीर हो गया। आरती और भूधर बाबू दोनों के मुँह का भाव एक मुहूर्त में बदल गया।

भूधर बाबू बोले—कौन-सी पूजा तुम करते हो?

सुललित बोला—जप करता हूँ, बचपन में मेरा जनेऊ हुआ था। उस समय मामूली तरह से उसी हालत में एक बरस पूजा करने का नियम है। लेकिन वह

पूजा मुझे बहुत अच्छी लगी थी इसीलिए वह अभ्यास मैंने फिर नहीं छोड़ा, अब तक चलाये जा रहा हूँ मैं उसे।

—वेरि गुड, वेरि गुड सुललित। इस माडर्न जमाने में भी तुम हिन्दुओं का आचरण इस प्रकार पालन करते आ रहे हो यह सुनकर हमें खूब आशा होती है। मैं मिलिटरी में घुसने के बाद वह सब फिर मान नहीं सका। सब तरह का अखाद्य-कुखाद्य खाना पड़ा है, कितने अजात-कुजातों के साथ मिलना पड़ा है इसका कुछ ठीक-ठिकाना नहीं है···

उसके बाद आरती की तरफ निगाह डालकर बोले—तू अब खाने के लिए जिद मत कर बेटी, जो जिस बात पर विश्वास करता है, उसे वह विश्वास करने देना वाजिब है।

सुललित बात के बीच में बोल उठा—तो फिर इस वक्त बाजार से क्या लाना होगा बोलिए, मैं बाजार का काम पूरा करके जाऊँ।

भूधर बाबू बोले—ना ना, उसके लिए तुम्हें हैरान नहीं होना होगा। तुम सन्दीप से जाकर मेरा नाम लेकर बोलो, हम लोगों को कोई असुविधा नहीं है। तुमने खाना बनाने के लिए जो आदमी दिया है वह भी अच्छा है, मैंने उसका चेहरा देखकर ही आरती से यह बात कही है।

—ठीक है, तो फिर मैं अब चलूँ।

भूधर बाबू बोले—हाँ जाओ।

—तो अब फिर कब आऊँगा?

—यही जब तुम्हारी खुशी हो। अपना काम-काज पूरा करके तुम्हारी जब खुशी हो आना। पहले तुम्हारे लिखने-पढ़ने का काम-काज, फिर हम लोगों का काम।

सुललित चला जा रहा था। फिर बुलाया भूधर बाबू ने। बोले—और एक बात, और एक बात बोल रखूँ।

सुललित लौटकर खड़ा हुआ। भूधर बाबू बोले—हाँ, तुम्हें पहले से ही बोलकर रखना अच्छा है।

सुललित बोला—बोलिए न, मैं क्या कर सकता हूँ आप लोगों के लिए।

—मुझे गाने-बजाने का बड़ा शौक है, तुमने शायद सुना है अपने पिता से।

सुललित बोला—कहाँ, नहीं तो, मैंने तो कुछ सुना नहीं!

भूधर बाबू बोले—वह सब बहुत दिनों पहले का मामला है न, तुम्हारे पिता शायद अब भूल गये हैं। हमारी आरती जानती है। एक समय मैंने खुद बहुत गाया-बजाया है, लेकिन डाक्टरी पढ़ने की वजह से वह शौक बहुत दूर बढ़ा नहीं पाया। उसके बाद तो मिलिटरी में नौकरी करने जाकर वे सब बातें भूल ही गया एकदम। लेकिन गाना सुनने का नशा अब तक नहीं गया। लखनऊ में यही

एक सुभीता था, बीच-बीच में अच्छे उस्तादों के गाने सुनने को मिल जाते थे। लेकिन कलकत्ता में भी तो तुम लोगों की म्यूजिक कान्फरेंस होती है, होती है न ?

सुललित बोला—मैं ठीक बता नहीं सकूँगा, आप अगर बोलिए तो मैं पता लगा सकता हूँ।

—हाँ, पता लगाना तो। कलकत्ता में आया हूँ तो गाना सुनने को नहीं मिलेगा यह तो हो नहीं सकता। तुम थोड़ा खबर लगाओ सुललित।

—अच्छा, मैं खबर पाते ही आपको बताऊँगा। यह बोलकर सुललित चला गया।

सुललित के जाते ही भूधर बाबू बोले—क्यों री, सुललित को कैसा देखा ?

पिता की तरफ चाय का कप बढ़ाकर चेयर पर बैठ गयी आरती।

भूधर बाबू बोले—कैसे री, तू तो कोई बात ही नहीं बता रही ?

आरती बोली—तुम्हारा दामाद-सेलेक्शन लेकिन अच्छा नहीं हुआ, यह मैं बोले दे रही हूँ।

भूधर बाबू ने चाय की चुस्की लेने जाते हुए भी नहीं ली। बोले—क्यों ? सुललित खराब लड़का है ? इतना बड़ा नामजादा वंश, इतना बड़ा घर, ऐसा चमत्कार चेहरा, मेरी पसन्द खराब हुई ? तिस पर तू जो है वह भी वही है, दोनों ही बी० ए० पास।

आरती बोली—देखती हूँ तुमने हिसाब-किताब करके घटकाली की है।

भूधर बाबू बोले—घटकाली क्यों कहती है ? तुझे अगर पसन्द न हो तो क्या तू समझती है जोर-जबर्दस्ती जिसके-तिसके साथ मैं तेरा विवाह कर दूँगा ?

आरती पिता की बात से हो-हो करके हँस पड़ी। बोली—तुम, देखती हूँ पिताजी, सचमुच दिन-दिन बच्चे होते जा रहे हो। जिसका विवाह होना है उसे कोई हैरानी नहीं है, बिचवानी में तुम्हें नींद नहीं आती।

भूधर बाबू बोले—ना ना ना, मैं इस बार अब देरी नहीं करूँगा। पहले जो भूल की है वह कर ली, लेकिन इस बार मैं किसी की बात नहीं सुनूंगा, देख लेना।

आरती बोली—तुम तो मेरा विवाह किसी भी तरह करके छुट्टी पा जाओगे, अन्त में जितना झमेला है वह सब मेरे कन्धे पर ही तो पड़ेगा।

—क्यों ? क्यों ? कैसा झमेला ?

आरती बोली—झमेला नहीं है ? तुमने तो देखा, तुम्हारा होनहार दामाद संन्यासी आदमी है, जप-तप-पूजा किये बिना चाय तक नहीं छुयेगा। उस संन्यासी के लिए बाघम्बर, कमण्डल और जप-तप की चीजें जुटाने में ही मेरा प्राणान्त हो जायेगा ! और मुझे जो तुमने इतनी गाने

तो भस्म में घी डालने के समान हो गया। मुझे गाना सिखाने में तुम्हारा कितना रुपया खर्च हुआ है बताओ तो। मैं क्या तो फिर सारी जिन्दगी संन्यासी मनुष्य का ध्यान भंग करने के लिए गाना गाती रहूँगी, यह कहना चाहते हो ?

भूधर बाबू मानो इतनी देर के बाद लड़की की बात सुनकर होश में आये। बोले—ठीक ही तो है ! तू तो ठीक ही कहती है बेटी ! वह संन्यासी आदमी ही तो ठहरा। और उसके साथ अगर तेरा विवाह ही कर दूं तो उस्ताद रखकर तुझे मैंने ठुमरी क्यों सिखायी ? ठीक है—मुझे इस बात का बिल्कुल ख्याल नहीं था, भाग्य से तूने याद दिला दिया···

कहकर वे मानो अपने मन से ही खाते-खाते सोचने लगे।

उसके बाद बोले—तो फिर मैं आज सुललित से साफ-साफ ही कह दूंगा···

—क्या कह देंगे ?

भूधर बाबू बोले—कह दूंगा कि उसे अब म्यूजिक कान्फरेन्स की खोज-खबर नहीं लेनी होगी।

आरती बोली—यह कैसी बात है, तुमने जो कहा था कि कलकत्ता आकर तुम खूब गाना सुनोगे, कलकत्ते में खूब म्यूजिक कान्फरेन्स होती है !

भूधर बाबू बोले—अगर गाना सुनना होगा तो मैं खुद जाकर टिकिट कटवा लूंगा। मैं इसी कलकत्ता में पैदा हुआ हूं और मैं कलकत्ता को पहचान नहीं पाऊँगा ? मैं कलकत्ता के सब रास्ते पहचानता हूं, यह जानती है ? इस घर से लेकर टालीगंज तक की सब जगह, मेरे लिए कोई जगह पहचानने को बाकी नहीं है, यह मेरा जन्मस्थान है।

यह कहकर वे उठे। तब तक वे नाश्ता कर चुके थे। कमरे में जाने के समय बोले—चलूं, बाजार से क्या-क्या लाना होगा बता तो और उसे बुला दे—

—किसे ?

—वही जो, जाने क्या उसका नाम है, नाम भूला जा रहा हूं—

आरती बोली—वैद्यनाथ···

—वैद्यनाथ ? सन्दीप के घर के आदमी का नाम भगीरथ है, और इसका नाम वैद्यनाथ। यह भगीरथ का कोई भाई-वाई लगता है क्या ?

आरती के कुछ बोलने के पहले ही भूधर बाबू अपने कमरे में घुस गये।

एक तो नयी जगह तिस पर पहला दिन। आरती पहले कभी कलकत्ता नहीं आयी। पूरे दो दिन ट्रेन में काटकर एक दिन पहले कलकत्ता आयी थी। सुललित के घर में खाने-पीने से निपटकर शाम को अपने पिता के साथ इस घर में

करेंगे, इतने दिन के वाद अपने देश में आये हैं, कुछ घूम-घामकर देखने का मन नहीं होगा ? शायद घूम-घामकर देख रहे हैं सव ।

सुललित वोला—तो इतनी देर तक ? अव तक भी चीज-वस्तुएँ नहीं खरीदीं तो खाने को कव वनायेगा वैद्यनाथ और कव जाने आप लोग खाइयेगा ?

आरती वोली—आज हम लोगों के न खाने से भी काम चल जायेगा।

—क्यों ? विना खाये चल जायेगा माने ?

—सवेरे आप जो ढेर सारा नाश्ता दे गये हैं वही तो सव खा-पीकर खत्म नहीं कर सकी। इस पहर वल्कि खाना न वनाने पर ही अच्छा हो ।

सुललित वोला—ना ना, यह आप लोगों का लखनऊ नहीं है, यह कलकत्ता है, यहाँ की आवहवा वहुत खराव है। यहाँ अनियम करने से ही तवीयत विगड़ जायेगी।

आरती उस वात का जवाव दिये विना ही हठात् वोली—आपका जप-तप हो गया है न ?

हठात् जप-तप की वात कहते ही सुललित जैसे चौंक उठा। वोला—क्यों ? यह वात क्यों पूछ रही हैं ?

—ना, आप जप-तप किये विना तो पानी तक नहीं पीते, इसीलिए पूछा ।

सुललित वोला—मैं नाश्ता कर चुका हूँ। मैं वाजार जाऊँगा सोचकर सव पूरा कर आया हूँ।

आरती वोली—तो फिर आइए।

कहकर उसने घर के भीतर की तरफ दिखाया।

सुललित वोला—घर के भीतर अभी क्या करने जाऊँगा ?

—पहले आइए न, उसके वाद वताती हूँ···

सुललित भीतर जाना नहीं चाहता था। आरती ने हठात् उसका एक हाथ धप से पकड़कर खींचा।

सुललित वोला—आता हूँ, आता हूँ, छोड़िए-छोड़िए।

हठात् सामने के घर पर नजर पड़ते ही दोनों ने देखा, खिड़की के उस पार से एक वहू उनकी तरफ एक दृष्टि से ताक रही है।

आरती वोली—देखते हैं, आप ऐसा काण्ड करते हैं कि सव अवाक् होकर ताककर देख रहे हैं।

सुललित घर के भीतर जाते-जाते वोला—वे कौन हैं ?

आरती वोली—वे हमारे वगल के घर में ही रहती हैं।

सुललित वोल उठा—छि:, उन्होंने क्या सोचा वोलिए तो ! आपने ऐसा काण्ड किया ।

आरती बोली—और क्या सोचा उन्होंने, यह खींचतान देखकर लोग जो सोचते हैं उन्होंने भी वही सोचा।

सुललित बोला—आपके कारण ही तो···

घर के भीतर घुसकर टेबुल पर सजी खाने की चीजें देखकर सुललित अवाक्।

आरती बोली—बैठिए, यह खा लीजिए। बैठिए, चेयर पर बैठिए।

सुललित बोला—मैं तो अभी खाकर आ रहा हूँ।

आरती ने सुललित की वे ही बातें दुहरा दी। बोली—यह लखनऊ नहीं है, यह कलकत्ता शहर है, यहाँ अनियम करने से तबीयत बिगड़ जायेगी।

सुललित हँस रहा था। बोला—अनियम मैंने कब किया ? मैं तो नियम से खाकर ही आया हूँ।

आरती बोली—वाह, हम लोगों के लिए खाने को लाकर खुद खड़े-खड़े देखना ही शायद नियम है ? हम लोग लखनऊ के रहनेवाले हैं। लखनऊ का नियम है घर में अतिथि आने पर उसके साथ बैठकर खाना होता है। कौर मुँह में लीजिए।

सुललित बोला—उस समय मेरी पूजा-सन्ध्या-वन्दना कुछ भी जो नहीं हुई थी।

आरती बोली—लेकिन अब तो पूजा-सन्ध्या-वन्दना-जप-तप सब हो चुका है, अब खाने में एतराज क्यों ?

सुललित बोला—देखता हूँ यहाँ न आने से ही अच्छा होता···

आरती उस समय दृढ़प्रतिज्ञ थी। बोली—आपको बिना खिलाये छोड़ूँगी नहीं आज, यह आपको खाना ही होगा।

सुललित मुँह उठाकर हँसा। बोला—अगर न खाऊँ ?

आरती बोली—न खाने पर आपको सजा दूँगी।

—सजा ? कौन-सी सजा देंगी ?

आरती बोली—कौन-सी सजा दूँगी ? यही सजा दूँगी कि कल से इस घर में घुसने ही नहीं दूँगी। तब आपको मजे का पता चलेगा।

सुललित ने कहा—आपने शायद समझा है यहाँ न आने पर मुझे खूब तकलीफ होगी ? पिताजी ने आप लोगों को देखने-सुनने को कहा है, इसीलिए तो मैं आता हूँ। ऐसा न होता तो आपने क्या सोचा है मैं आता ?

आरती बोली—यह और कहना नहीं होगा। आपके पिताजी ने हम लोगों की देखभाल करने को कहा है, इसीलिए कल से आप गोंद की तरह चिपके हैं।

आरती का दुस्साहस देखकर सुललित कुछ क्षणों के लिए अचम्भे में पड

ुे पूछते क्यों हो ? मैं कौन हूँ ? तुम लोगों में कौन बाजा...

गा यह तुम लोग ही जानो, मैं खुद तो बाजार जाऊँगी नहीं

कहकर वहाँ वह खड़ी नहीं हुई। सीधे रसोईघर की तरफ चली गयी।

उधर देखकर भूधर बाबू ने सुललित की तरफ देखा। सुललित से वय

हैं, उस समय वे यह बात समझ नहीं सके।

सुललित बड़ी देर से परेशानी भोग रहा था। इस बार बोला—तो फि

मैं चलूँ काका बाबू।

कहकर वह फिर खड़ा नहीं हुआ। सीधे सदर दरवाजे से रास्ते में जा पहुँचा। पीछे-पीछे भूधर बाबू भी उसके साथ बाहर निकले। बोले—सुललित, बेटा, एक बात मैं तुमको चुपचाप बताऊँ, सुनो—

सुललित बोला—कहिए।

भूधर बाबू गला नीचा करके बोले—तुम मेरी लड़की की बात से नाराज हो गये क्या ?

सुललित बोला— क्यों, नाराज क्यों होऊँगा ?

—नहीं, नाराज मत होओ। छोटी लड़की है न ! किससे क्या बात करनी चाहिए यह अभी तक सीखा नहीं, जानते हो। उसकी मा नहीं है न। इसीलि कुछ अभिमानी तरह की है। उसे लेकर मैं इसीलिए तो बड़ी मुश्किल में प जाता हूँ बीच-बीच में। उसपर तुमने कुछ बुरा माना तो मैं बहुत कष्ट पाऊँ बेटा !

सुललित बोला—ना ना, आप सोचिए मत, मैंने कुछ बुरा नहीं माना।

—ना, बुरा मत मानो। और एक बात है, तुम फिर आओगे न ? ना होकर तुम फिर आना बन्द तो नहीं कर दोगे ?

सुललित बोला—नहीं काका बाबू, आप लोगों का तो सब इन्तजाम ही दिया है। रहने का घर मिल गया है, काम करने के लिए आदमी क इन्तजाम कर दिया है, और आप भी जब कलकत्ता शहर में नये नहीं हैं त आने की जरूरत ही क्या है बताइए ? जरूरत तो कुछ नहीं है।

भूधर बाबू बोले—यह देखो, यह तुम्हारी नाराजगी की बात हुई सु तुमने जरूर बुरा माना है। तुमने शायद अन्त में उस जरा-सी लड़की ब का बुरा मान लिया।

सुललित बोला—नहीं नहीं, मैं आरती की बात से नाराज नहीं

यह कहकर वह फिर वहाँ खड़ा नहीं हुआ। हनहनाता हुआ सी लोगों की भीड़ में अदृश्य हो गया।

भूधर बाबू उस समय भी वहीं खड़े रहे।

घर के भीतर से हठात् आरती के गले की आवाज सुनायी पड़ी—

लड़की के गले की आवाज से मानो होश आया भूधर बाबू को, मानो फिर वे कल्पना का महल छोड़कर असली संसार में लौट आये। पीछे फिरकर देखा उन्होंने, यह उनका मिलिटरी हेडक्वार्टर नहीं है, यह कलकत्ता है।

वे फिर घर के भीतर घुसे। देखा, उनकी लड़की उनकी तरफ दृष्टि लगाये है।

पूछा उन्होंने—हाँ री, मुझे बुला रही थी तू ?

आरती बोली—कहाँ, मैंने तुम्हें कब बुलाया। मैं तो वैद्यनाथ को काम समझाये दे रही हूँ, वह नया आदमी है। तुमने गलत सुना है···

भूधर बाबू को सो भी विश्वास नहीं हुआ। तब क्या सचमुच गलत सुना है उन्होंने। लेकिन उन्होंने साफ-साफ सुना है, आरती ने उन्हें बुलाया। बोले—ऐसा ही होगा, तो मैंने शायद फिर गलत ही सुना है री।

आरती बोली—हाँ पिताजी, तुम आजकल बड़े अन्यमनस्क हुए जा रहे हो। जिस-तिसके सामने तुम जो जी में आया बोल पड़ते हो।

भूधर बाबू बोले—सुललित की बात कह रही है न ? हाँ, तेरे ऊपर सच-मुच सुललित खूब नाराज हो गया है री।

—मेरे ऊपर ? क्यों ? मेरे ऊपर क्यों नाराज हुए हैं ?

भूधर बाबू बोले—तो तेरे ऊपर नाराज नहीं होगा तो क्या मेरे ऊपर नाराज होगा ? तू ही तो बोली कि वह साधु-संन्यासी मनुष्य है, उससे तू विवाह नहीं करेगी।

आरती बोली—यह बात मैंने कही है, या तुमने कही है। तुम्ही तो बाजार से आकर जो-सो सब कहना शुरू कर बैठे, और उन्होंने कमरे के भीतर बैठे-बैठे सब सुन लिया।

भूधर बाबू बोले—तो मैं क्या खाक जानूँगा कि सुललित उस समय कमरे में बैठा था ! ऐसा होता तो क्या मैं वे सब बातें कहता ? लेकिन तू मुझे थोड़ा सावधान नहीं कर दे सकती थी ?

आरती बोली—मैंने तुमको कितना सावधान किया, कितना आँखों का इशारा किया, तुम सुनो तब तो !

भूधर बाबू बोले—तब तो बड़ा अन्याय हो गया री, अब क्या करूँ बता तो ?

आरती बोली—और क्या करेंगे ! जो होना था सो तो हो ही गया, अब नहा-धो लो।

भूधर बाबू बोले—लेकिन वह जो मैंने कहा गाने के जलसे का पोस्टर देखा, उसका टिकिट कौन कटवा देगा बोल तो ? उस्ताद अब्दुल करीम खाँ साहब की ठुमरी सुनने का बड़ा लोभ हो रहा था।

आरती हँस पड़ी। बोली—तुम उन लोगों के घर जाओ, जाकर फिर उसकी खुशामद करके उसे लिवा लाओ।

भूधर बाबू बोले—इससे तू नाराज तो नहीं होगी···?

आरती बोली—वाह रे, अपने दोस्त के लड़के को तुम घर में लिवा लाओगे इससे मैं क्यों नाराज होने जाऊँगी ?

भूधर बाबू ने अब रण भंग किया। वे बोले—अच्छा-अच्छा, ठीक है, मैं अब और कुछ नहीं बोलूँगा। असल में मैंने तेरी बात सोचकर ही इतनी बातें कहीं, और जितना दोष है, सब मेरा ही हो गया ! इस बार से मैं तुझसे वादा करता हूँ तुम लोगों की किसी बात में मैं कोई बात नहीं बोलूँगा, लो अभी से मैं चुप हो गया।

मेजर बी० सी० गांगुली का नाम सुनकर पहले सुललित के मन में आया था कि वे शायद खूब गम्भीर प्रकृति के मनुष्य हैं। तिसपर फिर मिलिटरी के डाक्टर।

पिता कहते—मिलिटरी की नौकरी न करने पर भूधर डाक्टर के हिसाब से और भी बड़ा हो सकता था, जानते हो ! नाम भी और ज्यादा कमा सकता था।

लेकिन उन दिनों चाहे डाक्टर हो चाहे इंजीनियर, नौकरी पाना बड़ा मुश्किल था। वे सब दिनकाल अलहदा हैं। सन्दीप बाबू के दोस्त लोग बी० ए०, एम० ए० पास करके सिर्फ चैटर्जी के मकान में आकर बैठे-बैठे तास पीटते। लेकिन उसके बाद जब लड़ाई छिड़ी तब फिर सबकी हुड़हुड़ाकर नौकरी हो गयी। भूधर का भाग्य अच्छा था कि वह उसके कुछ दिन पहले ही मिलिटरी की नौकरी पाकर धन्य हो गया।

और उसके बाद से ही मानो सब उलट-पलट हो गया चारों तरफ। जो लोग ऊपर माथा उठाये थे वे नीचे उतर आये, और उनमें से तमाम जो नीचे थे वे उठ गये ऊपर। पड़ोस में चैटर्जियों का घर ही उस समय धन-मान-गौरव में एकदम सबके माथे पर विराज करता। लेकिन लड़ाई के बीच में दिखायी पड़ा, आसपास के तमाम लोगों ने दुमंजिले तीनमंजिले पक्के मकान बना लिये हैं। किसी ने लोहे का रोजगार करके रुपया जमाया है, या कोई मिलिटरी की काण्ट्रैक्टरी करके फूल-फल गया है। जो मनुष्य एक दिन चैटर्जी परिवार के मालिकों को देख पाने पर माथा झुकाकर जमीन पर सिर टेककर प्रणाम करते, वे ही उन दिनों नयी मोटरगाड़ी में चढ़कर मुँह के सामने धूल उड़ाते चले जाते।

देखते-देखते मानो कलकत्ता के साथ-साथ पुरखों के समय से स्वनामधन्य

टा .। . म . . न भा .। शुरू हा . । । न . . । । . । था था । . ।

रीक की नौकरानी के गन्दगी फेंकने का मामला लेकर अथवा अन्नपूर्णा-पूजा निमन्त्रित-अनिमन्त्रितों के खिलाने-पिलाने को लेकर। इसी प्रकार एक न ... मामूली झगड़ा-झंझट से शुरू करके चैटर्जियों के घर के अन्दरमहल में भीर गण्डगोल पैदा हो गया और घर के मालिकों के मन में धीरे-धीरे ... मिल परिवार के सम्बन्ध में विरक्ति पैदा हो गयी। भीतर-भीतर सबके खिलाफ ... चका मन विषाक्त हो उठा।

हम लोग जो बाहर मिलते-जुलते हैं, वे उस समय भी चैटर्जी निवास के ... ठकखाने में जाकर बैठते। लेकिन इससे ज्यादा और कुछ नहीं। उसी सीमा ... क हम लोगों की दौड़ थी।

एक दिन हमेशा की तरह हम दो मित्र बाहर के बैठकखाने में बैठे थे। हम ... ग सुललित का रास्ता देख रहे थे। भगीरथ ने हम लोगों से कहा, छोटे दादा ... बू घर में नहीं हैं। तो भी बैठे हैं कि अगर सुललित घर आ जाये तो हम ... गों से भेंट हो जायेगी।

हठात् हमने देखा, एक टैक्सी आकर मकान के सामने खड़ी हुई। गाड़ी में ... क बूढ़े भले आदमी उतरे। खूब लम्बा-चौड़ा चेहरा। और उनके साथ ही एक ... हिला। वह भले आदमी की लड़की के समान लगी।

भले आदमी सीधे एकदम हम लोगों के कमरे में घुस पड़े।

बोले—सुललित ? सुललित है यहाँ ?

हम लोगों के कुछ कहने के पहले ही लड़की बोल उठी—तुम इन लोगों से ... यों पूछते हो पिताजी, चलो, घर के भीतर चलो—

जैसे हम लोगों की परवा ही न हो, इस प्रकार ही लड़की अपने पिता को ... कर अन्दरमहल में घुसी। दरवाजे से घर के भीतर घुसते ही पुकारने ... गी—भगीरथ—भगीरथ—

वे लोग कौन हैं यह हम लोग पहचान नहीं सके। लेकिन उन लोगों का ... व-भाव, चाल-चलन देखकर लगा कि वे लोग सुललित के परिवार से बहुत ... निष्ठ रूप से परिचित कोई हैं।

भीतर से भगीरथ का गला सुनायी पड़ा—आइए काका बाबू—आइए—दादा बाबू घर में नहीं हैं, बाबू ऊपर हैं, बाबू की तबीयत अच्छी नहीं है—

भले आदमी भगीरथ की बात सुनकर बोले—सुललित घर में नहीं है ? सुललित को खोजने ही तो हम लोग आये हैं, यही जो उस दिन वह हम लोगों ... नये घर में पहुँचा आया, उसके बाद से तो उससे भेंट ही नहीं है। सोचा, ... मार-बीमार तो नहीं हो गया, इसीलिए देखने आये—

हम लोग फिर वहाँ नहीं बैठे। क्योंकि बैठने से भी सुललित से बात करने

का कोई मौका नहीं मिलेगा। वह उस समय उन लोगों के साथ ही मगन हो जायेगा।

भगीरथ उसी समय भूधर वाबू को सीधे सन्दीप वाबू के पास ले गया।

भूधर वाबू वोले—कैसे हो भाई ?

सुललित के पिता उस समय भी विछौने पर बैठे थे। अबेर हो जाने पर भी उनका विछौने से उठने का मन नहीं कर रहा था। मित्र को देखकर विछौने पर कुछ उचककर बैठे। वोले—आओ, अव तक आये क्यों नहीं ? इतने दिन के वाद देश में आये, कैसा लग रहा है ?

उसके वाद लड़की की तरफ देखकर वोले—कैसा लगता है वेटी तुम्हें कलकत्ता ?

लड़की की तरफ से भूधर वाबू ने जवाव दिया—कलकत्ता उसने अभी देखा ही कव है जो वोलेगी। वह जो ट्रेन से आकर उस घर में घुसी है, फिर वह निकली नहीं। मैं फिर भी वाहर निकलता हूँ, वाजार जाता हूँ और उसके वाद खाना पकने पर खाता हूँ।

सन्दीप वावू वोले—क्यों, और कहीं क्यों नहीं जाते ? छोटी लड़की को सारे दिन घर में बैठे रहने से अच्छा कैसे लगेगा ? कलकत्ते में कितनी ही चीजें देखने लायक हैं—सुललित को वोलने से ही हो जाता, वह उसे घुमा-घुमाकर दिखा सकता ! सुललित तो रोज ही जाता है तुम्हारे घर, वह वहाँ जाकर क्या करता है ?

—सुललित ? सुललित तो अभी हमारे घर गया नहीं !

—गया नहीं ?

भूधर वावू वोले—इसीलिए तो पता लगाने आया उसे क्या हुआ है। हम लोगों को उस घर में पहुँचाकर दूसरे दिन सवेरे सिर्फ एक मिनिट के लिए एक वार गया था, उसके वाद से फिर तो वह दिखायी नहीं पड़ा।

—यह वात है क्या ? तो फिर वह एक वार आये, मैं उससे कहूँगा। मैंने तुम लोगों की देखभाल करने को कह रक्खा है ! यह तो वड़े ताज्जुव की वात है।

भूधर वावू वोले—भाई, सोचा था रिटायर होने के वाद कलकत्ता में आकर वड़े आराम से रहूँगा, पहले थोड़ा गाने-वजाने का शौक था, नौकरी के कारण शौक पूरी तरह मिटा नहीं सका, इस वार वक्त मिला है, पेट भरकर गाना-वजाना सुनूँगा। तिसपर और सिर्फ छह महीने ही तो हैं वाद को एकदम मुक्ति।

सन्दीप वावू वोले—तो एक काम करो न। तुमने तो इतने दिनों डाक्टरी की नौकरी की, इस वार यहाँ डाक्टरी की प्रैक्टिस भी करो न। किसी अच्छी

जगह में किराये का घर लेकर एक चेम्बर खोल लो।

भूधर बाबू बोले—मिलिटरी में नौकरी करते-करते डाक्टरी एकदम भूल-कर खत्म कर दी है भाई, वह सब अब मुझसे नहीं होगा।

—तो फिर अब आरती का विवाह कर दो, जो तुम्हारा दामाद भी होगा और लड़के के समान बुढ़ापे में तुम्हारी देखभाल भी करेगा!

आरती इस बार उठी। बोली—मैं एक बार भीतर चाचीजी के पास जा रही हूँ।

यह कहकर खड़ी होकर भीतर के कमरे में चली गयी।

अन्दरमहल में चाची के कानों में सब बातें सुनायी पड़ रही थीं। आरती को देखते ही उनके मुँह पर हँसी फूट उठी।

आरती ने जाकर सीधे जेठी चाची के पैर छूकर उनपर माथा रख दिया[1]।

जेठी चाची बाधा देकर बोली—हो गया, हो गया बेटी, कब आयी हो और इतने दिनों के बाद जेठी चाची की याद आयी?

आरती बोली—आज पिताजी आये, इसीसे उनके साथ आयी—

जेठी चाची बोली—तुम लोगों की खबर लड़के से ही मिलती है, कोई असु-विधा तो नहीं होती तुम लोगों को?

आरती बोली—हाँ, खूब असुविधा हो रही है।

जेठी चाची विचलित हो उठीं। बोलीं—खूब असुविधा हो रही है? लेकिन कहाँ, लड़के ने तो यह सब मुझसे कहा नहीं? क्या असुविधा हो रही है तुम लोगों को बेटी?

आरती बोली—देखिए न जेठी चाची, यह जो आपका लड़का है उसने हम लोगों को नये घर में पहुँचा दिया, उसके बाद से एक दिन भी नहीं गया।

—*यह क्या बात है? लड़का गया नहीं?*

—ना, कहाँ गया? इसीलिए तो हम दोनों जने खूब चिन्ता में पड़ गये हैं। सोचो, यह कैसा बेअक्ल मनुष्य है! एक बार खबर लेने भी नहीं आता! आपका लड़का आये तब आप उसे थोड़ा डाटिए तो—

जेठी चाची खूब चिन्ता में पड़ गयीं। बोलीं—जरूर डाटूँगी बेटी। सच तो है, नयी जगह में तुम्हें तो फिर तुम्हें खूब ही कष्ट हो रहा है—

आरती बोली—क्या साधारण कष्ट है, पिताजी तो कलकत्ते का कुछ भी नहीं पहचानते—

जेठी चाची बोली—क्यों? तुमने जरूर कलकत्ता देखा नहीं कभी, लेकिन तुम्हारे पिता तो कलकत्ते के ही मनुष्य हैं!

---

१ बंगाल में —याएँ बच्चे बड़ों के पैर छूती हैं।

आरती बोली—आप तो घर के भीतर रहती हैं जेठी चाची, आप कुछ भी जानतीं। पिताजी कहते हैं कलकत्ता अब वह कलकत्ता नहीं है। रास्ता-सब बदल गया है, अब यह एकदम दूसरी तरह का कलकत्ता हो गया है—

जेठी चाची बोलीं—यह हो सकता है बेटी, मैं तो तीस-चालीस बरस हुए घर से बाहर निकली नहीं! व्याह होने के बाद जो इस घर में घुसी हूँ र कहीं निकल नहीं सकी, एकदम जब मरूँगी तभी निकलूँगी—

कहकर अंचल से उन्होंने आँखें पोछीं। उसके बाद एक मुहूर्त में स्वाभाविक कर उसकी तरफ देखकर बोलीं—अब वह लड़का ही हमारा सबकुछ भरोसा है, तुम्हारे समान एक लड़की मिलने पर मैं लड़के से उसका व्याह करके निश्चिन्त होकर मर पाती बेटी—

आरती बोली—मेरे समान लड़की ?

जेठी चाची बोलीं—हाँ बेटी, तुम मुझे बहुत पसन्द आयी हो। उस दिन जब तुम्हें पहले-पहल देखा तभी मुझे बहुत अच्छा लगा बेटी! इसीलिए तो मैंने लड़के से एक बार रोज तुम्हारे यहाँ जाने को कह दिया था, लेकिन अभी मैं तुम्हारे मुँह से ही सुन रही हूँ, वह उसके बाद से एक दिन भी तुम्हारे यहाँ गया नहीं—

आरती बोली—तिसपर देखिए, सुललित दादा बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि मेरे पिताजी बूढ़े मनुष्य हैं—

जेठी चाची मानो कुछ चिन्ता में पड़ गयीं। बोलीं—लड़का तुम्हारे य नहीं जाता तो कहाँ जाता है, समझ नहीं पा रही हूँ।

उसके बाद कुछ ठहरकर बोलीं—ठहरो बेटी, मैं एक बार भगीरथ बुलाऊँ, तुम लोगों के लिए थोड़ा नाश्ते का इन्तजाम करूँ—

आरती बोल उठी—जेठी चाची, हम लोग उठें, यह सब करने में देर जायेगी, फिर उधर हम लोगों के घर में कोई नहीं है, घर में ताला-चाबी कर चले आये हैं—

आरती की बात खत्म होने के पहले ही हठात् सुललित आकर क घुसा।

मा बोलीं—हाँ रे लड़के, तू कहाँ रहता है बोल तो, यह देख आरत है हमारे पास। मैं समझती हूँ तू रोज उन लोगों के घर जाता है—

आरती सुललित को देखकर जड़ सी हो गयी। क्या बोलेगी, यह नहीं कर सकी। सुललित की तरफ देखकर वह समझ गयी कि उन आना सुललित को पसन्द नहीं आया।

आरती बोली—तो फिर मैं उठूँ जेठी चाची—

जेठी चाची आरती का हाथ पकड़कर बिठलाकर सुललित से

हाँ रे, भगीरथ कहाँ गया ? भगीरथ को एक बार बुला दे तो, इन लोगों के नाश्ते का बन्दोबस्त करना होगा न ?

सुललित बोला—लेकिन इन लोगों को तुम खाने को तो दोगी लेकिन तुम्हें भी इनके साथ खाना होगा मां—

मां अवाक् हो गयी। बोली —क्यों, मुझे क्यों खाना होगा ?

सुललित बोला —हाँ मां, इन लोगों के लखनऊ का यही नियम है। तुम अगर इन लोगों को खिलाओ तो तुम्हे भी उनके साथ खाना होगा—

—इसके माने ?

सुललित बोला—तुम कलकत्ता की लड़की हो, इसके माने तुम समझोगी नही मां। तिसपर तुम जब कह रही हो मैं विरोध क्यों करूंगा ? मैं खुद ही बल्कि नाश्ता खरीद लाता हूं।

बोलकर हठात् बाहर आकर खड़ा हुआ। कमरे से बरामदा पार करके एकतल्ले में उतरने की सीढ़ियाँ हैं। सीढ़ियों से नीचे उतरने के रास्ते में ही पार्टिशन की दीवाल है। बायी तरफ मुड़कर एक अँधेरे सीले कमरे को पार करके सदर में आना पड़ता है। चाटुर्ज्जे-वंश मे शरीक लोगों के बँटवारा हो जाने के बाद बाहर निकलने और भीतर घुसने का रास्ता अदल-बदलकर दूसरे किस्म का हो गया है। सुललित के सीढ़ी के निचले पग पर पैर रखकर अँधेरे-सीले कमरे के बीच मे आते ही पीछे मे आरती ने बुलाया—सुनिए!

सुललित ने पीछे फिरकर देखा।

आरती बोली—आपको अब हमारे लिए तकलीफ नहीं करनी होगी, हम लोग चले जा रहे हैं—

सुललित ने कहा—देखता हूँ आप उस दिन की बात अभी तक मन मे रखे हुए हैं।

आरती ने कहा—आप अपराध कीजियेगा और हम लोगों के मन मे रखने से ही शायद सारा दोष हो गया—

सुललित हंसा—लेकिन आपको तो मेरे समान बदरोग नही है—

—बदरोग माने ?

सुललित बोला—क्यों, मैंने तो कहा ही है पूजा करने का रोग है मुझे—

आरती बोली—वही बात मन में रखकर शायद आपने हम लोगों का बायकाट किया है ?

सुललित बोला—ऐसा क्यों, मुझे काम था—

आरती बोली—लेकिन आपके घर में सभी समझते हैं कि आप हमारे घर मे पड़े रहते हैं—

सुललित बोला—वह बात रहने दीजिए, आप मां के पास जाकर बैठिए,

मैं जल्दी से आप लोगों के नाश्ते का इन्तजाम कर दूं—

आरती बोली—आप मेरी बात का जवाब नहीं दीजियेगा तो मैं किसी प्रकार आप लोगों के घर में पानी नहीं पियूंगी—

सुललित बोला—मैं मामूली आदमी हूँ, मुझ पर आप इतनी नाराज क्यों हो रही हैं ?

आरती बोली—बात टालने की कोशिश मत कीजिए। बोलिए, उसके बाद से आप हमारे घर गये क्यों नहीं ? आपको क्या हुआ है ?

सुललित बोला—उसके बाद से थोड़ा काम में व्यस्त हो गया हूँ—

आरती ने कहा—नहीं, कभी नहीं, आप अब हम लोगों के घर नहीं जाइयेगा, इसीलिए झूठ बोल रहे हैं—

सुललित हठात् गम्भीर हो गया। बोला—क्या कहा ? मैं झूठ बोला हूँ ?

आरती बोली—हाँ, झूठ ही तो। नहीं तो जेठी चाची, ताऊजी सबके मन में यही विश्वास है कि आप हमारे घर जाकर रोज ही हम लोगों को देखते-सुनते हैं।

सुललित बोला—मेरे नाम से आप जितने भी अपराध लगाइए, मैं मिथ्यावादी हूँ यह मेरा सबसे बड़ा दुश्मन भी बोल नहीं सका। आप शायद जानती नहीं, इसीलिए यह बात कह रही हैं। दया करके यह अपवाद अब कभी मुझ पर मत लगाइयेगा—

आरती सुललित के गम्भीर गले की आवाज से चौंक उठी।

तो भी बोली—झूठ न बोले ऐसा आदमी तो मैंने कभी देखा नहीं !

सुललित बोला—आपने न देखा हो तो मेरा कोई नुकसान नहीं है, लेकिन जान रखिए, झूठ बोलने के समान पाप और कोई नहीं है।

—तो फिर आप शायद धर्मपुत्र युधिष्ठिर हैं ?

लेकिन इस बात का जवाब देने के पहले ही मानो किसी के पैरों की आहट सुनायी पड़ी।

सुललित बोला—कौन है रे वहाँ ?

भगीरथ के गले की आवाज आयी। वह बोला—मैं भगीरथ हूँ छोटे दादा बाबू—

भगीरथ के सामने आते ही सुललित बोला—तू कहाँ रहता है ? देख रहा है घर में लोग आये हैं, इन लोगों के लिए थोड़े नाश्ते का इन्तजाम करना होगा, मा तुझे जाने कब से ढूंढ़ रही हैं—

भगीरथ फिर खड़ा नहीं हुआ। उसी क्षण सीढ़ियों से दुतल्ले पर चढ़ गया।

सुललित ने आरती की तरफ देखकर कहा—चलिए, पिताजी के कमरे

में जायें, वहाँ काका बाबू बैठे हैं—

आरती बोली—भाग्य से भगीरथ आ पहुँचा था, नहीं तो···

सुललित बोला—नहीं तो क्या ?

आरती बोली—आपकी बात सुनकर मैं खूब डर गयी थी लेकिन···

सुललित बोला—आइए, पिताजी आपको बुला रहे हैं—

इसी तरह सूत्रपात हुआ। एक परिवार इसी तरह हठात् एक दिन इस कलकत्ता शहर में आ पहुँचा था और सुललित उस परिवार से एकदम जड़ित होकर हम लोगों की बात भूल गया।

हमारे क्लब से सुललित का सम्बन्ध अपरिहार्य था। क्लब का कोई भी आयोजन होता तो सुललित सबके माथे के ऊपर रहता था। साथ-ही-साथ वह क्लब का ट्रेजरर अर्थात् हिसाब-किताब का रक्षक था। क्लब के आमद-खर्च के हिसाब रखने का मालिक। हम लोगों का विश्वास था उस पर। हम लोग निस्सन्देह जानते थे कि जितने दिनों सुललित के हाथ में रुपये-पैसे का हिसाब रहेगा, उतने दिनों उससे एक पाई-पैसा भी खोने का डर नहीं है। वह हम लोगों के सामने था शुद्ध, पवित्र, निष्पाप, निष्कलंक चरित्र।

लेकिन कई दिनों से उसे देख न पाने पर हम लोगों ने उस पर भी सन्देह किया। क्लब का तमाम काम बाकी पड़ा था और ट्रेजरर से भेंट नहीं। तो फिर वह गया कहाँ ?

हम लोग कुछ दिनों पहले एक सुन्दरी लड़की को टैक्सी से उतरते देखकर उसके साथ सुललित को जोड़कर बहुत-कुछ कल्पना करने लगे। अन्त में क्या सुललित का भी यह अधःपतन हुआ ? वह भी खप्पर में आ गिरा ?

हम लोगों का एक दोस्त बोला—असम्भव ! सुललित कभी खराब नहीं हो सकता—और एक बोला—यह जरूर प्रेम-घटित मामला है भाई—

अन्त तक हम लोग इस निर्णय पर पहुँचे कि सुललित अब हमारे क्लब में नहीं आयेगा। लेकिन सुललित के न आने पर क्लब कैसे चलेगा ? कौन क्लब के लिए इतनी प्राणदेवा मिहनत करेगा ?

हम लोग सुललित के घर जाने लगे उसकी खोज में। लेकिन जब कभी जायें, वह घर में रहता ही नहीं। सवेरे, दोपहर को, तीसरे पहर शाम को, किसी समय उसे उसके घर में नहीं पाते। भगीरथ कहता, वह कब घर लौटेगा इसका कुछ ठीक-ठिकाना नहीं है। रात को जब वह घर आता है तब किसी-किसी दिन आधी रात हो जाती है।

।रथ कहता—काका बाबू के घर—

—काका बाबू ? काका बाबू कौन हैं ?

गीरथ इतनी बातें कर नहीं पाता। कहता—लखनऊ से जो काका बा
हैं वे ही काका बाबू।

लखनऊ में सुललित के कौन-से काका बाबू थे, यह हम लोग नहीं जानते. सुललित के पिता, चाचा, ताऊ सब सशरीर कलकत्ता में ही रहते हैं यही जानते थे।

हमने पूछा—लखनऊ में सुललित के और कौन काका बाबू रहते हैं गीरथ ?

भगीरथ काम का आदमी है। हम लोगों के साथ ऊट-पटाँग बात कर ा समय उसके पास नहीं रहता था। हम लोगों की बात का जवाब दिये बिना ही वह अपने निजी काम से घर के भीतर चला जाता।

हम लोग हताश होकर फिर अपने क्लब में आ बैठते और धूनी जलाये रखते। लेकिन सुललित किसी दिन न आता।

बाद को समझ पाये थे कि लखनऊ की आरती गांगुली ने किस प्रकार, कैसे, किस कौशल से सुललित को हम लोगों से छीन लिया था। सुललित एक-दम सवेरे नींद से उठकर पूजा खत्म करके काका बाबू के घर में जाकर हाजि हो जाता।

काका बाबू ने कह रखा था—तुम सवेरे ही पूजा-ऊजा सब खत्म करके आना सुललित—आकर यहीं हम लोगों के साथ चाय पीना—

उसके बाद बाजार। सुललित कहता—आप खुद क्यों तकलीफ कर बाजार जाइयेगा काका बाबू, मैं जा रहा हूँ—

पहले-पहल भूधर बाबू की तरफ से एतराज उठता। लेकिन सुललित उन सब एतराजों को अपने शरीर से छूने नहीं दिया। रिटायरमेंट के प की छुट्टी। सिर्फ थोड़े-से महीने। वे ही कुछ महीने कट जाने पर एकदम मुि सिर्फ़ हर महीने पहली तारीख को हेड क्वार्टर में जाकर महीने की तन आना। उसी पहली तारीख को फिर मिलिटरी का झमेला आ पहुँचत वही सब पोशाक पहनते। उसके बाद तनखा लेने जाते।

कहते—और पाँच महीने, समझे सुललित, और सिर्फ पाँच महीने बाद शरीर से इस दासत्व का खोल एकदम खोलकर फेंक दूंगा, फिर क पहनूंगा। फिर कभी नहीं पहनूंगा। उसके बाद एकदम हमेशा-हमेशा छुट्टी। तब तुम और हम दोनों मिलकर सिर्फ बैठे-बैठे गप मारेंगे—

आरती कहती—हाँ, गप मारने से तुम्हारा हो-न-हो चल जायेगा सुललित दादा का ? सुललित दादा शायद किसी काल में अपना

नहीं करेंगे ?

लड़की की बात से शायद तब याद आता काका बाबू को। कहते—यह भी तो ठीक है मैंने सिर्फ अपनी निजी बात ही सोची है। सुललित की बात एकदम याद नहीं आयी—

सुललित कहता—उस समय की बात उस समय सोची जायेगी काका बाबू, अभी तो मुझे कोई काम नहीं है—

भूधर बाबू को मानो याद आ जाता। कहते—लेकिन तुम्हारा वह क्लब ? जिस क्लब के तुम ट्रेजरर हो ?

सुललित कहता—क्लब ठीक है—

—ठीक है माने ? तुम तो यहो सब समय काटते हो, तो फिर तुम्हारा क्लब कौन देखता है ?

क्लब की बात सचमुच भूल गया था सुललित। काका बाबू वगैरह के आने के कुछ दिनों बाद से ही सुललित के लिए हम लोग मानो तुच्छ हो गये थे। तिसपर क्लब के किसी आयोजन में ज़रा-सी कुछ त्रुटि हो जाने पर सुललित सहन नहीं कर पाता था।

एक दिन सबेरे उसके घर जाकर हम लोगों ने देखा, सुललित घर से बाहर निकल रहा है।

पूछा—कहाँ जा रहा है ?

सुललित के पास उस समय हमारे साथ खड़े होकर बात करने का भी समय नहीं था। बोला —काका बाबू के पास जा रहा हूँ भाई—

—काका बाबू ? भगीरथ कह रहा था जरूर। पर वे तुम्हारे किस प्रकार के काका बाबू हैं ?

सुललित बोला—हमारे पिता के बचपन के मित्र। वे लोग कलकत्ता में नये आये हैं, यहाँ का कुछ भी पहचानते नहीं, इसीलिए मैं उन लोगों को देखने-सुनने जाता हूँ—

—उनके कोई लड़की है शायद ?

सुललित बोला—हाँ, काकी तो नहीं हैं। वही लड़की रहती है काका के साथ। और एक बड़ी लड़की थी काका बाबू की, वह मर गयी है। अब काका बाबू की यही एकमात्र सन्तान है।

उसके बाद कुछ ठहरकर बोला—मैं जाऊँ भाई, मुझे देर हो गयी—

यह कहकर सुललित चला ही जा रहा था, पीछे से हम लोग बोले—तू क्लब में कब आयेगा ? तेरे लिए सबकुछ जो अटका पड़ा है—

सुललित जाते-जाते बोला—मैं भाई बड़ा व्यस्त हूँ आजकल, अब क्लब

कहकर करीव-करीव दौड़ते-दौड़ते वस के रास्ते की तरफ चला गया। और हम लोग, उसके दोस्त, उसकी तरफ हताश नजर से देखते रहे।

हम लोगों में से एक बोल उठा—सुललित इस वार कठिन रूप से अधःपतित हो जायेगा। एक वार जव लड़की के पल्ले में पड़ गया है तव उससे बचाने का रास्ता नहीं है—

वात रसिकता से कहने पर भी वह भविष्यत् में एक किसी दिन इस प्रकार मर्मान्तिक सच हो जायेगी, यह हम लोग उस समय सचमुच कल्पना नहीं कर सके थे। मामूली आदमी हैं जो, वे सहज साधारण नियम से ही जीवन काटते हैं। संसार के समस्त झंझट-झमेले सिर पर उठाकर टिके रहने की आप्राण चेष्टा से क्षत-विक्षत होकर भी सिर उठाकर खड़े होना चाहते हैं वे।

लेकिन सुललित ?

इन सुललितों का जीवन-दर्शन ही लगता है अलहदा है, इसीलिए वे जव जिस काम में लगे रहते हैं उसी में जीवन ढाल देकर तृप्ति पाते हैं। इन सुललितों ने ही जव देश-सेवा की है तव देश के लिए फाँसी के तख्ते पर झूलने में भी वाधा नहीं मानी। और उसी प्रकार कितने लाख-लाख सुललित जो विस्मृति के अतल में दवकर निश्चिह्न हो गये हैं उनकी खबर भी क्या कहीं किसी उपन्यास-इतिहास में लिखी रहती है ? ऐतिहासिक उनके लिए एक लाइन जगह देने में भी कंजूसी करते हैं इसीलिए वे भी किसी के मन में चिह्न वनाकर रख नहीं जा सकते। विराट् प्रतिभा के अधिकारी होने पर भी मनुष्य उन्हें भूल जाते हैं।

हमारा सुललित भी उसी प्रकार का था। हममें से सिर्फ कुछ लोग उसके वन्धु-वान्धव होने के कारण ही तो आज उसे मन में याद रखे हुए हैं। और मैं लेखक हुआ था, इसीलिए तो उसे लेकर गल्प लिख रहा हूँ। गल्प लिखकर उसे लाख-लाख लोगों को यह वता रहा हूँ।

उस दिन वैद्यनाथ से सवेरे-सवेरे रँधवाया गया। भूधर वावू उस दिन गाना सुनने जायेंगे। कलकत्ते में आकर ऐसा सुयोग वे नहीं छोड़ेंगे। रात आठ वजे फंक्शन शुरू होगा। वड़े-वड़े उस्तादजी लोग आयेंगे। आरती भी इसीलिए तैयार हो गयी है।

वहुत दिनों के वाद फिर से भूधर वावू का अच्छा सूट निकला है। ट्रंक से कोट-शर्ट निकाल दिया है आरती ने। आरती ने खुद भी एक दामी साड़ी पहनी है।

आरती दामी साड़ी पहनकर पिता के पास आकर वोली—देखो तो

पिताजी, यह साड़ी फबी है मुझे ?

भूधर बाबू ने अच्छी तरह नजर डालकर, देखकर, विचारकर बोले—यह साड़ी क्यों पहनी बेटी तूने ? तेरी वह साड़ी कहाँ गयी ?

आरती समझ नहीं सकी। उसने पूछा—कौन-सी साड़ी ?

भूधर बाबू बोले—क्यों, वही जो उस दिन जब हम लोग सिनेमा देखने गये थे, तब सुललित ने तेरी साड़ी की प्रशंसा की थी, मैंने सुन लिया था।

—ओ समझी, लेकिन···

—लेकिन क्या ?

आरती कहती—रोज-रोज वही एक ही साड़ी पहनना क्या अच्छा है। सुललित दादा शायद सोचेंगे मेरे पास वही एक अच्छी साड़ी है।

भूधर बाबू बोले—तो और कुछ साड़ियाँ तुम सुललित से पसन्द करवाके खरीद लो न ? मैं भाई ये सब साड़ियाँ-वाड़ियाँ ज्यादा पहचानता नहीं। तुम्हारी माँ को मैंने जितनी बार साड़ियाँ खरीद दी हैं, उतनी बार तुम्हारी माँ ने उन्हें खोलकर फेंक दिया है, उसके बाद से फिर मैं तुम्हारी माँ की साड़ी नहीं खरीदता था। कहता, तुम रुपये लेकर दूकान में जाओ, तुम्हारी जैसी खुशी हो साड़ी खरीद लाओ—

उसके बाद कुछ ठहरकर बोले—इस बार तू सुललित को साथ ले जाकर साड़ी खरीदना बेटी, उसे जैसा पसन्द हो, वैसी ही साड़ी खरीदना तेरे लिए अच्छा है—

पिता की बात सुनकर सिर्फ साड़ी नहीं, और भी बाँधे हुए कुछ नये साज-पोशाक पहन लिये आरती ने। एक ब्लाउज पहनकर आइने के सामने खड़ी होकर अपना फिगर देखने पर भी शायद ठीक उतना देखने में अच्छा नहीं लगा। यह मानो अपने को बार-बार सजाकर भी निज को ही अस्वीकार करने के समान हुआ। और यह तो सिर्फ आइने में अपनी आँखों से अपने को देखना नहीं है, दूसरे की आँखों से अपने को देखना है। इस प्रकार के देखने में कुछ सन्देह का विष रहता है। असल मतलब यह है कि और एक व्यक्ति उसे पसन्द करेगा न, दूसरे की आँखों में वह अच्छी दिखेगी न ?

हठात् हाथ की घड़ी की तरफ नजर पड़ते ही आरती सिहर उठी। ओ मा, शाम के सात बज गये हैं ! इधर अब तक उस आदमी के आने का नाम तक नहीं है। जल्दी-जल्दी जिस ब्लाउज को लेकर इतनी परीक्षा-निरीक्षा चल रही थी उसे ही पहनकर उसने साड़ी शरीर पर लपेट ली।

—ओ बेटी, ओ आरती—

बाहर से पिता के बुलाने की आवाज कान में पड़ते ही आरती ने समझा,

आरती सामने का काम-काज खत्म करते-करते चिल्लाकर बोल उठी-आती हूँ पिताजी—

कहीं जाना ही तो नहीं है, जाना माने हंगामा। घर-कमरे-दरवाजे-वाक्स आलमारी सबमें ताला-चाबी लगाना भी तो एक काम है। कुछ खुला पड़े रह से तो चोरी-डकैती होगी। कलकत्ता तो लखनऊ नहीं है। सुललित कह गया है यहाँ खाली घर रखकर कहीं निकलते ही साथ-साथ सबकुछ चोरी।

—कहीं जा रही हैं शायद भाई ?

आरती के कान में बात जाते ही उसने देखा, बगल के घर की खिड़की में वही बहू उस दिन भी खड़ी-खड़ी उसकी तरफ ताककर देख रही है।

आरती हँसी। बोली—हाँ भाभी, एक गाने का फंक्शन है—

—गाने का फंक्शन ? कहाँ ?

आरती बोली—भवानीपुर में। ठीक किस जगह है यह मैं नहीं जानती मैं तो कलकत्ता की कोई जगह पहचानती नहीं। पिताजी को गाना सुनने का खूब शौक है, बड़े-बड़े उस्ताद आ रहे हैं न, इसीलिए—

—तो फिर जाइए, आपको और ज्यादा देरी नहीं करवाऊँगी। आपके पास टिकिट कटाने के लोग तो हैं ही, टिकिट कटाकर ला देते हैं—

—आप सुललित की बात कह रही हैं न ? हम लोग खूब मिहनत करवा लेते हैं उससे—सचमुच अपना काम-काज करके वह हम लोगों को देखता-सुनता है—

बहू ने कहा—उनके साथ ही तो आपका विवाह होगा ?

—विवाह !

आरती हँस उठी। बोली—आपसे किसने कहा ?

बहू ने कहा—मैं समझ गयी। वे सज्जन और आप लोग तो एक ही जात के हैं न ?

—एक जात होने से ही क्या विवाह हो जाता है ? आप न जाने क्या कह रही हैं।

बहू हँसी। बोली—ना, तो भी मैं जान गयी। नहीं तो वे क्यों सवेरे से सारे दिन आपके घर में रहते हैं ? आप लोग जहाँ घूमने जाते हैं, वे भी तो आपके संग रहते हैं देख रही हूँ।

आरती बोली—वे इसलिए संग रहते हैं क्योंकि हम लोग कलकत्ता में नये आये हैं—

बहू ने कहा—सो आप जो भी कहिए, उनके साथ आपका विवाह होने पर खूब जँचेगा। कैसा सुन्दर चेहरा है उनका—

हठात् भीतर से फिर पिता के गले की आवाज कान में पड़ी—ओ री, ओ

आरती, जल्दी आ, देर क्यों कर रही है ?

बहू ने कहा—आप जाइए भाई, आपको मैंने बहुत देर रोक रक्खा, अब नहीं—

पिता के पास आते ही आरती ने देखा, सुललित जाने कब चुपचाप आ गया है। उसका मुँह गम्भीर है, चेहरा भी अस्त-व्यस्त।

आरती ने आते ही कहा—मैं बहुत देर से तैयार हूँ पिताजी, बगल के मकान की जिस बहू से बातचीत की थी, उससे ही बात करते-करते मुझे देर हो गयी। चलो, साढ़े सात बज रहे हैं—

भूधर बाबू बोले—लेकिन जा नहीं पायेंगे री हम लोग—

आरती ने सुललित की तरफ ताका। बोली—क्यों ? जा क्यों नहीं सकेंगे ?

भूधर बाबू बोले—सुललित से सुन न, उसे टिकिट नहीं मिला, खूब भीड़ है।

आरती अवाक्। फिर सुललित की तरफ देखा उसने। बोली—क्या, सब टिकिट बिक गये ?

सुललित बोला—नहीं, यह बात नहीं है, टिकिट मिल रहे हैं, लेकिन ज्यादा दामों में—

आरती बोली—तो हो-न-हो ज्यादा दाम के टिकिट ही होते, और भी कुछ सामने के चेयर में बैठते—

सुललित बोला—नहीं, यह बात नहीं है, दस रुपये का टिकिट बीस रुपयों में बिक रहा है, गुण्डे टिकिट ब्लैक कर रहे हैं—

भूधर बाबू बोले—तो हो-न-हो तीस रुपये के टिकिट ही खरीदते ! अब्दुल करीम खाँ साहब की ठुमरी के लिए तीस रुपये खर्च करने से भी लाभ है—और तीस न हो तो पचास—

सुललित गम्भीर गले से बोला—ना काकाबाबू, गुण्डों को सहारा देना अन्याय है। मैं उसे पाप समझता हूँ—

भूधर बाबू बोले—लेकिन सुललित, हम लोग जो सजे-धजे बैठे हैं जाने के लिए ! कितनी आशा से बैठे हैं—

बोलकर उन्होंने आरती के मुँह की ओर ताका। उससे बोले—क्यों बेटी, तू क्या कहती है ?

आरती चुप रही आयी। सुललित बोला—लेकिन आप लोग होते तो क्या करते बोलिए ? आप होते तो दस रुपये का टिकिट बीस रुपये देकर खरीदते ? जो वाजिब दाम है, वह मैं दे सकता हूँ, लेकिन उससे एक पैसा ज्यादा क्यों दूँगा, बताइए ?

इस बात के जवाब में भी आरती कुछ नहीं वोली ।

जवाब दिया भूधर बाबू ने । वोले—लेकिन सब चीजें तो आजकल हम लोगों को ब्लैक में खरीदनी पड़ रही हैं, और गाने-बजाने का टिकिट ही ब्लैक से खरीदने पर दोष हो गया ?

सुललित वोला—मैंने जानबूझकर कोई चीज आज तक ब्लैक में नहीं खरीदी काका बाबू, जिस दिन वह खरीदनी होगी उस दिन मानो मैं जीवित न रहूँ—

भूधर बाबू वोले—बात तुमने अन्याय की नहीं कही सुललित, मैंने भी तुम्हारे समान ही एक काल में वे सब बातें कही हैं, लेकिन मिलिटरी में घुसने के बाद से वे सब आदर्श मुझे एकदम तिलांजलि दे देने पड़े । अब सोचता हूँ जैसे सब चलता है वैसे ही चले, मैं अकेला आखिर क्या कर सकूँगा । पृथ्वी के सब लोग जिस दिशा में चल रहे हैं उसी ओर ताल मिलाकर चलना ही तो अच्छा है ।

बात करते-करते हठात् उन्हें ध्यान आया । उन्होंने सामने देखा, आरती कमरे में नहीं है । तिस पर थोड़े पहले ही वह सज-धजकर आयी थी और गाना सुनने जाने के लिए तैयार खड़ी थी । शायद अन्त में घटना सुनकर उसे मन में खूब कष्ट हुआ है इसीलिए वह फिर अपने कमरे में चली गयी है ।

भूधर बाबू ने लड़की को बुलाया—ओ री आरती, कहाँ गयी ?

सुललित की तरफ देखकर वे वोले—उस बेचारी ने बड़ी आशा की थी, इसीलिए शायद उसे मन में बड़ा कष्ट हुआ है । तुम एक बार जाओ न बेटा, उसके पास जाओ न, जाओ—

सुललित ने बगल के कमरे में जाकर देखा, आरती के कमरे का दरवाजा भीतर से बन्द है । लौटकर उसने कहा—काका बाबू, आरती के कमरे का दरवाजा तो बन्द है !

भूधर बाबू ने कहा—तो तुम दरवाजा ठेलो न, ठेलकर देखो न वह क्या कहती है—

सुललित ने कहा—इसकी बनिस्बत आप ही उसका गुस्सा ठण्डा कीजिए, मैं अब चलूँ काका बाबू—

—ना ना बेटा, तुम जाना मत, वह बड़ी गुस्सैल लड़की शायद मेरे ऊपर ही बिगड़कर जाने क्या काण्ड कर बैठेगी । जान जिन बच्चों की माँ मर चुकी होती है, वे लड़के-लड़कियाँ थोड़े अ हैं । तुम और एक बार जाकर उसके कमरे का दरवाजा ठेलो न—

सुललित बोला—काका बाबू, मैं इस सबके बीच में आना न उसके बदले चलिए, आप लोगों को मैं फंक्शन में ले जाकर पहुँचा दे

—और टिकिट ?

सुललित बोला—टिकिट जिस दर से मिले उसी दर से आप लोगों के लिए खरीद दूंगा—

—और तुम ?

सुललित बोला—मैं ब्लैक में टिकिट कटवाकर हाल में घुसूंगा नहीं काका बाबू, आप लोगों को भीतर घुमाकर मैं बल्कि बाहर खड़ा रहूँगा—

भूधर बाबू बोले—ना ना, यह कैसे हो सकता है ! यह हो ही नहीं सकता। तुम्हें जाना ही होगा। और तुम नहीं जाओगे तो मैं भी नहीं जाऊँगा, हममें से कोई भी नहीं जायेगा —

हठात् दोनों ने देखा, आरती के कमरे का दरवाजा खट से खुल गया। उस समय तक उसने अपनी साड़ी-ब्लाउज सबकुछ बदल ली थी। मुंह का प्रसाधन पोंछ लिया था। दोनों व्यक्तियों की स्तम्भित दृष्टि के सामने वह धीर पैरों से सामने आ गयी।

बोली—मैं अब कहीं नहीं जाऊँगी पिताजी, तुम कलकत्ता छोड़कर अभी चले चलो। हम लोग लखनऊ में ही तो अच्छे थे। क्यों तुम यहाँ आये ? क्या करने आये ? मैं अब एक क्षण भी यहां नहीं रहूँगी—

भूधर बाबू बोले—तो तूने साज-पोशाक बदल क्यों लिया बेटी ? गाना सुनने न जाकर भी दूसरी किसी जगह भी तो हम लोग जा सकते थे—

आरती बोली—नहीं, मैं और कहीं नहीं जाऊँगी, जहाँ से हम लोग आये थे तुम वहीं लौट चलो—

सुललित और ज्यादा खड़ा नहीं रह सका। बोला—तो फिर मैं अभी जाऊँ काका बाबू—

भूधर बाबू बोले—ना ना, तुम जाना मत सुललित, मैं अकेला आरती को समझा नहीं सकूँगा, बल्कि तुम अब उसे थोड़ा समझाकर सब बातें बताओ—

आरती बोल उठी—ना, मैं दूध पीती बच्ची नहीं हूँ जो मुझे समझाने की दरकार होगी। दरकार होने पर मैं तुम्हारे लिए खुद ही टिकिट खरीद लाऊँगी पिताजी, टिकिट के लिए दूसरे किसी की खुशामद करनी नहीं होगी तुम्हें—।

भूधर बाबू बोले—यह अच्छा ही तो है, बाद को न हो यही होगा। लेकिन अभी इतना गुस्सा-उस्सा होना क्या अच्छा है ? देखती है न, सुललित घर चला जाना चाहता है—

आरती बोली—तो उन्होंने क्या समझा है ? वे हम लोगों को देखेंगे-सुनेंगे नहीं तो हम लोग अगाध जल में डूब जायेंगे ? हम लोग क्या बच्चे हैं ? वे अगर नहीं भी आये, उससे क्या हम लोग उपास करेंगे, यह कहना चाहते हो ?

भूधर बाबू ने बाधा देकर कहा—आह, तू यह क्या बोल रही है ?

आरती बोली—मैं जो बोलती हूँ ठीक बोलती हूँ पिताजी। सब जान गये हैं कि हम लोगों ने गाना सुनने का टिकिट कटवाया है। अब उन लोगों के सामने मुँह कैसे दिखाऊँगी बोलो तो ? अब उनसे क्या कहूँगी ?

सुललित बोला—मैं तो कहता हूँ तुम चलो, तुम लोगों के गाना सुनने में मैं बाधा नहीं डालूँगा। मैं खुद सिर्फ न गया तो काम चल जायेगा।

भूधर बाबू बोले—हाँ, यह तो अच्छी बात है, तो फिर ऐसा ही करें, चल न बेटी—

आरती बोली—ना, जाना हो तो तुम लोग जाओ, मैं नहीं जाऊँगी—

कहकर फिर वह अपने कमरे की तरफ चली गयी।

भूधर बाबू बोले—वह जब जायेगी नहीं तब क्या किया जायेगा सुललित, तो फिर मैं भी यह साज-पोशाक खोल दूँ जाकर—

सुललित बोला—तो फिर मैं चलूँ काका बाबू—

यह कहकर वह एक मुहूर्त भी वहाँ खड़ा नहीं हुआ। कमरे से बाहर निकल गया। उसके बाद आँगन पार करके दरवाजे के बाहर आते ही पीछे से आरती का गला सुनायी पड़ा—सुनिए !

सुललित ने मुँह फिराकर खड़े होते ही देखा, आरती उसे ही लक्ष्य करके बात कह रही है। वह बोला—क्या बोलोगी, बोलो ?

आरती बोली—अपने को इतना साधु समझना दूसरे को खूब छोटा मानने के बराबर होता है, यह याद रखियेगा।

सुललित ने कहा—किसने कहा मैं आप लोगों को छोटा समझता हूँ ?

आरती बोली—आप जप-तप करते हैं, और हम लोग म्लेच्छ हैं, इसीलिए जप-तप नहीं करते; आप ब्लैक मार्केट नहीं करते, और हम लोग चोर-बदमाश ब्लैक-मार्केटियर हैं, यही तो ? सो इस तरह दूसरों को छोटा बनाना लेकिन बड़े मन का परिचय नहीं है—

यह कहकर वह फिर वहाँ खड़ी नहीं हुई। सीधे जैसे आयी थी वैसे ही फिर सीधे घर के भीतर जाकर खटाक से सदर दरवाजे की साँकल बन्द करके अदृश्य हो गयी।

सुललित वहाँ कुछ देर स्थिर भाव में खड़ा। उसके बाद फिर धीरे-धीरे अपने गन्तव्य स्थान की ओर चलने लगा।

इसके कुछ दिनों के बाद ही हमने सुना कि सुललित का विवाह होगा। विवाह होगा सुललित के नये काका बाबू की लड़की आरती देवी के साथ। खबर हम

लोगों के लिए अवाक् होने के समान कुछ नहीं थी। क्योंकि सुललित हम सब मित्रों में ईर्ष्या का पात्र था। वे लोग बड़े आदमी हैं, और सिर्फ बड़े आदमी नहीं, खानदानी बड़े आदमी हैं। उनके घर में विवाह होने पर मुहल्ले के सब गण्यमान्य लोगों को न्योता मिलता है। बँधी लिस्ट में हम लोगों का नाम भी उसमें घुस गया था। इसलिए उसके विवाह में हम लोगों को न्योता मिलेगा, इस विषय में हम लोग निश्चिन्त थे। और इससे ज्यादा हम लोग और क्या चाहेंगे ? और जीवन में चाहने से ही क्या सबकुछ मिल जाता है ? सुललित के समान तो हम लोगों में कोई गुण भी नहीं था। लिखने-पढ़ने में भी वह हम लोगों में सबसे ऊपर था। चेहरे से भी वह सबसे अच्छा था देखने में। तो फिर ?

लेकिन उस समय हम क्या जानते थे कि मनुष्य के भाग्य-विधाता की दृष्टि से हम लोगों की दृष्टि में इतना फर्क है ? तब कौन जाने हम लोग जो आँखों से देखते हैं वह असल देखना नहीं है। असल देखना जो आँखों से देखने की चीज ही नहीं है, यह भी उस समय हम लोग नहीं जानते थे।

वह दिखायी पड़ा तमाम दिनों के बाद।

तब सबकुछ कब मिट-मिटा गया था, यह बाहर का कोई जान नहीं सका। मिट-मिटा जाने पर भी सुललित ने अपना निजी मतवाद नहीं छोड़ा। आरती ने भी अपनी जिद नहीं छोड़ी। और लगता है ऐसी जिद्दी लड़की पहले किसी ने भी नहीं देखी।

एक जिद्दी लड़की और एक मत् प्रकृति का लड़का, इन दोनों के सामंजस्य से क्या उलट-पलट हो जा सकता है इस उपन्यास में उसकी ही कहानी है। और इसके अलावा इतने दिनों बाद यदि सुललित से भेंट न होती तो इस विपर्यय का इतिहास मैं तो जान ही न पाता।

सुना कि उस समय ज्यों ही जरूरत होती तभी भूधर बाबू दौड़कर सन्दीप के पास आते। इतने दिनों के बाद दोनों मित्रों को परस्पर नजदीक रहने का सुयोग मिला, यह दोनों के भाग्य की बात थी।

भेंट होते ही दोनों मित्रों में पहली बात होती—कैसे हो भाई आज ?

सन्दीप कहता—कल थोड़ी नींद आयी थी भाई। तुम्हें ?

भूधर कहता—मुझे नींद आयी थी, लेकिन तुम लोगों के कलकत्ते में जो आवाज होती है !

भूधर कहता—अरे बोलो मत, लाउडस्पीकर की। सारी रात लाउडस्पीकर से हिन्दी सिनेमा का गाना बजता रहा, इसीलिए पहली रात को नींद आने में थोड़ी देर हुई।

तुम्हें दी थी ?

सन्दीप कहता—भाई मेरा शरीर अब अच्छा नहीं होगा।

भूधर कहता—क्यों, क्यों अच्छा नहीं होगा ? तुम्हारी और मेरी तो एक ही उमर है भाई—

सन्दीप कहता—तुम अपनी बात छोड़ दो भाई, तुमने मिलिटरी में नौकरी की है, हमेशा कठिन मिहनत की है, अच्छा-अच्छा खाया-पिया है, तुम अच्छे क्लाइमेट में रहे हो, तुम्हारे साथ मेरी तुलना ? तुम जितनी भी दवा-दारू दो, इस उमर में अब मेरा शरीर नीरोग नहीं होगा। तब सिर्फ सुललित का कुछ भला देखकर जा सकने पर ही मैं खुश हूँ—

भूधर पूछते—सुललित क्या करने को कहता है ?

भविष्यत् में सुललित क्या करेगा, भविष्य जीवन में सुललित क्या होगा, यही प्रसंग उठता। क्योंकि सुललित की प्रतिष्ठा के साथ आरती का भाग्य भी जुड़ा हुआ था।

भूधर कहते—रानू के मर जाने के बाद मैं बड़ी चिन्ता में पड़ गया था भाई, सोचा इधर मेरे भी रिटायर होने का दिन बहुत नजदीक आ रहा है, उधर छोटी लड़की का भी एक कोई बन्दोबस्त नहीं हो पाया—

सन्दीप कहता—तुम्हारी छोटी लड़की के लिए चिन्ता क्या है, वह तो बहुत अच्छी लड़की है।

भूधर कहता—लड़की अच्छी है यह मैं जानता हूं, लेकिन सिर्फ अच्छी लड़की होने से क्या होगा ? मैं तो यहाँ किसी को पहचानता नहीं—एक बात सम्भव हो सकती है, तुम अगर उसे ले लो, अवश्य तुम अगर आरती को पसन्द करो—

—मैं ?

जीवन की यन्त्रणा में क्षत-विक्षत होकर मनुष्य जब आकाश-पाताल की दौड़ लगाता है तब लज्जा-संकोच मित्र-शत्रु किसी की कोई बाधा नहीं रह जाती। मेजर भूधर गांगुली के साथ भी लगता है यही हुआ था। छोटी उमर में जब उन्होंने डाक्टरी पढ़ना शुरू किया था, वह डाक्टर विधान राय का जुग था। डाक्टरों का उस समय बाजार में खूब सम्मान-प्रभाव था और वैसी ही उनकी प्रतिष्ठा थी। जिस किसी डाक्टर का नाम लेते ही, श्रद्धा से मनुष्य का माथा नीचा हो जाता था।

मेजर भूधर गांगुली ने सोचा था, डाक्टरी पास करने के बाद वे भी एक दिन उसी तरह का मान-सम्मान पायेंगे। लेकिन डाक्टरी पूरी-पूरी पास करने के पहले ही उनके आत्मीय-स्वजन सब मर गये, तब एकदम अकेले हो गये वे। और तब भाग्यवश मिलिटरी में एक नौकरी पा गये। और उसी क्षण पसन्द के योग्य और कोई काम-काज न पाने के कारण भगवान् का आशीर्वाद मानकर

उसे ही दौड़कर उन्होंने ग्रहण कर लिया।

उसके बाद कब नौकरी शुरू हुई, कब एक दिन वह समाप्त भी हो गयी, यह ख्याल करने का समय उन्हें नहीं मिला।

इसी तरह कितने दिन कट गये ये कौन जाने ! हठात् एक दिन उन्हें मिलिटरी-हेडक्वार्टर से उन्हें एक नोटिस मिला। नोटिस में लिखा था, आगामी महीने में फलाँ एक दिन उन्हें रिटायर होना होगा।

चिट्ठी पाकर वे चौंक उठे। रिटायरमेन्ट ! अवकाश ! उन्हें अवकाश लेना होगा ! यही तो उस दिन। यही तो सिर्फ उस दिन उन्होंने नौकरी शुरू की थी ! यही तो सिर्फ उस दिन उनकी पहली लड़की रानू पैदा हुई थी।

इतनी जल्दी सब उनका खत्म हो गया !

और रानू ! रानू की बात याद आते ही वे न जाने कैसे अन्यमनस्क हो जाते ! क्यों ऐसा हुआ ! क्यों रानू ने ऐसा किया ? रानू ने किस तरह अपने पिता को इस प्रकार··· ?

रिटायरमेण्ट का नोटिस पाने के बाद घर लौटते ही आरती ने पूछा—क्यों पिताजी ? तुम्हें क्या हुआ है ? आज तुम इतने सूखे-सूखे क्यों दिखायी पड़ रहे हो ?

—सूखा-सूखा दिखायी पड़ रहा हूँ ?

भूधर गांगुली पहले बात बताना नहीं चाहते थे, लेकिन आरती के तंग करने पर बिना बोले भी रह नहीं सके आखिर में।

बोले—मेरे रिटायरमेण्ट का नोटिस आया है बेटी।

आरती बोली—तो बूढ़े होने पर रिटायर तो सबको ही होना होगा पिताजी, उमर हो जाने पर रिटायर नहीं होंगे ?

भूधर गांगुली बोले—यही तो सोचता हूँ बेटी, इतनी जल्दी बूढ़ा हो गया, लेकिन तेरा कुछ कर नहीं पाया।

आरती बोली—मेरा ? मेरा और क्या होना बाकी है ? मैंने लिखना-पढ़ना सीखा है, मैं मनुष्य बन गयी हूँ, और तुम मेरा क्या करना चाहते हो ?

भूधर गांगुली बोले—क्यों, तेरा विवाह ? हमेशा क्या तू अविवाहित रहेगी ? मैं अब तक तेरा विवाह जो नहीं कर सका।

आरती कह उठी—वाह रे, मेरे विवाह करके ससुराल चले जाने पर तुम्हें देखेगा कौन, सुनूं ?

भूधर बाबू बोले—मेरी बात तू छोड़ दे, मैं तो अब हमेशा जीवित नहीं रहूँगा। तब क्या होगा ? तब तू किसके पास जाकर खड़ी होगी ?

आरती बोली—तुम निश्चिन्त रहो, मैं किसी के पास कभी जाकर खड़ी नहीं होऊँगी पिताजी। यदि कभी खड़ी होऊँ तो मैं अपने निजी पैरों पर ही खड़ी

होऊँगी।

भूधर बाबू की आँखों में आँसू आ गये थे उस दिन लड़की की बात सुनकर। उन्होंने उस दिन सोचा था, आरती यदि उनका लड़का होती तो आज उन्हें क्या यह दुश्चिन्ता होती! और यह भी वे समझे थे कि संसार में रुपया ही सबसे बड़ी चीज नहीं है। रुपये से भी बड़ी चीज एक उपयुक्त—योग्य लड़का है, यह भी उन्होंने उस दिन हृदयंगम किया था।

लेकिन उसके लिए आखिर वे क्या करें? यही तो संसार का नियम है। एक व्यक्ति घर-भर लड़के-लड़कियाँ लेकर हैरान है, और एक व्यक्ति अगाध रुपयों के पहाड़ पर बैठा एक लड़के के लिए हाहाकार कर रहा है। और सिर्फ क्या लड़का? चारों तरफ के इस परस्परविरोधी प्रयोजन को पूरा करने के मामले को लेकर ही तो यह पृथ्वी चल रही है! इस पृथ्वी में इसीलिए कोई समय काटने के साधन के अभाव में छटपटा रहा है, और कोई समय के अभाव में अपनी आँखों के सामने अँधेरा पाता है!

अन्त में भूधर बाबू ने चिट्ठी लिखी, कलकत्ते के सन्दीप चाटुर्ज्जे को।

सन्दीप चाटुर्ज्जे उनके बचपन के कलकत्ता के मित्र हैं। उन्हें उन्होंने लिखा कि वे अपना शेष जीवन अपनी छोटी कन्या को लेकर कलकत्ता में ही काटना चाहते हैं। सन्दीप मानो एक घर ठीक कर रखे उनके लिए।

और उधर से सन्दीप ने भी लिखा—तुम यहाँ चले आओ, यहाँ तुम्हें कोई असुविधा नहीं होगी, मेरा लड़का सुललित है, वह तुम लोगों को देखे-सुनेगा।

उस समय रिटायर होने में और भी छह महीने बाकी थे। छुट्टी शुरू हो गयी थी; छह महीने छुट्टी काटने के बाद फिर एकदम छुट्टी, तब एकदम मुक्ति। तब लड़की का विवाह कर दे सके तो फिर कोई दुश्चिन्ता नहीं। पिंजरे से छूटे परिन्दे की तरह तब वे अपनी खुशी से जो तबीयत हो वही करते हुए घूम-घाम सकेंगे।

सो इतने दिनों के बाद उन्हें वह सुयोग मिल गया। एक दिन लड़की को सन्दीप की चिट्ठी दिखायी। बोले—यह देख, मेरे मित्र ने क्या लिखा है—देख···

आरती ने चिट्ठी पढ़कर देखा और कहा—यह सुललित कौन है जानूँ तो?

—और कौन है, उस चिट्ठी में ही तो लिखा है कि कौन है। सन्दीप का लड़का सुललित।

आरती थोड़ी देर के बाद बोली—समझी, तुम अपने मित्र के लड़के के साथ मेरा विवाह करने के मतलब में हो—मैं सब समझ गयी हूँ।

भूधर बाबू हँस पड़े। बोले—ना, देखता हूँ तेरी बुद्धि से मैं मुकाबिला नहीं कर सकूँगा।

लेकिन जब सचमुच अखीर में व कलकत्ते में आये तब लड़की की गति-मति देखकर डर गये। सुललित को सशरीर देखकर सचमुच वह उन्हें पसन्द आया, सुललित की चाल-ढाल भी पसन्द आयी। उन्होंने कुछ महीनों मिल-जुलकर ही समझा, इस जमाने में ऐसा लड़का दुर्लभ है। जरा-सी भी झूठ बात नहीं करेगा, बात जरा भी अदल-बदल नहीं करेगा, जरा-सी भी विलासिता नहीं करेगा कभी। आजकल के लड़कों की चाल-चलन के साथ मानो कोई मुकाबिला नहीं है सुललित का।

सुललित कहता—आजकल नाम की क्या कोई बात है काका बाबू? पृथ्वी भी तो आजकल की नहीं है, तो फिर मनुष्य का ही क्यों आजकल के मापदण्ड से विचार करेंगे?

भूधर बाबू पूछते—लेकिन इस प्रकार के मन से तुम आजकल की पृथ्वी में निभोगे कैसे सुललित?

सुललित कहता—सो निभ यदि न सकूं तो बल्कि ठहर जाऊँगा, लेकिन तब भी पृथ्वी से मैं आपसपन नहीं निभाऊँगा कभी।

सुललित के चले जाने पर भूधर बाबू कन्या से कहते—नहीं री, तू जो डर रही है वह बात नहीं है री, देखना यही सुललित एक दिन इन मनुष्यों की भीड़ ठेलकर सिर ऊँचा करके खड़ा होगा, होगा ही।

अन्त में बात सब पक्की हो गयी। पहलेवाली मन की कसा-कसी एक दिन जब मन समझने-समझाने की दशा में बदल गयी तब फिर दूसरी तरह का दृश्य सामने आ गया। तब भूधर बाबू का अकेले-अकेले घर में बैठे-बैठे घर का पहरा देने की पारी आ गयी। वे लोग बच्चे ठहरे, उन लोगों की बराबरी करके वे क्यों दौड़ेंगे?

आरती कहती—पिताजी, हम लोगों को आज लौटने में देर होगी। लेकिन तुम देखो अपने मन में कुछ सोचना मत।

लौटकर आने पर भूधर बाबू कन्या से पूछते—क्यों री, इतनी देर क्यों हुई तुम लोगों को? इतनी देर के लिए कहाँ गयी थी?

आरती कहती—वाह रे, तुम्हारे मित्र के लड़के ने जो छोड़ा नहीं, रात कर दी! मैं क्या करूँगी?

—कौन? सुललित? तुझे कहाँ ले गया था वह?

आरती कहती—दक्षिणेश्वर में।

किसी दिन दक्षिणेश्वर, किसी दिन बेराडेल चर्च में, और किसी दिन डायमण्ड हारबर में। मनुष्य को देखना होगा न! मनुष्य को देखना हो तो एकदम मिट्टी के निकट-निकट जाना होगा न! जाना होगा वहाँ जहाँ वह दीन-हीन-

सहाय है। जहाँ वह निःसंग, निरवलम्ब, निर्भीक है। सिर्फ कलकत्ता ही सब
हीं है आरती, जैसे लखनऊ नहीं है सबकुछ। यह शहर छोड़कर, यह ग्राम-
जनपद-बस्ती पार करके समस्त पृथ्वी के मनुष्य की अन्तरंग कामना-वासना का
हिस्सेदार होना होगा। सब मनुष्य आज धीरे-धीरे परस्पर एक-दूसरे से विच्छिन्न
हो गये हैं।

सुललित के पास आरती जितनी देर रहती उतनी देर ये ही सब बातें। आरती पूछती—तुम क्या ये ही सब बातें सुनाने के लिए मुझे यहाँ ले आये हो न सुललित दादा ?

सुललित कहता—क्यों, ये सब बातें सुनना शायद तुम्हें अच्छा नहीं लग रहा ?

आरती कहती—ना, अच्छा क्यों नहीं लगेगा ? लेकिन हर वक्त ये ही सब बातें सुनते क्या अच्छा लगता है ? मनुष्य के जीवन में और तमाम बातें भी तो हैं !

—और कौन-सी बातें हो सकती हैं तुम बताओ ?

आरती कहती—क्यों, मनुष्य क्या सारे दिन मनुष्य की बात ही सोचेगा ? उसका निज का खाना-पीना, उसकी निजी सामाजिकता भी तो है ! साड़ी-गहना-घरद्वार-गाड़ी की बातें भी तो मनुष्य सोचता है !

सुललित बोलता—यह सब चिन्ता तो बाघ-भालुओं को भी है, तो फि जन्तु-जानवरों से हम लोगों का फर्क क्या है ?

आरती कहती—जाने दो, तुमसे मैं ज्यादा तर्क नहीं करूँगी।

सुललित तब थोड़ा नरम होता। कहता—ठीक है, तो फिर अब से तुम्ह साथ कौन-सी बातें करूँ, बोलो ?

आरती कहती—तुम्हीं बताओ न, और कौन-सी बातें करोगे ?

सुललित कहता—सचमुच आरती, मुझसे अन्याय हो गया है। इस बा तुम जो बात करने को कहोगी, वही बात करूँगा। मेरे जप-तप, मेरी पूजा पर तुम्हारा इतना गुस्सा है, तुम अगर कहो तो मैं हो न हो उसे भी त्याग दूंग

आरती सुललित के मुँह की तरफ देखती। उस आदमी के लिए बड़ी म होती उसके मन में। दिन-दिन मनुष्य मानो उसके सामने शिशु होता जा है। छोटे बच्चों के समान सरल, सीधासादा, साधारण !

आरती उसी समय कहती—मैंने तुम्हारा खूब नुक्सान किया है, जानते

सुललित अवाक् हो जाता। बोलता—नुक्सान ? कैसा नुक्सान ?

आरती कहती—मैं जब पहले-पहल कलकत्ता आयी तब तुम कितने कितनी जगहों में जाते, कितने लोगों से मिलते-जुलते, तुम्हारा क्लब था आने के बाद से तुम्हारा वह सब अपनापन नष्ट किया है…

—नष्ट ? नष्ट किया है तुमने ?

आरती कहती—हाँ, मैं जानती हूँ, मैंने ही तुम्हारा सबकुछ नष्ट किया है, मैंने तुम्हारा सर्वनाश किया है···

—क्यों ? यह बात कह क्यों रही हो तुम ? मैं तो कुछ भी समझ नहीं पा रहा हूँ।

ये सब घटनाएँ निर्जन में एकान्त में घटतीं। एक मनुष्य ने बचपन से बड़े होने के बीच की जगह पहुँचकर हठात् आविष्कार कर लिया था कि उसके जीवन में जिस चीज का सबसे ज्यादा अभाव है उसे ही पूरा किया है आरती ने। आरती ने आते ही उसे पहले जता दिया कि वह इतने दिनों असम्पूर्ण था। आरती ने ही उसके जीवन का अर्द्धांश उसे प्रकट कर दिया।

यह आविष्कार करने के बाद से ही सुललित मानो एकदम दूसरा मनुष्य हो गया। उन लोगों के विराट् घर के एक-एक छेद से जो अशान्ति इतने दिनों उसे यन्त्रणा दे रही थी वह मानो कुछ कम होने लगी। जरूरत क्या है उसे छोटी-छोटी रत्ती-रत्ती बातें लेकर सिर खपाने की ? किन लोगों की नौकरानियों ने किनके घर के किस हिस्से में कूड़ा-करकट फेंका, और किनकी अन्नपूर्णा के आयोजन में कौन न्योता पाये बिना भी आकर न्योता ला गया, यह देखने की उसे जरूरत क्या है !

और क्लब ? क्लब भी मानो पहले के समान उतना उसे आकर्षित नहीं कर पाता था। संसार में बन्धु-मित्र, आत्मीय-स्वजन सब मानो कुछ दिनों में ही सुललित के लिए मिथ्या हो गये।

आरती ने एक दिन कहा—जानते हो, पिताजी ने कहा था तुमने मुझसे विवाह करने की कोई बात कही है या नहीं···

—विवाह ?

आरती बोली—हाँ, पिताजी का विश्वास है कि तुम मुझसे विवाह करने के लिए एकदम अस्थिर हो उठे हो—

सुललित घास पर सिर रखकर सोया था। बात सुनकर ही उठ बैठा। हालत बाहर के व्यक्तियों के सामने कितनी दूर घुस-पैठ कर चुकी है यह मानो वह तभी पहल-पहल समझ सका।

आरती सामने बैठी-बैठी साड़ी के आँचल को उँगलियों से लपेटते हुए बोली—पिताजी ने हमारी तरफ की बात ही सिर्फ सोची है। पिताजी को भी दोष नहीं दिया जा सकता, हजार हो कन्या के पिता हैं न···

—यह सुनकर तुमने क्या कहा ?

—मैं और क्या बोलूंगी, कुछ भी नहीं बोली—

सुललित बोला—क्यों, तुम कुछ नहीं बोली ?

। ने कहा—बोलने के लिए मेरे पास क्या था तुम्हीं कहो।

ञत बोला—यह भी तो ठीक है। इतने दिनों तुम्हारे साथ मिला- .बेवाह की बात तो मैंने तुमसे एक दिन भी नहीं की।

कर थोड़ा रुककर फिर बोला—सचमुच ही तो, काका बाबू के मन : होना ही तो स्वाभाविक है!

ारती समझ न पाकर बोली—क्या सन्देह?

—सन्देह नहीं होगा? तुम हम दोनों इतनी देर घर के बाहर रहते हैं, में बड़ा-बूढ़ा कोई नहीं, मन की भूल से हम लोग एक कुछ खराब काम ो कर बैठ सकते हैं···

आरती बोल उठी—वाह रे, तुम हो न हो इसी तरह के लड़के हो क्या?

—क्यों, मैं कैसा हूँ? मैं किस तरह का लड़का हूँ?

—तुम तो संन्यासी मनुष्य हो! जप-तप-पूजा-अर्चना किये बिना जल ग्रहण ीं करते। झूठ बात बोलने की शक्ति भी तुममें नहीं है यह भी पिताजी ानते हैं। तुमसे मन की भूल नहीं होगी, यह पिताजी अच्छी तरह जानते हैं।

सुललित हँसने लगा, बोला—लेकिन कहावत है मन या मति। मुनियों को भी तो मतिभ्रम होता है।

—तुम उस प्रकार के मुनि नहीं हो जो तुम्हें मतिभ्रम होगा। तुम जो एकदम देवगुरु बृहस्पति हो—

सुललित बोला—लेकिन बृहस्पति ही होऊँ या दैत्यगुरु शुक्राचार्य ही होऊँ, स्वयं मेनका अगर पास में बैठी हों तो ध्यान भंग होते कितने क्षण लगेंगे! मेनकाएँ जो सब कर सकती हैं—

बात कहकर सुललित हँस पड़ा। लेकिन आरती हँस नहीं सकी। हठात उसका मुँह बहुत गम्भीर हो उठा।

सुललित बोला—क्या हुआ, मैंने मेनका कहा इससे तुम गुस्सा हो ग क्या?

आरती तो भी हँस नहीं सकी। बोली—ना, तुम जानते नहीं इसी हँस रहे हो। मेरे पिता का कोई अन्याय नहीं है। पिता को इस बूढ़ी उम जो धक्का लगा है उसे अगर कोई दूसरा आदमी होता तो सह न प इसीलिए पिता वही गाना-बजाना, म्युजिक कान्फरेन्स में भूले रहते हैं कुछ भूलने की कोशिश करते हैं—

—धक्का? तुम्हारी दीदी के मरने का धक्का?

आरती उसी प्रकार गम्भीर होकर बोली—ना, हमारी दीदी मरी

—मरी नहीं?

सुललित मानो आसमान से गिरा। बोला—तुम्हारी दीदी का

रानू था !

आरती बोला—हां, रानू, मैं रानू दीदी कहकर पुकारती उसे। लेकिन वह मरी नहीं !

सुललित बोला—लेकिन मैंने तो पिताजी के सामने काका बाबू को बोलते सुना है कि मर गयी है। उस समय तो तुम खुद भी वहां हाजिर थीं ! तुम भी तो उस समय कुछ भी नहीं बोलीं। और आज कह रही हो वे मरी नहीं ?

आरती बोली—हां, आज तुमसे कहूं कि रानू दीदी मरी नहीं—

सुललित और भी अवाक् हो गया। बोला—अगर वे मरी नहीं तो उन्हें काका बाबू ने मर गयी हैं क्यों कहा था ?

आरती के मुंह का जवाब मानो मुंह में ही अटक गया।

सुललित बोला—क्या हुआ, बात क्यों नहीं कर रही हो ?

आरती का मुंह जाने कैसा रुआसा-रुआंसा हो उठा। उसने मुंह नीचा कर लिया। बोली—असल घटना कोई नहीं जानता। कहना हो तो मुझे और पिताजी को छोड़कर पृथ्वी में और कोई नहीं जानता यह बात। पिताजी भी रानू दीदी को भूले रहने की कोशिश करते हैं। इसीलिए तो मैं सब समय पिताजी के नजदीक-नजदीक रहती हूं। और पिताजी भी इसीलिए मुझे छोड़कर ज्यादा देर दूर रह नहीं सकते। यही जो मैं यहां हूं, जब तक मैं घर में लौटूंगी नहीं तब तक पिताजी छटपट करेंगे। पिताजी को नींद नहीं आयेगी। मेरे घर लौटकर जाते ही पिताजी पूछेंगे, अब तक कहां थी, क्या करती थी, तुमसे क्या बातें हुईं, सबकुछ। रत्ती-रत्ती सब बातें पूछेंगे—सब कुछ न जान पाने तक रात को पिताजी की नींद ही नहीं आयेगी—

—तुम्हारी वे रानू दीदी अब कहां हैं ?

आरती बोली—कहां हैं यह कोई नहीं जानता—

—इसके माने ? दीदी जीवित हैं न ?

आरती बोली—जीवित हैं कि नहीं यह खबर भी हम लोगों में से कोई नहीं जानता।

—लेकिन इस तरह की बात हुई क्यों ?

आरती बोली—कैसे जानेंगे कि इस तरह की बात क्यों हुई। हमारी मा नहीं है, शायद इसीसे इस तरह की बात हुई। मा होती तो शायद रानू दीदी किसी की आंखें टाल नहीं पाती। पिताजी की मिलिटरी की नौकरी, पिताजी तो दिन-रात नौकरी में पागल रहते, उस नौकरी में छुट्टी-उट्टी थी नहीं। पिताजी हम लोगों के लिए रुपये खर्च करके ही निश्चिन्त हो जाते, और हम लोग दोनों हाथों से वे रुपये खर्च करतीं। जानतीं नहीं कि कहां से वे रुपये आते हैं, जानना चाहती भी नहीं थीं कि पिताजी हम लोगों को कितना प्यार

करते हैं—

बोलते-बोलते आरती इस बार कुछ रुकी। लगता है उन पुराने दिनों की बातें याद करके ही उसने एक लम्बी साँस ली। उसके बाद फिर कहने लगी—लेकिन अन्त में रानू दीदी पिताजी को जो इतना कष्ट देंगी, यह उन दिनों मैं कल्पना भी नहीं कर सकी—

सुललित अब तक एकमन से आरती की बातें सुन रहा था। इस बार बोला—उसके बाद ?

आरती कहने लगी—हम दोनों उस समय उस्ताद रखकर गाना सीखतीं। पिताजी का खुद का भी छुटपन में थियेटर करना, गाना गाना इन सब बातों की तरफ झोंक था। लेकिन मिलिटरी में नौकरी पाने के बाद पिताजी फिर वह सबकुछ भी नहीं कर सके। इसीलिए पिताजी का मन था हम दोनों बहनें गाना गाना सीखें, खयाल, ठुमरी, भजन, यही सब—

—तुम भी गाना सीखती थीं क्या ? अब भी गाना गा सकती हो ?

आरती बोली—गा सकती हूँ। लेकिन मेरी दीदी का गाना सुनने पर समझते कि किसे कहते हैं गाना। मेरी रानू दीदी घर के दुतल्ले में गाना गातीं तो नीचे के रास्ते के लोग जमा हो जाते—

सुललित बोला—थोड़ा सुनाओ न गाना, देखूं न कैसा गाना गातीं तुम्हारी दीदी—

आरती बोली—यहीं ? इसी गंगा के तीर पर ?

—इससे क्या हुआ ?

आरती बोली—लेकिन अगर लोगों की भीड़ जम जाय ?

सुललित बोला—जोर के गले से न भी गाओ तो क्या हुआ, गुनगुनाकर गाने में दोष क्या है ?

आरती बोली—हमारी दीदी एक गाना बहुत अच्छा गाती थीं, झिंझिट खम्बाज की ठुमरी, चिमे तेताला, नवाब वाजिद अली शाह का लिखा गाना—

सुललित बोला—सुनूं, गाओ न—

आरती ने गाया—

डोले रे जोबन मदमाती गुजरिया—
तेरा संग जोड़ा मोसे मरा ले कटरिया—
लटपट सोहत कुंजभवन में,
पहिर कुसुम रंग की रे चुनरिया—

गाना बार-बार घुमा-फिराकर बहुत देर तक गाया आरती ने। गाना रुकने पर किसी के मुंह से बड़ी देर तक कोई बात नहीं निकल सकी। बाहर की समस्त प्रकृति भी मानो गाना सुनकर स्तब्ध हो गयी हो—

उसके बाद आरती खुद ही निस्तब्धता भंग करके बोल उठी—चलो अब उठें—

सुललित बोल उठा—सचमुच आरती तुम तो चमत्कार गाना गाती हो—

आरती बोली—यह भी ऐसा क्या गाना है, तुम अगर हमारी दीदी के मुंह से गाना सुनते तो अवाक् हो जाते !

—फिर उसके बाद ?

—उसके बाद पूरा शहर टूट पड़ता हमारे घर में, हमारी रानू दीदी का गाना सुनने के लिए। एक-एक सुर का सूक्ष्म काम सुनकर ऐसा लगता कि उसे सोने के फ्रेम में मढवाकर घर की दीवाल में टाँग रखें। कितनी ही जगहों से कितने ही न्योते आते दीदी का गाना सुनने के लिए। किन्तु पिताजी हम लोगों को बाहर दूसरे किसी के घर में या किसी फंक्शन में गाना गाने के लिए जाना पसन्द न करते। सिर्फ अचम्भा है, तब क्या मैं ही जानती थी कि यह गाना ही एक दिन रानू दीदी का काल होगा—

—क्यों ?

आरती बोली— वही बात तो कह रही हूँ। हम दोनों उस समय कालेज में पढ़ते थे। एक संग जाते किसी दिन, और किसी दिन मेरा क्लास पहले खतम होने पर मैं घर चली आती और रानू दीदी आती बाद को—। लेकिन उस दिन शाम को पाँच बज गये, तब भी रानू दीदी नहीं आयी। जब शाम को सात बजे घड़ी में, उस समय भी रानू दीदी के आने का नाम नहीं। अन्त में रात को आठ बजे, नव बजे, दस बजे, ग्यारह-बारह सब बज गये घड़ी में, दूसरे दिन सवेरा हो गया। तब भी रानू दीनी दिखायी नहीं पड़ी। मैं उस समय घर में अकेली थी। किसे खबर दूं, क्या करूं, कुछ भी समझ नहीं पा रही थी।

—उसके बाद ?

—उसके बाद पिताजी को तार कर दिया। पिताजी उस समय स्पेशल ड्यूटी में बरेली में थे। मेरा टेलिग्राम पाकर पिताजी दौड़े आये। मुझसे सब सुनकर पिताजी का मुंह सूख गया। तब पुलिस-थाना सब जगहों में खबर दी गयी, कहीं फिर रानू दीदी मिलीं नहीं। पिताजी को हठात् स्ट्रोक हुआ उसी समय—

—स्ट्रोक हुआ था क्या काका बाबू को ?

—हाँ, एक बार स्ट्रोक हो चुका है पिताजी को। इसीलिए तो मैं पिताजी को बहुत सँभालकर रखती हूँ अब। सब समय पिताजी के साथ-साथ रहने की कोशिश करती हूँ—

—उसके बाद ?

—उसके बाद रानू दीदी की बहुत खोज हुई, लेकिन कहीं वे मिली नहीं।

तिस पर यह ऐसी एक खबर है जो आत्मीय-स्वजन वन्धु-वान्धव किसी से वतायी नहीं जा सकती। इसीलिए उसके वाद से ही पिताजी एकदम चुप हो गये। किसी से अव वात नहीं करते, नौकरी तो आखिर करनी ही पड़ती है इसीलिए नौकरी करते हैं। वहुत दिनों के वाद फिर पिताजी ने नौकरी ज्वाएन की जरूर लेकिन उसके वाद उनका मन फिर नौकरी में लगा नहीं। और उसके वाद एक दिन रिटायर होने की मियाद आ गयी, पिताजी वोले, चल कलकत्ता ही चलें। इसीलिए कलकत्ता चली आयी पिताजी को लेकर।

सुललित चुपचाप अव तक आरती की वातें सुन रहा था। वातें खत्म होने के वाद भी वड़ी देर तक कोई जवाव दे नहीं सका वह।

आरती वोली—चलो, अव घर चलें—

—अभी ? अभी जाओगी ?

आरती वोली—मेरी ये उलटी-पलटी वातें सुनते क्या तुम्हें अच्छा लग रहा है ? यहाँ मुझे विठाल रखने में लेकिन मैं ऐसी और तमाम वेकार वातें करके तुम्हारे कान झर्झर कर दूंगी यह कह रखती हूँ—

सुललित वोला—कौन-सी वेकार वात है और कौन-सी काम की वात है, वही तो आज तक समझ नहीं पाया। आज लगता है तुमसे भेंट होने के पहले तक जो कुछ करता आया वे सव वेकार काम हैं और जो कुछ सुनता आया सव वेकार वातें—

आरती वोली—छिः, मेरे समान एक तुच्छ लड़की के लिए तुम अपने को छोटा मत करो सुललित दादा, उससे मैं खुद भी जो छोटी हो जाऊँगी—

—लेकिन तो फिर क्यों तुम कलकत्ता आयीं ? और कलकत्ता ही अगर आयीं तो क्यों मेरे साथ तुम्हारी भेंट हुई ?

आरती वोली—इस तरह मत वोलो, यह वात सुनकर मुझे कष्ट होता है—

सुललित वोला—तुम तो जानती नहीं हो तुम्हारे आने के वाद से मैं कितना वदल गया हूँ, और तुम्हीं वताओ पहले मैं जो था अव भी क्या वही हूँ ? अव मुझे देखकर मेरे पुराने मित्र भी अवाक् हो जाते हैं। एक लड़की जो मेरे समान पुरुष को कितना वदल दे सकती है, यह मुझे देखे विना वे कल्पना ही न कर सकते—

आरती वोली—सचमुच मेरे कारण अगर तुम्हारा अधःपतन हुआ हो मैं उसके लिए वहुत ही दुःखित हूँ। तो फिर देखती हूँ आज से मेरे साथ तुम्हारी भेंट न होना ही अच्छा है—

सुललित ने खप से आरती का एक हाथ पकड़ लिया। वोला—यह नहीं होगा, मैंने तो कोई अन्याय किया नहीं तुम्हारे साथ जिसके लिए मुझे ऐसा दण्ड दोगी—

—[illegible]
नुक्सान मैं ही सहन कर सकूँगी ?

सुललित बोला—तो फिर वादा करो कि तुम कहीं चली नहीं जाओगी !

आरती ने हँस उठकर वातावरण को हल्का कर दिया। बोली—ओ मा, तो फिर क्या मैं सारी रात इसी प्रकार यहाँ बैठी-बैठी तुमसे गप करूँ यह बोलना चाहते हो क्या ? घर में पिताजी मेरे लिए रास्ता देखते हुए बैठे हैं यह जानते हो ? और हमारे बगल के घर में एक बहू है वह दिन-रात खिड़की से मुझे ताकती रहती है। यही जो अभी रात को घर नहीं लौटूँगी, यह भी वह देखेगी। उसके बाद कल सवेरे दिखायी पड़ते ही पूछेगी, रात को कहाँ गयी थी। हम लोगों की सब बातें उसे जाननी चाहिए। तुम्हारे साथ यहाँ बैठे-बैठे कौन-सी बातें हुईं यह जानने की भी उसकी इच्छा रहती है !

उसके बाद कुछ हँसकर बोली—बहू मुझसे क्या कहती है जानते हो ?

सुललित बोला—क्या ?

—कहती है हम दोनो का विवाह होगा क्या ? तिस पर उसने कैसे यह अद्भुत धारणा की है कौन जाने !

सुललित बोला—अद्भुत धारणा क्यों कहती हो ? जब किसी के साथ किसी के मन देने-लेने की पारी चलती है, और जब उसमें अभिभावकों का भी मत रहता है, तब क्या यह बात किसी की नजरों से छिपी रहती है ? लोग जिसे दो दिनो बाद जान पाते उसे दो दिन पहले जान लेने पर ऐसा नुकसान ही आखिर क्या है ? यह तो लुकाचोरी की बात नहीं है।

आरती बोली—सो तो नहीं ही है, तुम जानते हो, पिताजी ने तो अभी से मेरे गहनों का आर्डर दे दिया है।

सुललित बोला—गहना ? गहना क्या होगा ?

आरती बोली—वाह रे, कन्या के विवाह में गहना गढ़वाना नहीं होगा ?

सुललित बोला—गहनो की क्या जरूरत ? गहना न देने पर मैं क्या तुम्हे पसन्द नहीं करूँगा ?

आरती बोली—सो होने दीजिए, मैंने मना नहीं किया। पिताजी के जीवन मे कोई साध ही नहीं मिटी। पिताजी ने छुटपन मे गायक होना चाहा था, नौकरी के दबाव से नहीं हुआ। मुझे और दीदी को उस्तादजी रखकर बड़ी गायिका बनाना चाहा था वह भी नहीं हुआ, यह साध भी उनकी मिटी नहीं। अब सिर्फ बाकी है मेरा विवाह, पिताजी की वह साध अगर मुझे गहने देकर सजाकर मिटे तो मैं क्यों बाधा डालने जाऊँगी बोलो ?

उसके बाद बोली—चलो, बहुत रात हो जायेगी घर लौटने में, उठूँ···

चारों ओर सम्पूर्ण वातावरण उस समय शान्त एकान्त था। नजदीक दूर

कोई भीड़ नहीं थी। सुललित उठा। हाथ पकड़कर उसने आरती को भी
। लिया।

.य रे मनुष्य का स्वप्न, और हाय री मनुष्य की आशा! उस दिन हो न
। दोनों में से कोई भी जानता नहीं था कि उन दोनों के निविड़ सम्पर्क-सूत्र
: इस प्रकार ऐसे अप्रत्याशित भाव से ऐसी एक गाँठ बँध जायेगी।

इस पर भी अब तक कोई आभास ही नहीं मिला उसका। जिस प्रकार पृथ्वी की पूर्व दिशा के अन्त में रोज सूर्य उदय होता, उसी प्रकार तब भी सूर्य रोज उगता। सूरज उगने के बाद ही एकदम पूरे दिन के लिए तैयार होकर आता सुललित। आकर बिल्कुल भूधर बाबू के घर-परिवार का एक व्यक्ति हो जाता, भले चाहे झंझा-वर्षा हो, चाहे भूकम्प हो।

भूधर बाबू बोलते—यह देखो सुललित, आज का अखबार देखा है?

—क्यों काका बाबू, कोई नयी खबर है?

काका बाबू कहते—फिर मानो पाकिस्तान के साथ लड़ाई शुरू होगी, लगता है।

सुललित कहता—तो लड़ाई छिड़ने पर आपका अब क्या है काका बाबू? आप तो मिलिटरी से रिटायर हो गये हैं।

भूधर बाबू कहते—असल में तो पूरा-पूरा रिटायर अभी तक हुआ नहीं भाई, अब भी तो छुट्टी में हूँ।

यह कहकर अखबार की खबरों पर एक-एक लकीर में आँखें डुलाते। उ समय सुललित रसोईघर में या भाण्डारघर में चला गया होता। घर का अपन व्यक्ति हो जाने पर फिर बाहर-भीतर जाने-आने में कोई बाधा-विघ्न का सवा ही नहीं उठता।

आरती के पास जाकर वह बोलता—यह क्या, इतना कौन-सा काम रही हो तुम?

आरती विचलित होती। कहती—तुम यहाँ मेरे पास आये क्या करने

सुललित कहता—मुझसे बोलो न, अगर तुम्हें कुछ सहायता कर सकूँ—

आरती कहती—तुम चलो तो यहाँ से, यह सब तुमसे नहीं हो सकेगा

सुललित कहता—हो कैसे नहीं सकेगा? बड़ा भारी है न दो आद का संसार, तिस पर फिर काम दिखा रही हो तुम!

आरती कहती—यह तुम्हारे क्लब का काम नहीं है, क्लब की मीटिं खड़े होकर लेक्चर देना नहीं है, वह सब कर सकते हैं—रसोईघर मेँ इतना सहज काम नहीं है—

सुललित कहता—तो देखता हूँ तुम लेक्चर भी दे सकती हो अच्छा—

आरती ने कहा—हां, मैं क्यों, सब यह कर सकते हैं—तुम पिताजी के पास जाकर बैठो, मुझे काम करने दो—

तब सुललित तर्क में हारकर फिर भूधर बाबू के पास आता, कहता—आज कहाँ जाइएगा काका बाबू ?

काका बाबू कहते—मैं सोचता हूँ एक बार तुम्हारे घर जाऊँ बेटा—

—हम लोगों के घर ?

काका बाबू कहते—तुम्हारे पिताजी ने एक बार मुझसे मिलने को कहा है।

—लेकिन कहाँ, मुझसे तो पिताजी ने इस बारे में कुछ कहा नहीं !

—कल जब तुम थे नहीं तब भगीरथ के जरिए तुम्हारे पिताजी ने मेरे पास खबर भेजी है—

सुललित तब फिर आरती से जाकर पूछता—कल क्या भगीरथ यहाँ आया था ?

—हाँ, मैंने भी तो घर आकर पिताजी से यही सुना।

—लेकिन मुझसे तो पिताजी ने कुछ कहा नहीं ?

आरती कहती—तुम्हारे विवाह की बात तुमसे कहने से फायदा क्या ? तुम तो सिर्फ दूल्हा सजकर विवाह करके ही छुट्टी पा जाओगे, करेंगे तो सब कुछ मालिक लोग।

—तो मेरा विवाह और मैं ही कुछ जानूंगा नहीं ?

आरती कहती—वाह, पहले से जान जाने से अगर तुम फिर विवाह तोड़ दो, तब ?

सुललित कहता—वाह रे, तुम खूब कहती हो, ऐसा विवाह मैं तोड़ दूँगा ?

आरती कहती—अरे भाई, साधु-संन्यासी मनुष्य ठहरे, कुछ कहा जा सकता है क्या ?

बातों के साथ दोनों व्यक्ति हो-हो करके हँस उठते। आखिर में सुललित कहता—तुमने मुझे और साधु-संन्यासी रहने कहाँ दिया, तुमने तो मेरा जप-तप सबकुछ छिन्न-भिन्न कर दिया है—

हठात् बगल के कमरे से भूधर बाबू का गला सुनायी पड़ता—ओ री आरती, सुललित का गला जो सुन रहा हूँ, सुललित अभी तक है क्या—

आरती गला धीमा करके कहती—ए, जाओ, छिप-छिपकर मुझसे गप करने से नहीं चलेगा, पिताजी के कानों में बातें सुनायी पड़ी हैं—

सुललित कहता—तो तुम्हारे साथ छिप-छिपकर गप करने में कुछ अन्याय है क्या ? मैं तो रोज बाहर जाकर तुमसे मिलता-जुलता हूँ तब तो अन्याय नहीं होता—

ाहर तुम क्या करते हो यह क्या कोई देखने जाता है ? घर के भीतर
.म नहीं चलेगा। अन्ततः अभी तो नहीं चलेगा—

ललित कहता—और बाद को ?

ारती कहती—बाद की बात बाद को होगी, अभी पिताजी बुला रहे हैं,
, सुन आओ पिताजी क्या कहते हैं !

तने दिनों विवाह की बात चलती रही उतने दिनों कहाँ से समय कटता चला
ा रहा था, यह किसी को ख्याल करने का समय नहीं था। तिस पर विवाह
ी बात होने पर ही तो चट से विवाह हो नहीं जाता। चाहे लड़के का ही
विवाह हो और चाहे लड़की का भी। भूधर बाबू की तरफ से इतनी चिन्ता
नहीं थी। बैंक में रुपया मौजूद था। वे चेक काटेंगे और रुपये खर्च करेंगे।
कलकत्ता शहर में एक घण्टे के नोटिस में भी विवाह होना सम्भव है।

लेकिन चैटर्जियों के घर में तब तमाम समस्याएँ थीं। सन्दीप चैटर्जी के
वंश की अनेक शाखा-प्रशाखाएँ हैं, इसलिए तमाम उनकी जिम्मेदारियाँ हैं।

रात को ज्ञानदामयी बोलीं—तुमने पक्का वायदा कर दिया क्या ?

सन्दीप चाटुज्जे ने कहा—हाँ, कर दिया।

—लेकिन इधर घर में इतना गोल-माल है, ऐसे में ही क्या सब होगा
ेरे शरीर से निभेगा कि नहीं यही सोचती हूँ—

सन्दीप चाटुज्जे ने कहा—मेरा शरीर ही क्या खूब अच्छा है ? अ
इसीलिए तो जल्दी-जल्दी, हम लोग कब हैं कब नहीं। हम लोगों के चले ज
पर खोका के काका-ताऊ क्या फिर उसे देखेंगे ? और भूधर की लड़की को
तुमने भी देखा है, तुम्हें भी तो वह पसन्द आयी है—

गृहिणी ने कहा—हमें पसन्द हो या न हो, खोका को पसन्द आयी है
हम लोगों का भाग्य है, वह किसी दिन विवाह करने को राजी होगा य
किसी दिन सोच नहीं सकी—

—खोका को पसन्द आयी है यह कैसे समझा ? खोका ने तुमसे अ

घर के भीतर की ये सब खबरें लोकपरम्परा के आधार से हम सबके कानों में भी आयीं। हम लोग अवश्य अवाक् नहीं हुए। क्योंकि जिस दिन से सुललित ने हमारे क्लब में आना बन्द किया था, उसी दिन से हम लोगों ने समझ लिया था कि कहीं शायद कुछ गोलमाल चल रहा है। उसके बाद जिस दिन भगीरथ से सुना कि सुललित किन्हीं एक मुँहबोले पराये काका बाबू के घर में जाता है उसी दिन हमारा सन्देह सुदृढ़ हुआ। और उसके बाद जिस दिन सुललित के घर के सामने टैक्सी से एक सुन्दरी लड़की को उतरते देखा, उस दिन से हम लोगों के मन में कोई सन्देह बाकी नहीं रहा।

उन्हीं दिनों एक दिन हठात् हम लोगों ने सुललित को पकड़ लिया। वह उस वक्त अपने काका बाबू के घर से लौट रहा था।

पीछे से हमने पुकारा—सुललित—

अँधेरे में वह हमें अच्छी तरह पहचान नहीं सका। नजदीक आने पर पहचानकर बोला—ओ, तुम ? क्या खबर है ?

मैंने कहा—तेरी क्या खबर है, बोल ? तूने तो हम लोगों को एकदम त्याग दिया है—

सुललित बोला—ठीक त्याग नहीं किया। लेकिन मामला यह है कि मेरे न देख सकने पर भी तुम लोगों के क्लब को देखने के लिए मनुष्य की कमी नहीं है, लेकिन मुझे छोड़कर आरती आदि को कोई देखनेवाला जो नहीं है—

—सुना, उस लड़की के साथ तेरा विवाह हो रहा है, सच है क्या ?

सुललित साफ गले से बोला—हाँ, खबर ठीक ही सुनी है, मेरे साथ आरती का विवाह हो रहा है—

—तो फिर तूने अन्त में शादी कर ली ?

सुललित बोला—क्यों ? मैंने क्या कभी तुम लोगों से कहा था कि मैं शादी नहीं करूँगा ? और तिस पर शादी करना क्या कोई अन्याय का काम है ?

मैंने कहा—नहीं, हम लोगों ने कुछ दूसरी तरह से सोचा था—

—तुम लोगों ने दूसरी तरह से क्या सोचा था ?

—सोचा था, तू बाप-मा की पसन्द की हुई लड़की से शादी करेगा। तेरे समान बुनियादी मकान में पहले तो कभी इस तरह की लव मैरिज हुई नहीं।

सुललित बोला—नहीं तो, मेरे बाप-मा ने ही तो आरती को पसन्द किया है, और काका बाबू ने खुद ही तो इस शादी का प्रस्ताव किया है—

—छोड़, कब है तेरी शादी ?

सुललित बोला—अभी तक तारीख ठीक नहीं हुई।

—हम लोगों को खबर मिलेगी न ?

—जरूर, मैं तो छिपाकर कुछ करता नहीं। हम लोगों की तो रजिस्ट्री से शादी होगी नहीं। पुरोहित-नाई शालग्राम-शिला को साक्षी रखकर हिन्दू-पद्धति से शादी होगी।

उसके बाद कुछ ठहरकर बोला—देख, जिसके साथ एक संसार में पूरा जीवन काटना होगा उसे ग्रहण करते समय बहुत सोच-विचारकर जाँचकर निर्णय करना अच्छा है। इससे बाद को पछतावा नहीं करना पड़ता। इसीलिए इतने दिनों जांचने की बारी चल रही थी, इसीसे तो क्लब में इतने दिनों नहीं जा सका।

—जाँचकर क्या देखा ?

सुललित बोला—आदर्श स्त्री कहने से जो मतलब निकलता है आरती में वह होने की योग्यता है। हम दोनों—दोनों को तमाम तरह से जांचकर तब इस शादी के लिए राजी हुए हैं।

मैंने कहा—तू सुखी हो तो हम लोगों को निश्चय आनन्द होगा, दुःख नहीं।

सुललित बोला—देख, सुख शब्द बड़ा गोलमोल है। सुख बाहर खोजना नहीं होता, वह भीतर की चीज है। हम अपने मन के भीतर अगर सुख पा सकें तो उसके लिए और कुछ नहीं चाहिए। रुपया, घर, मोटर, ख्याति, नीरोग शरीर सबकुछ पाकर भी कितने ही लोगों को मैंने मरे के बराबर देखा है।

सुललित की वे ही सब पुराने दिनों की बातें। ये सब बातें पहले हमने तमाम सुनी हैं, ये सब बातें सुनकर ही सुललित को हमने श्रद्धा की नजरों से देखा है। श्रद्धा किया है उसके व्यक्तित्व को। और इस व्यक्तित्व ने ही हमारे क्लब के सब लोगों को उसकी तरफ आकर्षित किया है। उस दिन देखा आरती के साथ इतना घनिष्ठ होने पर भी उसने अपनी निजी स्वकीयता नहीं खोयी। वह तब भी पहले का सुललित ही बना हुआ है। देखकर मुझे बहुत अच्छा लगा।

मैं बोला—ठीक है, देखकर खुश हुआ कि तू तो फिर वही हमारे लिए पहले के समान है आज भी।

सुललित बोला—तुम लोगों ने क्या सोचा है कि प्रेम में पड़ गया हूँ इससे मैं मनुष्य भी बदल जाऊँगा ?

मैंने कहा—नहीं, बदल जाना तो कुछ अपराध नहीं है। संसार में सबको ही तो शादी के बाद बदल जाना पड़ता है।

सुललित बोला—मैं नहीं बदलूंगा। तुम लोग देख लेना मैं पहले जैसा था बाद को भी मैं वैसा ही रहूंगा। उमर होने पर मनुष्य के सिर के बाल पक जाते हैं, दाढ़ी पक जाती है, लेकिन असल मनुष्य क्या ऐसा होने से बदल जाता है ?

तुम लोग कुछ फिक्र मत करो, मैं थोड़ी फुरसत पाने पर फिर तुम लोगों के क्लब में जाऊँगा। मुझे तुम लोग अब थोड़ी छुट्टी दो भाई, सिर्फ कुछ दिनों के लिए, उसके बाद मैं फिर ज्यों-का त्यों।

इस गल्प का यही सूत्रपात है। जो मनुष्य अहंकार करता है, उसका लगता है यही अन्त है। तब भी सुललित को अहंकारी लड़का कहने से काम नहीं चलेगा। अहंकार और आत्मविश्वास क्या एक ही बात है? दूसरा कोई अगर सुललित के समान बातें करता तो उसे हम अहंकारी कहते। लेकिन सुललित के लिए तो यह नहीं कहा जा सकता। उसके आत्मविश्वास ने उसे स्वातन्त्र्य दिया था, उसे निःसंग किया था, उसे विच्छिन्न किया था। और यह सब किया था इसीलिए सुललित को लेकर यह गल्प लिखने बैठा हूँ—जिस सुललित को आज इतने दिनों के बाद लखनऊ में देखा।

किस तरह कब क्या हो जाता है यह अगर पहले से मालूम हो पाता तब तो मनुष्य सावधान होकर आत्मरक्षा कर ले सकता। मनुष्य कहता, मैं असहाय हूँ, मैं असमर्थ हूँ, हे मेरे भाग्यविधाता, तुम मुझे बचाओ—

और इसके अलावा भविष्यत् के सम्बन्ध में अगर मनुष्य अन्धा न होता तो संसार-यात्रा लगता है एकदम सुखहीन हो जाती। भावी विपत्ति की सम्भावना देखकर किसी भी सुख में फिर कोई तन्मय न होता। मिल्टन यदि जानते कि वे अन्धे हो जायेंगे तो लिखने-पढ़ने का नाम भी न लेते। शाहजहाँ यदि जानते कि औरंगजेब उन्हें बुढ़ापे में जेलखाने में कैद करके रखेगा तो वे कभी दिल्ली का सिंहासन छूते तक नहीं। भास्कराचार्य यदि जानते कि उनकी एकमात्र कन्या चिरविधवा हो जायेगी तो वे शायद कभी विवाह ही न करते। नवकुमार या उनकी नयी स्त्री को मालूम होता कि उनके विवाह से कैसा विषमय फल फलेगा तो शायद उनका विवाह ही न होता।

ये सब बातें बंकिमचन्द्र ही लिख गये हैं। यहाँ मैं भी कहूँ कि सुललित यदि जानता कि आरती से मिलने-जुलने से उसका कैसा सर्वनाश होगा तो वह सम्भवतः इस प्रकार मन की पूरी एकाग्रता के साथ उससे घुलता-मिलता नहीं।

लेकिन सुललित तब किससे शिकायत करेगा? किससे आश्रय माँगेगा? कौन उसे सान्त्वना देगा?

लेकिन घटना शुरू से बताना जरूरी है। जैसे चारों तरफ जब कोमल आबहवा हो, किसी तरफ से तूफान का कोई संकेत नहीं, कहीं किसी प्रकार की आकस्मिक दुर्घटना का भी कोई अन्दाज नहीं, ऐसे ही समय अकस्मात् पश्चिम-बंग के आकाश के मेघ का एक टुकड़ा देखते-देखते सब कुछ ढाँककर एकदम सारी पृथ्वी को तहस-नहस कर दे, ठीक ऐसी ही घटना सुललित के जीवन में हो।

उस दिन सवेरे चाटुज्जे-परिवार के वकील आ पहुंचे। घर के मालिकों के बुलाने पर उन्हें आना पड़ा।

सन्दीप बाबू ने सुललित को बुलाया। वे बोले—तुम्हें आज थोड़ा घर में रहना होगा।

सुललित बोला—घर में रहना होगा ? लेकिन मुझे तो एक काम था —

जितना भी काम हो, यह सब कामों से भी जरूरी है। आज सवेरे हमारे वकील साहब आ रहे हैं। बड़े दादा ने बुला भेजा है—

—वकील साहब ?

—हां।

—तो वकील साहब के साथ मुझे क्यों ठहरना होगा ?

सन्दीप बाबू बोले—मैं बूढ़ा हो गया हूं, मैं अब कितने दिन जिऊंगा ? मेरे मरने पर यह सब तो तुम्हें ही देखना होगा। इसीलिए मैं चाहता हूं कि अभी से ही तुम अपनी सम्पत्ति वगैरह सब कुछ समझ लो—

सुललित बोला—लेकिन मैं सम्पत्ति के बारे में क्या समझूंगा ? मैंने तो यह सब लेकर कभी सिर नहीं खपाया—

सन्दीप बाबू बोले—पहले सिर नहीं खपाया, लेकिन अब से तुम्हें यह फिक्र रखनी होगी। यह दस आदमियों का संसार है, यहां अपना हिस्सा खुद देख न लेने पर कौन तुम्हें दिखाने जायेगा ? तुम बड़े हुए हो, दो दिन के बाद तुम्हारा विवाह होगा, संसार होगा, तुम पर जो लोग निर्भर करेंगे उनके भरण-पोषण की बात तुम्हें ही सोचनी होगी, तब यह सम्पत्ति तुम्हारे काम में आयेगी। और अभी से यह सब हिसाब कौड़ी-गण्डे के समान सूक्ष्म रूप से न समझ लो तो बाद को हिसाब में गोलमाल होने पर तब तुम्हीं अपने परिवार के साथ मुश्किल में पड़ जाओगे ! तब तो मैं यह सब सँभालने में तुम्हें कोई मदद ही नहीं कर सकूंगा। मैं चाहता हूं कि मेरे रहते-रहते तुम सब समझ लो—

पिता की बात के खिलाफ कोई बात कहने की हिम्मत कभी नहीं रही सुललित को। अन्त में उस दिन फिर आरती के घर में उसका जाना नहीं हो सका।

सवेरे ही वकील साहब आये। बुनियादी घर के बुनियादी वकील। कोर्ट की उनकी छुट्टी थी। वे एकदम पूरे दिन के लिए तैयार होकर आये थे। सम्पत्ति जितनी पुरानी थी, उसके दस्तावेज भी उसी तरह एक गट्ठर थे। लोहे के विशाल सन्दूक से वे सब नक्शे, सनद वगैरह निकले। धूल झड़ जाने और मनुष्य का स्पर्श मिलने पर मानो वे सब एक साथ वाणीहीन आर्तनाद कर उठे। इतने दिनों की सम्पत्ति, इतने दिनों की परम्परा का सब इतिहास अगर तुम लोग नाश कर दो तो हम सब कहां जायेंगे ? 'हमारा सुनाम कहां रहेगा। सब लोग कहेंगे कि चाटुज्जे घर

के शामिल-शरीक में झगड़ा मच गया है !

बड़े मालिक बोले—इन दो कमरों की हमें जरूरत है, नहीं तो हमारे लड़के का जब विवाह होगा तब वह कहाँ रहेगा ?

एक बोला—तब तो मँझले मालिक के हिस्से का कमरा जो कम हो जायेगा···

बड़े मालिक बोले—मँझले मालिक को कमरे की जरूरत ही क्या है ? उनके तो एक ही लड़का है। मेरे घर में अगर दामाद आये तो उसे एक कमरा देना नहीं होगा ? वह क्या बरामदे में सोयेगा ?

बात बढ़ाने में ही बात बढ़ती है, भले उस बात के अभ्यन्तर में चाहे युक्ति हो, और चाहे न हो।

वकील साहब ने पूछा—मँझले मालिक कहाँ गये ? उन्हें तो देख नहीं रहा···?

छोटे मालिक बोले—वे बीमार हैं, वे नहीं आये, उनका यह लड़का बैठा है यहाँ, यह सुललित।

सुललित सवेरे से बैठा-बैठा ये ही सब बातें सुन और देख रहा था। शुरू से ही उसे खराब लग रहा था बहुत। इन ताऊ जी को, इन काका बाबुओं को—इन लोगों को इतने दिनों दूसरी ही नजर से वह देखता आया है। लेकिन आज इस सम्पत्ति के भाग-बँटवारे के मामले को लेकर इनका एक दूसरा चेहरा खुल पड़ा उसके सामने। एक इंच जमीन लेकर इनकी नीचता-हीनता देखकर उसके मन में बड़ी तकलीफ होने लगी।

हठात् बातचीत के बीच में वह बोल उठा—ठीक है ताऊ जी, आप ये दोनों ही कमरे ले लीजिए, हम लोगों को ज्यादा कमरों की जरूरत क्या है !

सँझले मालिक बोल उठे—नहीं सुललित, आखिर तुम ही क्यों अपना वाजिबी हिस्सा छोड़ दोगे ? भले ही तुम एक सन्तान होओ, तब भी तो बराबर-बराबर हिस्सा होना चाहिए···

बड़े मालिक अपना मिजाज गरम कर बैठे। बोले—तुम अपने ही हिस्से की बात करो, मँझले मालिक की तरफ से बात करने का वकालतनामा तुम्हें किसने दिया है, सुनूँ ?

बात करने के साथ-साथ ही हवा और भी गरम हो उठी।

सँझले मालिक ने कहा—मँझले दादा की तबीयत अच्छी नहीं है इसलिए क्या हम सब मिलकर उन्हें ठग लें आप यह कहना चाहते हैं ?

बड़े मालिक ने कहा—ठगने की बात तुम कह क्यों रहे हो ? मैं क्या किसी को ठगने की बात कह रहा हूँ ? मँझले मालिक का लड़का भी तो अब

मुताबिक अपनी राय दे रहा है···

उसके बाद बड़े मालिक ने सुललित की तरफ देखकर पूछा—क्यों रे, तेरी राय है न ?

सँझले मालिक ने कहा—वह क्या बोलेगा। उसकी क्या हिम्मत है तुम्हारे मुंह पर बोलने की ? मैं जाता हूँ मँझले मालिक के पास, मैं खुद मंझले मालिक के पास जाकर उनकी राय है या नहीं पूछकर आता हूँ···

कहकर वह जल्दी-जल्दी सीढ़ियों से चढ़कर दुतल्ले में मँझले मालिक के कमरे के सामने जाकर पुकार उठा—मँझले दादा, मँझले दादा—

मँझले मालिक का बुखार उस दिन बहुत बढ़ गया था। डाक्टर साहब उस वक्त उन्हें देख रहे थे। ज्ञानमयी देवी घूंघट काढ़कर बाहर निकल आयीं। उन्होंने कहा—कौन ? सँझले देवर ? मँझले मालिक का बुखार फिर बढ़ गया है आज, इसीसे डाक्टर साहब को बुला लिया है।

सँझले मालिक ने कहा—बड़े दादा का काण्ड सुना है भाभी, बड़े दादा कहते हैं, उनका काम तीन कमरों से नहीं चलेगा, उन्हें और भी दो कमरे चाहिए। क्योंकि उनके लड़के-लड़कियां ज्यादा हैं, और सुललित तुम्हारा एक लड़का है, इसलिए तुम लोगों का काम दो कमरों से ही चल जायेगा।

ज्ञानदामयी ने कहा—मेरा खोका तो वहीं है—यह सब उससे ही पूछो तुम लोग।

सँझले मालिक ने कहा—तुम्हारा लड़का तो एक ही बुद्धू है, वह बड़े दादा के मुंह पर बात ही नहीं कर पा रहा है—मूक हो गया है···

ज्ञानदामयी ने कहा—तो तुम लोग वहाँ क्या करने के लिए हो ? तुम लोग ही न हो मँझले मालिक की तरफ से कुछ बोलो···

—बड़े दादा के मुँह पर कोई बात करेगा ? तब तो हो गया। मैंने कहना शुरू किया तो बड़े दादा डाँट उठे···

ज्ञानदामयी ने कहा—तो मैं फिर क्या करूँ बोलो—हम लोगों की तरफ से कौन फिर बात करेगा ? तुम जाकर बल्कि खोका को मेरे पास भेज दो, मैं न हो उसे समझाकर कह दूँ···

सँझले मालिक फिर खड़े नहीं हुए। चले गये।

थोड़ी देर बाद सुललित आया मा के पास।

ज्ञानदामयी ने कहा—हाँ रे, सँझले मालिक कह रहे थे बड़े मालिक शायद हिस्से-बँटवारे में गोलमाल पका रहे हैं ?

सुललित बोला—उन लोगों की बड़ी गृहस्थी है, उन लोगों को ज्यादा कमरों की जरूरत है, यही कह रहे थे···

—तो ज्यादा कमरे कहाँ से आयेंगे ? सब तो समान हिस्सों में ही

बँटेगा…

सुललित बोला—समान हिस्से होने पर ताऊ जी को कैसे पूरेगा ?

ज्ञानदामयी ने कहा—हम लोगों के ही कमरों का हिस्सा कम होने पर फिर हमें कैसे पूरा पड़ेगा ?

—खूब पूरा पड़ेगा, मैं तो तुम्हारा एक ही लड़का हूँ, मेरा काम तो एक कमरे से ही चल जायेगा।

ज्ञानदामयी शायद कुछ कहने जा रही थीं लेकिन उसके पहले ही एकतल्ले से जाने कैसे एक अजीब गोलमाल की आवाज दोनों के कानों में पड़ी।

ज्ञानदामयी उसी तरफ देखकर कह उठी—नीचे कोई गोलमाल हो रहा लगता है ? झगड़ा हो रहा है क्या ?

सुललित को भी मानो एक तरह का सन्देह हुआ कि काका-ताऊ मिलकर शायद भयानक झगड़ा शुरू कर बैठे हैं।

वह फिर वहाँ खड़ा नहीं हुआ। एकदम सीधे सीढ़ियों से ऊपर चढ़ गया। वहाँ जाकर उसने देखा कि भीषण काण्ड चल रहा है। ताऊजी जोर-जोर से चिल्ला उठे हैं। काकाओं में से भी कोई दबकर बात नहीं कर रहे हैं…

सँझले काका कह रहे हैं—तुम ठहरो बड़े दादा, तुम अब बात मत करो।

मँझले मालिक ने कहा—तुम ठहरो बड़े दादा, तुम अब बात बढ़ाना मत शुरू करो, तुम्हारी अपनी स्त्री ने जो कुछ कहा उसे ही सुनकर तुम मुझसे ये सब बातें कह रहे हो। और मैं अगर कहूँ कि बड़ी भाभी के मन में हम लोगों के लिए कितनी जलन है…

—तुम लोगों पर जलन ?

—हाँ, जलन नहीं तो और क्या ? हम लोग अगर सोलह रुपये किलो हिलसा मछली खरीदें तो बड़ी भाभी के मन में इतना दर्द क्यों होने लगता है ?

सँझले मालिक ने कहा—इतने दिनों बहुत-कुछ सहा है, मुँह से कुछ नहीं कहा, लेकिन आज जब बात उठी तब मैं कहता हूँ, हमारे सुनार से तुमने क्या कहा है ?

—कौन ? हाराधन ? हाराधन सुनार से मैंने क्या कहा है ?

सुललित जब सभा के बीच में पहुँचा तब वहाँ कुर्सी पर कोई बैठा नहीं था, सब उठ खड़े हुए थे। मामूली बातों से कठिन मामले शुरू करके एक-दूसरे पर दोष मढ़ा जा रहा था। किसकी नौकरानी ने किससे कब क्या कहा है, कब किस शामिल-शरीक के गहने गढ़वाने के समय किसके सुनार से किसने क्या कहा है, ये ही सब बातें उठ गयी थीं।

हठात् इसी बीच सँझले मालिक चिल्लाकर बोले—सच न हो तो बुलाओ, बड़ी भाभी को ही बुलाओ। वे यहाँ आकर मा काली के नाम से कसम खायें…

बड़े मालिक भी अपना गला ऊँचा करके बोले—उसके पहले हाराधन को बुलाओ, वह आकर मा काली के नाम से कसम खाये···

पूरा घर उस समय मानो विचलित हो गया था। सब लोग मतलबी मालिकों की कड़ी बातें सुनकर लज्जा और धिक्कार से कानों में उँगली लगा लेना चाहते थे। सुललित का भी मन हो रहा था कि वह भी कानों में उँगली लगा ले। यह कैसे शर्म की बात है! मामूली दो-एक इंच जमीन, या दो-एक स्क्वायर फुट जगह लेकर चतुर मनुष्यों के मन की संकीर्णता मानो उन्हें ही शर्मिन्दा कर रही थी। तो फिर बस्ती के जिन सब मामूली आदमियों को हम निचले स्तर के लोग कहते हैं उनका अपराध कहाँ है?

सुललित अब रुक नहीं सका। एकदम उस आग के बीच में कूद पड़ा। दोनों तरफ दो हाथ बढ़ाकर सबको चुप करता हुआ बोला—आप लोग ठहरिए काका बाबू, दया करके ठहरिए···

हठात् मानो आग में पानी पड़ा। सब लोग अकचकाकर सुललित की तरफ देखने लगे। सुललित बोला—हम लोगों का हिस्सा लेकर ही जब इतना गोलमाल हो रहा है तो अपना हिस्सा मैं छोड़ दे रहा हूँ···

वकील साहब अब तक सब बातें चुपचाप सुन रहे थे। इस घर के तमाम बरसों के वकील। इस घर के सुख-दुःख में बहुत नमक खाया है, बड़ा उपकार हुआ है उनका, बड़े उपकार किये भी हैं। वे चकित हो गये इस छोटे लड़के के व्यवहार से। वे कोई बात कहने जा रहे थे लेकिन उसके पहले ही सँझले मालिक ने बाधा डाली।

सँझले मालिक सुललित की बात खतम होने के पहले ही बोल उठे—यह नहीं होगा, मैं होने नहीं दूँगा। वह कौन है? मंझले मालिक इस समय बीमार हैं तब उनकी तरफ से उनके लड़के की बात मैं नहीं मानूँगा···

सुललित बोला—नहीं, मैं पिताजी की तरफ से ही बोल रहा हूँ, पिताजी स्वस्थ होने पर भी मेरी यही बातें कहते···

—कानून तो यह नहीं कहता खोका। मँझले मालिक जब तक जिन्दा हैं तब तक अदालत उनकी बात ही सुनेगी, तुम्हारी बात नहीं सुनेगी···

—तो फिर आज यह मामला रोक दिया जाय। मँझले मालिक पहले स्वस्थ हो जायें।

अखीर में यही बात तय हुई। वकील साहब भी निश्चिन्त हुए। वे सबेरे से इस मामले का एक फैसला करने आये थे। फैसला होने पर उसके बाद वेलुअर आता, इंजीनियर आता, मामला रफादफा करने की कोशिश होती। अखीर तक और कितना क्या होता यह कहा नहीं जा सकता। शायद अदालत तक जाता यह झगड़ा।

लेकिन उसकी अब जरूरत नही रही। ऊपर जिस समय वाद-वितण्डा-प्रतिवाद चल रहा था तभी हठात् ऊपर से एक आर्त्तनाद की आवाज ने पूरे वातावरण को चकित करके सुललित के भाग्य का रास्ता दूसरी दिशा के मोड़ में फिरा दिया।

सब लोग जल्दी-जल्दी ऊपर चढ़ आये। सबमे जल्दी चढकर आया सुललित। लेकिन तब तक सब समाप्त हो चुका था। डाक्टर साहब गम्भीर मुंह से कमरे के बाहर चले गये। और फर्श पर ज्ञानदामयी उस समय बेहोश पड़ी थीं।

भूधर बाबू की रोज की आदत चा पीते-पीते कुछ गप करने की थी। उमर बढ़ने पर जैसे सबको गप करने का स्वभाव बढ़ जाता है, भूधर बाबू का भी वैसा ही हो गया था।

गप लगाने के लोगों में तो सिर्फ वे ही दो जने थे। वही आरती और सुललित। अकेली आरती को लेकर गप ज्यादा जमती नही। इसीलिए जरूरत पड़ती सुललित की। सुललित रोज एक बार न आता तो उसे अच्छा न लगता।

गप माने उनके मिलिटरी जीवन की गप। बीते दिनों की गप करते-करते कभी मानो वे अपने ही अतीत मे अपने ही यौवन में लौट आते। और सुललित के समान ऐसा श्रोता भी वे कहाँ पाते?

लेकिन उस दिन चा पीना हो गया फिर भी सुललित नहीं आया।

आरती बोली—इतना सोच क्यों रहे हो पिताजी तुम, वह जरूर आयेगा···

भूधर बाबू बोले—लेकिन इतनी देर तो उसे कभी होती नही बेटी···

तो तुमसे गप लगाने से ही उसका काम चलेगा? उसका निजी काम-काज कुछ नहीं है?

—यह भी तो ठीक है। सुललित का भी तो घर-द्वार है, उसके बाप-मा-ताऊ चाचा-काका सभी तो हैं। और वह बाप का अकेला योग्य लड़का है। उसको काम नही रहेगा तो और किसको रहेगा? इतने दिनों जो वह सब छोड़कर इस घर में नियम से आया यही तो बहुत है।

लेकिन अबेर होते-होते दुपहर हो गयी, दोपहर बीतकर तीसरा पहर आया, उसके बाद तीसरा पहर बीता और शाम भी हो गयी लेकिन सुललित नही आया।

हठात् उसी दिन शाम को एक जीप और एक लारी भूधर बाबू के घर के

सामने आकर खड़ी हुई। उस समय चारों तरफ अँधेरा हो गया था। ठीक जगह खोज-पहचानकर वे लोग सदर दरवाजे के कड़े बजाने लगे।

आरती के दरवाजा खोलते ही एक अनजान आदमी बोला—मेजर बी० डी० गांगुली इसी घर में रहते हैं?

उसके बाद कौन-सी घटना घटी कोई नहीं जानता। मानो मशीन की तरह काम शुरू हो गया। बगल के मकान की बहू रोज ही खिड़की खोलकर इस घर की तरफ ताकती रहती। सवेरे, दुपहर, तीसरे पहर, शाम को हर वक्त। घर के भीतर चलने-फिरने की आवाज होते ही इस घर की तरफ नजर डालने की उसकी आदत हो गयी थी।

बहू का पति कौन जाने किस आफिस में काम करता है। वह सवेरे निकल जाता है, और फिर शाम को लौटता है। तब बहू के साथ बैठा-बैठा बातें करता है। वह आरती की चर्चा करता, सुललित की बातें करता।

बहू कहती—उन दोनों का विवाह होगा जानते हो।

पति कहता—तुम इतनी खबरें जानती कैसे हो? पूरे दिन खिड़की के किनारे बैठी रहती हो शायद?

बहू कहती—क्या और करूँ बोलो, और तो कोई काम रहता नहीं, इसीलिए उस लड़की को बुलाकर उससे बातें करती हूँ। विवाह की बात तो उस लड़की ने ही बतायी···

—लड़का कौन है?

—यह क्या मुझसे बतायेगी? लड़की इस मामले में बड़ी चालाक है। रोज दोनों घूमने जाते हैं। और बूढ़े पिता घर में अकेले रहते हैं···

इस प्रकार की बातें रोज ही होतीं दोनों में। बगल के घर की लड़की के बारे में दोनों को कौतूहल था।

उस दिन पति के आफिस से लौटते ही बहू बोली—ए, सुना है? वे लोग चले गये घर छोड़कर।

—वे लोग माने कौन लोग?

बहू बोली—वही देखो न, उस घर की तरफ ताककर देखो, घर एकदम भाँय-भाँय कर रहा है। तुम थोड़ा पहले आते तो सब देख पाते। शाम को जीप-गाड़ी में बैठकर कोई आये, साथ में एक लारी थी। उन लोगों के साथ लड़की के पिता की जाने क्या-क्या बातें हुई, उसके बाद उन्होंने देर नहीं की। सब लोग निकलकर जीप-गाड़ी के भीतर बैठ गये और माल-पत्र जो कुछ था सब लारी में रख दिया गया।

—तो तुमने पूछा क्यों नहीं लड़की से, कि वे लोग कहाँ जा रहे हैं? कितने दिनों के लिए जा रहे हैं?

—बात करने का क्या फिर समय मिला ?

—घरवालों को कुछ बोल नहीं गये ?

—यह मैं कैसे जानूं ?

—और वह उनका नौकर ?

बहू ने कहा—नौकर भी तो देखा तनखा-वनखा चुकता कराके चला गया।

पति भी मानो समस्या में पड गया। लेकिन वह रहस्य क्या था यह आसपास के घर के लोगों को पता लगने का उपाय ही नहीं था।

लेकिन असल घटना घटी ठीक उसके बाद।

हठात् बगल के घर के दरवाजे की कडी बज उठी।

रात उस समय काफी गम्भीर हो गयी थी। बगल के घर की बहू भी उस समय सो गयी थी। हठात् बगल के घर के दरवाजे की कडी बजते सुनकर बहू अपने पति को पुकारने लगी—ए, उन लोगों के घर मे मानो कोई बात कर रहा है—तुम एक बार देख आओ न जाकर। मालूम होता है वही लड़का आया है···

—कौन-सा लडका ?

बाहर अँधेरे मे सुललित तब दरवाजे की कड़ी हिलाते-हिलाते पुकार रहा था—आरती—आरती···

बहू ने कहा—तुम एक बार उठो न, उठकर जाकर कह आओ न कि वे लोग घर में नहीं हैं।

पति बेचारा उठा। उठकर देह मे कुरता पहनते-पहनते भी उसने थोड़ी देर की। उसके बाद जल्दी-जल्दी एकदम सीधे जाकर खडा हुआ सुललित के सामने। सुललित की आँखों और उसके चेहरे की हालत पागलों की सी थी, सिर के बाल बिखरे-बिखरे। आँखो की दृष्टि भी जाने कैसी मटमैली।

सुललित ने पूछा—आप बता सकते हैं इस घर में जो लोग थे वे कहाँ गये हैं ?

जवाब मिला—वे लोग तो चले गये···

—चले गये माने ? कहाँ गये हैं ? कब लौटेंगे ?

—यह तो बता नहीं सकूँगा। और मैं तो घर में था नहीं। मैं सबेरे आफिस के लिए निकल गया था, शाम को देर से लौटा हूँ। मैंने अपनी स्त्री से सुना कोई शायद आकर उन्हें बुलाकर लिवा ले गये।

—असबाब-सामान सब ?

—वह सब भी लारी में भरकर ले गये हैं वे।

—लेकिन कहाँ गये हैं कुछ बोल नहीं गये ? घर का किराया चुकता कर दिया है या नहीं यह जानते हैं ?

भले आदमी ने कहा—यह बात घर के मालिक ही बता सकते हैं। उन्हें बुला देता हूँ…

घर-मालिक दुतल्ले के पीछे की तरफ रहते हैं। इतनी रात को उन्हें भी बुलाया गया। वे भी आये। सुललित को देखकर पहचान गये।

वे बोले—वे लोग क्यों अकस्मात् चले गये, कहाँ चले गये यह कुछ बता नहीं सके। तीसरे पहर तक वे खुद भी कुछ नहीं जानते थे। शायद अकस्मात् चले जाना पड़ा—जाने के पहले हमारा भाड़ा भी चुका गये…

सुललित ने पूछा—अच्छा, मुझसे कुछ कहने को कह गये हैं क्या वे ?

—ना, सो तो कुछ बोल नहीं गये। मैं बहुत पूछता रहा, लेकिन मेरी किसी बात का भी जवाब नहीं दिया उन्होंने—

सुललित क्या कहे समझ नहीं सका। गूंगे की तरह कुछ देर वहाँ खड़ा रहा। फिर एक बार सिर नीचा करके जमीन की तरफ देखा। आखिर वह क्या करे, कहाँ जाये—यही बात शायद सोचने लगा, किसके पास जाने पर आरती लोगों के जाने की जगह का पता पा सके—यही बात शायद सोचने लगा।

—अच्छा, उन लोगों के घर में जो आदमी काम करता था वह कहाँ गया जानते हैं ?

घर के मालिक ने कहा—उसे उसकी तनखा चुकता कर दी गयी, वह अपने देश चला गया…

—तो फिर ? अगर काका बाबू वगैरह चले ही गये तो थोड़ी-सी खबर क्यों नहीं दे गये ? कौन-सी ऐसी जरूरत आ पड़ी अकस्मात् कि किसी को खबर दिये बिना ही चले जाना पड़ा ?

इस बात का जवाब कोई कैसे देता ? और जवाब कोई अगर जानता तब तो देता ?

—देखिए, आज मेरे पिताजी की मृत्यु हो गयी है इससे मैं आ नहीं सका। अगर भूधर बाबू लौट आयें तो यह खबर उन्हें दे दीजिएगा। मैं दो-एक दिन के बाद फिर आकर खबर ले जाऊँगा वे लोग आये या नहीं।

कहकर सुललित फिर वहाँ खड़ा नहीं हुआ। लगता है उसे वक्त भी नहीं था वहाँ खड़े होने का। सचमुच उस समय तक भी शवदेह श्मशान में ले जायी नहीं गयी थी। सिर्फ पिता की मृत्यु की खबर काका बाबू को देने के लिए ही वह एक क्षण के लिए यहाँ आया था। घर की उस मर्मान्तिक परिस्थिति का दृश्य भी उसकी आँखों के सामने नाच उठा। फिर उसने देर नहीं की। सीधे

जल्दी-जल्दी घर की तरफ जाने लगा।

रास्ते से घर की तरफ जाने के पथ में ही हठात् अखबार के हाकरों की चीत्कार सुनायी पड़ी—टेलिग्राफ—टेलिग्राफ—

टेलिग्राफ !

बेवक्त इस 'टेलिग्राफ' चीत्कार के क्या माने हैं यह कलकत्ते के लोग मर्म-मर्म से जानते हैं। लड़ाई के वक्त इस 'टेलिग्राफ' ने ही कलकत्ते के लोगों को पहले-पहल खबर दे दी थी कि जर्मनी के हिटलर ने पोलैण्ड पर आक्रमण किया है।

और इस बार ? इस बार किसने लड़ाई छेड़ी है ?

इस बार पाकिस्तान के अय्यूब खाँ हैं। कहे-सुने बिना इस १९६५ ईसवी में अय्यूब खाँ ने फिर आक्रमण शुरू किया काश्मीर की छाती पर और इसीलिए उस दिन कलकत्ता के रास्तों की रोशनी अकस्मात् बुझ गयी। जो थोड़ी-सी दूकानें और बिक्री की चीजें उस वक्त तक खुली थीं वे सब भी अकस्मात् ढाँक-ढूँककर बन्द कर दी गयीं। युद्ध—युद्ध फिर इण्डिया की छाती पर अनिवार्य रूप से निष्ठुर भाव से लद गया।

उस अन्धकार मे ही चाटुज्जे-परिवार के सन्दीप चाटुज्जे का शवदेह श्मशान की चिता पर जलकर राख हो गया। और शायद उसी समय उसके साथ ही जलकर खाक हो गया चाटुज्जे-परिवार का पूरा घर।

और उसके साथ जलकर खाक हो गया सुललित। और सुललित का अतीत वर्तमान भविष्यत् शायद उसी आग मे जलकर एकदम निश्चिह्न हो गया।

यह उसी १९६५ ईसवी की घटना है। सम्भवतः घटना ऐसी कुछ नही है, शायद एक देश के जीवन मे युद्ध पहले के युद्ध के समान उतना दीर्घस्थायी नहीं है इसलिए उतना मारात्मक भी नही है। सिर्फ इण्डिया के नगर-कस्बों और जनपदों में मामूली कुछ दिनो के लिए ब्लैक-आउट हुआ, कुछ लोगों ने अपनी जानें भी खोयी। इसके अलावा शायद कुछ हजार लोगों ने कुछ मुनाफा भी कमा लिया। लेकिन हम लोगों के मुहल्ले के चाटुज्जे-परिवार के घर पर ही लगता है यह आघात सबसे भीषण रूप से लगा।

भूधर बाबू जाने कितने प्लैन बनाकर कलकत्ता आये थे। उन्होने सोचा था, आखिरी जिन्दगी कलकत्ते में ही काटेंगे। इसके अलावा पहले जो भूल उन्होंने की थी, उस भूल को दुहराये बिना आरती का विवाह कर देंगे सोचा था। उसके लिए वर भी ठीक हो गया था। और प्रत्येक साड़ी पसन्द की थी सुललित ने। यहाँ तक कि प्रत्येक गहना भी।

ऊलित ने कहा था—यह सव मुझे क्यों पसन्द करने को कहा है का।ना
.ह सव तो आरती खुद ही पसन्द कर सकती···

काका वावू वोले थे—ना ना, आरती की पसन्द अच्छी नहीं है, तुम्हारी
ही आरती की पसन्द है···

और सिर्फ क्या इतना ही ? किस तरह जूड़ा वांधने पर आरती सुन्दर
.गी यह तक सुललित को ही वताना होगा । किस तरह टिकुली कपाल पर
रती लगायेगी यह भी शायद सुललित के वताये विना काम नहीं चलेगा ।

सुललित कहता—आप लोगों का यह सव काम क्या मैं इतना जानता हूँ
ाका वावू ?

काका वावू कहते—ना ना, जानने-वानने की वात नहीं है, तुम आरती से
.ववाह करोगे, तुम्हारी जैसी पसन्द हो उसी तरह आरती को सजा लेना···

इतना ज्यादा अपना कर लिया था भूधर वावू ने इस सुललित को कि
लगता है यह वात कहकर समझाई नहीं जा सकेगी । आरती कमरे के भीतर से
सज-धजकर आती और भूधर वावू पूछते—क्यों ? अच्छी सजी है ? वोलो···

सुललित वोलता—अच्छी···

काका वावू कहते सिर्फ मन रखने के लिए अच्छा कहने से चलेगा नहीं
सुललित, तुम्हें कहना पड़ेगा वहुत अच्छी या थोड़ी कुछ अच्छी ।

सुललित को मजवूर होकर कहना पड़ता—वहुत अच्छी ।

इसी तरह दिन के वाद दिनों और महीने के वाद महीनों में काका वावू ने
उसे अपना परमात्मीय वना लिया था । और कहाँ से अकस्मात् कौन-सा कलंक
तूफान आकर सव तोड़-फोड़कर छार-छार करके चला गया यह मानो पह
कल्पना ही नहीं की जा सकी ।

इसके वाद और कितने दिन कट पाये ! एक पोस्टमैन एक दिन चाटु
परिवार के घर के सामने चिट्ठी देने आकर अकवका गया !

इतना वड़ा घर, घर तोड़-फोड़कर मरम्मत कर रहे थे राजमिस्त्री
जन-मजूर । चारों तरफ चूना-सुर्खी और चूरचार ईंटों के ढेर ।

एक आदमी को देखकर पोस्टमैन ने पूछा—इस घर में कौन रहता

उस आदमी ने पूछा—क्यों ?

पोस्टमैन वोला—सन्दीपकुमार चट्टोपाध्याय के नाम से एक चि
और सुललित चट्टोपाध्याय के नाम से भी एक चिट्ठी है···

उस आदमी ने कहा—आप क्या नये हैं इस पोस्टआफिस में ?

—हाँ, मैं नया आया हूँ···

—तभी है । तो चाटुज्जे लोगों के घर वेच देने पर जाने कव व
है ।

पोस्टमैन समझ नहीं सका। बोला—बँट गया है माने ?

—माने सब अलग हो गये हैं। अपने पोस्ट आफिस के पुराने लोगों से पूछने पर ही सब जान सकोगे···

—तो वे लोग कहाँ चले गये हैं अब ?

—वही सन्दीपकुमार चट्टोपाध्याय जिनका नाम है वे पहले ही मर चुके हैं, और उसके बाद घर छोड़कर जाने के दिन उनकी स्त्री भी परलोक चली गयी।

—तो फिर ? ये सुललित चट्टोपाध्याय फिर अब कहाँ हैं ? उनका पता क्या है ?

—बाप-मा के मर जाने पर लड़का यहाँ क्यों रहेगा ? वह फिर दिखायी नहीं पड़ा। कहीं नौकरी-चाकरी में लगकर चला गया है लगता है···

—पोस्टमैन फिर और क्या करे ! उसका ठीक आदमी के पास चिट्ठी पहुँचा देना ही काम है। ठीक आदमी और ठीक पता ढूँढ न पाने पर वह फिर चिट्ठी पोस्ट आफिस को लौटा देगा। उसके बाद उस चिट्ठी की कौन-सी गति होगी यह जानने के लिए वह सिर नहीं खपायेगा। तब वह दूसरे डिपार्टमेंट का काम है।

और यह क्या सिर्फ एक बार ? और भी जाने कितनी बार दो आदमियों के नाम कितनी ही चिट्ठियाँ आयी और गलत पता देने की वजह से वे चिट्ठियाँ लौट भी गयी। उसके बाद उस पुराने घर की जगह पर नये तरीके से एक नया घर बनकर ऊँचा उठ गया। उस घर में भी कोई नया आदमी रहने नहीं आया। आये दल के दल कर्मचारी। सरकारी कर्मचारी सब। जो नये घर के मालिक हुए थे उन्होंने वह घर मोटे किराये पर सरकार को उठा दिया था। एक दिन इस प्रचुर सम्पत्ति के प्रतिष्ठाता शक्तिधर चाटुज्जे ने यहाँ अपना निवास गढ़कर सोचा था, वे अक्षय कीर्ति पैदा कर गये इस घर को गढ़कर। लेकिन परलोक से शायद उनकी आत्मा ने देख लिया कि उनके ही सब उत्तराधिकारी आपस में झगड़ा-झंझट करके सब जलांजलि देकर निश्चिह्न हो गये। शक्तिधर चाटुज्जे इस मुहल्ले के मनुष्यों के लिए हमेशा-हमेशा के समान एकदम मिट गये।

उनके परिवार के जो लोग अब भी थे उन्होंने विराट् शहर के किस गली-कूचे में जाकर आश्रय लिया था यह जानने के लिए और किसी के सिर में दर्द नहीं हुआ। इतिहास के रथ-चक्के के नीचे मनुष्य के पिसकर मिट जाने के बाद फिर किसी एक मनुष्य ने उसकी जगह दखल कर ली। मुहल्ले-मुहल्ले में जो सब पलञ इतने दिनों आदर्शवाद की ध्वजा उड़ाकर मनुष्यत्व की जय-घोष [illegible] थे [illegible] दूसरे एक [illegible] ने आकर अपने [illegible]

पक्के कर लिये थे। तब से क्लब के आयोजनों में आदर्शवाद के व्याख्यानों के बदले लाउडस्पीकर से हिन्दी फिल्मों के गाने के सुर से मुहल्ला मत्त होने लगा मनुष्यों के कान बहरे हो गये उस सुर से। सुललित चाटुज्जे नाम का एक व्यक्ति उस क्लब का सेक्रेटरी या प्रेसिडेंट था यह तक वे लोग चर्चा तक में भूल गये।

शायद ऐसा ही होता है संसार में। जो आशा-सम्भावनाएं लेकर मनुष्य जीवन शुरू करता है उसे कितने लोग अन्त तक पूरा कर पाते हैं!

लेकिन सुललित भूला नहीं। कुछ भी भूल नहीं सका वह! एक पल में जो उलट-पलट उसके जीवन में घटित हो गया उसे उसने अपने निजी जीवन में चिरस्थायी होने नहीं दिया। जिस आदमी ने अपने हाथ से किसी दिन अपना कोई काम ही नहीं किया वही उन दिनों पूरे उत्तरप्रदेश में और पूरे मध्यप्रदेश में मारा-मारा फिर रहा था। रेल में घूमते-घूमते अकस्मात् उसके मन में आया कि किसी स्टेशन में उतरना होगा वहीं वह उस समय उतर गया, और अगर किसी दिन मन हुआ तो दूसरी किसी गाड़ी में फिर चढ़कर बैठ गया। वह गाड़ी आखिर कहाँ जा पहुँचेगी यह जानने की जरूरत भी मानो उसे नहीं थी।

—दादा बाबू, दादा बाबू, यहाँ कहाँ उतर रहे हो?

—हाँ, यहाँ उतरूँगा।

—यह कौन-सा स्टेशन है? यहाँ क्या काम है तुम्हारा?

—तुम्हें इतने खोज-बीन की जरूरत क्या है? मैं जो कहता हूँ करो। बोलते-बोलते सुललित उतर पड़ता और उसके साथ-साथ भगीरथ को भी उतरना पड़ता।

पुराना आदमी। कब एक दिन किसी घटनाचक्र से भगीरथ शक्तिधर चाटुज्जे के वंशधरों के घर में उनकी फरमाइशें पूरी करने की नौकरी में कलकत्ता आया था। उन दिनों उस नौकरी में गौरव था। मालिकों के हुक्के-चिलमों का हिसाब रखना पड़ता, उनका पान-तम्बाकू सजाना पड़ता। जब-तब मजलिसें होने पर मोटी बखशीशें भी पाता भगीरथ। लेकिन उसके बाद न जाने क्या हुआ! मालिक लोग जाने किस तरह के हो गये सब। रसोईघर की हाँड़ियाँ अलग हो गयीं। मालिकों में मुँह-देखादेखी बन्द हो गयी। सब लोगों को अपने-अपने हिस्से के घरों के भीतर संसार चलाने में जानदेवा कष्ट हुआ।

उस समय और भी तमाम लोग थे चाटुज्जे-भवन में। मालिकों की हालत बिगड़ने के साथ-साथ वे सब नौकरी छोड़कर नौकरी तय करके चले गये। लेकिन भगीरथ जा नहीं सका।

वह इस दादा बाबू की वजह से जा नहीं सका। इस दादा बाबू को बचपन

से देखभाल कर बड़ा किया है भगीरथ ने। यह दादा बाबू ही फिर एक दिन और बड़ा हुआ। तब भी लेकिन दादा बाबू कुछ अन्याय करता तो भगीरथ उस पर नाराज होकर बकता।

बोलता—खबरदार, मैं लेकिन मालिक से कह दूंगा।

खाने का मन न होने पर भगीरथ उसे डरवाकर खिलाता, घर में स्कूल से देर करके आने पर बकता। उन दिनों सुललित भी डरता भगीरथ से।

उसके बाद जब सुललित के विवाह-सम्बन्ध की बात हो रही थी तब उसको ऐसा लगता था कि उसके ही लड़के का विवाह है। उसके निज का लड़का भी होता तो अब तक उसका भी विवाह करना होता।

और उसके बाद सब एक दिन खत्म हो गया।

वे सब बातें सोचने पर अब भी भगीरथ की दोनों आँखें छलछला उठतीं।

उसके बाद एक दिन दादा बाबू भगीरथ को लेकर यहाँ चला आया। इसी बिलासपुर में।

आसपास के घरों के कुछ लोग भगीरथ को देखने पर पूछते—क्यों भाई भगीरथ, तुम्हारे बाबू कहाँ हैं?

भगीरथ ज्यादा बातों का आदमी नहीं है। कहता—बाहर···

सुललित ने भगीरथ को ज्यादा बातें करने को मना कर दिया था। सुललित कहाँ जाता है, क्या करता है यह सब कुछ भी मानो वह किसी से न कहे!

सुललित कहता—तुम सिर्फ खाओ-पियो और काम करो। और जब काम न रहे तब पड़े-पड़े सोओ···

भगीरथ बोला—तो आदमी क्या सारे दिन पड़े-पड़े सो सकता है? तो फिर तुम मुझे काम दो···

लेकिन काम और कहाँ पायेगा सुललित? जो काम उसका है वह उसका निजी है। अपना काम उसे खुद ही करना होगा।

उसे याद है बाप-मा के मर जाने के बाद एक दिन भेंट हो गयी थी हरनाथ बाबू के साथ। राय बहादुर हरनाथसिंह। गवर्नमेंट के पहले दर्जे के आफिसर। सवेरे रोज वे हाफ-पेंट पहनकर छड़ी लेकर घूमने जाते। भेंट होते ही पूछते—क्यों सुललित, कैसे हो?

उस समय तक पिता-माता की मृत्यु का अशौच मिटा नहीं था सुललित का। वह कहता—अच्छा हूं ताऊ जी।

हरनाथ बाबू बोलते—तुम्हारे ताऊ-चाचा सब कहाँ रहने लगे अन्त में?

सुललित जवाब देता—कौन कहाँ रहने लगे पता नहीं है···

—यह अच्छा ही किया। आजकल एक साथ रहना अब वाजिब भी नहीं है। जाएंट फैमिली सिस्टेम ही बेकार हो गया है। तुम लोग जो इतने दिनों

एक साथ एक घर में रहे आये यही तुम लोगों की बहादुरी है। एक दिशा से जो हुआ अच्छा ही हुआ।

उसके बाद कुछ ठहरकर कहते—तो तुम अब किसके साथ हो ?

—श्यामबाजार के एक मेस में ठहरा हूँ।

काम-काज कुछ करते हो ?

सुललित कहता - नहीं; घर-बिक्री के जितने रुपये थोड़े-से मेरे हिस्से में मिले हैं, उन्हें ही खर्च करके चला रहा हूँ, और मेरे साथ भगीरथ है, वही मेरा खाना बना देता है ।

—सचमुच, सब भाग्य है ! क्या और करोगे बोलो, सब स्थितियों में अपने को निभा सकने का नाम ही मनुष्यत्व है। तुम हतोत्साह मत होना। मैं खुद भी एक दिन बहुत गरीब था जानते हो। लेकिन अब तो मुझे यह देख ही रहे हो।

सुललित ने कहा था—लेकिन मेरे जो आज कोई नहीं है, कुछ नहीं है, एक आश्रय-अवलम्बन या सिर छिपाने की जगह तक अब कुछ नहीं है···

हरनाथ बाबू ने कहा था—तुम्हारे समान बहुतेरे लोगों के यह सब कुछ नहीं है···

—आपसे मैं सब बातें खोलकर नहीं कह सकूँगा। लेकिन अगर कह सकता तो आप कुछ तो आखिर समझ पाते···

—लेकिन घर-बिक्री के रुपयों का तो एक मोटा हिस्सा तुमने पाया था ?

—मैंने अपना वाजिब हिस्सा लिया नहीं।

—लिया नहीं माने ? वह रुपया तो कोर्ट से ही बाँट दिया जाता है—

सुललित ने कहा था—कोर्ट से जो दिया गया था वह मेरा वाजिब हिस्सा नहीं था।

—तो तुम्हारा वकील उस समय क्या कर रहा था ? उसने अपील क्यों नहीं की ?

—अपील करना चाहता था लेकिन मैंने मना किया था। ताऊ-चाचा किसी के खिलाफ मैंने कुछ करना नहीं चाहा। जज ने जब सबसे पूछा था किसी को कुछ आपत्ति है या नहीं तब सबके साथ मैंने भी कह दिया था कि मेरा कोई विरोध नहीं है—मैंने खुद भी उस कागज पर दस्तखत कर दिये थे।

सुललित को याद है उसके सँझले काका ने उस दिन उसे उत्तेजित करना चाहा था। उन्होंने कहा था—तू इतना पागल क्यों है रे ? तूने अपना वाजिब हिस्सा छोड़ क्यों दिया ? वह तो तेरे हक का पावना है।

सुललित ने तब जवाब दिया था—नहीं सँझले काका, उस सम्पत्ति का कुछ भी मैंने अपनी मिहनत से नहीं कमाया, इसलिए उसके किसी हिस्से पर मैं अपना

हक नहीं जमाऊँगा।

—तो यह विचार तो हम लोगों के वक्त भी वाजिब होगी रे। हम लोगों में से भी तो किसी ने अपनी मिहनत से उसे पैदा नहीं किया, सब ही तो उन्हीं शक्तिधर चाटुज्जे की सम्पत्ति की भोग-दखल कर रहे हैं। लेकिन इसमें हम अपने हक के रुपये क्यों छोड़ें, सुनूं! बड़े दादा जो बोलेंगे वही हम लोगों को सुनना होगा।

सुललित ने कहा था—लेकिन रुपयों के लिए कोई अगर गुरुजन होकर कुछ नीचता करे तो हम भी क्या रुपयों के लिए इतने नीच बनेंगे? मेरे सामने रुपयों की बनिस्बत मनुष्यत्व का दाम ज्यादा है···

मँझले काका ने उस पर और कोई बात नहीं कही। जाते समय सिर्फ कहा था—ठीक है, अपना मनुष्यत्व लेकर ही तो फिर तू रह, जब रुपयों की कड़की होगी तब तू समझेगा कि संसार कौन-सी चीज है, समझेगा कि रुपयों की क्या कीमत है···

कहकर मँझले काका चले गये थे।

सब बातें सुनकर हरनाथ बाबू ने कहा था—एक नौकरी मिलने से तुम करोगे?

—कैसी नौकरी?

हरनाथ बाबू ने पूछा था—कितने रुपये तनखा पाने पर तुम्हारा काम चलेगा? तुम लोग कितने आदमी हो?

सुललित बोला था—मैं अकेला हूँ। और मेरे साथ है भगीरथ। भगीरथ किसी तरह मुझे छोड़कर जाना नहीं चाहता। छुटपन से उसने मुझे बड़ा किया है न, इसीलिए वह भी है मेरे साथ।

—दो सौ रुपये तनखा की एक नौकरी का इन्तजाम तुम्हारे लिए कर सकता हूँ, करोगे?

सुललित ने राजी होकर साथ ही साथ कहा था—तनखा बड़ी चीज नहीं है, मैं जो भी नौकरी हो वही कर लूंगा।

—लेकिन वह नौकरी करने पर तुम्हें कलकत्ता से बाहर जाना होगा समझे।

—पृथिवी की किसी भी जगह में जाने को तैयार हूँ मैं, इसी वक्त कलकत्ता छोड़कर जा सकने पर मैं बच जाऊंगा।

हरनाथ बाबू ने कहा था—लेकिन काम हुआ चोर पकड़ने का काम!

—चोर पकड़ने का?

—हाँ, एंटी-करप्शन। इंडिया गवर्नमेंट के बहुत-से लोग घूस लेते हैं, गवर्नमेंट की प्रापर्टी चोरी करते हैं। उनको पकड़ने के लिए गवर्नमेंट ने यह

डिपार्टमेंट खोला है, उसकी ही नौकरी है, तुम होओगे एंटी-करप्शन आफिसर। कर सकोगे ?

—कर सकने की कोशिश करूँगा।

हरनाथ बाबू ने कहा था—मैं भी कहता हूँ तुम कर लोगे। तुम्हारे समान आनेस्ट लड़के ही हमारे डिपार्टमेंट को चाहिए। स्वाधीनता मिलने के बाद से सारे देश में चोरों की तादाद बहुत बढ़ गयी है, तुमने एक बात में घर का इतना बड़ा हिस्सा छोड़ दिया है, इस तरह की नजीर कहीं दिखायी नहीं पड़ती। तुम कल हमारे आफिस में मिलो।

यही हुआ उसकी नौकरी पाने का इतिहास।

कलकत्ता छोड़कर हमेशा के लिए उसे बाहर रहना होगा। बिलासपुर में सिर्फ रहना। बिलासपुर ही हुआ उसका हेड-क्वार्टर। लेकिन महीने के बाद महीनों कटेंगे बाहर। फिर किस दिन वह हेड-क्वार्टर में लौटेगा, इसका कोई ठीक-ठिकाना नहीं है।

बाहर जाने के पहले भगीरथ हर बार नियम के मुताबिक सुललित से पूछता—अब कब लौटोगे दादा बाबू ?

इसका कोई ठीक-ठीक जवाब क्या सुललित खुद भी दे सकता है जो कहेगा कि फलाँ तारीख को फलाँ वक्त लौटेगा। उसकी जैसे बाहर जाने की तारीख ठीक नहीं थी वैसे ही लौटने की तारीख भी कुछ ठीक नहीं रहती थी। किसी-किसी दिन रात को सुललित अकस्मात् आ पहुँचता। इतने दिनों कहाँ था दादा बाबू, इतने दिनों क्या कर रहा था, यह पूछने का हक नहीं था भगीरथ को। वह मामूली एक आदमी है, हुक्म तामील करने के लिए ही वह पैदा हुआ है। छुटपन में एक दिन मालिकों की तम्बाकू सजाकर सेवा करके वह इतना बड़ा हुआ है, लेकिन कभी एक दिन वह अपने ही अनजाने में इस घर का भला चाहने लगा था, इस घर के लिए उसने जान होम दी थी। और अब मँझले मालिक के इकलौते बेटे की सेवा करके वह अपने जीवन की चरम और परम चरितार्थता खोज रहा है।

दादा बाबू को देखकर भगीरथ को बड़ी तकलीफ होती। जल्दी-जल्दी नजदीक आकर कहता—दादा बाबू, दूध पिओगे ? दूध गरम कर लाया हूँ—

सुललित नाराज होकर चिल्ला उठता। कहता—दूध ? मैं क्या बच्चा हूँ जो दूध पिऊँगा ? तुम अभी जाओ···

—तो फिर क्या भात खाओगे ? भात चढ़ाऊँ ?

सुललित तब और भी बिगड़ जाता। कहता—तुम अभी जाओ तो भगीरथ यहाँ से, मैं कुछ नहीं खाऊँगा, मुझे नींद लगी है···

तब फिर और कुछ करने का रास्ता न रहता। सुललित सो जाता।

भगीरथ धीरे-धीरे दादा बाबू का बिछौना ठीक कर देता, उसके बाद मसहरी टाँगकर बिछौने के चारों तरफ अच्छी तरह लपेटकर रोशनी बुझा देता। उसके बाद कमरे के बाहर जाकर दरवाजे के पास ही सोया रहता।

जिस दिन से दादा बाबू ने नौकरी शुरू की थी, जिस दिन से कलकत्ते के घर का बँटवारा करके उसके सब मालिक अलहदा हो गये थे, उस दिन से ही दादा बाबू मनुष्य एकदम दूसरी तरह का हो गया था। पहले कितने ही दोस्त आते, कितना हंसते-खेलते। अब उस तरह हँसना भी वह मानो भूल गया था।

पहले-पहल भगीरथ साथ नहीं छोड़ता। जब जहाँ जाते दादा बाबू, भगीरथ भी जाता, कहाँ रायपुर, कहाँ बरेली, कहाँ मुजफ्फराबाद। ट्रेन चल रही है तो चल ही रही है। दिन के बाद दिन, रात के बाद रात। हठात् मन में आया तो दादा बाबू ने कहा—भगीरथ, यहाँ उतरेंगे···

उतरोगे तो उतरो! अनजाने-विदेश की जगह। भगीरथ न तो समझता है वहाँ की भाषा, और न पहचानता है वहाँ के एक भी आदमी को। तो भी हुक्म ठहरा, उतरना ही पड़ता। उसके बाद भगीरथ को ठहराकर कहाँ जाता दादा बाबू, उसकी कोई खोज-खबर नहीं। तब उसी स्टेशन के प्लेटफार्म में अकेले-अकेले बैठे दिन काटना। वह एक मुश्किल मामला था! तब कहाँ दादा बाबू जाता, कहाँ घूमता-फिरता, और कौन-सा काम करता इसका भी कोई पता-ठिकाना भगीरथ न पाता।

उसके बाद से फिर कभी भगीरथ साथ न जाता। बिलासपुर के घर में ही अकेले-अकेले दिन काटता। दादा बाबू ने भी उससे कहा था, तुम्हे अब मेरे साथ घूमना नहीं होगा भगीरथ, तुम अब से घर में ही रहो, तुम्हें घूमने मे तकलीफ होगी···

एक दिन हिम्मत करके भगीरथ ने कहा था—दादा बाबू, तुम कौन-सा काम करते हो बोलो तो?

सुललित चमक उठा था—क्यों, तुम्हें यह जानने की जरूरत क्या है?

भगीरथ बोला था—लोग जो मुझसे पूछते हैं···

—क्या पूछते हैं···

—क्या पूछते हैं? कौन पूछते है?

भगीरथ बोला था—मुहल्ले के लोग सभी पूछते हैं। कहते हैं, तुम शायद पुलिस में नौकरी करते हो। तुम शायद चोर पकड़ते हो···

बात सुनकर दादा बाबू के मुँह में कुछ हँसी फूटी थी। उसने कहा था—मैं चोर पकड़ता हूँ? क्यों, कोई चोर है क्या बिलासपुर में?

भगीरथ बात का मजाक पकड़ नहीं पाया। उसने कहा था—चोर सब जगह हैं और बिलासपुर में नहीं होंगे यह क्या मुमकिन हो सकता है?

टेमेंट खोला है, उसकी ही नौकरी है, तुम होओगे एंटी-करप्शन आ... सकोगे ?

—कर सकने की कोशिश करूँगा ।

हरनाथ बाबू ने कहा था —मैं भी कहता हूँ तुम कर लोगे । तुम्हारे समान ।नेस्ट लड़के ही हमारे डिपार्टमेंट को चाहिए । स्वाधीनता मिलने के बाद सारे देश में चोरों की तादाद बहुत बढ़ गयी है, तुमने एक बात में घर का तना बड़ा हिस्सा छोड़ दिया है, इस तरह की नजीर कहीं दिखायी नहीं पड़ती। तुम कल हमारे आफिस में मिलो ।

यही हुआ उसकी नौकरी पाने का इतिहास ।

कलकत्ता छोड़कर हमेशा के लिए उसे बाहर रहना होगा । विलासपुर में सिर्फ रहना । विलासपुर ही हुआ उसका हेड-क्वार्टर । लेकिन महीने के बाद महीनों कटेंगे बाहर । फिर किस दिन वह हेड-क्वार्टर में लौटेगा, इसका कोई ठीक-ठिकाना नहीं है ।

बाहर जाने के पहले भगीरथ हर बार नियम के मुताबिक सुललित से पूछता—अब कब लौटोगे दादा बाबू ?

इसका कोई ठीक-ठीक जवाब क्या सुललित खुद भी दे सकता है ? कहेगा कि फलाँ तारीख को फलाँ वक्त लौटेगा । उसकी जैसे बाहर जाने तारीख ठीक नहीं थी वैसे ही लौटने की तारीख भी कुछ ठीक नहीं रहती किसी-किसी दिन रात को सुललित अकस्मात् आ पहुँचता । इतने दिनों था दादा बाबू, इतने दिनों क्या कर रहा था, यह पूछने का हक नहीं था रथ को । वह मामूली एक आदमी है, हुक्म तामील करने के लिए ही पैदा हुआ है । छुटपन में एक दिन मालिकों की तम्बाकू सजाकर सेवा वह इतना बड़ा हुआ है, लेकिन कभी एक दिन वह अपने ही अनजाने में घर का भला चाहने लगा था, इस घर के लिए उसने जान होम दी थी । अ मँझले मालिक के इकलौते बेटे की सेवा करके वह अपने जीवन की च परम चरितार्थता खोज रहा है ।

दादा बाबू को देखकर भगीरथ को बड़ी तकलीफ होती । ज नजदीक आकर कहता—दादा बाबू, दूध पिओगे ? दूध गरम कर ला

सुललित नाराज होकर चिल्ला उठता । कहता—दूध ? मैं क्या जो दूध पिऊँगा ? तुम अभी जाओ···

—तो फिर क्या भात खाओगे ? भात चढ़ाऊँ ?

सुललित तब और भी बिगड़ जाता । कहता—तुम अभी जा रथ यहाँ से, मैं कुछ नहीं खाऊँगा, मुझे नींद लगी है···

तब फिर और कुछ करने का रास्ता न रहता । सुल

भगीरथ धीरे-धीरे दादा बाबू का बिछौना ठीक कर देता, उसके बाद मसहरी गिराकर बिछौने के चारों तरफ अच्छी तरह लपेटकर रोशनी बुझा देता। उसके बाद कमरे के बाहर जाकर दरवाजे के पास ही सोया रहता।

जिस दिन से दादा बाबू ने नौकरी शुरू की थी, जिस दिन से कलकत्ते के घर का बँटवारा करके उसके सब मालिक अलहदा हो गये थे, उस दिन से ही दादा बाबू मनुष्य एकदम दूसरी तरह का हो गया था। पहले कितने ही दोस्त आते, कितना हँसते-खेलते। अब उस तरह हँसना भी वह मानो भूल गया था।

पहले-पहल भगीरथ साथ नहीं छोड़ता। जब जहाँ जाते दादा बाबू, भगीरथ भी जाता, कहाँ रायपुर, कहाँ बरेली, कहाँ मुजफ्फराबाद। ट्रेन चल रही है तो चल ही रही है। दिन के बाद दिन, रात के बाद रात। हठात् मन में आया तो दादा बाबू ने कहा—भगीरथ, यहाँ उतरेंगे…

उतरोगे तो उतरो! अनजाने-विदेश की जगह। भगीरथ न तो समझता है वहाँ की भाषा, और न पहचानता है वहाँ के एक भी आदमी को। तो भी हुक्म ठहरा, उतरना ही पड़ता। उसके बाद भगीरथ को ठहराकर कहाँ जाता दादा बाबू, उसकी कोई खोज-खबर नहीं। तब उसी स्टेशन के प्लेटफार्म में अकेले-अकेले बैठे दिन काटना। वह एक मुश्किल मामला था! तब कहाँ दादा बाबू जाता, कहाँ घूमता-फिरता, और कौन-सा काम करता इसका भी कोई पता-ठिकाना भगीरथ न पाता।

उसके बाद मैं फिर कभी भगीरथ साथ न जाता। बिलासपुर के घर में ही अकेले-अकेले दिन काटता। दादा बाबू ने भी उससे कहा था, तुम्हें अब मेरे साथ घूमना नहीं होगा भगीरथ, तुम अब से घर में ही रहो, तुम्हें घूमने में तकलीफ होगी…

एक दिन हिम्मत करके भगीरथ ने कहा था—दादा बाबू, तुम कौन-सा काम करते हो बोलो तो?

सुललित चमक उठा था—क्यों, तुम्हें यह जानने की जरूरत क्या है?

भगीरथ बोला था—लोग जो मुझसे पूछते हैं…

—क्या पूछते हैं…

—क्या पूछते हैं? कौन पूछते है?

भगीरथ बोला था—मुहल्ले के लोग सभी पूछते हैं। कहते हैं, तुम शायद पुलिस में नौकरी करते हो। तुम शायद चोर पकड़ते हो…

बात सुनकर दादा बाबू के मुँह में कुछ हँसी फूटी थी। उसने कहा था—मैं चोर पकड़ता हूँ? क्यों, कोई चोर है क्या बिलासपुर में?

भगीरथ बात का मजाक पकड़ नहीं पाया। उसने कहा था—चोर सब जगह हैं और बिलासपुर में नहीं होंगे यह क्या मुमकिन हो सकता है?

—इसीलिए मैं समझता हूँ, तुमसे यह वात पूछी है तो तुम उन लोगों से कह देना भगीरथ, कि चोरी की सजा एक दिन उन्हें भोगनी ही पड़ेगी भले मैं पुलिस की नौकरी करता होऊँ या नहीं ही करता होऊँ…

कहकर दादा वावू फिर कहाँ चला गया था यह हमेशा की तरह भगीरथ से वोला नहीं गया।

रायवहादुर हरनाथसिंह असल उद्देश्य हैं। मनुष्य की जिन्दगी में ऐसी ही वजहें एक दिन अकस्मात् आकर पैदा होती हैं और उनकी जिन्दगी का रास्ता एक रुक न सकने वाले नतीजे की दिशा में मोड़ ले मोड़कर फिरा देती हैं। नहीं तो कहाँ सुललित था कलकत्ते के किसी एक शक्तिघर चाटुज्जे का छोटा वंशधर और वही मनुष्य भाग्य के किस एक अमोघ निर्देश से चला आया इस मध्यप्रदेश के अल्पख्यात शहर में। और ऐसी ही उसकी एक नौकरी जिससे किसी एक आदमी के साथ प्राणमन खोलकर वात तक नहीं कर सकता। वह पुलिस है। मामूली पुलिस नहीं, प्लेन पोशाक में और पाँच भले-आदमियों के समान घूमने-फिरने पर भी असल में वह पुलिस है। दूर से उसे देखकर अकेले में लोग कहेंगे—वह देखिए, वह जो आदमी इधर आ रहा है, वह पुलिस है!

सो सिर्फ वह विलासपुर में ही घूमता हो ऐसा नहीं है। ट्रेन में जाकर वैठने पर ही हो गया। उसके वाद वह ट्रेन जितनी दूर जाती हो जाये। उसके वाद एकदम अखीर तक अपने काम की जगह में जाकर वह फिर ट्रेन पकड़ता है। उस ट्रेन में वैठकर सीधे वरेली चले जाओ, लखनऊ चले जाओ, भोपाल चले जाओ। कोई तुमसे कोई जवावदेही नहीं चाहेगा। सिर्फ हफ्ते-हफ्ते में एक-एक रिपोर्ट भेज देना दिल्ली में। तुम्हारा हेड आफिस जिससे जान सके तुम कहाँ-कहाँ घूम रहे हो, कौन-सा काम कर रहे हो। उस यातायात के रास्ते में ही तुमसे कितने ही लोगों की जान-पहचान होगी, उनसे वात करने पर ही तुम जान जाओगे, कौन आदमी सरकार को धप्पा देकर लम्वी रकमें पैदा कर रहा है, कौन परमिट-लाइसेन्स के वदले में मोटी घूस ले रहा है।

जान-पहचान करके खवर खींच लेने में ही तुम्हारी कावलियत है। जान-पहचान तो करना, लेकिन अपना असल परिचय मत देना।

अगर कोई पूछे—आप क्या करते हैं?

तुम कहना—मैं गवर्नमेंट का सेक्शन आफिसर हूँ…

सेक्शन आफिसर शब्द वहुत धुँधला है। सो रहे धुँधला। तुम जो पुलिस के स्पाइ हो यह कोई समझ न सके यही काफी है।

उस दिन इसी प्रकार एक आदमी से परिचय होते ही सुललित जान गया कि वे लखनऊ में रहते हैं।

—लखनऊ ? आप कितने दिनों से वहाँ हैं ?

—पाँच बरस से। पाँच बरस से वहाँ यह नौकरी कर रहा हूँ।

—वहाँ के सब बंगालियों को पहचानते हैं ?

—अच्छी तरह पहचानता हूँ। सब बंगाली हमारे बैंक मे आते हैं।

—अच्छा, मेजर भूधरचन्द्र गांगुली नाम के किसी को पहचानते हैं आप ? मिलिटरी के डाक्टर। उनकी एक लडकी है। लडकी का नाम आरती है। आरती गांगुली। लखनऊ से ही बी० ए० पास किया है।

भला आदमी बड़ी देर तक सोचता रहा। ना, बहुत कोशिश करने पर भी वे पहचान नहीं सके। बोले—किस मुहल्ले में वे रहते हैं बताइए तो ? बंगालीटोला ?

सुललित बोला—यह ठीक नही जानता। बहुत दिनों पहले उनसे मेरी जान-पहचान हुई थी कलकत्ता मे···

सचमुच काका बाबू वगैरह कलकत्ता आने के पहले लखनऊ में रहते थे, इतना ही सिर्फ जाना था उसने। इससे ज्यादा जानने की उसे जरूरत ही नहीं हुई कभी। और जरूरत होगी भी क्यों ? कलकत्ता छोड़कर वे जो फिर किसी दिन कहीं चले जायेंगे यह भी तो उसने कल्पना नहीं की थी।

और उसी समय ही तो तमाम तरह के झमेले जुट गये उसके जीवन में। कहाँ से लड़ाई छिड़ गयी पाकिस्तान के साथ। रात को ब्लैक आउट। और शाम के बाद कहीं निकलना भी खतरे से खाली नहीं। बिना किसी अन्दाज और संवाद के अकस्मात् साइरन बज उठना। और तिस पर घर में वह सब अशान्ति। घर के मालिकों में झगडा-झंझट, काकियों मे आपस में मुँहदेखादेखी बन्द। पिता की मृत्यु, और उसके बाद मा की बीमारी।

तो भी उसके बाद ही मौका निकालकर फिर एक दिन वह उस घर में गया था। फिर उसने उस घर के मालिक से भेंट की थी। लेकिन काका बाबू और आरती की कोई खबर दे नही सके वे।

—अच्छा, उनका पहले का ठिकाना जानते हैं आप ?

—कैसे जानूंगा ? आपने ही तो घर किराये पर लिया था। मैं तो उन लोगों को पहचानता नहीं था, आपकी बात पर ही तो मैंने उन्हें घर किराये पर दिया था।

—यह तो ठीक ही है। सुललित की बात पर ही तो वे उन लोगों को घर किराये पर देने को राजी हुए थे। इसलिए उनका पहले का हाल-चाल वे कैसे जान सकते थे ?

ंकिन एक दिन और ठहर नहीं सका सुललित। रात को कई दिनों से ींद नहीं आ रही थी। सारे दिन छटपट करता हुआ वह घूमा। सुललित ंगा कि शहर में एक भी आदमी नहीं है जिससे बात करके वह मन हलका

भगीरथ दूर से देख रहा था कई दिनों से। उस दिन बोला—दादा बाबू!

सुललित ने जवाब दिया—क्या?

भगीरथ बोला—तुम्हें अब नौकरी करने की जरूरत नहीं है यहाँ, चलो ंलकत्ता चले जायें···

सुललित ने भगीरथ के मुँह की तरफ ताका। वह बोला—क्या कह रहे हो तुम?

—कहता हूँ अब यहाँ तुम मत रहो दादा बाबू···

—क्यों? रहें क्यों नहीं?

—यहाँ रहने पर तुम अब बचोगे नहीं दादा बाबू! इस तरह रहने से कोई बचता है क्या?

—क्यों? मैं किस तरह रहता हूँ?

—खाने का ठीक नहीं है तुम्हारा, सोने का ठीक नहीं है, यह घर है या पेड़ की छाँह? तुम कहाँ निकल जाते हो उसका ठीक-ठिकाना नहीं, और ं भी अकेला भूत की तरह घर का पहरा देता बैठा रहता हूँ। मुझे भी क्या य अच्छा लगता है?

सुललित बोला—लेकिन नौकरी न करने पर खायेंगे क्या तुम बताओ मेरे क्या बैंक में रुपया है जो उसे ही निकालेंगे और खायेंगे?

भगीरथ बोला—लेकिन लोग तो मुझसे तमाम बातें कहते हैं···

—कौन-सी बात कहते हैं?

—वही एक बात। तुम शायद बड़े-बड़े सब लोगों को गिरफ्तार जेल में भरे दे रहे हो। इतने लोगों को जेल में भरने से तुम्हें शाप नहं तुम्हारे खिलाफ मनौती नहीं करेंगे?

—तो फिर देश में इतने चोर रहने पर देश भी तो हमारा मिट्टी जायेगा भगीरथ। गवर्नमेंट तो हमें इसीलिए तनखा देती है, पहनाती है···

भगीरथ बोला—तो देश डूब जाय, तुम्हारा जीवन पहले है या है! अखीर में सब मिलकर अगर घर में धावा बोल दें? अगर ट् करने आयें? तब गवर्नमेंट तुम्हें देखेगी?

सुललित हँसा। हँसते-हँसते बोला—तो अगर खून ही करे मेरे तो कोई नहीं है जिसके लिए मैं जिन्दा रहूँ। मेरे अब जिन्दा

फायदा है बोलो ?···

कहकर फिर खड़ा नहीं हुआ वहाँ। जिधर जा रहा था उधर ही चला गया।

ये सब बातें याद को भगीरथ से ही मैंने सुनी थी। कलकत्ता छोड़कर चले जाने पर सुललित से यही मेरी पहली भेंट है। बीच के दिनों में जो इतनी भयानक घटनाएँ घट गयी है यह मैं कैसे जानूँगा ?

इसीलिए एक दिन जब फिर बहुत दिनों के बाद सुललित से भेंट हुई तब मैंने उसके जीवन के सम्बन्ध में नये रूप से सोचना शुरू किया। सब मनुष्यों का जीवन सुख का नहीं होता, सुख तो पाना ही होगा, इसका भी कोई मतलब नहीं है। क्योंकि सुख शब्द आपेक्षिक है। लेकिन विशृंखलता ? विशृंखलता की तीव्रता की भी एक मात्रा है। मनुष्य के सहन करने की तो एक सीमा है। उत्थान-पतन का एक ज्यामेट्रिकल नियम भी है। सुललित के मामले में क्या वह भी नहीं रहेगा ?

भगीरथ ने कहा था—जानते हैं, दादा बाबू को कितनी तकलीफ है, घर में जब यह काण्ड हुआ, उधर उस समय काका बाबू वगैरह की भी कोई खोज-खबर नहीं···

सचमुच कहीं नहीं मिला काका बाबू का पता। आखिरी दिनों में सुललित एकदम पागल हो उठा था। जब जिस शहर में जाता, वहाँ जाकर सुललित पूछता—अच्छा, मेजर भूधर गांगुली नाम के किसी को आप पहचानते हैं ? वे थे मिलिटरी-डाक्टर, रिटायर हो गये है, उनकी अकेली लड़की है, जिसका नाम है आरती। पहचानते हैं उन लोगों को ?

आफिस के काम से दिल्ली भी जाना पड़ता सुललित को, जबलपुर भी जाना पड़ता। ट्रेन में, टैक्सी में, बस में सब लोगों के चेहरों की तरफ खोद-खोद वह देखता। अगर अकस्मात् नजर में पड़ जायें। लखनऊ कई बार गया। स्टेशन में उतरकर सारे दिन शहर के रास्ते-रास्ते में घूमा है। किसी खास आदमी को देखते ही उसने पूछा है—अच्छा, यहाँ मेजर गांगुली, रिटायर्ड मिलिटरी-डाक्टर कहाँ रहते है—आप बता सकते हैं ?

कोई नहीं बता सका। इतना बड़ा देश, इतने असंख्य मनुष्य, उनकी भीड़ में कहाँ वे लोग खो गये हैं कौन उनकी खबर रक्खेगा ? सब आदमी आज सामने की तरफ दौड़े जा रहे हैं, उनमें से किसी को वक्त नहीं है पीछे फिरकर ताकने का। उन्हें अपनी नौकरियों में और भी प्रोमोशन चाहिए, उनके बैंक में और भी रुपया जमा होना चाहिए, और जिनके कुछ नहीं है उनका अभाव

मिटना चाहिए, जिनके है उन्हें और भी मिलना चाहिए। इसलिए कहाँ कौन हैं मेजर गांगुली, कौन उनकी लड़की आरती है, इसका पता-ठिकाना रखने का समय कहाँ है उन्हें !

ऐसा ही प्रायः होता।

आफिस से चिट्ठी आती सुललित की। आफिस की ताकीद होती और भी केस दो। वह चाहता सुललित और भी चोर पकड़े, सुललित और भी गजेटेड आफिसरों के नाम से शिकायत भेजे। वह चाहता देश में जितने चोर-कारबारी मुनाफेबाज हैं सुललित उन सबको कोर्ट के कटघरे में खड़ा करवा दे।

लेकिन कितने लोगों को पकड़ेगा वह ! उनकी संख्या जो असीम है। उनके रुपयों और प्रभाव का जोर जो आसमान फाड़ने के समान है ! रास्ते से जब वह जाता तब आमने-सामने सब उसे नमस्कार करते, आदर से सिर झुकाते। लेकिन आड़ में पहुँचते ही उसे गाली-गलौज।

भगीरथ एक-एक बार कहता—थोड़ा सावधान रहना दादा बाबू !

सुललित हँसता। बोलता—मेरा वे और क्या करेंगे भगीरथ, ज्यादा-से-ज्यादा खून करेंगे। उससे किसी का कोई नुकसान नहीं होगा, बल्कि मिटेगा···

उस दिन झमझमाकर बाहर पानी बरस रहा था। जाफरी लगे बरामदे पर एक चेयर लेकर सुललित बैठा हुआ आफिस की फाइलें देख रहा था। हफ्तेवार डायरी लिखने में देर हो गयी थी, उसे तैयार करना जरूरी था। हफ्ते के हर दिन का रत्ती-रत्ती हिसाब।

बाहर आकाश-भरी वर्षा देखने में बड़ा अच्छा लगा सुललित को। वर्षा नहीं है तो, मानो करुणा है। विधाता की करुणा मानो वर्षा की अविरल धारा बनकर उसके सिर पर ही झरी पड़ रही है। सामने ही रास्ता था। रास्ते के उस पार बहुत दूर तक मैदान था। मध्यप्रदेश की रूखी ब्लैक-काटन साएल। सुललित का काम-काज सब चूल्हे में गया। लगता है आरती पास होती तो ऐसी ही शान्ति वह पाता।

हो, बरखा हो। और भी बहुत देर तक बरखा हो। यह बरखा अगर पूरा बनकर उसे बहा ले जाये तो उसके लिए और अच्छा। एक दिन उसका सब कुछ चला गया है, इस बार वह खुद भी तो फिर मुक्ति पा जाये।

हठात् उसकी नजर पड़ी जाने कहाँ की किसके घर की एक छोटी साफ-सुथरी लड़की रास्ते में निकलकर भींग रही है। किनकी लड़की है वह ?

सुललित ने चिल्लाकर पुकारा—ओ खुकु—खुकु—भींगो मत···

सुललित को देख पाकर लड़की और भी खुश। आश्चर्य, यह किनके घर की लड़की है, हठात् घर से निकल पड़ी है ! कोई देखनेवाला नहीं है क्या ?

सुललित ने और देर नहीं की। जाफरी का दरवाजा खोलकर बरखा में

ही वह बाहर निकल पड़ा। उसके बाद दोनों हाथों से लड़की को गोद में उठाकर वह बरामदे के भीतर आया।

लड़की नाराज हो गयी। बोली—तुम क्यों मुझे भीतर ले आये?

सुललित बोला—बरखा में भीगने से तुम जो बीमार हो जाओगी रुकुमणि। ऐसी बरखा में कोई भीगता है?

लड़की बोली—हाँ भीगता है, वर्षा में भीगने से मुझे बहुत अच्छा लगता है।

सुललित अकचका गया लड़की की बात सुनकर। उसने पूछा—तुम्हारा घर कहाँ है?

लड़की भी वैसी ही। बोली—तुम लगता है मेरी माँ से कह दोगे?

सुललित ने पुकारा—भगीरथ, भगीरथ···

लड़की बोली—भगीरथ को क्यों बुला रहे हो? मैं उससे भी नहीं बताऊँगी मेरा घर कहाँ है···

तब तक भगीरथ नींद से उठकर आ गया था। सुललित बोला—यह किनके घर की लड़की है बताओ तो भगीरथ? इसे पहचानते हो? सामने के रास्ते में देखा पानी में भीग रही है, इसीलिए उठाकर ले आया···

भगीरथ बोला—तुम्हारा घर कहाँ है रुकुमणि?

—इश, मैं क्यों बताऊँ तुम्हें?

सुललित बोला—भगीरथ, तुम उसकी कोई बात मत सुनो। इसी मिनट तुम उसका भीगा कपड़ा उतारकर उसे एक सूखा कपड़ा पहना दो और थोड़ा खूब गरम दूध उसे पिला दो···

लड़की बोली—क्या पहनाओगे मुझे? तुम्हारा कोट-पैंट मेरी देह में नहीं होगा···

भगीरथ बोला—आओ-आओ, क्या पहनाऊँगा उसकी उतनी फिक्र तुम्हें नहीं करनी होगी···

कहकर उसे भीतर खींच ले गया भगीरथ। भीतर ले जाकर भगीरथ ने क्या किया यह देखने की फुरसत फिर उसे नहीं रही। उसने फिर फाइलों में अपना मन लगाया। लड़की थोड़ी देर के बाद जब फिर उसके कमरे में आयी तब सुललित ने देखा उसके शरीर में एक सूखा फ्राक है, उसके सिर के बाल पोंछ-कर कंघी से अच्छी तरह कोर दिया है सुललित ने।

सुललित उसकी तरफ देखकर बोल उठा—वाह, तुम तो इस बार बहुत सुन्दर दिखायी पड़ रही हो···

उसके बाद भगीरथ की तरफ देखकर पूछा—तुम यह सूखा फ्राक कहाँ पा गये भगीरथ?

भगीरथ बोला—बगल की गुजराती दीदीमणि से माँग लाया···

लड़की हठात् बोली—तुम आफिस नहीं जाओगे ?

सुललित बोला—क्यों, आफिस क्यों जाऊँगा ?

—वाह रे, सभी तो आफिस में जाते हैं। मुन्नी के बाप आफिस जाते हैं, कल्पना के बाप आफिस जाते हैं, मेरी माँ भी आफिस जाती है···

—तुम्हारी मा ? तुम्हारी मा कैसे आफिस जायेगी ?

—हाँ जाती है। बड़े आफिस में। मा बड़े आफिस में नौकरी करती है। छोटी लड़कियाँ सिर्फ स्कूल जाती हैं···

बातें सुनकर सुललित हँसा, भगीरथ भी हो-हो करके हँस पड़ा। बोला—इसके देखता हूँ बुद्धि तो बड़ी है दादा बाबू···

सुललित बोला—बरखा बन्द होने पर तुम पता लगाना भगीरथ, कि यह किनकी लड़की है, उसके बाद उनकी लड़की उनके घर पहुँचा देना···

लड़की कह उठी—मैं घर नहीं जाऊँगी, मैं यहाँ रहूँगी···

भगीरथ बोला—क्यों, घर क्यों नहीं जाओगी ? तुम्हारी मा जो फिकर करेगी ?

—नहीं, घर जाने से मेरी मा नाराज होगी···

सुललित ने पूछा—क्यों, नाराज क्यों होगी ? तुमने क्या किया है ?

—वाह रे, मुझसे नाराज नहीं होगी ? मैंने जो गिरिजा की बात सुनी नहीं। गिरिजा ने मुझसे घर में लेटकर सोने को कहा था। गिरिजा की बात न सुनने पर मा मुझसे खूब नाराज होती है !

—कौन है गिरिजा ?

—तुम गिरिजा को पहचानते नहीं ? गिरिजा को देखते ही तुम्हें डर लगेगा। वह मुझे दूध पीने को देकर खाना बनाने जाती है और मैं रोज खिड़की से सब दूध बाहर फेंक देती हूँ। तुम यह बात गिरिजा से बोल मत देना। बोल देने से वह मुझसे खूब नाराज होगी···

भगीरथ बोला—तुम दूध फेंक देती हो ? लेकिन तुमने तो मुझसे दूध पी लिया ?

—वाह रे, तुमने तो दूध चीनी मिलाकर दिया। गिरिजा दूध में चीनी नहीं मिलाती, चीनी न मिलाने से मुझे जो उल्टी आती है···

थोड़ी देर के बाद ही पानी बन्द हो गया। सुललित बोला—जाओ, अब तुम घर जाओ, नहीं तो तुम्हारी मा अन्त में तुम्हें इधर-उधर खोजेगी···

—इश, मा तो आफिस में है। मा जान कैसे पायेगी ?

—तो फिर गिरिजा तुमसे बिगड़ेगी न !

—हाँ, गिरिजा मुझसे बहुत बिगड़ती है। लेकिन गिरिजा अभी नाक बजा-

कर सो रही है। वह जान नहीं सकी मैं कब बाहर निकल आयी हूँ। गिरिजा अगर मुझपर बिगड़े तो तुम उससे खूब नाराज होओगे न ?

—हाँ, खूब नाराज होऊँगा। लेकिन गिरिजा तुम्हारी क्या लगती है ?

—धुर, तुम कुछ नहीं जानते, गिरिजा तो हम लोगों के घर में खाना पकाती है, वह तो हम लोगों की मिसरानी है···

भगीरथ उस समय लड़की को लेकर बाहर जाने को तैयार था।

सुललित बोला—तुम फिर आना, समझी ?

—हाँ, आऊँगी···

—अपना नाम तो तुमने हमसे बताया नहीं भाई ?

—मा मुझे रिनि कहकर पुकारती है, लेकिन असल नाम कोई नहीं जानता, जानते हो ?

—असल नाम क्या है ?

—असल नाम ? मेरा असल नाम है रिनिल···

—वाह, अच्छा नाम है, मैं लेकिन तुम्हें रिनि कहकर बुलाऊँगा, क्यों ?

रिनि ने गला हिलाया। उसके बाद उसी पिछले रास्ते से चलते-चलते बाहर निकल गयी।

मामूली एक दिन की एक घटना। लेकिन भगीरथ के मन में आया कि दादा बाबू के मुँह में वही पहले दिन थोड़ी हँसी देखी उसने। लेकिन लड़की के चले जाने पर फिर ज्यों-के-त्यों ही। फिर मुँह पर काले मेघ की घन-घटा छा गयी। उसके बाद जाने कहाँ वह निकल गया रात की ट्रेन से।

भगीरथ भी उस दिन सुललित की आँखों के सामने से ही घर में घुसा, तब भी सुललित मानो दूसरा आदमी हो। एक बार पूछा तक नहीं उस लड़की को उसके घर में पहुँचा आये हो कि नहीं। भगीरथ खुद खबर बतानेवाला था, लेकिन दादा बाबू के चेहरे का भाव देखकर बताने में उसे डर लगा।

यह एक अद्भुत मनुष्य ही तो है ! उस बार कलकत्ते में जिस दिन घर हिस्सों में बँट-छूट गया उस दिन से ही ऐसा हो गया है। अच्छी तरह न तो खाता है, और न बातें करता है। इतनी तकलीफ करके भगीरथ राँधता है, तो भी मानो दादा बाबू को खिलाकर खुश नहीं कर पाता। खाने को बैठने पर भगीरथ पूछता है—मछली का झोल कैसा हुआ है दादा बाबू ?

दादा बाबू अन्यमनस्क भाव से कहता है—अच्छा···

—तो फिर सब क्यों नहीं खाया ?

दादा बाबू कहता है—और भूख नहीं है···

—तो फिर जरूर मैंने अच्छा नहीं पकाया, नहीं तो तुमने खाया क्यों नहीं ? सब भात जो पड़ा रह गया···

दादा बाबू कहता—ना, बहुत अच्छा पकाया है तुमने···

भगीरथ कहता—तुम एक किसी को रखो दादा बाबू, नहीं तो···

—नहीं तो क्या ?

—नहीं तो विवाह करो—तो फिर तुम्हें खाने में अच्छा लगेगा···

दादा बाबू उसी समय खाना छोड़कर उठ जाता। उस समय मुँह का रूप जाने कैसा अन्यमनस्क हो जाता दादा बाबू का।

मुहल्ले के दूसरे घरों के लोग भगीरथ से पूछते—अच्छा भगीरथ, तुम्हारे दादा बाबू के कोई नहीं है लगता है ?

भगीरथ कहता—मैं तो हूँ, और कौन रहेगा दादा बाबू का ?

—नहीं, तुम तो हुए दादा बाबू के अर्दली, लेकिन उनका अपना तो कोई नहीं है ? मा या बाप, भाई या बहन ? तो तुम्हारे बाबू का विवाह ही क्यों नहीं हुआ ?

भगीरथ कहता—विवाह करनेवाला तो कोई नहीं है दादा बाबू का, आप लोग एक पात्री देख दीजिए न···

लेकिन यहीं तक। दूसरे के मामले में सब कौतूहल की बात कर सकते हैं, लेकिन उसके उपकार के वक्त कोई नहीं दिखायी पड़ता।

लेकिन इस जबाब से भी उनमें से कोई खुश नहीं होता। वे पूछते—तो बाबू के आत्मीय-स्वजन भी कोई नहीं हैं, काका-ताऊ-मामा, भानजा ? वे सब लोग ही कहाँ हैं ?

भगीरथ कहता—बाबू के बाप मर गये, उनकी मा भी मर गयी, काका-ताऊ वगैरह में खूब झगड़ा मच गया। कलकत्ते का इतना बड़ा सातमंजिला घर, इतने लोग, हर बरस अन्नपूर्णा की पूजा होती, कैसी घटा होती थी उस पूजा की, उसे देखे बिना वह सब कथा बताना मुश्किल है···

यह कहकर भगीरथ श्रोताओं से सुललित के उन्हीं पुराने दिनों के ऐश्वर्य की कहानी रत्ती-रत्ती करके बताता। इतने बड़े घर का लड़का क्यों इस परदेश-भूमि में दूसरों की नौकरी करने आया है, बोलो !

एक दिन हठात् वही लड़की फिर आयी। बाहर से ही पुकारने लगी—भगीरथ, दरवाजा खोलो, दरवाजा खोलो न···

भगीरथ बाहर निकलकर अवाक्। बोला—रिनि खुकुमणि, तुम !

पीछे और एक औरत थी।

जल्दी-जल्दी चाबी से ताला और फिर दरवाजा खोल दिया भगीरथ ने। वह बोला—आइए, आइए···

रिनि बोली—तुम लोगों ने मुझसे आने को कहा था इसी से मैं आयी हूँ, यह देखो, यह मेरी मा है, अपने साथ अपनी मा को भी ले आयी हूँ···

महिला देखने में बडी सुन्दर थीं। उसके माथे पर आधा घूँघट था। वे बोली—रिनि रोज ही तुम लोगों की बात कहती है, लेकिन मैंने उसे आने नहीं दिया। आज लेकिन किसी तरह उसने छोड़ा नहीं मुझे, खींचते-खींचते ले आयी।

भगीरथ ने कहा—अच्छा ही किया। बैठिए।

यह कहकर उसने कुर्सी दिखा दी।

महिला बोली—मेरा उसी दिन आना वाजिब था, लेकिन रिनि को सर्दी-खाँसी हो गयी थी इसीलिए फिर आ नही सकी। मैं तो उसे गिरिजा के पास रखकर आफिस जाती हूँ, वह सो गयी और यह बरसा मे रास्ते पर निकल पड़ी। भाग्य से तुम थे, नही तो जाने क्या होता···

भगीरथ बोला—मैं नहीं दीदीमणि, मैं तो घर के भीतर था। दादा बाबू यहीं बैठा-बैठा आफिस का काम कर रहा था, रिनि को देख पाते ही दादा बाबू उसी बरसा में रास्ते पर निकलकर रिनि को पकड लाये···

—तो तुम्हारे दादा बाबू कहाँ हैं! उन्हें तो देख नहीं रही हूँ?

—दादा बाबू! मेरे दादा बाबू की अब छोडिए दीदीमणि। दादा बाबू बरस के आधे दिनो घर में नही रहते।

—क्यों? क्या काम है उनका?

भगीरथ एक-एक करके गडगड़ाता हुआ सब बोल गया। अन्त में बोला—मेरी बात तो सुनते नहीं दादा बाबू। दादा बाबू जब आपकी इस लड़की के समान छोटे थे, तब से तो मैं ही दादा बाबू की देखभाल करता आ रहा हूँ। और अब और भी बड़े हो गये हैं, अब वे मेरी बात आखिर क्यों सुनेंगे! मैं कौन हूँ बताइए न, मैं तो मामूली नौकर और तो कुछ नहीं हूँ···

—तुम्हारे दादा बाबू तो फिर लगता है अकेले ही रहते हैं यहाँ?

—और कौन रहेगा बताइए? शादी-वादी कर लेते तो मैं हो न हो थोड़ी छुट्टी पा जाता, वह भी मेरे भाग्य में नहीं है। घर से बाहर कहीं थोड़ा निकलूँ इसका भी उपाय नही है। कब हुट करके आ पहुँचेंगे और उस वक्त मुझे न पाकर घर में ही घुस नहीं पायेंगे। इसीलिए हर वक्त मुझे घर में ही रहना पड़ता है। इस नौकरी मे तो दादा बाबू के आने-जाने का कुछ ठीक नहीं है न···

—तो इतना जो बाहर घूमते हैं तुम्हारे दादा बाबू, उनका खाना-पीना? खाने-पीने का क्या होता है?

समय समाज-संसार में हाथ ने सिर काटना शुरू कर दिया था। ऐसा ही चल रहा था बहुत दिनों से। अन्त में बरस के बाद बरस अत्याचार से हैरान होकर एक दिन कुछ लोगों ने पागल होकर ठीक किया कि इसका बदला लेना होगा।

किसी एक आदमी ने उन्हें खोज-खबर बतायी थी कि बिलासपुर के सुल-लित चट्टोपाध्याय नाम के एक गवर्नमेंट एन्टी करप्शन अफसर हैं उन्हें खबर देते ही बैनर्जी साहब को हाथों-हाथ पकड़ लिया जायेगा। बैनर्जी साहब के हाथ से हमेशा-हमेशा के लिए मुक्ति मिल जायेगी।

कई दिन तक घर में आ-आकर भी सुललित को वे पा नहीं सके। ज्यों ही घर में आकर खोज-खबर ली है तभी भगीरथ ने कहा—नहीं, दादा बाबू घर में नहीं हैं।

उन लोगों ने पूछा है—कब लौटेंगे वे ?

भगीरथ का वही एक ही जवाब—इसका कुछ ठीक नहीं है—मैं नौकर आदमी ठहरा, मैं यह कैसे जान सकता हूँ ?

वे लोग फिर खड़े नहीं हुए इसके बाद। लेकिन उन लोगों ने पतवार नहीं छोड़ी। बैनर्जी साहब का बड़ा भारी क्वार्टर था, वहाँ बवर्ची-खानसामा, चप-रासी-बेयराओं का जुलूस था। और आफिस में दुर्व्यवहार। तिस पर सबसे बड़ी बात थी रोजगारियों से मोटी रकमों की घूस। वे रेल के एक-एक वैगन में अगर किसी तरह बीड़ी-पत्ते लादकर शालीमार भेज सकें तो तुरन्त दो हजार रुपयों का फायदा। उससे बैनर्जी साहब को पाँच सौ रुपये देने में कोई नुक-सान नहीं। बैनर्जी साहब ही हैं वैगन देने के मालिक।

इस पर भी है दुर्व्यवहार। दुर्व्यवहार कैसा ? हठात् साहब किसी क्लर्क को अपने चैम्बर में बुलवा लेते।

—मित्तिर तुम्हें थोड़ा वक्त मिलेगा ?

—बोलिए सर, क्या करना होगा ?

बैनर्जी साहब बोले—हमारे घर में दो गेस्ट आयेंगे, तुम बाजार से छः मुर्गी खरीदकर ला सकते हो ? यही मझोले साइज की···

—जरूर ला सकता हूँ सर···

—तो ये रुपए लो—कहकर बड़ी तकलीफ से पाकेट से दस रुपये का एक नोट निकालकर उन्होंने मित्तिर को दिया। मित्तिर और कुछ बोल नहीं सका। वे ही दस रुपये लेकर छः मुरगी खरीद लाकर उसने बंगले के खानसामा के हाथ में दे दिया।

बैनर्जी साहब को मोटा फायदा ही हुआ। बाजार में उन दिनों छः मुरगी का दाम पचीस रुपया था। सिर्फ दस रुपये में मुर्गियाँ मिल गयीं। जो नुकसान

हुआ वह हुआ मामूली क्लर्क मित्तिर का।

और सिर्फ क्या मित्तिर? मित्तिर, गांगुली, सरकार, भट्टाचार्जि, रामलिंगम्, सबकी वही एक ही हालत थी। वे दलबल के साथ ढूंढने निकलते सुललित को। सुललित ही अकेला उन लोगों का उद्धार कर सकता है।

अखीर में एक दिन उन्होंने सुललित को पा लिया। पाया रास्ते में। वह ट्रेन में चढ़कर जा रहा था इलाहाबाद की तरफ। एक आदमी ने दिखा दिया। वह बोला—वह देखो, उनका ही नाम सुललित चैटर्जी है—यहां के एण्टि करप्शन अफसर···

उनकी वही पहली भेंट थी। सुललित ट्रेन से उतर पड़ा। ये सब बातें ट्रेन के कम्पार्टमेंट में सबके सामने बैठकर नहीं की जा सकती।

वे लोग सब बातें पक्की करके चले गये।

कहां के कौन बैनर्जी साहब, उन्हें सुललित पहचानता भी नहीं। उनका नाम कभी सुना नहीं उसने। लेकिन जिन लोगों ने शिकायत की थी, उन्होंने बैनर्जी साहब के नाड़ी-नक्षत्र की खबर दे दी थी। उसके बाद उनके पीछे ही लगा रहा वह। कभी उसे धोती-कुरता पहनना पड़ता, कभी सूट। और कभी फटा हुआ कुरता और उसके साथ लुंगी।

· आफिस के कैन्टीन में बैठकर नजर रखने लगा सुललित। बड़े-बड़े मर्चेंट आते बैनर्जी साहब के कमरे में। थोड़ी देर बात करने के बाद ही वे चले जाते। तब और एक कोई आता। वैगनों की बड़ी कमी थी। तिस पर भी मर्चेंट लोगों में से सबको वही वैगन चाहिए। जितने वैगन पायें उतना ही उनका फायदा।

अखीर में एक मर्चेंट से आपसपन हो गया सुललित का। आदमी ज्यादा रुपये दे नहीं सकता इसलिए वैगन भी नहीं पाता। सुललित ने उससे पूछा—एक वैगन देने के लिए बैनर्जी साहब कितनी घूस लेते हैं?

उस आदमी ने कहा—आठ सौ नौ सौ···

सुललित बोला—ठीक है, मैं तुम्हें नकद एक हजार रुपये दूंगा, तुम साहब को पकड़ा दोगे?

—क्यों नहीं पकड़ा दूंगा हुजूर? वह तो हरामी है। उसे पकड़कर जेल में ठूंस दीजिए हुजूर। वह सबको वैगन देता है, मुझे किसी तरह नहीं देता···

—क्यों, तुमने क्या कुसूर किया है?

—कुसूर और मैं क्या करूंगा हुजूर। मेरे पास रुपये नहीं हैं, यही मेरा कुसूर है, मैं गरीब मर्चेंट हूं न इसीलिए मेरा एलाटमेंट नहीं होगा···

तो ऐसा ही इन्तजाम हुआ। एक दिन सुललित सबको अपने साथ ले आया। फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट, पुलिस के दो इन्सपेक्टर, और कई कान्स्टेबुल। सबको

मामूली पोशाक। जो आदमी बैनर्जी साहब को पकड़वायेगा उसके हाथ में दिये गये एक-एक सौ रुपये के दस नोट। नोट के नम्बर मजिस्ट्रेट ने अपने हाथ से डायरी में लिख लिये।

बैनर्जी साहब के कमरे में घुसकर मर्चेंट ने घूस के वे रुपये दिये, बैनर्जी साहब ने भी तुरन्त रुपये अपने पाकेट में रख लिये। और ठीक उसी वक्त दरवाजा खोलकर घुसे पुलिस के लोग और मजिस्ट्रेट। और सुललित।

—हू आर यू ?

मजिस्ट्रेट ने अपना परिचय दिया। बैनर्जी साहब तब भी मानो ठीक अपनी हालत समझ नहीं सके। बोले—आप लोग किससे परमिशन लेकर मेरे कमरे में घुसे ?

लेकिन जब सचमुच सबका स्वरूप पहचान सके तब बैनर्जी साहब का दूसरा चेहरा था, दूसरा रूप था।

घटना मामूली है। आधे घण्टे की मियाद। बल्कि शायद आधा घण्टा भी नहीं। उसी आधे घण्टे के भीतर बैनर्जी साहब के आकार-प्रकार और आचरण में ऐसी एक आकुलता, ऐसी एक कातरता प्रकट हो उठी जिसके साथ पहले के व्यवहार का कोई मेल नहीं था। बैनर्जी साहब ने अखीर में अकस्मात् सुललित के सामने आकर उसके दोनों हाथ पकड़ लिये। बोले—आपने बंगाली होकर एक एक बंगाली को पकड़ा ? आपने मेरा कैसा सर्वनाश किया आप जानते नहीं ? मैं अब सबको मुंह कैसे दिखाऊँगा बोलिए ?

सुललित गम्भीर खड़ा था। बैनर्जी साहब की आँखों को फाड़कर उस समय आँसू बहने-बहने को थे। वे बोले—आपका नाम मैंने पहले ही सुना था। आप ही वे मिस्टर चैटर्जी हैं ?

सुललित बोला—हाँ, मेरा नाम सुललित चैटर्जी है···

बैनर्जी साहब की उस समय फूट पड़ने की हालत थी। वे सुललित के दोनों हाथ उस वक्त भी जकड़कर पकड़े हुए थे। बोले—मैंने आपका क्या नुकसान किया था जो आपने मेरा इतना बड़ा सर्वनाश किया ? आप जानते हैं मेरा क्या सोशल-स्टेटस है, समाज में मेरी क्या पोजिशन है, मेरा कितना सम्मान है ? ऐसे ही आपने मेरा सब स्टेटस, मेरी पोजिशन, मेरा सम्मान, सबकुछ धूल में मिला दिया ?

उसके बाद मिस्टर बैनर्जी सबके सामने ही कहने लगे—जानते हैं, मेरे घर में मेरी स्त्री, मेरे लड़के-लड़कियाँ सब हैं, वे लोग मेरे बारे में क्या सोचेंगे ? मेरे कोलीग लोगों की फैमिली है, वे भी अब से मुझे किस निगाह से देखेंगे ? वे बोलेंगे, मैं घूसखोर हूँ, मैं चोर हूँ—मैं···

बोलते-बोलते बैनर्जी साहब के आँखों के आँसू टप-टप करके सुललित की

देह और कपड़ों पर गिरने लगे।

सुललित ने अपने दोनों हाथ छुड़ा लेने की कोशिश की। लेकिन बैनर्जी साहब छोड़नेवाले नहीं थे। वे उसी तरह कहने लगे—बोलिए, बोलिए, आप मेरे लिए क्या कुछ भी नहीं कर सकते ? बोलिए, बोलिए, चुप मत रहिए सुललित बाबू, आप भी बंगाली हैं, मैं भी बंगाली हूँ, आप अगर मेरे लिए कुछ कर सकिए तो कीजिए। मैं और मेरी फैमिली सारी जिन्दगी आपके सामने एहसानमन्द रहेंगे···

लेकिन मजिस्ट्रेट ने बातों के बीच में बाधा डाली। वे जात से महाराष्ट्रीय थे। बंगला भाषा की बातें समझ नहीं पा रहे थे, उसका कुछ अन्दाज कर पा रहे थे। उन्होंने इशारा किया—हरी अप, प्लीज, हरी अप···

सुललित के मुँह से इस बार बात फूटी। उसने कहा—मिस्टर बैनर्जी, अब कुछ मत कहिए मुझसे, अब हमें अपनी डिउटी करने दीजिए···

—डिउटी ? आपके लिए आपकी डिउटी ही बड़ी हो गयी। तो फिर आपके पास माया-दया-क्षमा किसी चीज का कोई दाम नहीं है कहना चाहते हैं ? कल सबेरे अखबारों में यह खबर छपकर निकलेगी तब मेरी क्या हालत होगी, आप यह कल्पना कर पा रहे हैं ? इसकी बनिस्बत मेरी अभी फाँसी हो जाना भला है···

लेकिन इस बात का और कोई जवाब देना नहीं पड़ा सुललित को। कानून ने अपना निजी काम सँभाल लिया। वह सुललित का काम नहीं है। वह काम पुलिस का है। सुललित उस समय दूसरे काम में व्यस्त हो गया। बैनर्जी साहब की पर्सनल फाइल से शुरू करके उनके सम्बन्ध में जरूरी कागजपत्र सब इकट्ठे करने होंगे उसे···

लेकिन वे सब बातें लेकर सुललित कभी ज्यादा माथापच्ची नहीं करता था। उस दिन बैनर्जी साहब जमानत पर छूट जरूर गये थे, लेकिन सुललित के मन में हुआ था कि ऐसा आदमी अगर जमानत न पाता तो वह खुशी ही होता।

उसे याद है सब काम-काज पूरे होने में उस दिन बहुत रात हो गयी थी। उस समय भी ट्रेन आने में बड़ी देर थी। प्लेटफार्म पर अकेले घूमते-घूमते उसके दिमाग में सारे जीवन की बातें चक्कर काटने लगी। यही थोड़े पहले उसने ऐसे एक आदमी को गिरफ्तार किया था जिसकी जिन्दगी में कल से अँधेरा छा जायेगा। उसका सम्मान, उसकी प्रतिष्ठा-ख्याति सबकुछ नेस्त-नाबूद हो जायेगी। लेकिन सुललित क्यों जिम्मेदार होगा उसके लिए ! सुललित ने तो सिर्फ अपनी निजी डिउटी की है, सुललित ने तो सिर्फ अपनी जिम्मेदारी का पालन किया है।

सुललित ने हाथ की घड़ी देखी, और एक घण्टे की देर है। वेटिंग रूम की इजी चेयर में थोड़ा लेटकर वह आराम करने लगा।

हठात् नींद में मानो उसके कान में किसी के गले की आवाज सुनायी पड़ी—मा तो मुझे रिनि कहकर बुलाती है, लेकिन मेरा अच्छा नाम ? मेरा अच्छा नाम रिनिला है···बात कहकर ही लड़की खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसी हँसी की आवाज से नींद खुल गयी सुललित की। सुललित तुरन्त इजी चेयर पर उठ बैठा। उसने देखा प्लेटफार्म पर उसकी ट्रेन हुड़हुड़ आवाज करती पहुँची जा रही है। सुललित जल्दी-जल्दी सूटकेस-बिछौना लेकर गाड़ी पर चढ़कर बैठ गया।

मनुष्य का यह जीवन जिस प्रकार दुःख से भरा है, उसी प्रकार सुख का भी है। छुटपन से सुललित ने सुख क्या कम पाया है ? एकदम छुटपन की बात छोड़ दो, जितने कुछ दिनों लखनऊ से काका बाबू वगैरह कलकत्ता आकर रहे थे, वे दिन भी बहुत अच्छे कटे थे उसके जीवन में। वह कितना गम्भीर सुख था। वे सुख के कुछ दिन ही उसके सारे जीवन के अवलम्ब थे। उस सम्बल का पाथेय लेकर ही वह इतने दिनों के पथ में चला था।

हेड आफिस के सुपरिंटेंडेंट रघवीरसिंह ने पहले दिन ही पूछा था—यह नौकरी तुम कर सकोगे ?

सुललित बोला था—भरोसा है कि कर सकूँगा।

रघवीरसिंह बोले थे—बड़े लोभ की नौकरी है लेकिन यह। यहाँ तुम्हें तमाम लोग तमाम तरह के लोभ दिखायेंगे, तुम्हें सोना देंगे, रुपये देंगे, बहुतेरे वक्त सुन्दरी लड़कियाँ देकर भी तुम्हें बहकाने की कोशिश करेंगे। वह लोभ तुम दबा सकोगे न ?

सुललित ने गर्व से कहा था—पृथिवी की किसी चीज पर ही अब मेरा लोभ नहीं है सर, सिर्फ एक चीज छोड़कर···

—कौन-सी है वह चीज ?

सुललित बोला था—शान्ति।

रघवीरसिंह बोले थे—वह तुम मत चाहना। वह चाहना नहीं चाहिए। उसे पाते ही तुम रुक जाओगे। अपने विवेक के सामने खरे रहना, वही तुम्हारा श्रेष्ठ पुरस्कार है। और एक बात है, मैं बहुत दिनों से पुलिस की नौकरी कर रहा हूँ, मैंने बहुतेरा देखा है, लेकिन एक बात मन में याद रक्खो, मनुष्य रुपयों का लोभ त्याग कर सकता है, सोने का लोभ भी त्याग सकता है, जैसे तुमने त्याग दिया है। तुमने तो अपने बाप-दादों की जायदाद भी त्याग दी है, तुम मुझसे कह रहे थे। उसमें कोई बहादुरी नहीं है। लेकिन सबसे कठिन है स्त्री का त्यागना।

बात याद थी सुललित को। इस नौकरी के पहले दिन की बात सब।

सुललित को याद है आने के पहले सुललित सिंह साहब से बोल आया था—औरतों के सम्बन्ध मे मेरी कोई कमजोरी नही है सर, इस मामले में आप बेफिक्र रह सकते हैं···

उस दिन बैनर्जी साहब की गिरफ्तारी के बाद बड़ी मुश्किल से दोनो पैर खींचते-खींचते फिर घर मे लौट आया सुललित। इस बार बड़ी मिहनत करनी पड़ी। एक महीने तक लगातार छिप-छिपकर जाल फैलाना पड़ा, एक महीने तक अपना परिचय छिपाकर रास्ते-घाट में घूमते रहना पड़ा है जिससे बैनर्जी साहब के दूत सुराग न पायें। उसके बाद ठीक वक्त में रिपोर्ट देने गया रघवीर-सिंह के पास जबलपुर। साहब खूब खुश। सुललित से हैण्ड शेक करके साहब ने कृतज्ञता जतायी। वे बोले—वण्डरफुल एचीवमेंट चैटर्जी···

साथ-ही-साथ दिल्ली मे चिट्ठी लिख दी होम डिपार्टमेंट में। लिखा—हमारे स्टाफ मे एस० चैटर्जी के समान सच्चा और मिहनती अफसर एक भी नहीं है···

घर के बाहर पहुँचते ही सुललित ने पुकारा—भगीरथ···

आवाज सुनकर ही सुललित ने भीतर से दरवाजा खोल दिया। वह बोला—यह कैसा चेहरा हो गया तुम्हारा दादा बाबू ?

सुललित बोला—होने दो चेहरा खराब, चेहरा लेकर क्या मैं खोया खाऊँगा ?

कहकर वह अपने कमरे मे घुस गया।

उसके बाद जब खा-पीकर आराम कर रहा था तब भगीरथ ने कहा—तुम्हारे साथ मिलने के लिए रिनि और उसकी मा आयी थी दादा बाबू···

वे सब बातें सुललित को कुछ याद ही नही थी। उसने पूछा—रिनि कौन ?

भगीरथ के सब घटना की याद दिलाते ही सुललित पहचान गया। बोला—लेकिन उसकी मा क्यो आयी थी ?

—आयी थी तुमसे मिलने।

—मुझसे मिलकर उनका क्या फायदा होगा ?

भगीरथ बोला—तो मिलने नही आयेंगी ? उस दिन तुम न होते तो बरखा में भीगकर तो रिनि बीमार हो जाती। यही कहने आयी थी।

सुललित ने ज्यादा आग्रह नही दिखाया।

भगीरथ बोला—लेकिन रिनि की मा औरत बड़ी अच्छी है दादा बाबू···

सुललित बोला—जो अच्छा है सो अच्छा है, उससे मेरा क्या ? इस बार से किसी औरत को तुम इस घर मे घुसने मत देना भगीरथ, समझे···

भगीरथ बोला—तो मैं क्या उन्हें बुला लाया था ? घर मे अगर कोई आये तो मैं क्या उसे भगा दूँ कहना चाहते हो ?

सुललित बोला—हाँ, भगा देना, बोलना दादा बाबू घर में नहीं हैं। कौन क्या मतलब लेकर आता है यह क्या कहा जा सकता है! बहुत बार तमाम मतलबों से तमाम लोग औरतों को भेज देते हैं यह जानते हो…

हठात् बाहर से एक स्त्री की आवाज सुनायी पड़ी—भगीरथ, ओ भगीरथ…

—वही रिनि आयी है, कहकर भगीरथ सदर दरवाजा खोलने गया। और उसके बाद ही भगीरथ के साथ रिनि भी आकर घर में घुसी। उसके बाद सुललित को देखकर बोली—ओ मा, तुम कब आये? कहाँ गये थे तुम?

सुललित के मुँह में इतनी देर में हँसी फूट पड़ी। बोला—आफिस में…

—तुम्हें आफिस से आने में इतनी देर क्यों होती है? मा तो ठीक तीसरे पहर आफिस से घर लौट आती है! मैं कितनी बार तुम्हें देखने आकर लौट गयी हूँ। मेरी मा भी आयी थी तुम्हारे घर में, जानते हो?

—क्यों, तुम्हारी मा क्यों आयी थी?

—वाह रे, मैंने जो मा से तुम्हारी बात कही है!

—तो तुम जो अभी हमारे घर आयी, तुम्हारी मा तुम्हें बकेगी नहीं?

रिनि बोली—बकेगी क्यों? तुम जो अच्छे आदमी हो, अच्छे लोगों के घर जाने से मा कुछ भी नहीं कहतीं!

—मैं अच्छा आदमी हूँ यह तुमसे किसने कहा?

रिनि बोली—मैंने ही कहा है। जानते हो मैंने मा से कहा है तुम मुझे बहुत प्यार करते हो, इसीलिए मा तुमसे मिलने आयेगी। मुझसे तो मा पूछती है…

क्या पूछती है?

रिनि बोली—तुम देखने में कैसे हो। तुम्हारी कितनी उमर है, और भी कितनी ही बातें पूछती है यह जानते हो…

सुललित बोला—और क्या पूछती है तुम्हारी मा?

अकस्मात् बाहर एक आवाज होते ही सुललित ने उधर देखा, एक महिला खड़ी हैं। रिनि बोल उठी—यही तो मेरी मा है, मेरी मा को तुम पहचान नहीं सके?

सुललित बोला—आइए-आइए, आपकी बात मैंने भगीरथ से सुनी है…

महिला बोलीं—उस दिन आपने रिनि को बरखा से बचाकर भगीरथ के हाथ से उसे घर भिजवा दिया था, उसके बाद मैं आपसे मिलने आयी थी।

सुललित बोला—मैं तो बरस में छै महीने घर में ही नहीं रहता।

। ने कहा—मैंने सुना है। आपकी गृहिणी ने सब कहा है।

? मेरी गृहिणी?

बार हँस उठीं, बोलीं—गृहिणी माने आपका भगीरथ।

सुललित व्याख्या सुनकर और भी जोर से हँस उठा। बोला—ठीक ही कहा है, वह मेरी गृहिणी ही तो है। गृहिणियाँ जैसे अपने पतियों को बकती हैं, मेरे कुछ अन्याय करने पर भगीरथ भी मुझे उसी तरह बकता है, और गृहिणियाँ जैसे पति की सेवा करती हैं, वह भी वैसा ही है।

ऐसे ही वक्त भगीरथ एक प्लेट में नाश्ते की चीजें लेकर घुसा। सुललित बोला—वह देखिए, पक्की गृहिणी का जो कर्तव्य है भगीरथ ने वही किया है।

महिला बोली—मैं लेकिन इतना खा नहीं सकूँगी दादा···

रिनि बोली—मैं लेकिन खा लूँगी मा···

—छि: ! महिला ने लड़की को धमकाया। बोली—देखा, कैसी असभ्य हो गयी है रिनि, आपने थोड़ा प्यार किया और उससे ही सभ्यता-शालीनता सब भूल गयी है···

सुललित ने उसी समय गोद में बिठाल लिया था रिनि को। वह बोला—नहीं, तुम सब खाना, जितना खा सको उतना खाओ, और भी अगर चाहो, वह भी ला दूँगा ··

प्यार पाकर रिनि बोल उठी—देखा न, मा मुझे सिर्फ बकती है···

महिला बोलीं—आप उसे इतना प्यार मत कीजिए, प्यार करते ही आपके पीछे लग जायेगी···

सुललित बोला—उसकी बात आपको सोचनी नहीं होगी, वह मैं समझ लूँगा, आप तब तक खा लीजिए···

महिला नाश्ते की प्लेट सामने खींचकर बोली—मैं खाती हूँ, लेकिन आपको मेरी एक बात रखनी होगी···

—कौन-सी बात, बताइए ?

महिला बोली—मेरी रसोई एक दिन आपको खानी होगी···

सुललित बोला—खाने की बात कह रही हैं ?

महिला जाने कैसा सन्देह करके बोली—डर लगता है खाने में ? ना-ना, आपको वह डर नहीं ! हम भी ब्राह्मण हैं। हम लोग गांगुली हैं···

सुललित के पूरे स्नायु में उस समय अकस्मात् खींचतान शुरू हो गयी। साथ-ही-साथ मानो चाबुक खाकर वह सीधे उठ बैठा है। उसने पूछा—आप लोग, क्या बोलीं ? गांगुली ?

महिला हठात् सुललित के इस तरह मिजाज बदलने से चौंक गयी। बोलीं—हाँ, गांगुली। क्यों ? विश्वास नहीं हुआ शायद ?

सुललित बोला—नहीं, यह बात नहीं है, आपके पिता का नाम क्या भूधरचन्द्र गांगुली है ? मिलिटरी के डाक्टर ? मेजर बी॰ सी॰ गांगुली ?

महिला और भी अवाक। बोलीं—नहीं तो···

—आपकी क्या एक छोटी वहन है ?

महिला वोलीं—हाँ, लेकिन···

—तो फिर आपका नाम क्या रानू है ? वोलिए, आप छिपाइए मत। आप मुझसे सच वात वताइए, मैं किसी से नहीं कहूँगा, वोलिए, वोलिए···

वोलते-वोलते सुललित भयानक रूप से उत्तेजित हो उठा।

महिला ने कहा—आप क्या वोल रहे हैं, मैं कुछ भी समझ नहीं पा रही हूँ···

सुललित उस समय भी वोलता जा रहा था—आप लखनऊ में रहती थीं न ?

महिला के वोल वन्द। उसके मुंह से उस समय कोई वात निकल नहीं रही थी।—सच वोलिए, मेरा जानना जरूरी है। वाहर के सव लोग जानते हैं कि आप मर गयी हैं। आप वहुत अच्छा गाना गा सकती थीं। आप घर में वैठकर गाना गातीं, नीचे रास्ते में लोगों की भीड़ जमा नहीं हो जाती थी ? जाजिदअली खाँ का वही 'डोले रे जोवन' आप नहीं गाती थीं ? सव सच है या नहीं वोलिए···

इसके वाद क्या होता कौन जाने ! हठात् वाहर गिरिजा ने आकर पुकारा—दीदीमणि, आपके आफिस से आदमी वुलाने आया है···

वात सुनकर महिला फिर रुकीं नहीं, रिनि को लेकर वाहर चली गयी। जाते समय वोलीं—एक दिन लेकिन आपको हमारे घर में खाने जाना होगा, मैं न्योता दिये जा रही हूँ, भूल मत जाइएगा फिर···फिर एक दिन आकर आपको अपने साथ लिवा ले जाऊँगी···

और उसके वाद उस दिन रात को ही सारे शरीर को कँपाकर वुखार आया सुललित को। एकदम अचेतन हालत। भगीरथ उसी घड़ी जाकर शहर से डाक्टर वावू को वुला लाया। डाक्टर वावू ने आकर देखा। वड़ी देर तक देखा।

भगीरथ ने पूछा—क्या देखा डाक्टर वावू ? डर-वर तो नहीं है ?

डाक्टर वावू ने एक कागज पर दवा लिखकर कहा—यह दवा लिखा देना, तीन वार—कहकर वे चले गये।

भगीरथ ने वगल के घर के आदमी से दवाई खरीदकर मँगवा ली और वह सारी रात नजदीक वैठा रहा। भगवान को पुकारने लगा एक मन से, कौन ऐसा है जिसे वह खवर देता। दादा वावू तो किसी से भी मिलते-जुलते नहीं।

कई दिन ऐसी ही भयंकर हालत में कटे सुललित के। वैनर्जी साहव के केस में शरीर की तमाम लापरवाही हुई है, अनेक अत्याचार हुआ है शरीर पर। यह सव उसी का नतीजा है।

जिस दिन फिर सुललित ने आँखें खोलकर देखा, उसे लगा कि मानो कोई उसके सामने बैठा है। उसके दुर्बल कण्ठ से एक शब्द फूटा बड़ी कोशिश के बाद। वह धीरे-धीरे बोला—तुम आयी हो?

सामने के व्यक्ति ने कोई भी बात नहीं कही।

सुललित बोला—तुम कहाँ गयी थी आरती? मैंने तुम्हें कितना ढूँढा है, इतने दिनों के बाद आया जाता है?

बातें करने में लगा बड़ी तकलीफ हुई सुललित को। थोड़ी देर में ही थकान से चूर हो गया वह फिर। फिर घोर अचेतनता।

भगीरथ कब कमरे में आया था किसी को पता नहीं लगा। वह बोला—दीदीमणि, आप अब उठिए, मेरे हाथ का काम खत्म हो गया है, आपको बड़ी तकलीफ हुई···

महिला ने कहा—तुम्हारे दादा बाबू किसे बुला रहे थे बताओ तो? आरती किसका नाम है भगीरथ?

भगीरथ बोला—आजकल ऐसे ही हो गये हैं, मुझे भी बीच-बीच में पहचान नहीं पाते दादा बाबू···

—लेकिन आरती कौन है?

भगीरथ बोला—वही जो आपसे बताया था, काका बाबू की लड़की। बीमारी की बेहोशी में दादा बाबू उनका ही नाम सिर्फ पुकारते हैं···

—तो वह आरती अब कहाँ है! उन लोगों को एक बार खबर नहीं दे सकते तुम?

भगीरथ बोला—आरती दीदीमणि कहाँ है यही अगर जानते तो दादा बाबू क्यों इतने बीमार होते?

बैनर्जी साहब का केस सुललित की बीमारी की वजह से कुछ अटक गया था। लेकिन इतने दिनों में शहर-शहर में शोरगुल मच गया है। आजकल की अराजकता के युग में पाप की भी सजा होती है, उसका प्रमाण लगता है यही मामला है। रास्ते-घाट में स्टेशन के प्लेटफार्म पर सबके मुँह में यही एक बात है। शैतान बैनर्जी साहब पकड़ा गया है···

सब कहते हैं—अच्छा हुआ, बहुत अच्छा हुआ, साला बदनाम हो गया···

इतने बड़े आनन्द की खबर आज तक और किसी ने सुनी नहीं। बहुतेरे लोगों के मन की छिपी हुई भावना मानो आज पूरी हुई। सब कहते हैं—हाँ, इस बार साबित हुआ कि भगवान हैं भाई—अब दिखायी पड़ेगी बैनर्जी साहब की दुर्दशा। बैनर्जी साहब की नौकरी जायेगी। बैनर्जी साहब को फिर से पैदल चल-

स्ते में निकलना होगा हम लोगों की तरह। इतने दिनों घूस लेकर रुपया बैनर्जी साहब ने जमा किया है, सब इस बार मामले में खर्च कर ड़ेगा। वकील-मुहर्रिर-पेशकार सब रुपये लूट-लूटकर खायेंगे। बैनर्जी को रास्ते में खड़े होकर भीख माँगते देखने पर ही मानो सब खुश होंगे···

बुखार से उठते ही काम का बोझ बढ़ गया सुललित का। घर से बाहर के पहले ही भगीरथ बोला—इस हालत में तुम फिर बाहर जा रहे हो ा बाबू?

सुललित ने उस बात का जवाब नहीं दिया। सीधे निकल गया स्टेशन की फ।

थोड़ी देर के बाद ही रिनि की मा रिनि को लेकर हाजिर हुईं। बोलीं—ह क्या? यही उस दिन बुखार से उठते-न-उठते ही बाहर चले गये? तुमने जाने क्यों दिया?

भगीरथ बोला—मेरी ही बात अगर दादा बाबू सुनते तो मुझे फिर दुःख किस बात का था?

रिनि को लेकर महिला चली जा रही थीं, लेकिन रिनि का मुँह गम्भीर हो गया। वह बोली—मैं घर नहीं जाऊँगी मा, मैं यहाँ रहूँगी···

—ना, अभी गोलमाल मत करो, देखती नहीं हो अभी भगीरथ के दादा बाबू नहीं हैं। उनके आने पर फिर तुम्हें लिवा लाऊँगी—कहकर बाहर चली गयी।

उस तरह कोर्ट में उस समय केस चल रहा था बैनर्जी साहब का। पुलिस की तरफ के वकील जो-जो कह रहे थे, वह सब अकाट्य तर्क था।

सुललित ने पूरी तरह सँभालकर सबकुछ सजा दिया था। अन्याय सजा होगी, अत्याचारी का पतन होगा, इससे ज्यादा बड़ी कामना सुललित और कुछ नहीं है।

उसकी जिन्दगी की सब आशाएँ धूल में मिल गयी हैं, उसका अतीत हो गया, वर्तमान भी नहीं है, भविष्यत् जाने-जाने को है। और क्या है जिन्दा रहेगा वह। अब सिर्फ अपना निजी कर्तव्य वह पूरा करे। यह स यह न्यायनिष्ठा और यह कर्तव्य-बोध, इतना ही तो उसकी जिन्दगी का मू है। यह भी अगर न रहे तो उसका रह क्या गया?

दिन पर दिन इसी तरह बीत रहे थे। सुललित कोर्ट में जाता है, मा जाँच-तदबीर करता है। पेशकार-मुहर्रिरों से बात करता है। सरकारी व सलाह करता है। लेकिन कोर्ट-कचहरी का अनाचार देखकर उसे मन-ही बड़ी तकलीफ होती है। इतना पाप, इतना अनाचार जमा पड़ा है यहाँ अन्याय के विचार करने के आसन पर अगर इतना अविचार होता रहे

अत्याचारी के हाथ से बचने के लिए किसके पास जाकर प्रतिकार की प्रार्थना करेगा ?

हर पल सुललित मानो छटपटाता रहता। सारी पृथिवी से अपने को अलग करके खुद भी वह मानो पूरी तरह दूर नहीं हो रहा था।

सरकारी वकील पूछता—आप इतने अधीर क्यों हो रहे हैं मिस्टर चैटर्जी ?

सुललित कहता—अधीर नहीं होऊँगा ? एक सिम्पिल केस, उसकी सुनवायी में इतनी देर क्यों हो रही है ?

सरकारी वकील बोलता—इतनी जल्दी-जल्दी अगर सब मामलों की राय तय हो जाये तो हम लोग खायेंगे क्या मिस्टर चैटर्जी ?

इसके माने ? आप लोग क्या मिहनताना नहीं पाते ? आप लोग फीस नहीं पाते ?

सरकारी वकील कहता—वह तो पाते हैं, लेकिन मिहनताने से क्या हम लोगों का पेट चलता है ? कोर्ट में कोई मिहनताने के भरोसे में काम नहीं करता यह जानते हैं न ? ऊपर की आमदनी पर ही तो वकील-मुहर्रिर-पेशकार-हाकिम सब जिन्दा हैं···

लेकिन उन सब बातों का जवाब देने का भी मन न होता सुललित का। उसके बाद वह कोर्ट से सीधे डाकबँगले में लौटकर सो जाता।

आखीर में दुर्गा पूजा की छुट्टी पड़ी। पूजा की छुट्टी के बाद फिर मामला शुरू होगा।

—पूजा ! पूजा ही तो !

किसी समय जब वह कलकत्ते में रहता था तब पूजा के आनन्द में वह भी शामिल होता। वह भी हिस्सेदार होता सबके आनन्द का। सुललित के क्लब में भी पूजा करते थे लोग।

लेकिन अब कलकत्ते के उन दिनों की बात सोचना भी शायद पाप है। कलकत्ता को वह भूल जाना चाहता। कलकत्ते की याद आते ही उसे सबकुछ याद आ जाता। उसके बदले यही अच्छा है। इस डाकबँगले की लोहे की खाट पर रात को चित पड़े-पड़े सीलिंग की तरफ ताकते हुए पड़े रहना।

लेकिन दोनों आँखें थोड़ा-सा मूँदते ही हठात् मानो कोई आकर हाजिर हो जाता। सोने पर भी नींद नहीं आती। फिर उठ बैठता। उसके बाद डाक-बँगले के बगीचे में जाकर घूमना शुरू करता। घूमते-घूमते जाने कब सवेरा हो जाता। डाकबँगले के बरामदे में जब चाय आ जाती तब फिर उसका होश लौटता। तब फिर वास्तव जगत में लौट आता सुललित। फिर रोज के समान कोर्ट जाने के लिए तैयार होना पड़ता।

अदालत की कार्यवाही सुनते। और ज्यों ही कोई बैनर्जी साहब के खिलाफ गवाही देता उनके मुँह पर आनन्द फूट पड़ता। उन्हें उल्लास होता बैनर्जी साहब का अपयश सुनकर।

बिलासपुर में अपने क्वार्टर में बैठे-बैठे थकान से भरा हुआ सुललित उस समय ये ही बातें सोच रहा था। हठात् वही महिला घुसी। सुललित पहचान गया उन्हें। वही रिनि की मा।

सुललित बोला—आइए-आइए, भगीरथ से मैंने सुना कि आपने शायद मेरी खोज की थी…

महिला ने कहा—सिर्फ एक दिन नहीं, कई दिन आयी…

—मैं कुछ दिनों यहाँ नहीं था—सुललित ने कहा—और काम है इसीलिए तो जिन्दा हूँ, नहीं तो रहता किस भरोसे में?

उसके बाद बोला—रिनि कहाँ है? उसे ले क्यों नहीं आयी। वह कैसी है?

महिला की तरफ से कोई जवाब न पाने पर सुललित ने मुँह उठाकर देखा। लेकिन महिला के मुँह की तरफ अच्छी तरह देखते ही वह चौंक उठा। मानो पहचाना-पहचाना मुँह।

हठात् मानो उसकी पीठ पर किसी ने चाबुक मारा। महिला की माँग में सिन्दूर था। ऐसा आविर्भाव मानो सुललित स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सका था।

साथ-ही-साथ वह खड़ा हो गया। मनुष्य सामने साँप देखने पर भी मानो इतना सतर्क नहीं होता। बोला—यह क्या, आरती? तुम?

आरती ने घूँघट उतारकर कहा—तुमने किसको सोचा था? रिनि को?

सुललित बोला—वह कोई नहीं, मुहल्ले की छोटी पाँच बरस की लड़की है, मैंने सोचा था उसकी मा शायद आयी है! सो इतने दिनों के बाद तुमसे यहाँ भेंट होगी यह मैं सोच ही नहीं सकता था। तुम्हारा विवाह हुआ है, देख रहा हूँ, तुम्हारे पति कहाँ है? और तुम ही इस बिलासपुर में कैसे आयी?

आरती बोली—तुमसे मिलने के लिए मैं जबलपुर से आ रही हूँ।

—जबलपुर? वही शायद तुम्हारी ससुराल है?

—हाँ, वहीं इसी ट्रेन से उतरकर सीधे तुम्हारे पास आयी हूँ…

—तुमने जाना कैसे कि मैं यहाँ रहता हूँ?

आरती बोली—तुम्हारी स्त्री कहाँ है बताओ, उससे जान-पहचान करवा दो…

सुललित जोर से हँस उठा। बोला—लेकिन मेरी बात का जवाब तो तुमने दिया नहीं? बता नहीं रही हो कि तुमने कैसे मेरा पता जाना?

[illegible] तुम इतने बड़े एक प्रसिद्ध आदमी हो और मैं तुम्हारा

पता खोज नहीं पाऊँगी ? क्या बोलते हो तुम ?

—प्रसिद्ध आदमी ? मैं ?

—हाँ, ऐसा नहीं है ? तुम्हारे कारण तीन सौ लोग जेल भोग रहे हैं और तुम कहते हो कि तुम प्रसिद्ध आदमी नहीं हो ? तुम सिर्फ प्रसिद्ध आदमी ही नहीं, वरन कह सकते हो कि सुप्रसिद्ध हो।

सुललित बोला—तो इतना ही सुप्रसिद्ध आदमी मैं अगर हूँ तो जिनसे तुमने मेरा पता लगाया है उनसे पूछते ही तो जान सकती थीं कि मैंने विवाह किया है कि नहीं !

आरती इतनी देर के बाद एक चेयर पर बैठी। बोली—मैं बड़ी दूर से आ रही हूँ, तुम्हारे बिना कहे ही लेकिन मैं बैठ गयी, मन में कुछ बुरा मत मानना···

सुललित भी उसी समय अपनी चेयर पर बैठ गया। बोला—तुम्हें बैठने को कहूँ तब तुम बैठोगी, तुमसे क्या मेरा यही सम्बन्ध है ?

आरती बोली—बहुत दिन हो गये हैं, अब पहले के सम्पर्क की बात अगर नहीं ही उठायी···

सुललित बोला—यह सच है, तुम अब परस्त्री हो, हम लोगों का पहले का सम्पर्क वगैरा रहना उचित नहीं है···

आरती हँसी। बोली—हाँ, तुमने ठीक ही कहा है, दूसरे के साथ मेरा जब विवाह हो गया है, तब मैं तुम्हारे सामने परस्त्री ही तो हूँ, लेकिन क्यों परस्त्री हुई यह तो तुमने मुझसे पूछा ही नहीं···

सुललित बोला—अब वे सब बातें मैं सुनना नहीं चाहता···

आरती बोली—यह तो कहोगे ही, अपने दोष की बात कोई भी सुनना नहीं चाहता···

—मेरा दोष ?

सुललित बोला—एक दिन तुमने ही मुझे लोभ दिखाया था, मुझसे मिलकर तुम्हारा जीवन धन्य हो गया है, एक दिन तुमने ही मुझसे कहा था···

बोलते-बोलते उत्तेजित हो गया था सुललित, लेकिन तभी अपने को उसने सँभाल लिया। बोला—हो न हो, अब फिर उन सब बातों के उठाने से कोई फायदा नहीं है। तुम अब परस्त्री हो···

आरती ने लेकिन रुकने देना नहीं चाहा। बोली—नहीं, बात रुके क्यों, बात जब तुमने उठायी ही है तब तुम्हें बोलना ही होगा, बोलो, सुनूँ।

—सुनोगी ? तो सुनो, हर दिन सवेरे मैं तुम लोगों के घर जाता, उस दिन भी तुम्हारे घर जाने को तैयार हुआ था, उसी समय पिताजी के हृदय में अकस्मात् दर्द शुरू हुआ यम और मनुष्य की खींचतान के समान। और शाम

को ही पिताजी उस दिन मर गये।

—तो हम लोगों को तो एक खबर भी नहीं दी, हम लोग तो कोई बात जान ही नहीं सके।

सुललित बोला—अपना कर्तव्य मैंने ठीक ही किया है। मैं श्मशान से ही तुम लोगों के घर गया था, जाकर मैंने देखा तुम लोग उसके पहले ही कलकत्ता छोड़कर चली गयी थी।

आरती बोली—लेकिन क्यों हम लोगों को चले जाना पड़ा था यह तो पूछा नहीं? क्यों जाते समय तुम लोगों को खबर देकर हम लोग जा नहीं सके यह भी तो तुमने पूछा नहीं?

सुललित बोला—जाने भी दो, जो हो गया सो हो गया। अब उन सब बातों को लेकर सोचना नहीं चाहता।

आरती बोली—ना, तुम्हारे सुनना न चाहने पर भी आज यह बताये बिना रह नहीं सकूँगी। बात एक बार जब उठ गयी है तब उसे लेकर क्यों तुम्हारे मन में सन्देह रहे? तो सुनो, उस दिन तीसरे पहर अकस्मात् मिलि-टरी हैडक्वार्टर्स फोर्ट विलियम से एक जीप आयी हमारे घर। उसमें जो अफसर थे, उन्होंने पिताजी को बताया कि उनकी छुट्टी रद्द हो गयी है, उनको उसी क्षण उनके साथ चले जाना होगा। पिताजी ने पूछा कहाँ?

उन लोगों ने कहा—फ्रन्ट पर। पाकिस्तान से लड़ाई छिड़ रही है।

इससे ज्यादा बताने का नियम नहीं है मिलिटरी आइन में। तुम्हें याद है वही सन् १९६५ की दुर्गापूजा के बाद की घटना। उस समय भी कलकत्ता के लोगों में से कोई भी उस घटना की बात जानता नहीं था। आज मन में है बहुत-बहुत रात के बाद जब हम लोग पहुँच गये थे कश्मीर···

सुललित सुन रहा था आरती की बातें। बोला—कश्मीर में।

—हाँ, उस समय ऐसी एक हालत थी कि क्या करें समझ नहीं पा रही थी। पिताजी की नौकरी की जिम्मेदारी, विशेष रूप से मिलिटरी की नौकरी की जिम्मेदारी, इसलिए पिताजी को जाना ही होगा। लेकिन पिताजी को छोड़-कर मैं ही फिर अकेली कलकत्ता में कैसे पड़ी रहूँ! उसी समय घर का भाड़ा घर वाले को चुकता कर देना पड़ा। वैद्यनाथ को भी कौड़ी-कौड़ी उसकी तनखा चुका देनी पड़ी। रुपये लेकर वह देश चला गया। दिल्ली में कुछ कहें इसका वक्त भी नहीं था। मिलिटरी की नौकरी का यही नियम है। उसके बाद मैं कश्मीर में रही मिलिटरी के फैमिली क्वार्टर में और पिताजी चले गये फ्रन्ट पर।

सुललित मन्त्रमुग्ध के समान सब बातें निगल रहा था। बोला—उसके बाद?

आरती बोली—पिताजी उसी फ्रन्ट में एक दिन मारे गये···

—काका बाबू मारे गये ?

कुछ ठहरकर आरती फिर कहने लगी—हाँ, पिताजी मारे गये। पहले मा मर गयी थीं, उसके बाद दीदी, और उसके बाद सबसे अखीर में पिताजी। मेरी बात एक बार सोचो, सारी पृथिवी में उस समय मैं अकेली थी। मेरे कोई नहीं था। मैं क्या करूँ, समझ नहीं पा रही थी उस समय। किसके पास जाऊँ, कौन मुझे आश्रय देगा, किसका सहारा लेकर मैं उस समय जियूँ···

सुललित बोला—तब मुझे एक खबर क्यों नहीं दी ?

—खबर क्या दी नहीं सोचते हो ? सबसे पहले तुम्हारी बात ही तो मेरे मन में आयी थी। मैंने तो कश्मीर पहुँचते ही तुम्हें चिट्ठी लिखी थी। लेकिन उसके बाद और भी कितनी चिट्ठियाँ लिखी थीं उसका ठीक नहीं है। वे सब चिट्ठियाँ एक-एक करके फिर मेरे पास लौट आयीं। तिस पर पते में कोई भूल नहीं थी कहीं। तुम्हारा ठिकाना मुझे मुखाग्र था।

सुललित बोला—समझा···तुम शायद जानतीं नहीं। तुम लोग जिस दिन कलकत्ता छोड़कर चली गयीं, उसी दिन मेरे पिताजी मर गये और पिताजी के मरने के बाद ही हम लोगों का वह घर भी बिक गया। जिन्होंने खरीदा उन्होंने मिस्त्री लगाकर तोड़कर नया घर बनवाया। उसके बाद उसे गवर्नमेंट ने भाड़े में ले लिया। और मेरे ताऊ-काका कहाँ कौन रहने लगे उसकी खबर मैंने नहीं रक्खी···

—और तुम ?

सुललित बोला—मैं ? मैंने क्या तुम्हें कम ढूँढ़ा है सोचती हो ? कितनी बार लखनऊ गया था इसका कुछ ठीक है ? कितने लोगों से तुम लोगों की बात पूछी है इसका भी कुछ ठीक है ? रास्ते-घाट में ट्रेन-बस में बंगाली किसी को पाते ही उन-उनसे तुम्हारी बात पूछी है, कोई तुम लोगों का कोई ठिकाना दे नहीं सका। मैं पागल के समान पूरे लखनऊ शहर को जोतकर घूमा हूँ, लेकिन तो भी तुम लोगों की कोई खोज पा नहीं सका। मैं घर छोड़कर भगीरथ के साथ पहले एक मेस में ठहरा था, उसके बाद यहाँ, तब से यहीं हूँ···

आरती बोली—तो अच्छे ही तो हो···

सुललित बोला—खराब रहूँगा किस दुःख में ? सो मेरी बात रहने दो, उसकी बनिस्बत बोलो तुम कैसी हो ?

—मैं ? मेरी बात कह रहे हो ? मैं जब कश्मीर में उस क्वार्टर में अकेली थी, तब पिताजी के ही एक दोस्त ने मेरे उपकार के लिए दया करके अपने लड़के से मेरा विवाह करके मुझे रास्ते में खड़े होने से बचाया···

सुललित बोला—तो फिर तो बहुत अच्छी ही हो कहना होगा, और कोई

दुश्चिन्ता ही नहीं है तुम्हें···

आरती बोली—इतने दिनों मोटे हिसाब से अच्छी ही तो थी, लेकिन अकस्मात् सब उलट-पलट हो गया।

—क्यों ?

आरती बोली—तुमने ही मेरे संसार का चरम सर्वनाश किया।

—मैंने ? मैंने तुम्हारा चरम सर्वनाश किया ? मैं तो जानता ही नहीं तुम कहाँ रहती हो। तुमसे इतने दिनों तो मेरी भेंट ही नहीं हुई। तुम्हारे लड़के-लड़की पति किसी को तो मैंने अब तक आँख से भी नहीं देखा···

—नहीं, देखा है।

—देखा है ? कब देखा ? कौन है तुम्हारे पति ?

आरती बोली—बैनर्जी साहब।

—कौन बैनर्जी साहब ?

आरती बोली—जिन्हें तुमने एरेस्ट किया है! जिनके नाम से मामला चल रहा है जबलपुर कोर्ट में···

सुललित की पीठ में सपाट् से मानो किसी ने चाबुक मारा।

—तुम बोल क्या रही हो ? तुम मिस्टर बैनर्जी की स्त्री हो ?

—हाँ।

सुललित का मुँह जाने कैसा गम्भीर हो गया बात सुनकर।

आरती बोली—आज इतने कष्ट से इसीलिए मैं तुम्हारे पास आयी हूँ। तुमसे एक अनुरोध करने आयी हूँ, बोलो मेरी बात तुम रखोगे या नहीं ?

सुललित गम्भीर आवाज में बोला—पहले बताओ तुम्हारा कौन-सा अनुरोध है तब मैं सोचूँगा कि वह अनुरोध रख सकूँगा या नहीं।

आरती बोली—अचम्भा, तुम अब इतने बदल गये हो सुललित दादा ? पहले तो तुम मेरे सब अनुरोध मानते थे। पहले मैं जो करने को कहती तुम तो वही करते! मेरा अनुरोध रख पाने पर तुम पहले कितने खुश होते···

सुललित बोला—पहले की बात रहने दो। पहले की तुम भी अब वह तुम नहीं हो, पहले का मैं भी अब वह मैं नहीं हूँ, अब हम दोनों का ही सबकुछ बदल गया है। सो वह सब बात रहने दो, अब तुम बताओ क्या है तुम्हारा अनुरोध ?

आरती बोली—डरकर बोलूँ या निडर होकर बोलूँ ?

सुललित बोला—मैं तुम्हारा कौन हूँ जो तुम मुझसे डरने जाओगी ? मुझसे तुम्हें डरना नहीं होगा, जो कहना है निडर कहती जाओ···

आरती बोली—तुम मेरे पति को छोड़ दो···

—शराब ? भगीरथ चौंक उठा। दादा बाबू शराब पियेंगे ?

भगीरथ हिचकिचाने लगा। सुललित चिल्ला उठा—जाओ, सोच क्या रहे हो ? खरीद लाओ, जो बोलता हूँ, करो...

भगीरथ ने कहा—तुम वह रद्दी चीज पियोगे क्या ?

सुललित बोला—तुम नौकर हो, मैं जो हुक्म देता हूँ उसे ही तामील करो। तुम अपना काम करो, बात मत बढ़ाओ, जाओ...

भगीरथ फिर वहाँ खड़ा नहीं हुआ। चला गया सामने से। उसके बाद जब बोतल लेकर आया, उस समय दादा बाबू की दोनों आँखें जवा फूल के समान लाल हो उठी थीं। उसी हालत में दादा बाबू बोतल खोलकर ढक-ढक करके उसे गले के नीचे उतारने लगे। एक गिलास खत्म हो तो और एक गिलास।

भगीरथ अन्त में अपने दोनों हाथों से दादा बाबू के हाथ दबाकर, पकड़-पकड़कर बोला—दादा बाबू, अब मत पियो। तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, अब मत पियो यह रद्दी शराब। और पियोगे तो तुम बचोगे नहीं...

आखिर जब किसी तरह रोका नहीं जा सका तब भगीरथ ने ज्यों-त्यों करके बोतल छीनने की कोशिश की, लेकिन दादा बाबू की कठिन हालत थी। उसी हालत में भगीरथ को रोकने की कोशिश करके वे अपने को सँभाल नहीं सके। हुड़हुड़ा कर उसी चेयर-टेबुल पर गिर पड़े।

यहीं पर इस गल्प पर परदा खींच लिया जाता तो अच्छा होता। उससे आर्ट बचे या न बचे, सुललित शायद बच जाता। लेकिन सुललित के सृष्टिकर्ता, लगता है, इतने से ही खुश नहीं हो सके। क्योंकि उन्हें पूरी विश्वसृष्टि चलानी होती है। विश्वसृष्टि का आरम्भ जिस प्रकार है, उसी प्रकार उसका एक अन्त भी है। उसी अन्त का खाताबाकी अखीर तक न लिखने पर मानो हिसाब-किताब में गोलमाल होने का डर रहता है। आर्ट में जहाँ हम पूरी पाई लगाते हैं, इन विश्वकर्ता के आर्ट का वहाँ अन्त नहीं होता। उसकी खड़ी पाई एकदम पूर्णता में पहुँचकर मुक्ति पा जाती है।

और सुललित के जीवन में उस दिन खड़ी पाई लगी नहीं, इसीलिए शायद एक दिन उससे मेरी मुलाकात हो गयी। मुलाकात हुई लखनऊ के एक रास्ते में। हो सकता है, मेरी मुलाकात के लिए ही वह तब तक बचा था।

मैं अवाक् उसे देखकर। मैंने पूछा—सुललित हो न ?

सुललित ने मेरी तरफ ताककर देखा। बोला—तुम ? तुम यहाँ कहाँ ?

मैंने अपनी कहानी बतायी। मैं बोला—नौकरी के घाट-घाट पानी पीते-पीते न जाने कैसे अब इस लखनऊ में आकर ठहरा हूँ...लेकिन तुम यहाँ क्यों हो ?

—मैं भी भाई, तुम्हारे समान तकदीर के घाट-घाट में पानी पीते-पीते अब

यहाँ आकर ठहरा हूँ…

मैं उसकी बात का मतलब समझ नहीं सका। बोला—तुम तो उस समय कलकत्ता में अकस्मात् लापता हो गये। उसके बाद किसी से शायद मैंने सुना था, तुम एक नौकरी में बिलासपुर चले गये हो…

सुललित बोला—ठीक ही सुना था। लेकिन मैंने तो नौकरी छोड़ दी है…

मैं अवाक् हो गया। बोला—नौकरी क्यों छोड़ दी ? कहीं और नौकरी कर रहे हो ? कौन-सी नौकरी ?

सुललित बोला—ना, नौकरी फिर नहीं की। अब एकदम बेकार…

मैं बोला—तो फिर नौकरी छोड़ी क्यों ? क्या किया था ?

सुललित बोला—मैंने जिन्दगी में जो कभी नहीं किया था, वही किया था भाई। मैं झूठ बोला था !

अचम्भे की बात है ! सुललित मानो वही पहले के समान ही है। अब भी वही आदर्शवादी सुललित। संसार इतना बदल गया, संसार इतनी झूठ से भर गया, झूठ न बोलने पर आज के संसार में सिर ऊँचा करके खड़ा होना ही सम्भव नहीं है। और सुललित उसी संसार का मनुष्य होकर भी इतने दिन उसी सत्यवादिता का आदर्श लेकर चल रहा था ?

तो सत्यवादिता का यही आदर्श अगर वह मानता आया है तो हठात् झूठ बात कहकर अपनी नौकरी ही उसने क्यों खो दी ?

और भी तमाम बातें हुई उससे। हम लोगों के और सब दोस्तों की बातें, हमारे क्लब की बातें। क्लब बन्द हो गया है, सुनकर उसने दुःख प्रकट किया।

उसके बाद इतने दिनों की जमी हुई सब बातें दोनों के मुँह से निकलने लगीं। शक्तिधर चाटुज्जे के इस वंशधर की हालत देखकर मुझे भी खूब दुःख हुआ। ऐसे लड़के की तो इस हालत की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

थोड़ा-सा मौका मिलते ही मैंने पूछा—विवाह किया है ?

सुललित बोला—हाँ भाई, किया है…

—किससे ? वही जो, वह जिससे तुम्हारी शादी की बात ठीक हुई थी, उससे ही ? उसी आरती से ?

सुललित बोला—हाँ भाई, वही आरती अब मेरी स्त्री है…

उसके बाद मेरी तरफ देखकर बोला—तुम एक दिन आओ न मेरे घर ? अपनी स्त्री से तुम्हारी जान-पहचान करवा दूँगा, कब आओगे ?

मैं बोला—अगले इतवार को तीसरे पहर…

सुललित बोला—ठीक है, मैं रहूँगा—कहकर अपने रहने का पता देकर वह चला गया।

इतने दिनों के वाद सुललित से मुलाकात होने पर मैं सचमुच खुश हुआ था इसीलिए अगले इतवार को ठीक समय निवास की खोज करके अवाक् हो गय। ऐसी ही जगह में रहता है सुललित ? यह क्या मनुष्य के रहने के काबिल जग भी है ?

पता खोजकर घर पाने में भी मुझे वहुत घूमना पड़ा था। तमाम लो से पूछकर घूम-घूमकर अन्त में मैं उसका घर ढूंढ़ सका था। घर के साम जाकर दरवाजे की कड़ी हिलाते ही भीतर से एक आदमी हिन्दी में बो उठा—कौन ?

मैं बोला—मैं। सुललित वावू का दोस्त···

दरवाजा साथ-ही-साथ खुल गया। देखा, वही भगीरथ···

मैं बोला—भगीरथ, तुम मुझे पहचान नहीं पा रहे हो ? वही कलकत्ते क तुम्हारे दादा वावू का दोस्त···

भगीरथ मुझे पहचान पाने पर बोला—आइए वावू, भीतर आइए···

मैंने पूछा—तुम्हारे दादा वावू कहाँ हैं ? तुम्हारे दादा वावू ने तो आज इतवार को मुझे आने को कहा था···

भगीरथ का मुँह जाने कैसा करुण हो उठा। बोला—आप आये, आपने अच्छा ही किया लेकिन आये क्या देखने ?

मैं बोला—तुम तो फिर अभी तक दादा वावू के साथ-साथ हो भगीरथ ?

भगीरथ बोला—दादा वावू के साथ न रहने पर ही अच्छा होता, तो फिर और नरक-यन्त्रणा न देखनी पड़ती, यह सब देखने के पहले मेरा मर जाना ही अच्छा था···

मैं बोला—यह वात क्यों कहते हो भगीरथ ? दादा वावू के तो तुम्हारे अलावा और कोई नहीं है, तुम न होते तो तुम्हारे दादा वावू और भाभी को कौन देखता, बोलो···

—भाभी ? भाभी कौन ? किस भाभी की वात कह रहे हैं ?

मैं बोला—क्यों, भाभी माने तुम्हारे दादा वावू की वहू ?

भगीरथ मेरी वात सुनकर अवाक् हो गया—दादा वावू ने विवाह ही कव किया जो फिर भाभी होगी ?

मैं बोला—यह क्या वात है ? सुललित ने विवाह नहीं किया ? तो उसने तो मुझसे कहा कि उसने विवाह किया है, घर में उसकी वहू है ? मुझसे तो उसने कहा कि भाभी से आज जान-पहचान करवा देगा ?

भगीरथ ने अपने कपाल में हाथ मारकर कहा—दादा वावू के क्या अव दिमाग का ठीक है वावू ? दादा वावू अव वे दादा वावू नहीं हैं। आप लोगों ने तो कुछ देखा नहीं, मैं जो हमेशा से देखता आ रहा हूँ वावू···

मैं बोला—लेकिन क्यों ऐसा हुआ बोलो तो भगीरथ ? तुम्हारे दादा बाबू ने नौकरी ही क्यों छोड़ दी ?

—आप दादा बाबू से ही तो यह बात पूछ सकते थे ?

मैं बोला—तुम्हारे दादा बाबू ने तो कहा था कि यहाँ आने पर वह सब बातें बतायेगा। रास्ते में तो सब बातें होती नहीं, इसीलिए उसने घर में आने को कहा था, इस घर का पता तो उसने खुद ही मुझे दिया था, नहीं तो मैं कैसे यहाँ इस गली के भीतर यह घर ढूंढ पाता बोलो ?

जिस कमरे में मैं बैठा था, उसके चारों तरफ ताककर मैंने देखा। दरिद्रता की छाप सब कहीं थी। एक पुराना तख्त बिछा था, उस पर एक तकिया थी। दो टूटी चेयर थीं, धूल-गन्दगी का परिवेश चारों ओर था। सुललित के घर में यह परिवेश मैं न देखता तो कल्पना भी नहीं कर सकता था।

भगीरथ बोला—सब तकदीर है बाबू, सब तकदीर ! नहीं तो दादा बाबू को तो आप लोगों ने पहले भी देखा है, वही आदमी इस तरह का कैसे हो गया बोलिए तो ?

मैं बोला—यहाँ लखनऊ में सुललित क्यों आया है ? इतनी जगहें रहते हुए यहाँ लखनऊ में कैसे आया वह ? यहाँ उसका कौन है ?

भगीरथ बोला—यह बात आप दादा बाबू से ही पूछियेगा बाबू, मैं बोलकर झूठ-मूठ और पाप का भागी क्यों होऊँ ? मैं भी तो दादा बाबू से पूछता हूँ, क्यों तुम यहाँ पड़े हो ?

—तो, जवाब में दादा बाबू क्या बोलता है ?

—और क्या बोलेंगे ? कुछ भी नहीं बोलते, मेरी बात का जवाब ही नहीं देते।

उसके बाद कुछ ठहरकर भगीरथ बोला—जानते हैं, बिलासपुर में जब हम लोग थे तब वहाँ की एक छोटी पाँच बरस की लड़की को दादा बाबू खूब प्यार करते थे। उसके घर में आते ही दादा बाबू के मुँह पर हँसी फूटती। लेकिन एक दिन जाने क्या हुआ, घर में घुसकर मैंने देखा, दादा बाबू फफक-फफककर रो रहे हैं। अकेले-अकेले चेयर पर बैठे-बैठे रो रहे हैं—मैंने जब पुकारा तब दादा बाबू ने मुझे देखकर एक बोतल शराब ले आने को कहा···

—शराब ?

भगीरथ बोला—हाँ, शराब खरीदकर लाने को कहा।

—उसके बाद ? तुम शराब खरीद लाये ?

—खरीद नहीं लाता तो क्या करता बाबू ? मैं तो हुक्म का नौकर हूँ। मैं शराब खरीद लाया, और उस समय से ही दादा बाबू ने शराब पीना शुरू किया। उस दिन जो शुरू किया शराब पीना, फिर आज तक उसे छोड़ा नहीं।

उसके बाद एक दिन मुझसे बोले—मैंने नौकरी छोड़ दी है, तुम्हें अब मैं तनखा नहीं दे सकूंगा, तुम देश चले जाओ···

—उसके बाद ?

भगीरथ बोलने लगा—तो, दादा बाबू के चले जाने को कहने पर भी क्या मैं जा सकता हूँ ! मेरी मा-मणि मरने के पहले मुझसे कह गयी थीं, भगीरथ, खोका के अब कोई रह नहीं गया, तू खोका को देखना। मा-मणि की वह बात मैं टाल सकता हूँ बाबू ? दादा बाबू मुझे छोड़ सकते हैं, लेकिन मैं दादा बाबू को कैसे छोड़ूं बोलिए ?

उसके बाद भगीरथ वे सब पुराने दिनों की बातें कहने लगा। जिस दिन घर छोड़कर चले जाने का वक्त आया, उस दिन सुललित ने सारे दिन कुछ खाया नहीं। सब एक-एक करके घर छोड़कर चले गये थे। चीज-वस्तु लारी में भरकर हटा लिया गया था। सुललित बोला—मा, अब चलो, गाड़ी खड़ी है, यह घर हम लोगों को खाली कर देना होगा—चलो···

कई बार कहने पर मा उठीं, लेकिन पैर मानो अब चल नहीं रहे थे मा के।

सुललित ने फिर कहा—मा, चलो···

हठात् विधवा ज्ञानदामयी को याद आयीं वे ही बहुत दिनों पहले की बातें। जिस दिन वे पहले-पहल नयी बहू होकर इस घर में आयी थीं, आकर ससुरजी को उन्होंने प्रणाम किया था। उनके ससुर उन्हें आशीर्वाद देकर बोले थे—बहू, तुम इस घर की लक्ष्मीप्रतिमा हो, तुम इस घर को छोड़कर कभी भी चली मत जाना। तुम्हारी सास से भी हमारे पिताजी ने यह बात कही थी, आज मैं भी फिर तुमसे वही एक ही बात कह रहा हूँ बहू रानी, बात याद रखना तुम···

बातें याद आते ही ज्ञानदामयी वहाँ से फिर उठीं नहीं। वहाँ उन्होंने अपनी अन्तिम साँस त्याग दी।

भगीरथ बोला—तो तब से ही मैं दादा बाबू को देख रहा हूँ बाबू, दादा बाबू मुझे देखें या न देखें, मैं दादा बाबू को बराबर देखता रहूँगा, मेरे न मरने तक मुझे मुक्ति नहीं है···

कहकर कपड़े के खूंट से आँखें पोंछने लगा।

मैंने कहा—तो, सुललित इतनी जगहें रहते हुए इस लखनऊ में क्यों आया बोलो तो ? यहाँ तुम्हारे दादा बाबू का कौन है ? क्या है ?

—तो मैं कैसे जानूँगा बोलिए, दादा बाबू वह नौकरी छोड़ देने पर, तब से सिर्फ घूमने लगे, कभी काशी, कभी वृन्दावन, कभी दिल्ली, कभी प्रयाग हम लोग जाते हैं। कहीं जाकर दादा बाबू दो पल चुपचाप नहीं बैठेंगे। मुझे धर्मशाला

में रखकर दादा बाबू सिर्फ टो-टो करते फिरते। क्यों वे फिरते यह कौन जाने। आखिर मे एक दिन यहाँ आये। इस लखनऊ मे। यहाँ इस शहर में आते ही, कौन जाने क्यो, दादा बाबू यह घर भाड़े में लेकर यही रह गये। अब यहाँ मुझे रखकर दादा बाबू सारे दिन बाहर टो-टो करते घूमते-फिरते रहते हैं—और वही विष-शराब निगलकर। मैंने कितना मना किया है, लेकिन नौकर की बात क्या मालिक सुनता है बाबू ? किसी-किसी दिन रात को घर भी नहीं लौटते। सारी रात बाहर काटकर दूसरे दिन सवेरे घिसलते-घिसलते घर में आकर हाजिर होते हैं···

मैंने पूछा—सारी रात कहाँ रहते हैं तो फिर ?

भगीरथ बोला—वे सब बातें मुँह में लाना भी पाप है बाबू, वे सब बातें मुँह से कहने मे भी मुझे घिन होती है। भले आदमी कभी उन सब जगहों मे जाते नही। आप तो जानते हैं इस शहर में ये सब गन्दी जगहें···

मैं अवाक् हो गया अपने उस सुललित के अधःपतन की कथा सुनकर। मैंने पूछा—सचमुच सुललित उन्ही सब जगहों मे जाता है ?

—हाँ बाबू···दुख की बात क्या बताऊँ, मैं खुद वहाँ जाकर देख आया हूँ, लेकिन भीतर नही घुसा···

—लेकिन क्यों ऐसा हुआ ?

भगीरथ बोला—दादा बाबू को गाना सुनना अच्छा लगता है। दादा बाबू जहाँ कहीं जाते हैं, जाकर गाना सुनते हैं। वही गाना सुनकर शायद एक दिन उस हतभागी के घर के भीतर घुस पड़े थे। यहाँ उन सब मुहल्लो मे गाना-बजाना होता है न ? उन सब मुहल्लों में जाने पर रास्ते से भी गाना सुनने को मिलता है। ऐसे ही शायद दादा बाबू एक दिन रास्ते से जा रहे थे, उस समय भीतर किसी का गाना हो रहा था, दादा बाबू वह गाना सुनकर भीतर घुस गये, उसी समय से राक्षसी ने दादा बाबू को ग्रास किया है···

—राक्षसी ! तुमने उसे देखा है ? कैसी है देखने में ?

उस दिन वह एक अद्भुत घटना सुनी भगीरथ के मुँह से। जितनी अद्भुत, उतनी ही रोमांचकर। ऐसी घटना एक सस्ते बाजार के उपन्यास को छोड़कर और किसी के जीवन में उस समय तक घटी नहीं थी।

सुललित दूसरे दिनों की तरह उस दिन भी हो न हो शराब की दूकान के सामने जाकर घूम-फिर रहा था। मामूली तरह से शाम के अँधेरे मे सबकी दृष्टि बचाकर सुललित जाता वहाँ, क्योंकि पूरे दिन अपनी अन्तरात्मा से लड़ते-लड़ते शाम का वक्त आते ही सुललित जाने कैसा हार जाता। तब घर से निकलकर

धीरे-धीरे जाकर हाजिर होता उस दूकान में। उस समय अच्छी शराब खरीदने का पैसा भी नहीं था सुललित के पास।

लखनऊ के भट्टीखाने का मालिक सुललित को ताकता। उसके नियमित ग्राहकों में अकेला सुललित ही बंगाली था, इससे नजर ज्यादा पड़ती उसकी तरफ।

लेकिन बड़ा शान्त-शिष्ट गाहक था-बंगाली। आता है, चुपचाप पीता है और टलता-टलता घर लौट जाता है।

एक दिन एक आदमी आकर उसके पीछे पड़ गया।

नजदीक आकर खड़ा होकर वह बोला—बाबूजी···

सुललित को उस वक्त काफी नशा हो गया था। आदमी की बात सुनकर वह चौंककर खड़ा हुआ।

बोला—क्या है ?

—आप बंगाली हैं ?

सुललित बोला—हाँ···

आदमी बोला—हामि भी बंगाली···

बंगाली तो बंगाली। उससे सुललित का क्या आता-जाता है। सुललित तो बंगला देश छोड़कर यहाँ आ पहुंचा है। तब भी तो उसे अपना देश समझ बैठा है। उसके लिए अब बंगाली जो हैं, गुजराती भी वही हैं। वह किस देश का मनुष्य है, यह लेकर उसने कभी सिर नहीं खपाया। उन आरती वगैरह के चले जाने के बाद से ही वह मनुष्य के घर और समाज के बाहर का आदमी बन गया है। वह कहना होगा कि खुद भी नहीं जानता कि वह बंगाली है या बंगाली नहीं है।

आदमी बोला—आइए न बाबूजी, दो बंगाली मिलकर थोड़ी मौज करें।

—क्या मौज करेंगे ?

—थोड़ा माल पियेंगे, माल पीकर अच्छी मौज करेंगे, गाना सुनेंगे···

—गाना ?

गाने की बात सुनते ही मानो एक टनक उठ गयी सुललित के मन में ! गाना ! आरती भी गाना गाती थी। बहुत दिनों ईडेन गार्डन के भीतर या कभी गंगा के किनारे बैठे-बैठे आरती ने गाना गाया है। लेकिन जिस आरती ने उन दिनों सुललित को गाना सुनाया था, वह तो जाने कब उसके जीवन से खो गयी है। वह तो अब बैनर्जी साहब की स्त्री है। उसकी बात वह सोचता क्यों है ? असल में वह तो अब परस्त्री है। सिर्फ परस्त्री नहीं, एक आसामी की स्त्री है।

आदमी बोला—आइए बाबूजी···आइए···

सुललित बोला—कहाँ जायेंगे ?

—आप जानते नहीं बाबूजी, मैं आपको एकदम स्वर्ग में पहुँचा दूंगा।

स्वर्ग पहचानते हैं न ? विहिश्त ? इस दुनिया में भी विहिश्त है।

सुललित ने उस आदमी की तरफ से मुंह फिरा लिया। समझ गया कि उसका मतलब खराब है।

पीछे से वह आदमी पुकारने लगा—बाबूजी···बाबूजी···सुनिए···लेकिन कौन सुनता किसीकी बात ! तुम शराबी हो, और मैं भी शराबी हूँ। लेकिन तो भी सोचो मत कि तुम्हारे साथ मैं एक हूँ। मैं किसी से भी मिलना-जुलना नहीं चाहता। मैं समाज का जजाल हूँ। मैं अलगाया हुआ हूँ। मैं एक डस्टबिन छोड़कर और कुछ भी नहीं हूँ। मुझे छूना भी पाप है। मैं आज अछूत हूँ।

आदमी लेकिन किसी तरह भी साथ नहीं छोड़ रहा था। क्यों सुललित को देखते ही उसके साथ आपसपन करना चाहता था, यह कौन जाने !

लखनऊ के मस्तान महल में खूब नामवर आदमी है कुन्दनलाल। कुन्दनलाल ने जीवन में बड़े खानदानी आदमी को इस रास्ते में उतारा है। उसके बाद धीरे-धीरे मांस खाकर, उसका सूखा अँगूठा चबाकर, उसे छार-छार करके नाबदान में डालकर फेंक दिया है। वह क्षुद्र कुन्दनलाल हठात् इस बंगाली बाबू को देखकर थोड़ा अकचका गया था पहले। यह बंगाली बाबू क्यों इस लाइन में आया ? यह बंगाली बाबू क्या करता है ? इसका पेशा क्या है ? इस कौतूहल ने ही कुन्दनलाल को सुललित की तरफ आकर्षित किया था।

सुललित को देखते ही नजदीक आगे बढ़ आता।

कहता—आइए बाबूजी, पियो···

पहले-पहल सुललित कुन्दनलाल को टालकर ही चलता। लेकिन ज्यादा दिनों टाल नहीं सका।

सुललित कहता—ना-ना, तुम्हें पिलाना नहीं होगा कुन्दनलाल, मैं ही खरीदता हूँ···

कुन्दनलाल कहता—यह कैसे हो सकता है बाबूजी, हम सब यहाँ एक हैं। उसके बाद एक श्लोक सुनाकर कहता—श्मशान में क्या फिर मुर्दे का जात-विचार किया जाता है बाबूजी ? श्मशान में सब मुर्दे हैं।

कहकर हो-हो करके हँस उठता और हाथ पकड़कर जोर करके सामने की बेंच पर बिठाल देता। एक गिलास बढ़ाकर कहता—पी लीजिए बाबूजी, यह जिन्दगी है सिर्फ पीना और पीकर मरना।

एक दिन कुन्दनलाल ने ठाँसकर पिला दिया सुललित को। सुललित ने भी पेट भरकर पिया। क्योंकि कुन्दनलाल की बातें बड़ी अच्छी लगी थीं सुललित को। जिन्दगी के माने ही हैं शराब पीना और शराब पीते-पीते बेहोश होकर मर जाना। इसकी बनिस्बत सच्ची बात लगता है सुललित ने पहले कभी किसी से सुनी न्ही। सचमुच ही तो सु[illegible]लित को एक दिन की ध्यान-धारणा, शिक्षा-दीक्षा,

सुललित का इतने दिनों का किया हुआ जीवन-दर्शन सबकुछ मानो इतने दिनों में असत्य में बदल गया था। अपनी सतता, अपनी आदर्श-निष्ठा का दाम क्या उसने किसी से कभी पाया है ? अपना सर्वस्व काका-ताउओं के हाथों में विलीन करके उसके बदले में उसने पाया है सिर्फ उपहास। सबने उसे निर्बोध मानकर यह भाव मन-ही-मन में घोषित किया है। किसी के मन में सतता को निर्वुद्धिता के समान प्रमाणित होने में और जो भी हो उसके समान ट्रेजेडी और क्या है ? जिस आदर्शवाद को अपनी नौकरी के जीवन में वास्तविक रूप देने पर उसने सबसे ज्यादा धोखा खाया, उसके समान ट्रेजेडी भी और क्या है। और उस ट्रेजेडी ने किसके जीवन में इतनी मर्मान्तिक होकर किसे इतना आघात पहुँचाया है।

तिस पर भी सबकुछ तो उसने सिर झुकाकर ही स्वीकार कर लिया है। अपने आघात से जिस तरह उसने सिर झुका लिया है, अपने इस अधःपतन को भी उसी प्रकार सर्वान्तःकरण से स्वीकार करके वह मुक्ति पाना चाहता है। यह शराब पीना, यह घृणित मनुष्य से मिलना-जुलना, इसे ही तो साधारण अर्थ में अधःपतन कहा जाता है। और सिर्फ ये ही क्यों, पृथिवी का कोई मनुष्य यह नहीं जानता, जानना नहीं चाहता, और किसी दिन जानेगा भी नहीं। वह अगर शराब पीकर यहाँ इस कलारी के अड्डे में बेहोश होकर गिर पड़े और आखिरी साँस छोड़े तो भी कोई नहीं जान सकेगा उसके चरम अधःपतन की कथा। सिर्फ वैनर्जी साहब के विचार के दिन यह बात उसने धर्माधिकरण न्यायपति के सामने खड़े होकर कही है, वही गवर्नमेंट की फाइल में सच के समान रिकार्ड रह जाये। सब जानें कि सुललित का लोभ था वैनर्जी साहब की सुन्दरी युवती स्त्री की देह पर।

कुन्दनलाल बोलता—और पियो भइया···

सुललित समझ न पाता कुन्दनलाल क्यों उसकी इतनी खातिर करता है। कहता—मुझे इतनी शराब पिलाकर तुम्हारा क्या फायदा होता है कुन्दनलाल ? मैं तो जात-बाहर हो गया हूँ भाई। भले आदमियों के समाज ने तो अपनी फेहरिस्त से मेरा नाम काटकर निकाल दिया है···

कुन्दनलाल बोलता—भले आदमियों की बात छोड़ दो। भले आदमियों को हमने ही निकाल दिया है। बाबू। बहुत भले आदमी देखे हैं मैंने···

उसके बाद बोलता—वे लोग भी पीते हैं, हम लोग भी पीते हैं।

यह सच ही है। सुललित कुन्दनलाल की बात मंजूर करता। वे लोग छिपकर पीते हैं। वे हैं छिपे रुस्तम।

मिलते-जुलते दो दिनों में ही कुन्दनलाल मानो सुललित का जिगरी दोस्त हो गया। एक-एक दिन सुललित कुन्दनलाल को लेकर एकदम अपने डेरे में आता। भगीरथ को ही तब सबसे ज्यादा तकलीफ होती। उसके बाद कितनी रात तक

इन लोगों की मदहोशी चलती, इसका ठीक नहीं है।

मैं भगीरथ की बात सुनकर अवाक् हो गया।

मैंने पूछा—घर में बैठकर शराब पीता है क्या सुललित ?

—हाँ बाबू। और सिर्फ क्या शराब ? मुझे ही तब बाजार से शराब खरीदनी पड़ती है और मुझे ही गोश्त खरीदकर लाना पड़ता है और उसे पका-कर देना पड़ता है !

—लेकिन रुपये ? शराब पीने में तो सुनता हूँ, बहुत रुपये लगते हैं ?

भगीरथ बोला—वही जो कहा आपसे, दादा बाबू ने नौकरी छोड़ने के बाद आफिस से जितना रुपया पाया है सब वही विष निगल-निगलकर खत्म किये दे रहे हैं···

—लेकिन वे रुपये और कितने दिन के ? वे रुपये जब खत्म हो जायेंगे तब कैसे चलेगा ?

सुललित बोला—भगवान जानें ··

मैं बोला—भगवान को तो लेकिन कोई देख नहीं सकता भगीरथ। वे दिखायी पड़ते तो न हो उनसे पूछते कि दादा बाबू के रुपये जब खत्म हो जायेंगे तब कैसे चलेगा ! दादा बाबू अगर अबूझ हों तो फिर तुम भी क्या अबूझ हो जाओगे ? तुम तो पुराने आदमी हो, दादा बाबू को गोद-पीठ पर लादकर तुमने बड़ा किया है। तुम थोड़ा अच्छी तरह समझाकर बोल नहीं सकते ?

भगीरथ अकस्मात् रोने लगा। फतुई की खूंट से आँखों के आँसू पोंछते-पोंछते बोला—मैं तो नौकर हूँ बाबू, मैं नौकर छोड़कर और क्या हूँ ! मेरी बात कौन सुनेगा ? मेरी बात सुनने की दादा बाबू को क्या परवाह है···

आश्चर्य। सुललित का जो इतना अधःपतन हो गया है तिस पर भी जो भगीरथ के समान एक हितकारी पाया है, यह देखकर सचमुच मुझे उस पर जलन होने लगी। इस युग में भगीरथ के समान एक आदमी पाना भी जलन की बात है। तिस पर इतना पाकर भी इतनी न पाने की विडम्बना लगता है सुललित को छोड़कर और किसी की तकदीर में नहीं है।

मनुष्य सोचता कुछ है, होता कुछ है। बात किताब में ही पढ़ता आया हूँ। जीवन में जो नहीं देखा है वह भी होता है। लेकिन तो भी यहाँ तक ?

विरोध जिसके जीवन में आता है, उसका लगता है इसी तरह आता है। नहीं तो कहाँ का कौन एक कुन्दनलाल ही उसके जीवन में आकर क्यों जुड़ जाता ?

पहले-पहल कुन्दनलाल ने पिलाया था सुललित को। लेकिन अन्त में सुललित ही पिलाने लगा कुन्दनलाल को। कुन्दनलाल को लगता है यह विश्वास हो [illegible] के पास अगाध रुपये हैं। किसी तरह उसे एक बार

उतार सकने पर मुफ्त में पेट-भर खाने-पीने को मिलेगा।

ल एक दिन अकस्मात् अकेला मकान में आकर हाजिर हुआ।
र दरवाजा खोलकर कुन्दनलाल को देखते ही अकचका गया। भगी-
—वावू घर में नहीं हैं।

लाल वोला—घर में नहीं है तो गया कहाँ ?

नलाल का चेहरा देखकर ही भगीरथ को गुस्सा आ गया था।
वोला—कहाँ गया यह मैं क्या जानूँ ? वावू क्या मुझे वोलकर जाते

न्दनलाल वोला—लेकिन वावू ने तो मुझे आने को कहा था ?

भगीरथ वोला—यह मैं नहीं जानता···

कुन्दनलाल वोला—तो फिर मैं कमरे में वैठूँगा···

वात सुनकर और भी गुस्सा आ गया भगीरथ को। यह आदमी पहले से भगीरथ को पसन्द नहीं था।

वह वोला—आप तो वैठियेगा, लेकिन वावू कव आयेंगे इसका कोई ठीक नहीं है। आप फिजूल-फिजूल यहाँ वैठकर क्यों हैरान होंगे, उसके वदले वल्कि आप फिर एक वार आकर जान लीजिए···

यह कहकर वह दरवाजे के पल्ले वन्द करने जा रहा था। लेकिन कुन्दन-लाल ने दोनों हाथों से दरवाजा रोक लिया। फिर भगीरथ को धक्का देकर घर के भीतर घुस गया।

साथ-ही-साथ भगीरथ चिल्ला उठा—कैसे वेशरम आदमी हैं आप ? मैं कहता हूँ वावू घर में नहीं हैं तो भी जोर-जवर्दस्ती आप घर में घुस रहे हैं ?

कुन्दनलाल भी चुप नहीं रहा। वह भी चिल्लाकर वोला—तुम तो नौक' हो, तुम चुप रहो—जो वोलना है मैं सुललित वावू से वोलूँगा···

लेकिन इसका कोई जवाव भगीरथ के देने के पहले ही घर के भीतर सुललित की गम्भीर आवाज सुनायी पड़ी—इतना चिल्लाता क्यों है रे भगीर' क्या हुआ है ?

वोलते-वोलते सुललित सशरीर कमरे के भीतर घुस पड़ा। घुसकर लाल को देखते ही हँसते-हँसते उसकी तरफ वढ़ा। वह वोला—अरे, तु आये कुन्दनलाल ?

कुन्दनलाल अवाक्। वोला—अरे यार, तुम कोठी में हो ? और नौकर झूठ वात वोलता है कि तुम घर में नहीं हो ?

सुललित भगीरथ की तरफ देखकर वोला—क्यों भगीरथ, तुमने

कि मैं घर में नहीं हूँ ?

भगीरथ अपराधी के समान खड़ा था। उसके मुँह से उस वक्त कोई बात निकल नहीं रही थी। वह मानो पत्थर हो गया था।

सुललित फिर चिल्ला उठा—बोलता क्यों नही ? क्या कहा है बोल ?

कुन्दनलाल बोला—मैं तुम्हारी खोज में आया था यार, मैंने उससे पूछा तुम कहाँ हो, उसने सिर्फ कह दिया तुम कोठी मे नही हो···

सुललित अब गुस्सा संभाल नही सका। भगीरथ की तरफ आगे बढ़ गया। बोला—बोल, क्यों तूने झूठ बात कही ? किसलिए झूठ बोला, बोल ?

भगीरथ ने इस बार मुँह खोला। बोला—हाँ, मैंने कहा है···

—क्यों झूठ बोला यही मैं तुझसे पूछता हूँ···

भगीरथ ने इस बार साफ-साफ ही कह दिया—क्यों तुम इस आदमी से मिलते हो ? यह आदमी क्या अच्छा है ?

सुललित बात सुनकर बोल उठा—निकलो तुम, निकलो यहाँ से, निकल जाओ—तुम्हारा अब मुँह नहीं देखना चाहता मैं, निकल जाओ मेरे घर से···

कहकर भगीरथ के गले में धक्का मारकर वह घर के बाहर निकालने जा रहा था। लेकिन रोका कुन्दनलाल ने। वह बोला—अरे छोड़ दो यार···वह नौकर है, नौकर कभी मालिक का मिजाज समझेगा क्या ?

भगीरथ तब काठ। जिस आदमी को उसने जनमते देखा है, जनम के बाद से जिसने उसे तिल-तिल बडा किया है, अपने बेटे की तरह प्यार किया है, वही क्या आज उसे गले मे धक्का देकर घर से बाहर निकाल दे रहा है !

भगीरथ ने और कुछ नही कहा। मालिक के हुकुम के मुताबिक वह सीधे घर से बाहर निकला जा रहा था। लेकिन पीछे से सुललित चिल्ला उठा—कहाँ जा रहे हो तुम ?

भगीरथ दादा बाबू की बात से थोडा थमककर खड़े होकर पीछे फिरा।

—तुमने ही तो मुझसे चले जाने को कहा !

—तो मैंने जाने को कहा और तुम भी चल दिये ? तो फिर मेरा काम कौन करेगा ?

—कौन-सा काम ?

सुललित बोला—क्या काम यह भी तुम्हें याद दिलाना होगा ? मैं खाऊँगा नही ? तुम राँधोगे नही तो मैं खाऊँगा क्या मुनूं ? मैं हवा खाऊँगा ? हवा खाकर मनुष्य जी सकता है ?

तो भी कोई जवाब नहीं था भगीरथ के मुँह मे। वह पत्थर के समान चुप खड़ा रहा वहाँ। हिलता भी नही, डुलता भी नही।

सुललित फिर गुस्सा हो गया।

वोला—वात कान में जा नहीं रही है शायद ? देह में हाथ लगाने पर तब वात कान में जायेगी ? यही तुम चाहते हो क्या ?

सुललित ने वड़ी तकलीफ से आँखों के आँसू रोक रक्खे थे। जी-जान से वह दोनों आँखें सूखी रखने की कोशिश कर रहा था और दाँतों में दाँत दवाकर मुँह वन्द किये हुए था।

सुललित ने तव जाकर फिर उसका गला पकड़ा। गला पकड़कर खींचते-खींचते घर के भीतर खींच ले आया। उसके वाद धक्का देकर एकदम घर के भीतर की तरफ ठेल दिया।

वोला—चाय वना दो कुन्दनलाल के लिए···

भगीरथ विना कुछ वोले भीतर जाकर चाय वनाने वैठा। लेकिन वाहर के कमरे से दादा वावू की चिल्लाहट सुनायी पड़ी—भगीरथ, भगीरथ, इधर सुन जाओ···

झंझट क्या कम है ? चाय का पानी अभी तक गरम नहीं हुआ। चूल्हे से चाय का पानी उतारकर दादा वावू के पास आकर खड़े होना पड़ा।

—पान ले आओ।

—पान ?

—हाँ, पान की वात याद क्यों नहीं रहती तुम्हें ? जानते नहीं, कुन्दनलाल पान खाते हैं ? सव वातों की तुम्हें याद दिलानी होगी ? तुम्हारे निजी मगज में वुद्धि-उद्धि कुछ नहीं है ? जितनी उमर होती जा रही तुम्हारी, उतनी वुद्धि-उद्धि सव गुम हुई जा रही है देखता हूँ। काम अगर न कर सको तो नौकरी छोड़ दो। भात छिटकाने पर कौओं की कमी नहीं रहती, मैं दूसरा आदमी देख लूंगा···

भगीरथ उसी वक्त पान लाने दौड़ा। सिर्फ पान लाने से काम नहीं चलेगा। कुन्दनलाल पहले चाय पियेगा, उसके साथ खायेगा तली हुई दालमोठ। उसके वाद पान।

वह सव हड़पकर तव दोनों निकलेंगे। कव जायेंगे, कहाँ जायेंगे इसका कोई भी पता-ठिकाना नहीं लगेगा। उसके वाद जव अवेर रात को घर लौटेंगे तव फिर होश नहीं रहेगा दादा वावू को। तव दादा वावू को पकड़कर विछौने पर सुला देना होगा। तव दादा वावू नशे के घोर में रोना शुरू करेंगे। तव भगीरथ को नजदीक वुलायेंगे। तव भगीरथ के पैर पकड़ने लगेंगे। तव वोलेंगे—भगीरथ, तुम्हें छोड़कर संसार में मेरा और कोई नहीं है···तुम हो इसीसे मैं जिन्दा हूँ भगीरथ···

जितना रोयेंगे दादा वावू, उतना ही भगीरथ के पैर जकड़कर पकड़ने की कोशिश करेंगे।

[illegible] जाता। न
रह सकता था और न छोड़ सकता था। उसके बाद बड़ी मुश्किल से समझा-बुझाकर दादा बाबू को नींद में सुलाकर तब बेफिक्र हो पाता।

लेकिन जब सवेरा होता तब दादा बाबू का दूसरा चेहरा हो जाता। उस समय उनका ऐसा भाव होता मानो रात को कुछ हुआ ही नहीं। तब पुकारेंगे—भगीरथ···

भगीरथ के सामने जाते ही दादा बाबू बोलेंगे—कल कुन्दनलाल किस वक्त चले गये भगीरथ?

भगीरथ कहेगा—जी, कुन्दनलाल तो कल आये नहीं···

—यह क्या? आये नहीं माने? तो फिर मैं क्या झूठ बोल रहा हूँ?

—नहीं दादा बाबू, तुम क्यों झूठ बात बोलोगे। वे आते तो मुझे तो याद रहता।

भगीरथ की बात सुनकर सुललित जाने कैसा अनमना हो जाता।

वह कहता—मैं इतना क्यों भूल जाता हूँ बोलो तो भगीरथ? मुझे कुछ याद क्यों नहीं रहता?

भगीरथ कहता—दादा बाबू···तुम यह सब जहर पीना छोड़ दो। तुम देखोगे उससे तुम्हें फायदा होगा। यह सब जहर पीलने पर तुम बचोगे नहीं अब···

दादा बाबू ऐसे समय भगीरथ की बात मन लगाकर सुनते।

कहते—अच्छा भगीरथ, तुम मुझे शराब पीने को मना नहीं कर सकते?

भगीरथ कहता—मैं तो तुमको मना करता हूँ दादा बाबू!

—तुम्हारे मना करने पर भी सुनता नहीं मैं?

—नहीं, उस समय तुम मेरी बात बिलकुल सुनना नहीं चाहते···

—तो तुम मेरे हाथ से शराब का गिलास छीन नहीं ले सकते! मुझे तुम मार नहीं सकते? तुमने तो मुझे गोद और पीठ-पीठ पर लादकर बड़ा किया है, तुम्हें तो मुझे मारने का हक है भगीरथ?

बात सुनकर शर्म से सिर नीचा हो जाता भगीरथ का। दादा बाबू यह क्या कहते हैं? यह बात तो सुनना भी पाप है। भगीरथ तब और सब बातें सुन नहीं पाता। कान में उंगली लगाकर वहाँ से चला जाता।

लेकिन यह घटना थोड़ी देर के लिए होती। उसके बाद फिर शाम होने के पहले ही कब दादा बाबू घर से बाहर निकल पड़ते, उसकी आहट ही न मिलती भगीरथ को। दौड़ते-दौड़ते ठीक जगह पर पहुँचते ही कुन्दनलाल से फिर उसकी

भेंट हो जाती। भेंट होने के साथ-साथ ही एकदम उसके सारे वादे बह जाते

कुन्दनलाल कहता—यार···

कुन्दनलाल भी तैयार था। दोस्त को देखते ही उसने एक नयी बोतल का आर्डर दे दिया था। जो सुललित बराबर एक-एक आदर्श के पीछे ही दौड़कर बाहर निकला है, वही मनुष्य उस समय एकदम नावदान के कीचड़ के भीतर मुंह घुसेड़कर मानो अपनी जिन्दगी की परम मुक्ति खोज पा रहा है। मानो वह कलारी ही उसके लिए उस समय स्वर्ग था।

लेकिन कुन्दनलाल की आदत दूसरी किस्म की थी। सिर्फ कलारी की दूकान की चहारदीवारी के भीतर अपने को बाँधकर रखने में उसे सन्तोष न होता। वह चाहता कि अपने नशे को वह जमीन और आसमान के चारों तरफ फैला दे। लोग समझें कि वह मौज में है। शराब पीकर नशे में बेहोश घर के भीतर पड़े रहने में उसे कोई सुख न मिलता। सच भी तो है, उसके सुख की घोषणा अगर बाहर का कोई जान ही न सके तो ऐसे सुख की उसे दरकार क्या है?

कहता—चलो यार, थोड़ा बाहर को···

—बाहर? बाहर कहाँ जायेंगे?

—बाहर तमाम जगहें हैं। लखनऊ शहर में क्या जाने की जगहों की कमी है?

—तो चलो।

सुललित राजी हो जाता। और राजी न होने की वजह भी नहीं थी उसकी। और कौन उसे पहचानेगा यहाँ? कौन जानेगा कि शक्तिधर चाटुज्जे का अन्तिम वंशधर सुललित चट्टोपाध्याय शराब की मदहोशी में रास्ते-रास्ते में घूमता फिर रहा है। यहाँ उसका यही परिचय है कि वह रास्ते का आदमी है। रास्ते के अनगिनत मामूली आदमियों में से वह भी एक है, इतना ही। और कुछ नहीं है वह। यहाँ और कुछ परिचय नहीं है उसका।

रास्ते में चलते-चलते दोनों तरफ के घरों की ओर वह बीच-बीच में ताक-ताककर देखता।

कुन्दनलाल पूछता—क्या देख रहे हो चैटर्जी?

—कुछ नहीं···

सुललित मुंह से जरूर कहता 'कुछ नहीं' लेकिन मन-ही-मन में लगता है उसे भी याद आती एक किसी की बात। लेकिन याद आते ही वह तुरन्त अनमना होने की कोशिश करता। उसके बाद जब रात को बड़ी अबेर हो जाती तब कुन्दनलाल ही उसे घर ले जाकर पहुँचाता और लौट आता। तब सुललित एकदम बेहोश अचल हो पड़ता। भगीरथ तब उसे दोनों हाथों से लिपटाकर उसके बिछौने पर सुला देता।

लेकिन एक दिन अकस्मात् एक अचम्भे की घटना घट गयी। एक गली से जाते-जाते हठात् एक गाने का सुर कानों मे पड़ते ही जाने कैसा चमककर खड़ा हो गया सुललित।

—कौन गाना गा रहा है? किस घर से गाने का सुर आ रहा है? कुन्दनलाल भी चमककर खड़ा हो गया था।

उसने पूछा—क्या यार? क्या देखते हो?

सुललित की आँखें और उसके कान तक सजग हो उठे थे। चारों तरफ के ऊँचे मकानों की खिड़कियों की तरफ देखता हुआ वह मानो कुछ खोज रहा हो।

कुन्दनलाल ने फिर पूछा—क्या यार? क्या देखते हो चैटर्जी?

सुललित बोला—इस गाने की आवाज कहाँ से आ रही है भाई? अब समझ सका कुन्दनलाल। बोला—गाना सुनोगे?

सुललित उस वक्त भी एक मन से गाना सुन रहा था। वही बहुत दिनों पहले का सुना गाना—

ढोलें रे जोबन मदमाती गुजरिया
तेरा संग जुड़ा मोसे मरा ले कटरिया
लटपट पोहट कुंजभवन में ·
पहर कुसुम रंग की रे चुनरिया···

सुर भी उसे याद आ गया। झिंझिट खम्बाज। आरती के मुँह से ही सुनी थी उसने ये सब बातें। नवाब वाजिद अली शाह का निज का लिखा हुआ ठुमरी गाना···

कुन्दनलाल पहले समझ नही सका।

उसने फिर पूछा—क्या हुआ चैटर्जी? गाना सुनोगे?

सुललित बोला—यह किसके घर मे गाना हो रहा है भाई?

कुन्दनलाल हँसा। बोला—तवायफ। अगर गाना सुनना चाहो तो ऊपर ले जा सकता हूँ तुम्हें···

—ले जा सकते हो? तो फिर चलो···

उस वक्त दोनों की खोयी हुई मजे की हालत थी। उस दिन बहुत ज्यादा पी ली थी सुललित ने। दोनों पैर बड़े ठगे जा रहे थे सुललित के। तो भी हिसाब करके पैर रख-रखकर चलना पड़ा। पुराने अमल का घर। दीवालों की ईंटें पतली-पतली। नवाबी अमल की। उस जमाने के नवाब-बादशाहों के वंशधर लड़के मौज करने के लिए इन सब घरों में आते। तब यहाँ की इज्जत थी, खानदान था यहाँ का। लेकिन यह होने से ही क्या होगा, ऊँची-ऊँची सीढ़ियाँ। उन सीढ़ियों से ऊपर चढ़ने पर बराबर लोग हाँफ उठते। तिस पर अगर नशे में हों तो उसके बाद तो कोई बात ही नहीं है।

भेंट हो जाती। भेंट होने के साथ-साथ ही एकदम उसके सारे वादे बह जाते।

कुन्दनलाल कहता—यार···

कुन्दनलाल भी तैयार था। दोस्त को देखते ही उसने एक नयी वोतल का आर्डर दे दिया था। जो सुललित वरावर एक-एक आदर्श के पीछे ही दौड़कर वाहर निकला है, वही मनुष्य उस समय एकदम नावदान के कीचड़ के भीतर मुँह घुसेड़कर मानो अपनी जिन्दगी की परम मुक्ति खोज पा रहा है। मानो वह कलारी ही उसके लिए उस समय स्वर्ग था।

लेकिन कुन्दनलाल की आदत दूसरी किस्म की थी। सिर्फ कलारी की दूकान की चहारदीवारी के भीतर अपने को वाँधकर रखने में उसे सन्तोप न होता। वह चाहता कि अपने नशे को वह जमीन और आसमान के चारों तरफ फैला दे। लोग समझें कि वह मौज में है। शराव पीकर नशे में वेहोश घर के भीतर पड़े रहने में उसे कोई सुख न मिलता। सच भी तो है, उसके सुख की घोपणा अगर वाहर का कोई जान ही न सके तो ऐसे सुख की उसे दरकार क्या है?

कहता—चलो यार, थोड़ा वाहर को···

—वाहर? वाहर कहाँ जायेंगे?

—वाहर तमाम जगहें हैं। लखनऊ शहर में क्या जाने की जगहों की कमी है?

—तो चलो।

सुललित राजी हो जाता। और राजी न होने की वजह भी नहीं थी उसकी। और कौन उसे पहचानेगा यहाँ? कौन जानेगा कि शक्तिधर चाटुज्जे का अन्तिम वंशधर सुललित चट्टोपाध्याय शराव की मदहोशी में रास्ते-रास्ते में घूमता फिर रहा है। यहाँ उसका यही परिचय है कि वह रास्ते का आदमी है। रास्ते के अनगिनत मामूली आदमियों में से वह भी एक है, इतना ही। और कुछ नहीं है वह। यहाँ और कुछ परिचय नहीं है उसका।

रास्ते में चलते-चलते दोनों तरफ के घरों की ओर वह वीच-वीच में ताक-ताककर देखता।

कुन्दनलाल पूछता—क्या देख रहे हो चैटर्जी?

—कुछ नहीं···

सुललित मुँह से जरूर कहता 'कुछ नहीं' लेकिन मन-ही-मन में लगता है उसे भी याद आती एक किसी की वात। लेकिन याद आते ही वह तुरन्त अनमना होने की कोशिश करता। उसके वाद जव रात को वड़ी अवेर हो जाती तव कुन्दनलाल ही उसे घर ले जाकर पहुँचाता और लौट आता। तव सुललित एकदम वेहोश अचल हो पड़ता। भगीरथ तव उसे दोनों हाथों से लिपटाकर उसके विछौने पर सुला देता।

लेकिन एक दिन अकस्मात् एक अचम्भे की घटना घट गयी। एक गली से जाते-जाते हठात् एक गाने का सुर कानों में पड़ते ही जाने कैसा थमककर खड़ा हो गया सुललित।

—कौन गाना गा रहा है ? किस घर से गाने का सुर आ रहा है ? कुन्दनलाल भी थमककर खड़ा हो गया था।

उसने पूछा—क्या यार ? क्या देखते हो ?

सुललित की आँखें और उसके कान तक सजग हो उठे थे। चारों तरफ के ऊँचे मकानों की खिड़कियों की तरफ देखता हुआ वह मानो कुछ खोज रहा हो।

कुन्दनलाल ने फिर पूछा—क्या यार ? क्या देखते हो चैटर्जी ?

सुललित बोला—इस गाने की आवाज कहाँ से आ रही है भाई ? अब समझ सका कुन्दनलाल। बोला—गाना सुनोगे ?

सुललित उस वक्त भी एक मन से गाना सुन रहा था। वही बहुत दिनों पहले का सुना गाना—

डोले रे जोवन मदमाती गुजरिया
तेरा संग जुड़ा मोसे मरा ले बटरिया
लटपट पोहट कुंजभवन में
पहर कुसुम रंग की रे चुनरिया···

सुर भी उसे याद आ गया। झिंझिट खम्बाज। आरती के मुँह से ही सुनी थी उसने ये सब बातें। नवाब वाजिद अली शाह का निज का लिखा हुआ ठुमरी गाना···

कुन्दनलाल पहले समझ नहीं सका।

उसने फिर पूछा—क्या हुआ चैटर्जी ? गाना सुनोगे ?

सुललित बोला—यह किसके घर में गाना हो रहा है भाई ?

कुन्दनलाल हँसा। बोला—तवायफ। अगर गाना सुनना चाहो तो ऊपर ले जा सकता हूँ तुम्हें···

—ले जा सकते हो ? तो फिर चलो···

उस वक्त दोनों की खोयी हुई मजे की हालत थी। उस दिन बहुत ज्यादा पी ली थी सुललित ने। दोनों पैर बड़े ठगे जा रहे थे सुललित के। तो भी हिसाब करके पैर रख-रखकर चलना पड़ा। पुराने अमल का घर। दीवालों की ईंटें पतली-पतली। नवाबी अमल की। उस जमाने के नवाब-बादशाहों के वंशधर लड़के मौज करने के लिए इन सब घरों में आते। तब यहाँ की इज्जत थी, खानदान था यहाँ का। लेकिन यह होने से ही क्या होगा, ऊँची-ऊँची सीढ़ियाँ। उन सीढ़ियों से ऊपर चढ़ने पर बराबर लोग हाँफ उठते। तिस पर अगर नशे में हों तो उसके बाद तो कोई बात ही नहीं है।

कुन्दनलाल हाथ पकड़-पकड़कर उसे ऊपर चढ़ा ले चला। दोनों तरफ नोना लगी दीवाल और पैरों के नीचे गड्ढों से भरी ईंटें। थोड़ा-सा भी असावधान होने पर लचक लग जा सकती है। तिस पर घर भी वैसा ही ऊँचा। एकतल्ला पार करके जब वह दुतल्ले पर चढ़ा तब कमरे से तबला-सारंगी और तानपूरे की और भी साफ ध्वनि कानों में सुनायी पड़ी। समझ में आया कि भीतर तमाम गुणी-समझदार लोग बैठे हुए गाना सुन रहे हैं। कुन्दनलाल को लेकिन कोई संकोच नहीं था। उसके मन में कोई जड़ता नहीं थी। लगता है, ऐसी जगहों में आने की उसकी आदत है।

सुललित एक निगाह से ताक-ताककर देखने लगा। गाना जो गा रहा था, गा रही थी, उसकी नजर तब भी इस तरफ नहीं थी। कमरे के भीतर कुछ रईस लोग गाना सुन रहे थे और तारीफ कर रहे थे। वही गाना। बहुत दिनों पहले यही गाना ईडेन-गार्डेन की घास पर बैठकर गाया था आरती ने। वही गाना हू-ब-हू गाये जा रही थी बाईजी। यह तो एक अजीब समानता है।

कुन्दनलाल के सुललित का हाथ पकड़कर खींचते ही वह चमक उठा।

कुन्दनलाल बोला—यार, आ जाओ चैटर्जी···

यह कहकर उसने सुललित को खींच ले जाकर महफिल के एक किनारे बिठाया। गाना उस वक्त भी चल रहा था। एक दाढ़ी वाला आदमी सारंगी बजा रहा था, उसके नजदीक ही एक तानपूरा पकड़े हुए था। और बाईजी की दाहनी तरफ बैठा एक तबला बजा रहा था।

हठात् एक चीत्कार सुनकर सब चमक उठे···

—आरती···आरती···तुम?

अकस्मात् मानो एक ईंट छिटककर आ गिरी महफिल के बीच। इतना सुर, इतना मिजाज, इतनी लयकारिता मानो हठात् एक बे-पर्दा सुर के छू जाने से टूट-फूटकर टुकड़े-टुकड़े होकर छार-छार फैल गयी।

सबने बेवकूफ की तरफ ताककर देखा। कौन ऐसा बेसुरा बेताल मनुष्य यहाँ आ जुटा? कौन है वह बदतमीज? कहाँ है वह? किसने उसे यहाँ घुसने दिया है?

उसी समय बाईजी की भी नजर पड़ी सुललित पर। सारंगी वाले, तबला वाले, तानपूरा वाले ने भी गुस्से से फिसफिसाकर देखा उस आदमी की तरफ।

—कौन है वह?

कुन्दनलाल की हालत उस वक्त सबसे ज्यादा बुरी थी। वह बड़ी शर्म से गड़ गया चैटर्जी का काण्ड देखकर। वह चैटर्जी को लेकर धीरे-धीरे वहाँ से खिसक जा सकता तो बच जाता।

उसने कहा—यह तुमने क्या किया चैटर्जी? चलो···चलो···चलो यहाँ से···

[illegible] लेकिन सुललित को उस वक्त किसी तरफ नजर फेरने की परवाह नहीं थी। वह एक दृष्टि से बाईजी की तरफ देख रहा था। बाईजी की तरफ देखकर वह कहने लगा—

आखिर में तुम शायद यहाँ आ बैठी हो ? तुम बाईजी हो गयी हो ?

लड़की उस वक्त किंकर्तव्यविमूढ़ हो गयी थी, क्या करे क्या न करे। नजदीक के सारंगी वाले की तरफ देखकर उसने पूछा—वह कौन है उस्तादजी ? यह कैसे इधर घुसा ?

उस्तादजी उस वक्त सारंगी रखकर आगे बढ़ आये।

—तुम कौन हो बदतमीज ?

आसपास के खानदानी रईस जो बाईजी का गाना सुनकर मौज करने आये थे, वे भी गुस्से से पागल हो उठे थे।

सब लोग बढ़ आये सुललित की तरफ। बोले—निकल जाओ यहाँ से··· निकल जाओ···

कुन्दनलाल भी डर गया। सुललित का हाथ पकड़कर खींचने लगा—आइए भइया, आइए···

लेकिन सुललित की उस वक्त किसी तरफ निगाह नहीं थी। वह सिर्फ एक निगाह से आरती की तरफ देख रहा था। उसे जो सब मिलकर इतनी गाली-गलौज कर रहे हैं, उस तरफ भी उसका खयाल नहीं था। वह तब भी सबको टालकर आरती की तरफ आगे बढ़ने लगा।

तब लड़की ने कहा—उसे छोड़ दो उस्तादजी···

उस्तादजी ने कहा—नहीं बाईजी, नहीं, बदतमीज को वाजिब सजा देनी होगी···उसे मैं पुलिस के हाथ में सौंप आऊँ···

ये सब बातें मानो कुछ भी सुललित के कानों में नहीं जा रही थीं। वह उस वक्त भी बकता जा रहा था—आरती, तुम मुझे क्या पहचान नहीं पा रही हो ? मैं सुललित हूँ, सुललित चैटर्जी···

आरती भी उस वक्त उठ खड़ी हुई थी। उसके मुँह की बात भी मानो उस वक्त बन्द हो गयी थी।

सुललित ने फिर कहा—सच बोलो आरती, क्या तुम मुझे पहचान नहीं पा रही हो ? तुम बिलासपुर में मेरे घर गयी थीं, यह तुम्हें याद नहीं है ? तुम्हारे लिए मैंने इतना किया, तुम्हारे पति को मैंने जेल भोगने से बचा दिया और आज तुम्हीं मुझे पहचान नहीं पा रही हो ? क्यों तुम फिर यहाँ आकर बैठ गयी हो आरती ? मैं तो खुद कोर्ट में खड़े होकर गड़गड़ाता हुआ सारी झूठ बातें बोल गया। मैंने जिन्दगी में जो नहीं किया, उस दिन तो वही किया सिर्फ तुम्हारे लिए ! बैनर्जी साहब के जेल चले जाने पर तुम्हारा जीवन, तुम्हारा संसार सब-

कुछ छार-छार हो जाता, इसीलिए तो मैं कटघरे में खड़ा होकर शुरू से आखिर तक झूठ बातें बोल गया। तो फिर ? तो फिर तुम क्यों बैनर्जी साहब को छोड़कर आ गयीं ?

तब भी बाईजी के मुंह से कोई बात नहीं निकली।

कोई एक आदमी मानो नजदीक से बोल उठा—उस्तादजी, यह आदमी दारू पिये है…

सुललित उस वक्त भी बोलता जा रहा था—तुम शायद जानती नहीं हो आरती, बैनर्जी साहब के केस के बाद मैंने भी नौकरी छोड़ दी है। सचमुच विश्वास करो तुम आरती, जीवन में वही पहली बार मैं झूठ बोला। उसके पहले कभी किसी वजह से और किसी के लिए झूठ नहीं बोला। और मेरे झूठ बोलने के बाद भी तुम्हारा यह नतीजा हुआ ? तुम्हारा संसार जिससे सुखी हो, तुम्हारे लड़के-लड़कियों का जिससे भला हो इसीलिए तो मैंने अपने कण्ठ मिथ्या अपवाद स्वीकार करके अपने सिर पर उठा लिया, और तो भी तुम बैनर्जी साहब को छोड़कर यहां आकर बाईजी के रूप में जीवन काट रही हो ? इसीलिए क्या काका बाबू ने इतने दिनों उस्तादजी रखकर तुम्हें गाना सिखाया था ? इसीलिए क्या मैंने अपने माथे पर इतनी बदनामी उठा ली ? इसीलिए क्या मैंने कोर्ट के कठघरे में खड़े होकर कहा कि बैनर्जी साहब की स्त्री मिसेज बैनर्जी के [illegible]री दुर्बलता थी ? इसीलिए क्या उस दिन सबके सामने मैंने

में उस वक्त काफी रात-बीता माहौल था। लेकिन रात गम्भीर होने से क्या होगा, लखनऊ की उस गली के भीतर मानो उस वक्त भी शाम ही हुई थी।

कुन्दनलाल ने बाहर आकर सुललित से कहा—यह तुमने क्या किया यार, इस तरह की बेअदबी क्यों करने लगे भाई? केसर बाई खानदानी बाईजी है, वहाँ जाकर कभी ऐसी बेअदबी भी की जाती है?

सुललित अवाक् हो गया। वह बोला—उसका क्या नाम बताया?

—केसर बाई!

नाम सुनकर नशे में चूर भी सुललित बोल उठा—नहीं, कभी नहीं, उसका नाम किसी तरह केसर बाई नहीं है···

—केसर बाई नहीं है?

कुन्दनलाल और भी अचम्भे में पड़ गया। गली-मुहल्ले के सब लोग जिसे केसर बाई के समान जानते हैं, उसका नाम केसर बाई नहीं है तो और क्या है?

सुललित ने कहा—और एक बाटल पिलाओ कुन्दनलाल। जरा पिलाओ···

कुन्दनलाल ने कहा—अच्छा, मैं तुम्हें पिलाये देता हूँ, लेकिन उसका नाम केसर बाई नहीं है यह तुमसे किसने कहा यार?

सुललित बोला—मैं जानता हूँ?

—जानते हो माने? किस तरह जाना?

सुललित बोला—मैं उसे बहुत दिनों पहले से पहचानता हूँ। मैंने उसके आदमी को एक दिन पकड़ा था···

—आदमी को माने?

सुललित बोला—आदमी को माने उसके खाविन्द को ···उस समय मैं पुलिस की नौकरी करता था। एंटीकरप्शन अफसर था। उसका खाविन्द मिस्टर बैनर्जी रेलवे का बड़ा अफसर था। अढ़ाई हजार रुपये तनख्वाह पाता था, तो भी रिश्वत लेता था, घूस लेता था···

—फिर क्या हुआ?

बातें करते-करते सुललित का मानो नशा काफूर हुआ जा रहा था। वह बोला—और एक-ठो बाटल पिलाओ कुन्दनलाल···और एक बाटल पिलाओ यार ···मेरे पास के रुपये खत्म हो गये हैं···

कहकर अपना पाकेट उलटकर देखा उसने।

कुन्दनलाल को जाने कैसी माया बढ़ी सुललित पर। गुण्डों के भी मानो हृदय नाम की एक वस्तु है। नहीं तो क्यों उस दोस्त के लिए फिर वह एक बोतल खरीदने दौड़ा! सचमुच, पहले तो चैटर्जी के पैसे से तमाम माल पिया-खाया है उसने, बहुतेरा मजा उड़ाया है। कुन्दनलाल जानता था कि चैटर्जी बहुत बड़ी नौकरी करता था पुलिस में। चोरों को पकड़ने का काम था उसका, घूसखोरों

को पकड़ने का काम। लेकिन यह नहीं जानता था कि क्यों उसकी नौकरी चली गयी।

उसने बोतल ढालकर गिलास चैटर्जी के सामने बढ़ा दिया।

वह बोला—फिर क्या हुआ चैटर्जी ? क्या हुआ फिर ?

सुललित सोचने लगा—उसके बाद ? उसके बाद क्या हुआ ?

नशे के घोर में विचार की कड़ियाँ मानो फँस गयी थीं।

बोला—उसके बाद ? उसके बाद उसने मुझसे क्या कहा जानते हो यार ? उसके बाद बोली, मैं अगर उसके आदमी को छोड़ दूँ तो वह मेरे साथ सोयेगी। इसके माने मैं जो चाहूँगा वही वह मुझे देगी। सुनकर मुझे बड़ी रुलाई आ गयी यार। समझे ? मैं रोने लगा। मुझे लगा कि उसकी इतनी बड़ी हिम्मत कि वह मुझे घूस देना चाहती है।

—फिर ? फिर क्या हुआ ?

—उसके बाद मैं फिर गुस्सा सँभाल नहीं सका भाई। मैंने उस लड़की के गाल में कसकर एक चाँट मारा।

—फिर ? फिर क्या हुआ ?

—उसके बाद यार, उसी क्षण मैंने भगीरथ को बुलाकर एक बोतल वाइन लाने को कहा। उसके पहले मैंने कभी शराब नहीं पी थी भाई। वही अपने जीवन में पहली बार मैंने शराब पी, तिस पर पहले मैं शराब से घृणा करता था। शराबियों से भी मैं घृणा करता था। लेकिन अचम्भा, वही मैं-जो-मैं हूँ, वही मैंने भी उस दिन और कुछ नहीं खाया, मैं सिर्फ शराब गीलने लगा। एक पूरी बोतल मैं पी गया, और जितना मेरा नशा बढ़ने लगा, उतनी ही मेरी आँखें फटने लगीं और मुझे रुलाई आने लगी। और शादी के पहले उस आरती को क्या मैं कम चाहता था !

—फिर ? फिर ?

सुललित बोला—और थोड़ी दारू ढालो यार, और थोड़ी दारू ढालो···

कुन्दनलाल ने सुललित के गिलास में और ढक-ढक शराब ढाल दी।

उसने कहा—और ज्यादा मत पियो, आज ज़्यादा हो गयी। हमको-तुमको घर जाना है···

लेकिन सुललित ने उस समय फूट-फूटकर रोना शुरू कर दिया था, उस समय नशा होते ही सुललित को बड़ी रुलाई आती।

कुन्दनलाल बोला—क्यों रोते हो यार, रोओ मत, घर चलो···चलो मैं तुम्हें घर पहुँचा आऊँ···

सुललित कुन्दनलाल की बात सुनता नहीं था। कहता—लेकिन मेरी आरती वहाँ आयी क्यों भाई ? आरती बाईजी क्यों हो गयी यार ?

कुन्दनलाल कहता—उसे आरती क्यों कहते हो ? वह तो केसर बाई है ?

सुललित कहता—नहीं भाई, वह आरती है, वह जरूर आरती है···

कुन्दनलाल कहता—नहीं, केसर बाई तो लखनऊवाली है। और तुम्हारी आरती तो बंगाली है···

सुललित बोला—नहीं यार, केसर बाई भी बंगाली है। उसका असली नाम आरती है, उसके फादर थे मेजर भूधर गांगुली, वे थे मिलिटरी के डाक्टर···

—नहीं-नहीं, तुमने गलती की। तुम भूल रहे हो चैटर्जी। किसी को याद करके किसी को आरती कहकर पुकारा है तुमने। केसर बाई खूब गुस्सा हुई थी, देख नहीं रहे थे ? और तुम्हारी आरती ही अगर होती तो वह यहाँ क्यों आने लगी थी ? उसके तो मर्द है, उसके तो संसार घर-गिरिस्ती है, वह सबकुछ छोड़कर दीवानी क्यों होगी ?

सुललित बोलता—ना-ना भाई, वह मर्द को छोड़कर यहाँ चली आयी है मेरी वजह से। वह जो जानती थी कि उसका मर्द चोर है, वह घूस लेता है···। और यह भी जानती है कि उसके लिए मैंने कोर्ट के कठघरे में खड़े होकर शुरू से आखिर तक झूठ कहा है···

कुन्दनलाल कहता—चलो यार, बहुत रात हो गयी है, घर चलो, रोओ मत···

सुललित किसी तरह घर जाना नहीं चाहता। कलारी के दरवाजे में उस समय ताला बन्द हो गया था। लेकिन दरवाजे के सामने छोटा एक आँगन सा था, दीवाल से घिरा हुआ। वहीं उसी बेंच पर वह लम्बा होकर सो जाता है।

इसी तरह कुछ दिन कटे। इन कुछ दिनों में ही चैटर्जी मानो दूसरी तरह का मनुष्य हो गया। सारे क्षण उसके मुँह में वही एक बात थी। क्यों ऐसा हुआ ! क्यों आरती बैनर्जी साहब को छोड़कर चली आयी ! क्यों उसने पति को त्याग दिया ? पति पर घृणा करके ? पति से क्या झगड़ा करके निकल आयी आरती ?

उसने कुन्दनलाल से कहा—और एक दिन मुझे वहाँ ले चलो यार···और एक रोज···

कुन्दनलाल ने एक दिन जो पागलपन किया है, वह पागलपन अब वह फिर करना नहीं चाहता। केसर बाई का कारबार नष्ट हो जायेगा। महफिल नष्ट होने के डर से कौन अब केसर बाई के घर जायेगा ?

और उस दिन से ही केसर बाई का भी जाने कैसा मन बदल गया था। कुन्दनलाल वगैरह को भगा देने के बाद से केसर बाई की तबीयत बिगड़ गयी थी।

उस दिन फिर गाने-बजाने की महफिल जमाने का मन था उस्तादजी का।

उस्तादजी के अपने हाथों से गढ़ी हुई थी वाईजी। इस मुहल्ले में केसर वा. को ले आने के वाद से ही आमदनी वढ़ गयी थी उसकी। गली-मुहल्ले के और सब घरों की वनिस्वत इस घर की तरफ ही सवकी ज्यादा नजर थी। केसर वा. सिर्फ गाना ही नहीं गाती, नाच भी सकती है। सुर्मा लगायी आँखों का कटाक्ष देखकर कितने ही वड़े-वड़े घरानों से उठती उमर के छोकरे केसर वाईजी के पैरों के सामने वड़े-वड़े नोट नजराने में देते थे, महफिल के वीच में ही नशे के शुरूर में चूर सँभल न पाने की वजह से ढुलक पड़ते थे।

केसर वाई लेकिन उस तरफ भौंहें उठाकर भी न देखती। उसके गले का सुर पर्दे से पिछल नहीं सकता था, लय कभी कटती नहीं थी, ताल फेरने के वक्त कभी एक सींक भी भूल नहीं करती थी वह। सलमा-चुनरी की घूँघट खींचकर नाचते-नाचते जव वह भीतर से महफिल में आकर घुमती, तव दर्शक मुँह वाकर पागल के समान गला वढ़ाकर रास्ता देखते कि कव वह घूँघट खोलेगी, कव वह तिरछी नजर से सवकी तरफ कटाक्ष करेगी, कितनी देर में केसर वाई घंघरिया हिलाती हुई पैर जोड़कर महफिल में वैठेगी। तव तक सिर का घूंघट कव खिसक पड़ा, केसर वाई को ख्याल नहीं रहता था। तव उसकी चुन्नट लगायी हुई तहायी घँघरिया गोल होकर उसके चारों तरफ वेलवेट की जाजम पर पद्म-पुष्प की पँखुड़ियों के समान फैल जाती है। और उसी हालत में वह कभी वायाँ हाथ और कभी दायाँ हाथ अपने भक्तों की तरफ वढ़ा देती। और उसके साथ ही वही आँखों की तिरछी नजर। वह तिरछी नजर तो सिर्फ नजर नहीं है, मानो इस्पात की धार लगी छुरी है। वह छुरी मानो सीधे भक्तों के कलेजों में जाकर विंधती। उसी कलेजा फाड़नेवाले दर्द के आनन्द में भक्त लोग छटपटा उठते-उठते, मुँह से तारीफ की मानसिक रूप से चीत्कार निकल पड़ती—शावस···शावास···

और कोई-कोई कह उठता—शुभानअल्ला···शुभानअल्ला···

और साथ-ही-साथ केसर वाई के मेंहदी-रँगे पैरों के सामने नोटों का पहाड़ जम जाता। और तव केसर वाई के कृतज्ञता-प्रकाश की वारी आती, तव सवको एक-एक करके अलहदा-अलहदा तरीके से सिर झुकाकर वह सलाम करती।

ये सव घटनाएँ लखनऊ के खानदानी मुहल्ले में प्राय: कहावत के समान फैल गयी थीं। लेकिन हठात् उस दिन जाने क्या हुआ, कुन्दनलाल और सुललित की घटना के वाद ही वह वोल उठी—वस, खतम···

सवने कहा—फिर गाना हो केसर वाईजी···

लेकिन अव नहीं। केसर वाई के एक वार 'ना' कह देने पर उसे हिलाने-डुलाने का रास्ता नहीं था। नहीं तो नहीं। किसी की ताकत नहीं थी कि उससे

उस्तादजी भी अवाक् हो गये। कहना होगा कि उस्तादजी ही केसर बाई के गुरु थे। इन्हीं उस्तादजी ने एक दिन केसर बाई को तालीम देकर इतना गुणी बनाया था, केसर बाई का सुनाम बढ़ाया था। वे ही उस्तादजी केसर बाई की जिद देखकर दुखी हुए। वे सीधे भीतर आकर बोले—यह क्या किया बिटिया?

केसर बाई बोली—ना, आज मैं गाना नहीं गाऊँगी···

—लेकिन वे लोग जो बैठे हैं, वे सब जो गाना सुनना चाहते हैं···

केसर बाई बोली—उन लोगों से कह दीजिए उस्तादजी, आज मेरी तबीयत खराब है···

उस्तादजी ने तो भी एक बार अनुरोध किया—तुम्हारी तबीयत खराब है, यह बात ही तुम एक बार मजलिस में आकर खुद ही कह आओ न···

—ना—ना—ना···कभी नहीं, आप अभी जाइए उस्तादजी, मेरे सिर में दर्द हो रहा है···

उस्तादजी ने फिर दबाव नहीं डाला। उस्तादजी जानते थे कि दबाव डालने पर भी केसर बाई उनकी बात नहीं सुनेगी। बड़ी जिद्दी लड़की है केसर बाई। तमाम दिनों से ही केसर बाई को देखते आ रहे हैं उस्तादजी। सचमुच छुटपन से अपने हाथों से तालीम देकर उन्होंने उसे बड़ा किया है। वही उस दिन की छोटी लड़की ने आज उनके इस मुहल्ले में नाम कमाया है। लेकिन उसे चिढ़ाने की भी हिम्मत नहीं होती उस्तादजी की। अगर एक बार केसर बाई का मिजाज बिगड़ जाये तो तब फिर उल्टी मुसीबत बरपा हो जायेगी। तब और किसी को पता ही नहीं देगी वह।

और कुछ न कहकर उस्तादजी धीरे-धीरे उसका कमरा छोड़ चले गये।

कहाँ से जाने क्या हो गया, कोई भी जान नहीं सका। कहाँ था सुललित, कलकत्ते के किन एक शक्तिधर चाटुज्जे का अन्तिम वंशधर किस घटनाचक्र से आकर हाजिर हुआ था लखनऊ में, और उसकी भेंट हो गयी थी कुन्दनलाल से। और उसी सूत्र से केसर बाई के साथ उसका भाग्य जुड़ गया।

दूसरे दिन फिर सुललित आया। कुन्दनलाल को देखते ही बोला—चलो यार, केसर बाई के घर चलें···

कुन्दनलाल ने कहा—जा तो सकते हैं, लेकिन रुपये?

—रुपये?

रुपयों की बात सुनकर थोड़ी देर कुछ सोचा। उसके बाद बोला—रुपये मैं जमा ले सकूँगा। कितने रुपये लगेंगे? मैं अकेला जाऊँगा, तुम और मैं, और

उस्तादजी के अपने हाथों से गढ़ी हुई थी वाईजी। इस मुहल्ले में केसर वाई को ले आने के वाद से ही आमदनी वढ़ गयी थी उसकी। गली-मुहल्ले के और सब घरों की वनिस्वत इस घर की तरफ ही सवकी ज्यादा नजर थी। केसर वाई सिर्फ गाना ही नहीं गाती, नाच भी सकती है। सुर्मा लगायी आँखों का कटाक्ष देखकर कितने ही वड़े-वड़े घरानों से उठती उमर के छोकरे केसर वाईजी के पैरों के सामने वड़े-वड़े नोट नजराने में देते थे, महफिल के वीच में ही नशे के गुरूर में चूर सँभल न पाने की वजह से ढुलक पड़ते थे।

केसर वाई लेकिन उस तरफ भौंहें उठाकर भी न देखती। उसके गले का सुर पर्दे से पिछल नहीं सकता था, लय कभी कटती नहीं थी, ताल फेरने के वक्त कभी एक सींक भी भूल नहीं करती थी वह। सलमा-चुनरी की घूंघट खींचकर नाचते-नाचते जव वह भीतर से महफिल में आकर घुमती, तव दर्शक मुँह वाकर पागल के समान गला वढ़ाकर रास्ता देखते कि कव वह घूंघट खोलेगी, कव वह तिरछी नजर से सवकी तरफ कटाक्ष करेगी, कितनी देर में केसर वाई घंघरिया हिलाती हुई पैर जोड़कर महफिल में वैठेगी। तव तक सिर का घूंघट कव खिसक पड़ा, केसर वाई को ख्याल नहीं रहता था। तव उसकी चुन्नट लगायी हुई तहायी घँघरिया गोल होकर उसके चारों तरफ वेलवेट की जाजम पर पद्म-पुष्प की पँखुड़ियों के समान फैल जाती है। और उसी हालत में वह कभी वायाँ हाथ और कभी दायाँ हाथ अपने भक्तों की तरफ वढ़ा देती। और उसके साथ ही वही आंखों की तिरछी नजर। वह तिरछी नजर तो सिर्फ नजर नहीं है, मानो इस्पात की धार लगी छुरी है। वह छुरी मानो सीधे भक्तों के कलेजों में जाकर विंधती। उसी कलेजा फाड़नेवाले दर्द के आनन्द में भक्त लोग छटपटा उठते-उठते, मुंह से तारीफ की मानसिक रूप से चीत्कार निकल पड़ती—शावस···शावास···

और कोई-कोई कह उठता—शुभानअल्ला···शुभानअल्ला···

और साथ-ही-साथ केसर वाई के मेंहदी-रँगे पैरों के सामने नोटों का पहाड़ जम जाता। और तव केसर वाई के कृतज्ञता-प्रकाश की वारी आती, तव सवको एक-एक करके अलहदा-अलहदा तरीके से सिर झुकाकर वह सलाम करती।

ये सव घटनाएँ लखनऊ के खानदानी मुहल्ले में प्रायः कहावत के समान फैल गयी थीं। लेकिन हठात् उस दिन जाने क्या हुआ, कुन्दनलाल और सुललित की घटना के वाद ही वह वोल उठी—वस, खतम···

सवने कहा—फिर गाना हो केसर वाईजी···

लेकिन अव नहीं। केसर वाई के एक वार 'ना' कह देने पर उसे हिलाने-डुलाने का रास्ता नहीं था। नहीं तो नहीं। किसी की ताकत नहीं थी कि उससे

'हाँ' कहा था।

उस्तादजी भी अवाक् हो गये। कहना होगा कि उस्तादजी ही केसर बाई के गुरु थे। इन्हीं उस्तादजी ने एक दिन केसर बाई को तालीम देकर इतना गुणी बनाया था, केसर बाई का सुनाम बढ़ाया था। वे ही उस्तादजी केसर बाई की जिद देखकर दुखी हुए। वे सीधे भीतर जाकर बोले—यह क्या किया बिटिया ?

केसर बाई बोली—ना, आज मैं गाना नहीं गाऊँगी···

—लेकिन वे लोग जो बैठे हैं, वे सब जो गाना सुनना चाहते हैं···

केसर बाई बोली—उन लोगों से कह दीजिए उस्तादजी, आज मेरी तबीयत खराब है···

उस्तादजी ने तो भी एक बार अनुरोध किया—तुम्हारी तबीयत खराब है, यह बात ही तुम एक बार मजलिस में जाकर खुद ही कह आओ न···

—ना—ना—ना···कभी नहीं, आप अभी जाइए उस्तादजी, मेरे सिर में दर्द हो रहा है···

उस्तादजी ने फिर दबाव नहीं डाला। उस्तादजी जानते थे कि दबाव डालने पर भी केसर बाई उनकी बात नहीं सुनेगी। बड़ी जिद्दी लड़की है केसर बाई। तमाम दिनों से ही केसर बाई को देखते आ रहे हैं उस्तादजी। बचपन से अपने हाथों से तालीम देकर उन्होंने उसे बड़ा किया है। वही उस दिन की छोटी लड़की ने आज उनके इस मुहल्ले में नाम कमाया है। लेकिन उसे चिढ़ाने की भी हिम्मत नहीं होती उस्तादजी की। अगर एक बार केसर बाई का मिजाज बिगड़ जाये तो तब फिर उल्टी मुसीबत बरपा हो जायेगी। तब और किसी को पता ही नहीं देगी वह।

और कुछ न कहकर उस्तादजी धीरे-धीरे उसका कमरा छोड़ चले गये।

कहाँ से जाने क्या हो गया, कोई भी जान नहीं सका। कहाँ था सुललित, कलकत्ते के किस एक शक्तिधर चाटुर्ज्ये का अन्तिम वंशधर किस घटनाचक्र से आकर हाजिर हुआ था लखनऊ में, और उसकी भेंट हो गयी थी कुन्दनलाल से। और उसी सूत्र से केसर बाई के साथ उसका भाग्य जुड़ गया।

दूसरे दिन फिर सुललित आया। कुन्दनलाल को देखते ही बोला—चलो यार, केसर बाई के घर चलें···

कुन्दनलाल ने कहा—जा तो सकते हैं, लेकिन रुपये ?

—रुपये ?

रुपयों की बात सुनकर थोड़ी देर कुछ सोचा। उसके बाद बोला—रुपये मैं जमा ले सकूँगा। कितने रुपये लगेंगे ? अकेला जाऊँगा, तुम और मैं, और

कोई नहीं रहेगा···कितने रुपये लगेंगे तुम बताओ ?

कुन्दनलाल बोला—लेकिन उसका मुजरा तो बहुत बड़ा है, घर में बुला
पर पाँच हजार रुपए लगेंगे।

—और वहाँ उसके घर जाने पर ?

—सो मैं जानता नहीं यार, मैं पूछकर आऊँगा। पाँच सौ से कम न
लगेंगे।

—पाँच सौ रुपये। पाँच सौ रुपयों का इन्तजाम मैं कर लूँगा। मेरी म
की दी हुई एक हीरे की अंगूठी है, उसे ही बन्धक रख दूँगा बाजार में···

—यही ठीक है। मैं जाऊँगा···

सुललित बोला—नहीं यार, तुम आज ही जाओ, अभी जाओ···कित
रुपसे लगेंगे तुम जानकर आओ···

जिस सुललित चटर्जी ने एक दिन अपने मुहल्ले के क्लब के आकर्षण
दिन-रात उसके पीछे समय और रुपये खर्च किये और उसके लिए चिन्ता-विचा
किया, वही सुललित फिर एक बाईजी के आकर्षण में तब एकदम पागल हो उठा
और एक बार वह उसे देखना चाहता है, और एक बार वह उसके नजदी
जाना चाहता है। और एक बार वहाँ जाकर आमने-सामने उससे पूछना चाहत
है, बात करना चाहता है उससे—आरती, तुमने यह क्या किया ? मैंने तो य
नहीं चाहा था ! मैंने तो अपना सर्वनाश करके तुम्हें सुखी देखना चाहा था
मैंने जीवन में जो नहीं किया, वही झूठ बात बोलकर बैनर्जी साहब को सा
अपराधों से मुक्त करना चाहा था। तो फिर तुमने क्यों ऐसा किया ? किसक
लिए किया ?

उस दिन के कोर्ट की वह घटना भी उसे याद आने लगी।

बैनर्जी साहब बहुत बड़े गजेटेड अफसर हैं। घूस लेने के अपराध में रं
हाथों पकड़ लिये गये थे। एक-एक करके सब गवाह बैनर्जी साहब के खिला
गवाही दे गये थे। आसामी पक्ष की जिरह के दिन उनके वकील ने जिरह क
सुललित से।

—आप क्या आसामी मिस्टर बैनर्जी को पहले पहचानते थे ?

सुललित बोला—नहीं।

—तो फिर उनकी स्त्री को क्या पहचानते थे ?

—हाँ।

आसामी पक्ष के एडवोकेट ने इस बार थोड़ा निश्चिन्त होकर जज साह
की तरफ देखा। बल्कि एक खास तरह के भेद-भरे इशारे से समझाना चाहा क

हुजूर समझें फरियादी पक्ष के गवाह का मतलब।

—तो फिर आप मंजूर करते हैं कि आप आसामी की स्त्री माने मिसेज़ बैनर्जी को पहचानते थे ?

सुललित बोला—मैं तो मंजूर करता हूँ कि मैं पहचानता था।

—शादी के पहले से ही पहचानते थे, या शादी के बाद उनसे आपकी जान-पहचान हुई थी ?

—शादी के पहले से ही पहचानता था।

—आपके साथ सिर्फ उनकी जान-पहचान नहीं, उनसे आपका नजदीकी मेल-जोल था, यही बात है न ?

—हाँ।

—आपके साथ क्या उनकी शादी की बातचीत सब पक्की हो गयी थी ?

सुललित बोला—हाँ।

—उसके बाद जब आपके बदले मिस्टर बैनर्जी से उनकी शादी हो गयी तब से ही आप मिस्टर बैनर्जी से बदला लेने की कोशिश कर रहे थे, यही बात है न ?

इतनी जिरह तक पहुँचकर सुललित मानो कुछ संकोच में पड़ गया। हठात् उसके मन में नाच उठी आरती के मुँह की दशा। उस दिन की वे सब बातें भी उसे याद आने लगी—एक दिन तो तुमने मुझसे विवाह करना चाहा था सुललित दादा, एक दिन तो तुम मुझे प्यार करते थे, आखिर उसी हक से तुम मेरे पति को छोड़ दो, मेरी बात एक बार सोचो, मेरा सुख, मेरा भविष्यत्, मेरा संसार, मेरे लड़के-बच्चों की बात भी एक बार सोचो। एक दिन तो तुमने मुझे चाहा था, आज भी अगर तुम मुझे फिर चाहो, तो मैं वह भी तुम्हें दे सकती हूँ···

आसामी पक्ष के वकील ने फिर सवाल किया—क्यों, बोल क्यों नहीं रहे हैं, मेरी बात का जवाब दीजिए···

हठात् सुललित मानो फिर होश में आया।

बोला—क्या बोल रहे हैं बोलिए ?

वकील बोला—मिस्टर बैनर्जी के साथ आरती देवी की शादी हो जाने के बाद आपने मिस्टर बैनर्जी से बदला लेना चाहा था, यह बात क्या सच है ?

—हाँ, सच है।

—सच ? सचमुच क्या मिस्टर बैनर्जी से आपको जलन हुई थी ? सचमुच क्या आपने उनका नुकसान करना चाहा था ?

—हाँ-हाँ, सब सच है ! मैंने चाहा था कि मिस्टर बैनर्जी को जेल की [illegible] र बैनर्जी [illegible] में [illegible] पाने पर [illegible] मैं

फिर अपनी मुट्ठी में पा जाऊँगा।

हठात् सारी अदालत में एक मृदु गुंजन उठा। सब चमक उठे। मुख्य सरकारी गवाह यह क्या बोल रहा है। सरकार के खिलाफ ही कह रहा है सरकारी गवाह! यह क्या हुआ? तो फिर क्या सरकारी गवाह ने भी घूस खायी?

कोर्ट उस समय लोगों से खचाखच भर गयी थी। वैनर्जी साहब के आफिस के बाबू लोग भी सब मामला सुनने आ गये थे। उनको बड़ा भरोसा था कि उनके साहब को जेल की सजा मिलेगी। जेल होने पर वे लोग चन्दा करके फीस्ट करेंगे। कैंटीन में जाकर डिब्बों रसगुल्ला-राजभोग उड़ायेंगे। वह सब सपना एक मिनिट में मिट्टी में मिल गया।

सरकारी वकील ने खड़े होकर कहा—मि लार्ड, हमारा गवाह होस्टाइल हो गया है, आज की सुनवायी मुल्तवी करने की कृपा कीजिए···

लेकिन सुललित उस वक्त वेपरवा हो गया था। वह बोल उठा—नहीं धर्मावतार, मैं मंजूर करता हूँ कि मैंने अन्याय करके मिस्टर वैनर्जी को पकड़ा है। मिस्टर वैनर्जी का कोई कुसूर नहीं है, मिस्टर वैनर्जी निष्पाप हैं···मिस्टर वैनर्जी एक आनेस्ट आफिसर हैं···

ये सब घटनाएँ कितने ही दिनों पहले की हैं, लेकिन सबकुछ मन में है सुललित के। कुन्दनलाल को नजदीक पाकर शुरू से सब बातें बोल गया वह। वही मेजर भूधर गांगुली की बात, वही कलकत्ते के दिनों की बात, वही विलासपुर में अपने घर में आरती के आने की बात।

लेकिन सिर्फ एक प्रश्न ही उसके मन में कांटे की तरह खचखचाकर चुभने लगा।

कुन्दनलाल बातें सुन रहा था। वह बोला—फिर क्या हुआ?

—उसके बाद? उसके बाद नौकरी छोड़कर मैं बिना उद्देश्य के सारी इण्डिया में घूमने लगा।

—और वैनर्जी साहब?

—वैनर्जी साहब वेकसूर रिहा होकर फिर नौकरी में बहाल हो गये। लेकिन उनकी बाद की खबर मैंने रखी नहीं यार···

सचमुच वह खबर रखने का कोई इन्तजाम करने की जरूरत नहीं समझी सुललित ने। एक दिन जैसे उसने कलकत्ता से चले आने के बाद फिर वहाँ की खबर रखने की कोई जरूरत नहीं समझी, उसी तरह विलासपुर की नौकरी छोड़ आने के बाद भी फिर उस जगह से अपना कोई सम्बन्ध रखने का प्रयोजन नहीं समझा। अपनी जिन्दगी को लेकर तब उसने जुआ खेला। जीवन में जो कभी नहीं किया, तब उसने वही किया। पेट भरकर विष पिया, साथ ही

इतना विष पीकर भी नीलकण्ठ नहीं हो सका, उसी बात में था उसका सबसे बड़ा दुःख । मनुष्य के संसार त्यागकर वन में चले जाने की घटना भी इतिहास में है । लेकिन बीते दिनों की याद न भूल पाना कितना बड़ा अभिशाप है, यह मुललित के समान इस तरह और कोई समझ नहीं सका ।

इसीलिए इतने दिनों के बाद हठात् वह आरती को देख सका तो वह फिर अपने को सँभाल नहीं सका ।

कुन्दनलाल ने कहा—तुम फिक्र मत करो यार, तुम घबड़ाओ मत, [illegible] आज ही केसर बाई से मुलाकात करूँगा ।

कुन्दनलाल । कुन्दनलाल वाजपेयी । वाजपेयी-वंश की सन्तान होने से क्या होगा, कुन्दनलाल छोटी उम्र में ही बिगड़ गया था । बाप का कारबार था सोने-चाँदी का । दूकान से हमेशा रुपये-पैसे चोरी जाते । एक दिन वह रँगे हाथों पकड़ा गया । कानपुर की इतनी बड़ी सोने-चाँदी की दूकान, कब कितने रुपये कैश-बाक्स में घुसते हैं और कितने रुपये कैश-बाक्स से निकल जाते हैं, उसका हिसाब रखना क्या बाप के लिए सब समय सम्भव था ? लड़का बड़ा हो रहा था, उसे भी तो कारबार सिखाना होगा । वही तो एक दिन बड़ा होकर बाप का कारबार देखेगा ।

लेकिन जो डूबने को ही है, उसे कौन बचायेगा ? संसार में बचानेवाले लोगों की जैसे कमी नहीं है, उसी तरह डुबानेवाले लोगों की संख्या भी तमाम है । लेकिन आजकल जिस तरह डुबानेवाले लोगों की संख्या दिन-दिन बढ़ती जा रही है, बचानेवाले लोगों की संख्या भी उसी तरह दिन-दिन कम होती जा रही है । यही डर की बात है ।

यही डर हुआ था कुन्दनलाल वाजपेयी के पिता को । और वही डर एक दिन सच के समान साबित हुआ ।

एक दिन बिना किसी बातचीत के एक औरत हठात् वाजपेयीजी की दूकान में आकर हाजिर हुई । भरी जवानी का चेहरा । माँग पर सिंदूर बिन्दी । हाथों में बिल्लौरी काँच की चूड़ियाँ । धुनरिया-साड़ी ।

—क्या चाहिए ?

औरत ने कहा—आपका लड़का कल मेरे घर गया था, उसने मेरे घर में रात काटी, उसके बाद मुझे रुपया दिये बिना भाग आया...

वाजपेयीजी अवाक् हो गये । उन्होंने पूछा—औरत तुम कौन हो ?

—मैं ? मैं बाजार की औरत हूँ ।

—बाजार की औरत !

मन-ही-मन में बड़ा गुस्सा आया वाजपेयीजी को । [illegible]

[illegible] किया । उनका मन [illegible]

मारकर लड़की का मुँह मोड़ दें।

लेकिन नहीं, गुस्सा और चाण्डाल दोनों एक ही बात है। गुस्सा होने से रोजगार जैसे नहीं चलता, शरीर भी उसी तरह नहीं टिकता। वे कुछ नहीं बोले। मन की बात मन में रखकर वे बोले—वह तुम्हारा कितना रुपया चाहता है?

लड़की ने कहा—मेरा निजी रेट डेढ़ सौ रुपये, शराब का खर्चा अस्सी रुपये—सब मिलाकर यही दो सौ तीस रुपये···

बूढ़े वाजपेयीजी ने और कुछ नहीं कहा। कैस-बाक्स से उसी मिनिट दो सौ तीस रुपये दे देने का हुकुम दे दिया।

रुपये देने के बाद लड़की चली ही जा रही थी, लेकिन वाजपेयीजी ने उसे बुलाया—सुनो···

लड़की फिरकर खड़ी हुई।

वाजपेयीजी ने कहा—देखो, एक बात तुमसे कह दूं, इस बार अगर कभी मेरा लड़का तुम्हारे घर में जाये तो उसे घुसने मत देना। और घुसने देने पर जिम्मा तुम्हारा। मैं अपने लड़के की मौज का खर्चा न सँभालूंगा। आज से वह मेरा घर से निकाला हुआ त्याज्यपुत्र है···

लड़की बात सुनकर कुछ क्षण चुपचाप खड़ी रही। रुपये तब तक उसने अपने बटुए में रख लिये थे।

वाजपेयीजी बोले— जो किया सो किया, अब यहाँ से दूर हो जाओ···निकल जाओ मेरी दूकान से, और कभी मेरे पास मत आना···जाओ···

लड़की फिर एक पल भी खड़ी नहीं हुई। सीधे दूकान से निकलकर रास्ते में उतर गयी।

और उसी दिन वाजपेयीजी ने कुन्दनलाल को बुलाकर बाहर निकाल दिया। वे बोले—जाओ, आज से इस घर का दरवाजा तुम्हारे लिए हमेशा के लिए बन्द हो गया, तुम आज से अब मेरे लड़के नहीं हो···

यही हुआ कुन्दनलाल का आदि-इतिहास।

उसी समय से कुन्दनलाल घर से निकला हुआ है। तब से ही कुन्दनलाल आ घुसा इस गली-मुहल्ले में। लखनऊ के खानदानी रईस आदमियों के उठती उम्र के लड़कों को देखकर कुन्दनलाल उन्हें पकड़ता है। और उन्हें शराब पिलाकर इस लाइन में खींच लाता है। इस शहर में जितने बड़े लोगों के शराबी लड़के हैं, उन सबने अपने हाथों में खड़िया पायी है कुन्दनलाल से। कुन्दनलाल ही बना है उनका आदि-गुरुदेव। उसके बाद उनमें से बहुतेरे लड़कों ने गुरु की विद्या सीख ली है, गुरु को छोड़कर वे खुद भी एक-एक गुरुदेव बन गये हैं। लेकिन उससे कुन्दनलाल का कोई नुकसान नहीं हुआ। कुन्दनलाल का सचमुच कोई नुकसान भी नहीं होता किसी तरह। उसका ऐसा हाथ का यश है कि उनके

गाहकों की भी कमी नही होती। कुन्दनलाल को भी गाहकों की कमी नहीं रहती। कुन्दनलाल एक-एक कप्तान को पकड़ता और उसे अपने साथ बाईजी के घर में लिवा जाता, उन्हें शराब पीना सिखाता, उसके बाद जितने दिनों तक वे फकीर न बन जाते उतने दिनों उनके पीछे लगा रहता, उनके पैसों से महफिल चलाता। और उसके बाद वे जब एकदम समाज से बाहर हो जाते तब उन्हें छोड़कर फिर दूसरे गाहकों की खोज में घूमता।

इसी तरह कुन्दनलाल का काम मजे में चल रहा था। इस बार आया यह चैटर्जी। जाने कैसे मानो कुन्दनलाल को गन्ध मिली कि इस बंगाली छोकरे के हाथ मे माँ के कुछ गहने हैं, और तिस पर उसे शराब के नशे का शौक है। उसी दिन से कुन्दनलाल इस बंगाली कप्तान के पीछे पड़ गया। पहले-पहल जरूर अपने पैसों से थोडी-बहुत शराब पिलाकर उसने अपनी परले सिरे की उदारता दिखानी शुरू की। उसके बाद उसके साथ उसके घर जाकर देखा कि छोकरे का कोई नही है देश-ससार में। घर में सिर्फ एक नौकर है। और वह भी बूढ़ा।

तब से ही उसने अपने दिमाग में मतलब तय कर लिया कि इस बंगाली छोकरे का सिर फिराना होगा। इसीलिए उसे वह अपने साथ बदनाम गली-मुहल्ले में ले गया।

लेकिन वहाँ जाकर बंगाली बाबू ऐसा तमाशा खडा कर देगा यह कौन जानता था!

सोने-चाँदी के कारबारी मालिक का लडका है कुन्दनलाल। गहने-गाँठ के दर-दाम का एक अन्दाज है उसे छुटपन से ही। अँगूठी को अच्छी तरह परखा कुन्दनलाल ने। हीरे के पत्थर से जड़ी हुई सोने की अँगूठी।

सुललित दोस्त के हाथ में अँगूठी देकर ही बेफिक्र हो गया।

वह बोला—तुम आज दोस्त, इसे बन्धक रखकर जो पाओ वह दे आओ, मैं और एक बार जाऊंगा, उसका माना नही सुनूंगा यार, सिर्फ उसे एक बार देखूंगा, उससे सिर्फ एक बात पूछूंगा, तुम जाओ···

चैटर्जी को कलियारी में विठालकर कुन्दनलाल चला। दीन-दुनिया का मालिक कब किसके नसीब में क्या जुटा देता है, यह सिर्फ अकेला वही जानता है। अँगूठी को रास्ते के टिमटिमाते उजाले मे फिर अच्छी तरह कुन्दनलाल ने परखकर देखा। असली हीरा। बंगाली बाबू उसका दर-दाम जानता नहीं, इसीलिए बिना हिचक के उसने उसे दे दिया। दो सौ रुपये क्यों, दस हजार से कम नहीं होगा उसका दाम। दाम की जाँच करते ही दीन-दुनिया के मालिक के उद्देश्य हाथ जोड़कर उसने अपने माथे पर लगाया—जय बजरंग बली, जय काली माई, सबकुछ तेरी किरपा···

उसके बाद अँगूठी लेकर उसे एक बार चूमा। और उसके बाद उसे भीतर के पाकेट में रखकर एक सिगरेट जलाकर शरीर को दम दिया।

साथ-ही-साथ सामने के एक आदमी से एकदम आमने-सामने भिड़ जाने के समान हुआ।

—ए साले, अन्धा है क्या ! आंख से देख नहीं सकता ?

आदमी कुन्दनलाल को देखकर एकदम सकपका गया।

—सलाम कुन्दनलालजी !

—कौन ?

नशा पहले से कड़ा था कुन्दनलाल को। लेकिन दूसरे के मुँह से अपना नाम सुनकर एक तीखी नजर से देखते ही उसे लगा मानो पहचाना-पहचाना मुँह है।

—मैं सरदार अली हूँ। मैं हुजूर के पास ही जा रहा था।

सरदार अली ! नाम सुनकर ही कुन्दनलाल अकबका गया। केसर बाई का निजी खिदमतगार सरदार अली। खिदमतगार भी और दरवानों का दरवान भी। मजलिस जमने पर वह जिस तरह माल खरीदकर ले आता, उसी तरह लाठी भी पकड़ सकता था। गुण्डों से मुकाबला करने के लिए सरदार अली की जरूरी पुकार होती थी। और जब कोई काम नहीं रहता तब वह भांग खाकर मौज करता रहता है।

यह ऐसा सरदार अली क्यों उसके समान मामूली आदमी को बुलाने जा रहा था, यह समझ नहीं पाया कुन्दनलाल।

वह बोला—क्यों ? मुझे बुलाने क्यों जा रहे थे सरदार अली ?

—हुजूर, बाईजी ने आपको बुलाया है…

—केसर बाईजी ! मुझे बुलाया है ! तुम ठीक जानते हो मुझे बुलाया है बाईजी ने ?

—जी हां।

—सचमुच मुझे बुलाया है ?

बोलकर मन-ही-मन में उसने एक बार दुर्गा माई को याद कर लिया—जय बजरंग बली, जय काली माई…

—जी हां।

—लेकिन क्यों ? मुझे क्यों बुलाया ?

—हुजूर, आप चलिए, बाईजी साहिबा की तबीयत अच्छी नहीं है, गाना-बजाना बन्द कर दिया है कल से…

—लेकिन हुआ क्या है ?

सरदार अली बोला—आप चलिए न, आप ही बाईजी साहिबा से पूछिए

—चलो, चलो—पैर बढ़ाकर चलो बाबा, देखूँ क्या हुआ है। उस्तादजी कहाँ हैं ?

—उस्तादजी भी हैं वहाँ, लेकिन उनसे बातचीत कुछ नहीं हो रही है, कल से बाईजी साहिबा का ऐसा ही हाल चल रहा है···

कुन्दनलाल ने ज्यादा वक्त नहीं गँवाया। जल्दी-जल्दी पैर बढ़ा-बढ़ाकर आगे-आगे चलने लगा। ऐसा नसीब तो मामूली तरह से होता नहीं मनुष्य का। जो बाईजी पाँच सौ रुपये पेशगी न रखने पर मुँह नहीं खोलती, उसने ही क्या उसे बुलवा भेजा है ! चलो, चलो, सरदार अली, आगे बढ़ो···

बदनाम गली में घुसते ही वही जाना-पहचाना चेहरा। वही फूलवाली, वही अतर, वही खुशबू, वही पान-जर्दा, वही गजल और घुँघरू और सारंगी-तबले की मीठी आवाज। और उसके साथ मुल-पूरी, मलाई-बरफ और शराब और हल्ला।

लेकिन सिर्फ केसर बाई के घर के दुतल्ले में ही अँधेरा नहीं था। दूसरे दिनों की तरह उस दिन घुँघरू और तबले और सारंगी की आवाज नहीं आ रही थी। सब मानो गूंगे हो गये हों। सारे मकान मानो गूंगे हो गये हों अकस्मात्।

केसर बाई के घर की सीढ़ियों के सामने दूसरे दिनों की तरह उस दिन भी एक टिमटिमाती हुई धुँए की दाग लगी बत्ती जल रही थी।

सरदार अली आगे-आगे जा रहा था। वह बोला—आइए-आइए साब···

सीढ़ियों से चढ़ते-चढ़ते कुन्दनलाल सोच रहा था, एक दिन कितना अपमान किया है उसका उस्तादजी ने, एक दिन उसके यहाँ आने के लिए कितनी बातें सुनायी हैं सबने। और आज उसे कितनी खातिर से बुलाकर लिवा ले जाया जा रहा है। यह भी नसीब है। कुन्दनलाल के हाथ में अगर उस वक्त ऐसे रुपये होते तो वह एक हाथ बढ़ा देता। वही केसर बाई जब पहले-पहल इस लाइन में आयी, तब कुन्दनलाल को याद है इस बदनाम गली-मुहल्ले के बाशिन्दों में आहट फैल गयी थी। एकदम ताजी-टटकी बाईजी, तब ज्यादा मुजरा नहीं लेती थी। दिमाग में मिट्टी पर एकदम पैर नहीं पड़ते थे उसके।

और आज ?

और खुद उसी मालकिन ने सरदार अली के जरिये उसे बुलवा भेजा है। इसका बदला कुन्दनलाल लेगा ही।

सरदार अली चलते-चलते सीधे एकदम ऊपर चढ़ा जा रहा था। कुन्दन-लाल ने पूछा—आज सब चुपचाप क्यों हैं सरदार अली ?

सरदार अली बोला—वही जो बताया सेठजी, बाईजी साहिबा की

यत गड़वड़ हो गयी है···

एकदम ऊपर के खण्ड में खास केसर वाई के सोने के कमरे के सामने ले कर एक छोटे कमरे में कुन्दनलाल को वैठने को कहकर वह खुद भीतर चल गा।

साथ-ही-साथ ओढ़नी ओढ़कर निकल आयी केसर वाई।

कुन्दनलाल फर्श से उठ खड़ा हुआ। सिर झुकाकर सलाम करके बोला मुझे इत्तिला दी है वाईजी साहिवा ?

केसर वाई ने कहा—हाँ···

—वोलिए, क्या काम है ? गुलाम तो हाजिर है। गुलाम को हुकुम ही वह तामील करेगा ? गुलाम का नाम वाईजी साहिवा को याद है ?

—है, तुम्हीं तो कुन्दनलाल हो !

—जी हाँ, कुन्दनलाल वाजपेयी।

—तुम्हारे साथ जो कल वंगाली वावू आये थे वे कौन हैं ? ये कहाँ रहते हैं ?

—उनका नाम चैटर्जी है वाईजी साहिवा। सुललित चैटर्जी। वहुत पी हैं। वे शराव पीकर इस गली से मेरे साथ जा रहे थे अकस्मात् आपका गान सुनकर ऊपर चढ़े। आप उस वक्त वही गाना गा रही थीं···

—कौन-सा गाना ?

—वही 'डोले रे जौवन'—वही गाना सुनकर वे जाने कैसा हो गये। उ वाद मैं उसे ऊपर ले आया अपने साथ···

केसर वाई ने पूछा—संसार में उनके कौन है ?

कुन्दनलाल वोला—कोई नहीं वाईजी साहिवा, एकदम आवारा आ वहुत पीते हैं, खाली माल पीकर वेहोश रहता है···

—शादी नहीं की ?

—नहीं वाईजी साहिवा, शादी कौन करेगा उससे ? पहले फिर भी समझवूझ कर चलता था, आपके साथ मुलाकात होने के वाद से और भी हो गया है···

—क्यों ?

कुन्दनलाल वोला—सिर्फ कहता है मुझे आरती वाईजी के पास कुन्दनलाल, मैं फिर एक वार आरती को देखूंगा, मैं आरती से पूछूंग अपने पति को छोड़कर चली आयी। मुझसे सिर्फ एक वात आपसे उसने कहा है, वार-वार पूछने को कहा है···

—कौन-सी वात ?

—आप क्या वंगाली औरत हैं ?

—ी

केसर बाई ने थोड़ा सोच लिया। उसके बाद वह बोली—हाँ···

—आप लोग क्या पहले इसी लखनऊ में थे ?

—हाँ कुन्दनलाल, मैं इसी लखनऊ में जन्मी हूँ···

कुन्दनलाल ने कहा—तब तो चैटर्जी बाबू ने ठीक ही कहा था। चैटर्जी आप लोगों में से सबको पहचानते हैं। आपका नाम आरती बाई, आपके पिताजी का नाम मेजर वी० गांगुलि।

केसर बाई की दोनों आँखें तब चमक उठीं।

उसने पूछा—तुम्हारे साथ चैटर्जी बाबू की जान-पहचान कितने दिनों की है कुन्दनलाल ?

कुन्दनलाल बोला—करीब चार-पाँच साल···

—तुम्हारे चैटर्जी बाबू ने तो फिर सचमुच शादी-वादी नहीं की ?

—नहीं। मैंने तो कहा आपसे, शादी उस आदमी से कौन करेगा बाईजी साहिबा ? और शादी उनकी करवायेगा भी कौन ? दुनिया में तो कोई है नहीं उनके। एक बुड्ढा नौकर और वे, यही लेकर उनकी दुनिया है। बहुत बढ़िया सरकारी नौकरी करते थे चैटर्जी बाबू, लेकिन छोड़ दी अकस्मात्···

—क्यों छोड़ दी ?

कुन्दनलाल बोला—बैनर्जी साहब का मामला हुआ नौकरी के वक्त। उसके बाद फिर नौकरी नहीं की। चैटर्जी बाबू बोलते हैं नौकरी हराम है, कोई भला आदमी नौकरी नहीं कर सकता। नौकरी करने से लल्लोचप्पो करना पड़ता है, खुशामद करनी पड़ती है, झूठ बात बोलनी पड़ती है।

केसर बाई बोली—तो तुम चैटर्जी बाबू को अपने साथ यहाँ ले क्यों नहीं आये ?

कुन्दनलाल बोला—यहाँ चैटर्जी बाबू आयें, इतना रुपया उनके पास कहाँ है ?

—रुपया नहीं है ?

—ना बाईजी साहिबा, चैटर्जी बाबू की नौकरी चली गयी है, अब रुपया आयेगा कहाँ से ? खा भी नहीं पाते अच्छी तरह। मैं ही तो गाँठ का पैसा खर्च करके उसे माल पिलाता हूँ। भात-सब्जी हो या न हो, माल तो पीना ही होगा। नशा तो कोई छोड़ नहीं सकता···

केसर बाई मानो कुछ पल अनमनी हो गयी। केसर बाई के चेहरे की तरफ देखकर कुन्दनलाल भी कुछ अकबका गया। ऐसा तो होता नहीं केसर बाई को। इसी केसर बाई को देखने जाने के लिए मुझे नकद पाँच सौ रुपये रखने पड़ते उस्तादजी के हाथ में। कुन्दनलाल के पास कभी इतना रुपया नहीं था। बाप वाजपेयीजी के निकाल देने के बाद से सिर्फ माँग-जाँचकर चलाता आया

है। और मौका पाते ही बड़े आदमियों के शिर पर हाथ सहलाकर उन्हें जहन्नुम के रास्ते में छोड़ गया है। उसके बाद जब वे शादी करके संसारी हो गये हैं तब उन्होंने यह लाइन छोड़ दी है। तब कुन्दनलाल को भी वे फटे जूतों की तरह छोड़कर चले गये हैं। तब फिर दूसरे बड़े लोगों के लड़कों की खोज में आकाश-पाताल छूता हुआ घूमा है कुन्दनलाल।

यही हुआ कुन्दनलाल का घर से निकलने के बाद का इतिहास। यही केसर बाई जो आज उसे सरदार अली के जरिये बुलवाकर अपने खास कमरे में बुलवाकर उससे बातें कर रही है, पहले का वक्त होता तो क्या वह ऐसा करती ?

केसर बाई ने अकस्मात् कहा—अच्छा कुन्दनलाल, तुम अपने दोस्त को मेरे पास फिर एक बार ले आ सकते हो ?

कुन्दनलाल हो-हो करके हँस पड़ा।

वह बोला—आपने तो ताज्जुब की बात कही कुन्दनलाल, मैं उन्हें बुला क्या लाऊँगा,...वे खुद ही तो यहाँ आना चाहते हैं, लेकिन उस दिन से बहुत डर गये हैं वे, इसीलिए आ नहीं सक रहे हैं। और आपके पास आयें उसमें रुपये नहीं लगेंगे! आपको मजूरी नहीं देनी होगी ? वे बे-फायदा गाना सुन सकेंगे ? उनके पास तो इतना रुपया नहीं है, मैंने तो सब बताया आपको। मा के कुछ गहने थे उसके पास उन्हें ही बेच-खर्च कर इतने दिनों खाया-पिया है, अब तो एकदम फक़ीर हो गये हैं। पाकेट खाली है। मैं ही तो अपनी गाँठ की कौड़ियाँ खर्च कर अब उन्हें खिलाता हूँ।

केसर बाई ने कहा—रुपयों के लिए फिक्र नहीं करनी होगी। मैं उन्हें रुपये दूँगी...

—आप रुपया देंगी ?

—हाँ, रुपया दूँगी...

यह कहकर केसर बाई उठी, बोली—तुम बैठो कुन्दनलाल...मैं आती हूँ...

बोलकर बगल के कमरे में चली गयी केसर बाई। उसके बाद कुछ ही क्षणों में रुपये लेकर लौट आयी।

रुपये कुन्दनलाल के हाथ में देकर वह बोली—यह लो, इसमें तीन सौ रुपये हैं, ये तीन सौ रुपये ले लो अपने दोस्त को देना, देकर उनसे नये कपड़े खरीदने को कहना। तुम किसी से कहना मत कि मैंने उन्हें ये रुपये दिये हैं...

रुपये हाथ में लेकर कुन्दनलाल थोड़ी देर गूंगों की तरह देखता रहा केसर बाई की तरफ। यह क्या सचमुच वही केसर बाई है जो रुपया न होने पर बात नहीं करती, रुपया न होने पर उसका दर्शन मिलना ही मुश्किल है। वह रुपया

दे रही है ! यह भी खड़े होकर देखना पड़ा कुन्दनलाल को। तो फिर दुनिया में ऐसी घटना घटना भी सम्भव है ?

—जाओ, जल्दी जाओ कुन्दनलाल। तुम अपने दोस्त को आज ही यहाँ लिवा लाओ…

कुन्दनलाल के मुँह से उस वक्त फिर कोई बात निकल नहीं पा रही थी। सारी दुनिया का ही मानो अकस्मात् मतलब बदल गया कुन्दनलाल के लिए। मानो उसकी पूरी ध्यान-धारणा ही उलट गयी।

केसर बाई के घर से निकलकर एकदम सीधे रास्ते से चल पड़ा कुन्दनलाल। जय संकटमोचनजी, जय महावीरजी, जय हनुमानजी, तुम्हारी जय। एक दिन में ही इतने रुपयों का मालिक हो जायेगा कुन्दनलाल यह मानो वह सोच नहीं सका था। कुन्दनलाल आज नवाब है। पाकेट में हाथ लगाकर उसने देख लिया एक बार। बंगाली बाबू की दी हुई वही हीरे की अंगूठी पाकेट में है। वह रहे। उसके लिए एक पाकेट रख देने के बाद केसर बाई के दिये हुए तीन सौ रुपये हैं।

इतने रुपये आ गये मुवक्किल। दीन-दुनिया के मालिक की कृपा। कुन्दनलाल रुपये और हीरे की अंगूठी माथे में घिसने लगा। उसके बाद सीधे जाकर हाजिर हुआ साहुजी की कलारी में। साहुजी ने शराब का कारबार करके हाथ पक्का किया है, लेकिन साथ-ही-साथ आदमी को भी पहचान लिया है। किसके पाकेट में पैसा है और किसके पाकेट में पैसा नहीं है, यह वह आदमी का मुँह देखकर ही बोल दे सकता है।

कुन्दनलाल ने दूर से देखा चैटर्जी रास्ते की तरफ मुँह बाये देखता हुआ एक बेंच पर बैठा है। कुन्दनलाल फिर उस तरफ नहीं गया। अपने को छिपाकर बगल का रास्ता पकड़कर दूसरी तरफ चलने लगा ? लखनऊ शहर में क्या साहुजी की दूकान छोड़कर और कोई कलारी नहीं है ? साहुजी ने एक दिन पाकेट में पूँजी न होने की वजह से कुन्दनलाल की कितनी दुर्दशा की थी ! आज उसका बदला लेना अच्छा है। इस बार से जितने कप्तान पकड़ेगा उनमें से किसी को अब साहुजी की दूकान में नहीं ले जायेगा। कुन्दनलाल तो उधार का कारबार करता नहीं जो बराबर साहुजी की परवा करेगा। नगद रुपये फेंकेगा और माल पियेगा,—तुम या कोई मेरा-पराया नहीं है !

रात और भी बढ़ गयी। सुललित और भी बड़ी देर तक बैठा रहा टूटी काठ की बेंच पर। जाने कौन गिलास लेकर पास में आकर बैठा। एक हाथ में शराब से भरा गिलास और एक हाथ में कागज के ठोंगे में मूँगफली-बड़े। खूब खरे सिके हुए, एक बार चबाता वह आदमी और एक बार गिलास से चुस्की लेता !

बार … र … कि … की त … । फिर पू … —बाबजी

आप बंगाली हैं क्या ?

सुललित का उस समय बात करने का मन नहीं हो रहा था।

वह बोला—जी हाँ।

उस आदमी ने लेकिन फिर भी छोड़ा नहीं। पूछा—आप पीते नहीं हैं ?

सुललित बेमन होकर उठा। बोला—जी हाँ···

बोलकर वह वहाँ खड़ा नहीं हुआ। तब तक बहुत पी चुका था। दोनों पैर भी अपने वश में नहीं थे। रास्ते में निकलकर समझ नहीं सका किस तरफ वह जाये। कुन्दनलाल तब तक भी नहीं आया था। इतनी देर तक वह क्या कर रहा है वहाँ ! इतनी कौन-सी बातें कर रहा है आरती के साथ ? सिर्फ अंगूठी बेचकर रुपये बाईजी के हाथ में रखकर वह चला आयेगा और दिन-वक्त-तारीख ठीक कर आयेगा यह ठीक हुआ था। इसमें ही इतनी देर हो गयी ?

चलते-चलते घर की तरफ न जाकर कब फिर वह उस बदनाम गली-मुहल्ले की तरफ जा पहुँचा उसे ख्याल नहीं था। उसी फूलवाले, मलाई-बरफवालों की चिल्ल-पुकार। वही केकड़े-चिंगड़ी मछली और दलालों की भीड़। और उसके साथ वही आस-पास के घरों से ठुमरी-गजल-सारंगी-तबले की तिहाई।

एक कोई आकर सुललित की बगल में घिसकर खड़ा हुआ। सुललित ने समझा, आदमी दलाल है।

—क्या ?

—गाना सुनिएगा बाबूजी ?

सुललित उस बात का कोई जवाब दिये बिना जिस तरह चल रहा था, उसी तरह चलने लगा। सिर्फ एक दिन वह उस घर में आया था। सो भी ऐसी ही रात के वक्त। कुछ भी पहचान नहीं सका। एक घर के सामने आकर उसे लगा कि इसी घर में मानो आरती रहती है। पहले थोड़ा डर लगा उसे घुसने में। ऊपर से वैसे ही गाने का सुर बहता आ रहा था। साथ ही तबले और सारंगी के सुर का रेला चल रहा था। सीढ़ियों के मुंह पर वैसी ही टिम-टिम रोशनी जल रही थी। उसी सदर दरवाजे के सामने खड़े होकर ही वह गाना सुनने लगा सुललित।

'आओ पिया मैं सेज बिछाई···'

यह गाना भी सुललित ने आरती के मुँह से सुना था। उस्तादजी ने ठुमरी सिखाने के वक्त यह गाना भी उसे सुनाया था। सुललित एक-एक पैर करके सीढ़ियों से दुमंजिले पर चढ़ने लगा। वही ऊँची पतली ईंट की सीढ़ियाँ। पहले दिन भी वह कुन्दनलाल के साथ इन्हीं सीढ़ियों से दुमंजिले पर चढ़ा था। सीढ़ियाँ गोल घूमती हुई दुतल्ले के घर की तरफ उठी थीं। सुललित वहीं थोड़ा खड़ा हुआ। अकेले-अकेले भीतर जाने में लगा कि उसे डर-डर-सा लगने

लगा। अगर फिर कल की तरह उसे कमरे से निकाल दिया जाये !

दोनों पैरों को खूब कड़ा कर स्थिर करके रखने की कोशिश की सुललित ने। लेकिन ज्यादा शराब पीने से जो होता है वही हो रहा था। सब समझ पा रहा है वह, सब सोच सक रहा है, सबकुछ देख पा रहा है, तो भी मानो अपने ऊपर भी उसका अब कोई विश्वास नहीं रहा था। वह मानो पराधीन हो। उसके हाथ-पैर-दिमाग-मन सबकुछ मानो अब उसके वश में न हों, सब अवश थे।

तो भी दीवाल पकड़-पकड़कर सुललित किसी तरह दुमंजिले पर चढ़कर एक कमरे के सामने आकर खड़ा हुआ। इसी घर में ही क्या वह कल घुसा था? इस कमरे के भीतर जाकर ही वह मजलिस में बैठा था?

उसे लगा—यही होगा।

लेकिन आज कुन्दनलाल साथ में नहीं है। आज भी उसे अगर वे लोग भगा दें? कमरे के भीतर एक बार झाँककर वह देखने लगा। ठीक उसी तरह की फर्श पर जाजम बिछी थी, उस पर कई तकियाँ थी। तकियों पर आसरा लगाकर कुछ अधेड़ उमर के लोग एक मन से गाना सुन रहे थे। सबके सामने एक-एक गिलास था। शराब पी रहे थे सब। और पानदान। उसमें ढेर-ढेर से पान और पान का मसाला रखा था। और उसके पास ही एक पीकदानी थी। भीतर से बढ़िया खुशबू की हवा बहकर उसकी नाक में लग रही थी। पान-तम्बाकू-जर्दा-गुलाबजल-अतर-धुँआ मिली हुई एक कड़ी खुशबू।

लेकिन आरती दिखायी नहीं पड़ रही है। वह कमरे की दीवाल की तरफ उससे घिसी हुई बैठी थी। वहीं बैठा है सारंगीवाला और तबलची।

गाना उस वक्त भी सुललित के कानों में लहराता हुआ भर रहा था···

'आओ पिया मैं सेज बिछाऊँ
गरवा लागूँ करूँ तोको पियार···'

गाना जहाँ सम पर आकर पहुँचता है वहीं ठीक कल के समान ही बोल उठते हैं—सुभानअल्ला—सुभानअल्ला—शाबास—शाबास···

इतनी देर में आरती दिखायी पड़ी। ठीक कल का वही चेहरा। वही पोशाक। सिर पर पतले लाल रंग की सिल्क की जालीदार ओढ़नी।

हिल-डुलकर सीधी-तिरछी होकर वह मेहमानों की तरफ नजर मारती हुई गाना गा रही थी···

'आओ पिया मैं सेज बिछाऊँ
मैं सेज बिछाऊँ···'

'सेज बिछाऊँ' कहने के साथ-साथ सारंगीवाले उस्तादजी ने तार पर छड़ चलाकर एक मीड़ खींची। और उसके साथ-साथ ही तबलची ने बायें तबले में जाने कौन-सी एक आवाज की और आरती के घुंघरू सम में आकर झम्-झम् आवाज

कर उठे।

—कौन ? कौन है ?

अकस्मात् जाने किन लोगों ने कमरे के बाहर आकर सुललित को पकड़ लिया—तुम कौन हो ?

सुललित के मुँह में थोड़ी देर के लिए मानो बात अटक गयी थी। लेकिन तब तक उन लोगों ने सुललित का गला दबाकर उसे दबोच लिया था।

—साला पिया है…

सुललित किसी तरह मुश्किल से बोल सका—आरती ? आरती से मैं मिलने आया हूँ…

पूरी मजलिस फिर ठीक कल की तरह किलबिलाकर उठ पड़ी।

—पकड़ो—साले को पकड़ो…

इस मुहल्ले के राज की गतिविधियों में इस प्रकार की अराजकता नये सिरे से होती है। यह करीब-करीब रोज ही घटता है। इसके लिए इस मुहल्ले की बाईजियों को कुछ तनख्वाहवाले गुण्डे पालने पड़ते हैं। इसके लिए पुलिस को भी कुछ बँधी हुई माहवारी देनी पड़ती है। इस वजह से ज्यादा हाय-हाय भी नहीं उठानी पड़ती। सीधे ऐसे लोगों के गले में धक्का देकर घर के बाहर रास्ते पर निकाल देने से ही मामला खत्म हो जाता है। उसके बाद अगर कुछ ज्यादा गोलमाल हो तो पुलिस तो है ही। तब भी फिर आसामियों को कचहरी में ले जाकर हाजिर करने की जरूरत नहीं पड़ती। सीधे ठोंक-ठांककर सीधा कर देती है पुलिस।

यह भी उसी तरह से हुआ।

सुललित के सिर पर, हाथों में, गले में, गुण्डों के घूँसे चल रहे थे चारों तरफ से। सुललित हाथ उठाकर सारा अपमान सिर नीचा करके सहने लगा। लेकिन सिर्फ सिर झुका लेने से ही तो समस्या का समाधान नहीं हो जाता। उसे मारते-मारते जब तक वे लोग रास्ते की धूल पर न सुला दें तब तक उन्हें शान्ति नहीं है।

उसी हालत में कुछ बेकार मौजी लोग वहाँ आकर भीड़ जमाकर बैठे।

कोई बोला—आदमी बंगाली है…

एक बोला—साला शराब पीकर बेहोश है…

—ठीक हुआ बेटे का। इसको यही सजा मिलनी चाहिए…

ऐसे समय जाने कहाँ से एक पुलिसवाला आकर हाजिर हुआ। वह भी लाठी के दो वार करके सुललित को चंगा कर देने की कोशिश में था। लेकिन उसके पहले ही वहाँ एक औरत आकर हाजिर हो गयी।

वह आते ही बोल उठी—अरे इसको मारो मत सिपाहीजी…

कहकर सुललित के मुँह पर झुक पड़ी औरत। उसने देखना चाहा कि मनुष्य मर गया है या जिन्दा है। उसके बाद आसपास के सब लोगों की तरफ देखकर उसने कहा—इसे थोड़ा पकड़कर उठा लीजिए न आप लोग, यह आदमी जो मर जायेगा···

उसके बाद सुललित के मुँह पर मुँह नीचा करके पुकारने लगी—बाबूजी, ओ बाबूजी—सुनते हो···

सुललित ने आँखें खोलीं। लेकिन आँखों से मानो वह कुछ देख न पा रहा हो। तो भी मुँह से बिड़-बिड़ करके जाने क्या बोलने की कोशिश की···

औरत ने अपना मुँह और नीचा किया। वह बोली—क्या कह रहे हैं बाबूजी?

—आरती···

क्यों वह आरती कहकर पुकार रहा है औरत तो कुछ समझ नहीं सकी। आसपास के लोगों की तरफ देखकर औरत फिर बोली—आप लोग थोड़ा इसे पकड़कर उठा लीजिए और ले चलिए न इसे, बाईजी साहिबा ने इसे ले आने को कहा है···

एक किसी ने नजदीक से पूछा—कौन बाईजी साहिबा? कौन तवायफ-वाली?

और एक आदमी बोल उठा—अरे इसे पहचानते नहीं? यह तो केसर बाई की एक नौकरानी है···

—केसर बाई की नौकरानी है? लजवन्तिया?

लजवन्तिया की उस वक्त इनमें से किसी तरफ नजर नहीं थी, वह उस समय किस तरह उस आदमी को अपनी मालकिन के कमरे तक ले जायेगी, यही सोच-विचार कर रही थी। और एक बार जब सबको पता चला कि केसर बाई ने उस आदमी को अपने घर में लिवा जाना चाहा है, तब तक उन सबने आकर हाथ बढ़ा दिया। हाथ के पंजों की गोद बनाकर उसे वे पास के केसर बाई के घर के भीतर ले चले। दुमंजिले की पतली सीढ़ियाँ। उस पर एक लम्बे-चौड़े मनुष्य को पंजों की गोद में लिटाकर ले जाना क्या ऐसी सहज बात है? देखो, दीवाल में इसे ठोकर न लग जाये, उसके शरीर में चोट न लग जाये। खूब सावधान—खूब होशियार···

लेकिन सुललित को उस समय इन सब बातों की तरफ कोई खयाल नहीं था। वह मानो उस वक्त भी उसी दुमंजिले की महफिल के सामने खड़ा-खड़ा आरती का गाना सुन रहा हो···

आरती मानो उस वक्त भी नाच-नाचकर गा रही हो···

'आओ पिया मैं सेज बिछाऊँ

गरवा लागूं कै
तोको प्यार···'

सुललित उस नाच-गान के बीच में ही अकस्मात् चिल्ला उठा—आरती···आरती···

और उसी गली-मुहल्ले के और एक किनारे एक कलारी में बैठा कुन्दनलाल शराब पी रहा था और नशे के घोर में गाना गा रहा था···

बरेली के बाजार से घुंघरू लाया रे—
बरेली के बाजार से घुंघरू लाया रे
घुंघरू लाया घाघरा लाया
छोकरी लाया रे···

उसके बाद एक चुस्की में गिलास खतम करते ही उसने फिर कलारी के छोकरे को बुलाया—हरीलाल, और एक प्वाएण्ट लाओ भइया···

उसके पाकेट में उस वक्त दस हज़ार रुपये की कीमत की एक हीरे की अंगूठी और केसर बाई के दिये हुए नकद खरखरे तीन सौ रुपये थे। इसलिए किसकी परवा करेगा वह ? दुनिया तो उसकी ही है। इस तमाम दीन-दुनिया का मालिक है वह। खाओ, पियो और मरो ! इसलिए सिर्फ पियो भइया, सिर्फ पियो···

इसलिए नया गिलास फिर एक चुस्की में खतम करके उसने गाना शुरू किया···

बरेली के बाज़ार से घुंघरू लाया रे—
बरेली के बाजार से घुंघरू लाया रे
घुंघरू लाया घाघरा लाया
छोकरी लाया रे···

कहाँ सुललित पड़ा था मनुष्य को विचार करना होगा उसके कर्म को लेकर, उसके मुंह की बात से नहीं। हमारे क्लब में जब वह व्याख्यान देने को उठा है तब हम सबके कर्मविरुद्ध स्वभाव के विरुद्ध ही उसने प्रतिवाद की बात कही है।

सुललित कहता—मनुष्य क्रम-क्रम से जानवर हुआ जा रहा है, इसीलिए हम लोगों का विद्रोह रहना उचित है इस पशुत्व के विरुद्ध ?

प्रभात हम लोगों के क्लब का मेम्बर है। उसने पूछा था—पशुत्व के माने क्लीवत्व ।

—परन्तु क्लीवत्व क्या है ?

सुललित बोलता—जगत्-संसार के साथ ताल-ताल में चलना—वही क्लीवत्व, नपुंसकता है ! जो सचमुच का मनुष्य है वह विद्रोह करेगा, अन्याय के विरुद्ध विद्रोह। करेगा, आपसपन के विरुद्ध विद्रोह। मनुष्य अगर बचना चाहता है तो उसे आजीवन केवल संग्राम ही करते रहना होगा···

इसी तरह की और कितनी ही बातें कहता सुललित।

हम लोग सोचते सुललित के समान आदर्श ही सब मनुष्यों का आदर्श होना उचित है। हम लोग सोचते सुललित सचमुच एक दिन आदर्श होगा, बड़ा होगा। बड़े होने पर एक दिन वह सबके सिर पर उठेगा, यही था उन दिनों के क्लब के सब लड़कों का विश्वास।

शायद सुललित खुद भी यही सोचता। इतने दिनों के बाद जब हम उस आदमी की बात सोचते हैं तब बीच-बीच में मन में लगता है क्यों ऐसा हुआ ! जो मनुष्य एक दिन शराब पीने को मन-प्राण से पसन्द नहीं करता था, आखिर वह खुद ही क्यों इस तरह पीने लगा ? इस तरह उसकी सब आशा, ध्यान और उसकी धारणा बदल गयी ! और उसका विवेक ! तो फिर विवेक नाम की उस समय कोई चीज बाकी नहीं थी ?

इन्हीं सब दिशाओं में जब केसर बाई के घर में वह अज्ञान-अचेतन अवस्था में सोया रहता तब भी क्या एक बार भी उसके मन में होता कि वह कहाँ किस घर में सोया है !

इन सब सवालों का जवाब क्या है यह जानने का आज कोई उपाय नहीं है। सुललित थोड़ा ज्ञान होने पर ही आँखें खोलकर देखता। सामने ताकता रहता आरती को।

बोलता—आरती, मैं तुम्हारे घर में किस तरह आया ?

आरती बोलती—तुम चुप रहो, बात मत करो।

—लेकिन आरती, तुम केसर बाई क्यों बनी ? क्यों तुमने अपना नाम बदला ? सब लोग जान जायेंगे सोचकर ?

—फिर बात करते हो ! वे सब बातें अभी रहने दो, डाक्टर साहब ने तुम्हें चुप रहने को कहा है।

सुललित बोलता—लेकिन मेरा तो जानने का मन करता है आरती··· जानने का मन होता है मैं यहाँ कैसे आया···

आरती बोली—मैं ही तुम्हें यहाँ ले आयी हूँ···

—तुम ? तुम किस तरह ले आयी ?

—लजवन्ती के जरिये ?

—लजवन्ती कौन है ?

मेरी न[illegible]रानी। [illegible] अ[illegible]रे की खिडकी से देखा कि तुम्हें रास्ते

में गिराकर सब लोग मार-धाड़ कर रहे हैं। इसीलिए लजवन्ती को भेजकर तुम्हें अपने घर में उठवाकर बुलवा लिया। लेकिन तुम पड़ोस के उस घर में गये क्यों ?

—किस घर में ?

—उस हमारे बगल के घर में ?

सुललित बोला—मैं तुम्हारी खोज में ही आया था आरती, लेकिन ठीक कौन-सा घर तुम्हारा है यह ठीक नहीं कर सका, इसीलिए गलत घर में घुस पड़ा था। मैं समझ नहीं सका आरती। तुम गाना गा रही थीं—आओ पिया मैं सेज बिछाऊँ—और मैं चुपचाप खड़ा सुन रहा था। ऐसे ही समय सब मिल-कर…

बोलकर सुललित थोड़ा हांफने लगा। थोड़ी ज्यादा बात बोलते ही मानो उसका दम टूट जायेगा…

आरती सुललित के सिर पर हाथ सहलाने लगी।

बोली—तुम ज्यादा बात मत करो, चुप रहो…

सुललित बोला—लेकिन मेरा जो जानने को बड़ा मन हो रहा है…

—क्या जानने का मन करता है, बोलो ?

—यही जो मैंने कहा तुम आखिर यहाँ क्यों आयीं ? क्यों इस नरक में आकर उतरीं ? क्यों तुम केसर बाई बनीं ?

आरती बोली—कहूँगी, कहूँगी तुमसे सब…

—नहीं, अभी बोलो, बोलो, क्यों तुम्हारा यह अधःपतन हुआ ? मैंने तो तुम्हारा कोई नुकसान करना नहीं चाहा। मैंने तो चाहा था तुम सुखी होओ। तुम अपने पति-सन्तान-संसार को लेकर सुख से रहो, यही तो मैंने चाहा था। और इसीलिए तो कोर्ट के कठघरे में खड़े होकर सबके सामने इतनी झूठी बातें बोल आया, जिससे तुम्हारे पति पुलिस के हाथ से छूट जायें…

आरती कहने लगी—तुम चुप रहो, ज्यादा बात करने से तुम्हारी तबीयत खराब होगी सुललित दादा…

—तुमने मुझे फिर वही सुललित दादा कहकर पुकारा ! तुम अब मुझे उस नाम से मत पुकारो आरती…

—क्यों, पुकारने से क्या होगा ?

सुललित बोला—क्या होगा बोलूं ? वही गांगुलि काका बाबू के साथ तुम्हारे साथ कलकत्ते में जो कुछ दिन कटे हैं, उसकी बात सोचने से मेरे मन में तकलीफ होती है।

आरती बोली—वे सब बातें भूल जाओ…

—भूल जाऊं ?

आरती बोली—हाँ, भूल जाओ, जीवन में तमाम घटनाएँ घटती हैं, तो फिर सबकुछ याद रखने पर क्या काम चलता है ?

—लेकिन तुम ? वे सब घटनाएँ क्या तुम्हें भी याद आती हैं ? वे सब बातें याद आने पर क्या तुम्हें भी कष्ट होता है ?

—होगा नहीं ?

सुललित के मुँह पर मानो एक क्षीण आशा की झलक फूट पड़ी। वह बोला—याद आता है आरती, पहला दिन जिस दिन तुम लोग कलकत्ता गयी, मैं तुम लोगों को सवेरे खाने की चीजें दे गया था, और मैंने खुद खाया नहीं, इसलिए तुम कितना गुस्सा हुई थीं ?

—हाँ, सब याद आता है मुझे। लेकिन तुम इतनी बातें मत करो, दुहाई तुम्हारी थोड़ा चुप रहो···

सुललित तो भी बोलने लगा—और वह बात याद आती है। वही जो तुम और मैं ईडेन-गार्डेन में जाकर बैठते, तुम गाना गाती, वही वाजिद अली शाह का लिखा, झिंझिट खम्बाज की ठुमरी—होले रे जोबन···?

आरती इस बार गुस्सा हो उठी। बोली—ना, मैं तो फिर अब कमरे से उठ जाऊँगी, इतनी बातें करने से आखिर में फिर तुम्हारा बुखार बढ़ जायेगा···

यह कहकर आरती बिछौने के पास से उठने जा रही थी, लेकिन सुललित ने घप्-से उसका घाघरा पकड़ लिया। आरती बोली—छिः, कर क्या रहे हो ? शर्म के मारे सुललित ने उसका घाघरा छोड़ दिया। घाघरा छोड़कर उसने दूसरी तरफ मुँह फिरा लिया।

आरती तब नजदीक खिंच आयी। बोली—यों ही गुस्सा आ गया शायद—तुम तो अपनी निजी बात ही कर रहे हो, और मैं ?

—तुम ?

—हाँ, मैं। मेरी बात भी तुम एक बार सोचो तो ! मैं एक दिन कहाँ थी, और देखो आज कहाँ उतरी हूँ ! यह भी तो तुम्हारे लिए ही है ?

सुललित अवाक् हो गया। बोला—मेरे लिए ?

—हाँ, तुम्हारे लिए, नहीं तो और क्या ? तुम्हारे कारण ही तो मैं आरती गांगुलि [illegible] एकदम केसर बाई हो गयी हूँ।

—लेकिन तुम तो गाना गाकर बहुत-से रुपये कमा रही हो, बहुत नाम कमाया है तुमने, कितने बड़े-बड़े लोग तुम्हारा गाना सुनकर तुम्हारी वाहवाही करते हैं—तुम फिर नीचे कहाँ उतरी ? इसे क्या नीचे उतरना कहते हैं ?

आरती बोली—यह सब सुनने की तुम्हें जरूरत नहीं है, तुम पहले अच्छे हो जाओ, तुमसे एक दिन सब बताऊँगी···

[illegible]

—क्या बताऊँ ?

—बोलो, क्यों तुम यहाँ आयीं ? बोलो आरती, बोलो…

आरती शायद जाने क्या बोलने जा रही थी, लेकिन उसके पहले ही लजवन्तिया कमरे में घुसी। वह बोली—बाई साहिबा, रामनगर से नवाब साहब आये हैं…

सुललित की आँखों में उस वक्त भी नशे का घोर था। उसे याद आया, यह नौकरानी ही उसे कई दिनों दूध दे गयी है। आरती जब उसे दवा खिलाती है तब यह लजवन्तिया ही उसके पीने के पानी का गिलास लिये पास में खड़ी रहती है। जब डाक्टर कोठारी उसे देखने आया है तब उनके साथ जैसे आरती आयी है, उसी तरह साथ-साथ लजवन्तिया भी आयी है। सुललित ने समझ लिया था कि लजवन्तिया ही आरती का दाहिना हाथ है। आरती का जो कुछ काम होता, जो कुछ हुकुम होता, सब तामील करती यह लजवन्तिया ही।

आरती के कमरे से जाते ही उसके गले की आवाज बाहर से सुनायी पड़ी।

वह बोली—बोल जाकर, बाईजी साहिबा को काम है, इस वक्त मुलाकात नहीं होगी…

लजवन्तिया बोली—कल शाम को राजा साहब आये थे बाईजी साहिबा, कल आप मिलीं नहीं इससे राजा साहब आज भी दुबारा आये हैं…

—तो पूछकर आ न कि राजा साहब का क्या काम है ?

—राजा साहब के घर में उनकी लड़की की शादी है, वहाँ मुजरा होगा, गाना गाने जाना होगा आपको रामनगर में…

—तूने जाकर कहा क्यों नहीं कि मैं अभी कहीं नहीं जा सकूँगी—मेरे घर में मेहमान आये हैं—पहले मेहमान या पहले रुपया ?

लजवन्तिया बोली—मैंने कहा था। कहा था कि बाईजी साहिबा अभी कहीं मुजरा नहीं लेतीं। तो भी सुना नहीं। बोले, राजा साहब को खास शौक है कि उनकी लड़की की शादी में आपका गाना-बजाना हो…

—तो उस्तादजी कहाँ हैं ?

लजवन्तिया बोली—उस्तादजी भी आप पर खूब नाराज हैं बाईजी साहिबा…

—क्यों ?

—बड़े-बड़े लोग सब फिर जाते हैं, आप किसी की खातिर नहीं करतीं…

आरती बोली—उस्तादजी नाराज रह जायें उससे मेरा क्या बिगड़ता है ! जा, मैंने जो कहा तू जाकर वही उनसे कह दे…

लजवन्तिया शायद यही कहने कमरे से बाहर चली गयी, फिर वहाँ खड़ी नहीं हुई। लजवन्तिया के जाते ही आरती अपने कमरे की तरफ जा रही थी, लेकिन पीछे से उस्तादजी के गले की आवाज कानों में सुनायी पड़ी—बेटी केसर

वाई···

—हाँ, उस्तादजी ! अभी मैं कहीं जा नहीं सकूँगी···

—तो कहीं जा भी नहीं सकोगी तुम और घर में जो आयेंगे उन्हें भी गाना नहीं सुना सकोगी तो हम लोगों का चलेगा कैसे ?

आरती बोली—मैंने तो आपसे कहा है उस्तादजी, कि अभी हमारे घर में मेहमान आये हैं, इन कुछ दिनों मैं छुट्टी चाहती हूँ···

—छुट्टी ? छुट्टी बोलने से क्या पेट वह बात सुनेगा ?

आरती बोली—पेट के लिए तो मैं यहाँ आयी नहीं उस्तादजी···

उस्तादजी बोले—क्या बोल रही हो बेटी, पेट के लिए अगर नहीं तो किसलिए यहाँ आयी हो ? तारीफ लेने के लिए ? नाम बढ़ाने के लिए ?

आरती बोली—अभी मुझे ये सब बातें लेकर बहस करने का वक्त नहीं है उस्तादजी, अभी उस कमरे में मेरे मेहमान है, उनका इलाज करना होगा···

उस्तादजी बोल उठे—लेकिन तुम भले रुपया न चाहो बेटी, लेकिन मेरा तो रुपया न होने से चलेगा नहीं, मेरा तो नुकसान हो रहा है, मुझे तो रुपया चाहिए, अपना हिस्सा तो मैं पा नहीं रहा—मैं अपना खर्चा कैसे चलाऊँगा ?

आरती ने पूछा—कितना रुपया चाहिए आपको ?

उस्तादजी बोले—मेरी तो महीने में दो हजार की आय है, तुम्हारी वजह से वह सब अभी बन्द हो गयी है···

—ठीक है···

यह कहकर आरती फिर अकस्मात् अपने कमरे में घुसी। सुललित ने देखा, आरती का मुँह मानो गुस्से से लाल हो उठा है। मानो वह फट पड़ेगा। चाबी लेकर आरती ने अपने लोहे की आलमारी खोली, उसके बाद उसके भीतर से कुछ नोट निकालकर तुरन्त कमरे के बाहर चली गयी। और तब बाहर से उसका गला सुनायी पड़ा—यह लीजिए अपना रुपया, मैं आपको चार हजार रुपये देती हूँ, लीजिए···

उस्तादजी लगता है थोड़ा लेकिन-वेकिन कर रहे थे। वे थोड़ा हैरान हो गये थे।

आरती चिल्ला उठी—ये रहे रुपये, रुपये लिये, रुपयों के लिए ही जब इस लाइन में आये हैं, तब रुपये क्यों नहीं लेते ? मेरी वजह से ही तो आपका नुकसान हो रहा है, मैंने आपका वह नुकसान पूरा कर दिया, अब रुपये लेकर और कहीं जाइए,—और किसी नयी बाईजी को लेकर अपना पेट चलाइए, जाइए। आप मेहरबानी करके मुझे मुक्ति दे दीजिए—आप जाइए—मुझे अभी दूसरा काम है···

कहकर नोट उस्तादजी के हाथों में गूँजकर आरती चली ही आ रही थी।

लेकिन उस्तादजी ने पुकारा—लेकिन वेटी···

आरती मुँह फिराकर खड़ी हुई—लेकिन क्या ? क्या वोल रहे हैं वोलिए !

उस्तादजी वोले—एक वात पूछता हूँ वेटी, लेकिन बुरा मत मानो मेरी तदवीर की वजह से ही तुम्हारा इतना खानदान वना है, लेकिन वहीं मुझे ही तुम आज अपमान करके निकाल दे रही हो—यह क्या अच्छा हो रह है ?

आरती वोली—भला-बुरा करने के जो मालिक हैं वे ही समझेंगे कि यह अच्छा हो रहा है या बुरा हो रहा है। मैं-आप उसका विचार करनेवाले कौन हैं ?

उस्तादजी वोले—लेकिन मेरी एक वात का जवाव दो, जिसके लिए तुम इतना कर रही, वह आदमी कौन है ?

—यह आपको जानने की जरूरत क्या है उस्तादजी, आप अपना रुपया पा गये हैं, अव फिर आपको वह वात जानने की जरूरत क्या है ?

उस्तादजी वोले—ना, यह वात नहीं है, मैं सोचता हूँ वह आदमी ऐसा कौन है जिसके लिए तुम इतने रुपये, इतनी तारीफ, इतनी खातिर सारे कुछ का लोभ त्याग कर दे सकीं ?

—उस्तादजी, आप सुर को इतना पसन्द करते हैं, सारंगी में इतना अच्छा सुर उठाते हैं और यह मामूली वात समझने में आपको इतनी तकलीफ हो रही है ?

उस्तादजी ने लगता है तव तक सव नोट अपनी पाकेट में भर लिये थे। वे वोले—पर इन्सान सुर की वनिस्वत भी वड़ा है, यह तुम्हें देखकर ही आज पहले-पहल मैं जान सका वेटी···

आरती वोली—ना, सिर्फ इन्सान नहीं, अगर वह इन्सान के समान इन्सान हो तभी वह सुर की वनिस्वत वड़ा होगा···

—इसके माने ?

—इसके माने आप इन्सान को पहचान नहीं सके, इसीलिए यह वात कह सके।

उस्तादजी वोले—लेकिन एक शरावी को आप इन्सान के समान इन्सान समझती हो वेटी ?

—आपने तो वाहर से उसे शरावी ही देखा, लेकिन वह क्यों शरावी हुआ यह तो आपने जानना चाहा नहीं ?

उस्तादजी वोले—मैंने न हो न जाना, लेकिन तुमने ही कैसे इन कुछ दिनों में ही जाना ?

आरती इस वार गुस्सा हो गयी लगता है मन-ही-मन। वोली—आप तो

सब रुपये पा गये हैं, अब तो आपको मुझसे कोई जरूरत नहीं है, आप अब जा सकते हैं उस्तादजी, मुझे मेरा काम है, मैं चलूँ···

कहकर वह कमरे के भीतर चली जा रही थी, लेकिन घुसने के मुँह में ही एकदम सुललित के सामने-सामने पड गयी। सुललित जो कब बिछौने से उठकर आ गया था, यह आहट उसे नहीं मिली।

बोली—यह क्या, तुम बिछौने से क्यों उठ आये हो? गिर जो पड़ोगे···

बोलकर उसने सुललित को दोनों हाथों से पकड़ लिया।

सुललित बोला—मुझे छोड़ दो, आरती, मैं घर जाऊँ···

आरती अवाक् हो गयी। बोली—यह क्या? क्या बोल रहे हो तुम?

—तुम मुझे छोड़ दो···

—छोड़ मैं तुम्हें दे सकती हूँ, लेकिन तुम जो गिर पड़ोगे?

सुललित बोला—मैंने सब सुना है आरती। मैंने तुम्हारा बड़ा नुकसान कर दिया है, और नुकसान मैं करना नहीं चाहता—मेरे लिए तुम्हारे तमाम रुपयों का नुकसान हो रहा है, तमाम राजा-महाराजा तुम्हें तमाम रुपये दे रहे थे, मेरी वजह से तुम्हारी वह सब आय बन्द हो गयी है। तुमने मुजरा लेना छोड़ दिया है, उस्तादजी ने ठीक ही कहा है···

—उस्तादजी की बात छोड दो, वे लोग सिर्फ दुनिया में रुपया ही समझते हैं।

सुललित बोला—लेकिन रुपया न होने पर तुम्हारा भी चलेगा कैसे आरती? मेरी बीमारी के लिए तुम जो डाक्टर दिखाती हो, उसके लिए भी तो तुमको बहुत रुपये खर्च करने पड़ रहे हैं। मेरे यहाँ रहने पर तुम्हारे तो और भी बहुत रुपये खर्च हो जायेंगे···

आरती बोली—रुपयों की बात अब मुझसे मत करना। रुपये मैंने बहुत कमाये हैं—मैंने पति के बहुत रुपये देखे हैं, रुपयों से कुछ नहीं होता···

—लेकिन उन्हीं रुपयों के लिए ही मिस्टर बैनर्जी तमाम घूस लेते थे! रुपये से अगर कुछ नहीं होता तो फिर इतनी घूस वे लेते क्यों थे?

आरती बोली—तुम भी तो नौकरी करके बहुत रुपये कमाते थे, तो फिर तुमने वह नौकरी छोड़ी क्यों?

सुललित बोला—सो सिर्फ तुम्हारा मुँह देखकर आरती। तुमने जो मेरे घर आकर मिस्टर बैनर्जी को छोड देने का अनुरोध किया था?

—लेकिन उससे तुम्हारा निजी इतना सर्वनाश होगा यह तो मैं जानती नहीं थी तब। सोच पाती तो मैं तुमसे ऐसा अनुरोध न करती।

सुललित बोला—मेरे सर्वनाश की बात छोड़ दो, मेरे संसार-परिवार नहीं है, लड़के-लड़कियाँ कोई नहीं हैं, मेरे जीवन का दाम ही क्या है। मेरा सर्वनाश होने से ही क्या आता-जाता है, और न होने से भी क्या आता-जाता है। लेकिन

तुम ? तुम्हारी बात तो अलहदा है। तुम्हारे तो सबकुछ था आरती, तुम क्यों तब अपने पति, लड़के-लड़कियाँ सब छोड़कर चली आयीं ? किस तरह छोड़कर चली आ सकीं ?

आरती ने उस समय भी सुललित को पकड़ रक्खा था।

वह बोली—चलो-चलो, ज्यादा बात मत करो, तुम हाँफ रहे हो, तुम गिर पड़ोगे···

सुललित बोला—ना, तुम पहले बताओ तुम किस तरह सब सुखों को जलांजलि देकर यहाँ चली आयीं ? बताओ, तुम्हें बताना ही होगा—न बताने पर मैं अब किसी तरह यहाँ नहीं रहूँगा—बताओ आरती, बताओ···

आरती बोली—तुम्हारे लिए। तुम क्यों कोर्ट में खड़े होकर वह सब बोले ?

लेकिन मैंने तो सब झूठ बातें कही थीं !

आरती रोने लगी। उसकी दोनों आँखों से टस-टस करके आँसू गिरने लगे, बोली—तुम्हारी वह झूठ बात ही मेरा काल बन गयी सुललित दादा ! तुम्हारी उस झूठ बात के लिए ही मेरे पति ने मुझे गलत समझा।

—यह कैसी बात है ?

—हाँ, तुम सो जाओ, मैं बताती हूँ···

आरती सुललित को धीरे-धीरे एक चेयर पर बिठालकर खुद सामने पैरों के नीचे होकर बैठ गयी। बोली—तुम तो जानते हो मेरी एक दीदी थी···

—हाँ, सो जानता हूँ। यह तो तुमने खुद ही मुझसे कहा है।

आरती कहने लगी—मेरे पति मिस्टर बैनर्जी शादी के पहले तो जानते नहीं थे। लेकिन जब एक दिन कोर्ट में खड़े होकर तुम्हारे मुँह से वे सब जान पाये तब से जाने कैसे हो गये। तब से ही मिस्टर बैनर्जी ने शराब पीना शुरू किया।

—शराब ? मिस्टर बैनर्जी क्या शराब भी पीते थे ?

—शराब न पीते तो इतने रुपयों की घूस किसलिए लेते ? तुमने खुद पुलिस अफसर होकर इन्वेस्टिगेशन किया है और तुम यह बात भी नहीं जानते ? और ऐसा न होता तो मैं यहाँ किस साध से उस्तादजी के साथ भाग आयी हूँ ?

उसके बाद सुललित की तरफ ताककर उसने कहा—तुम अब सो जाओ, इतनी बातें करने पर तुम्हारी तबीयत खराब-खराब-सी हो जायेगी···

—मैं सो रहा हूँ, लेकिन तुम एक बार वही गाना गाकर सुनाओ न आरती—मेरा सुनने को बड़ा मन होता है।

—कौन-सा गाना ?

—वही जो गाना तुम मुझे कलकत्ता के ईडेन-गार्डेन में घास पर बैठकर गाकर सुनाया करती थीं !

आरती बोली—सुनाऊँगी-सुनाऊँगी, पहले तुम अच्छे हो जाओ, तब तुम

जितनी इच्छा करोगे उतना ही सुनाऊँगी···

—लेकिन मेरे स्वस्थ हो जाने पर फिर क्या तुम यहाँ अपने घर में रहोगी ? तब तो तुम फिर से गाना-बजाना शुरू करोगी । कितने बड़े-बड़े राजा-महाराजा तुम्हारे भक्त हैं, तुम्हारे लिए वे सब मुँह बाये दिन गिन रहे हैं, मेरे कारण ही तो वे लोग यहाँ आ नहीं पा रहे हैं ।

हठात् बाहर से लजवन्तिया के गले की आवाज सुनायी पड़ी ।

—बाई साहिबा !

—क्या है ?

—डाक्टर साहब आये हैं···

आरती उठी । बोली—वह सुनो, डाक्टर बाबू आये हैं—तुम उठो मत, चुपचाप पड़े रहो, मैं आती हूँ···

बोलकर बाहर चली गयी ।

कुन्दनलाल के दिन उस वक्त बहुत बढ़िया कट रहे थे । गागाकर गानें उसकी बड़ी जल्दी-जल्दी खत्म हो जातीं । तब उसे किसी का मुँह हिलाना नहना न पड़ता । उस वक्त उसकी पाकेट में हर वक्त रुपये-पैसे झनझनाते रहते । तब वह छाती फुलाकर घूमता था, कलारी के सामने जाकर तब उसे सिर नीचा करके रहना न पड़ता । तब उसका अमीरी मिजाज था । वह कहता—एक दो नम्बर बोतल देखूँ···

बोतल देने के पहले ही पाकेट से नोट निकालकर सामने फेंक देता । उसके बाद बोतल और एक गिलास लेकर सामने के आँगन में एक बेंच पर बैठ जाता । तब सोडे की बोतल आती, मुर्गी की तली हुई टाँग आती । दालमोठ आता । चना-चूड़ा आता । केकड़े या लिवर तरी के साथ आता । और जितना खाता कुन्दनलाल, उतना ही उसका मिजाज तर हो जाता । उतना ही वह उदार हो जाता, उतना ही वह लोगों को बुला-बुलाकर अपने पास बिठाकर अपनी नोट के पैसे खर्च करके उन्हें माल खिलाता-पिलाता । तब उसके मुँह से गाना फूट पड़ता । कुन्दनलाल ऐसे समय एकदम बेहिसाबी हो जाता । तब गजनगर के राजा साहब भी कौन हैं और कुन्दनलाल बावर्ची कौन है, यह और कोई तय नहीं कर सकता था ।

तब वह गला फाड़कर गाना शुरू करता—

बदली के बादल में घूँघट डाला है
घूँघट वाला बादल काला
[illegible] ···

और उसके बाद एक बँधे टाइम में आबकारी-दूकान की जाफरी बन्द हो जाती, तब वह छूटता चोरी की शराब की खोज में। चोरी की शराब की दूकानें कुन्दनलाल के नाखूनों के आइने के समान जानी-पहचानी थीं। उन सबका असल रूप बाहर से देखकर समझा नहीं जा सकता। बाहर से लगता है—आलू-प्याज की दूकान है, लेकिन आड़ में चलती है चोरी की शराब। उनके गाहक बँधे गाहक हैं। मुँह देखते ही वे पहचान ले सकते हैं। कुन्दनलाल के वहाँ जाकर खड़े होते ही वे लोग खातिर करके, प्रार्थना करके बोलते हैं—आइए सेठजी, बैठिए···

कुन्दनलाल बोलता है। पूछता है—क्या हाल है छेदीलाल ?

छेदीलाल कहता है—आपकी कृपा हुजूर, मजे में हूँ।

कुन्दनलाल कहता है—हाँ-हाँ, मजे में रहना ही चाहिए छेदीलाल। जीवन में मजा छोड़कर और क्या है बोलो ? खाली पीना और मरना, इसकी बनिस्बत बड़ा मजा और जिन्दगी में क्या है, बोलो छेदीलाल···

थोड़ी देर बाद ही पीछे का दरवाजा खोलकर निकल आती है असल चीज। वह कपड़े से ढाँककर चालान हो जाती है कुन्दनलाल के हाथ में। उसे बगल में रखकर दाम चुकाकर कुन्दनलाल रास्ते में चलना शुरू करता है। उसके बाद उसे लेकर वह सीधे चला जाता है अपने डेरे में। किसी-किसी दिन पैदल जाने में तकलीफ होती है। दोनों पैर बड़ी बेईमानी करने लगते हैं। तब ताँगा करता है।

ताँगेवाले कुन्दनलाल को पहचानते हैं। आदमी शराबी है। बहुतेरे दिनों उनके ताँगे के भीतर ही वह कै कर देता है। उसे देखते ही इसीलिए अगल-बगल हो जाते हैं।

उस दिन भी दोनों पैर बड़ी बेईमानी कर रहे थे। दूर से देखा उसने, एक ताँगा आ रहा है।

ए ताँगेवाले—ए ताँगेवाले—इधर आओ···

ताँगेवाला कुन्दनलाल को देखते ही अगल-बगल हुआ जा रहा था। ताँगे के भीतर से किसी एक सवारी ने रुकवा दिया ताँगा।

वह बोला—थोड़ा रोको तो ताँगेवाले—कोई मानो कुछ कह रहा है···

ताँगेवाले ने कहा—वह शराबी है, दिक्कत करेगा···

—ना ना, रोको, वह कुन्दनलाल है···

बोलते ही ताँगा रुका और उसके साथ ही सवारी उतर पड़ी। कुन्दनलाल के सामने आकर आमने-सामने अच्छी तरह देखते ही वह नजर में पड़ गया।

—अरे भगीरथ हो न ?

—कुन्दन बाबू, मैं अपने दादा बाबू को कई दिनों से खोज नहीं पा रहा हूँ, सारे शहर में खोज-खोजकर हैरान हो गया हूँ, दादा बाबू कहाँ गये हैं जानते

ई क्या ?

कुन्दनलाल तो अवाक् । बोला—तुम्हारे दादा बाबू ? चैटर्जी बाबू ? और कहां जायेंगे, कहीं माल-दाल पीकर पड़े हैं लगता है···

भगीरथ बोला—मैंने तो सब जगहों में खबर ली है बाबू,—पुलिस में भी खबर दी है, कहीं मिल नहीं रहे हैं···

कुन्दनलाल ने न जाने क्या सोचा । उसके बाद बोला—केसर बाई के घर में तो नहीं गये ?

—केसर बाई कौन ?

—अरे केसर बाई का नाम सुना नहीं तुमने ? इतनी बड़ी खानदानी बाईजी लखनऊ शहर में और दूसरी नहीं है, मुजरे के पीछे पांच हजार रुपये लेती है···

भगीरथ बोला—दादा बाबू इतना रुपया कहाँ पायेंगे ?

—अरे, प्रेम के आगे आखिर रुपया क्या है । केसर बाई अगर तुम्हारे दादा बाबू को प्रेम कर बैठी हो तो रुपये नहीं लेगी । उल्टे दादा बाबू को रुपये उड़ेल देगी, यह जानते हो भगीरथ ?

भगीरथ बोला—लेकिन दादा बाबू बाईजी के घर में जायेंगे ही क्यों ? क्या करने जायेंगे ?

कुन्दनलाल बोला—तुम तो अजीब बात कह रहे हो भगीरथ, बाईजी के घर में लोग जिस वजह से जाते हैं, तुम्हारे दादा बाबू भी उसीलिए जायेंगे···

बात भगीरथ को अच्छी नहीं लगी । जाने कैसी घिन होने लगी कुन्दनलाल के ऊपर । यही आदमी तो दादा बाबू को इस रास्ते में बहा ले गया है ।

तांगा उस वक्त भी खड़ा था । भगीरथ बोला—मैं अब जाऊँ बाबू···

कहकर तांगे पर बैठ गया । बोलते ही तांगा चल पड़ा था । आधी रात का सूना रास्ता । कई दिनों से भगीरथ को खूब खटना पड़ रहा था । इतने दिनों से वह दादा बाबू को आँखों-आँखों में रखता आया है, अब वह ऐसा नहीं कर सकेगा । अब भगीरथ की भी उमर हो गयी है । छुटपन से इन दादा बाबू को उसने बड़ा किया है, अब इस बूढ़ी उमर में भी उसे अपने दादा बाबू को देखना पड़ता है । अब तो भगीरथ के आराम करने की बारी आ गयी है । अब तो सिर्फ बैठे-बैठे भगवान का नाम लेने का उसका समय है । अब अच्छी तरह सीधा होकर खड़ा भी नहीं हो पाता, थोड़ा-सा पैदल चलने पर छाती फूलने लगती है । तिस पर कई दिनों से उसके खाने-पीने का कुछ ठीक-ठाक नहीं है, सिर्फ दादा बाबू और दादा बाबू···

तांगावाला सीधे जा रहा था, भगीरथ बोल उठा—अरे उस तरफ नहीं, उस तरफ नहीं, इस बायें रास्ते से···

थाने के दरोगा बाबू की बातें अब भी उसे याद आ रही थीं । थाने के

दरोगा वावू ने पूछा था—तुम्हारे वावू क्या करते हैं ?

भगीरथ वोला था—कुछ भी नहीं करते, पहले नौकरी करते थे···

—कौन-सी नौकरी करते थे ?

—पुलिस की नौकरी।

दरोगा वावू कुछ अकचका गये थे—पुलिस की नौकरी ? कहाँ ? किस शहर में ?

—विलासपुर में···

कहाँ विलासपुर और कहाँ यह लखनऊ ! पुलिस के दरोगा वावू को लगता है इस वार कुछ अचम्भा हुआ था। उन्होंने पूछा--लेकिन अव ? अव क्या तुम्हारे दादा वावू रिटायर हो गये हैं ?

भगीरथ वोला—ना, दादा वावू ने नौकरी छोड़ दी है।

—नौकरी छोड़ दी है ? क्यों ?

—मैं नहीं जानता ।

दरोगा वावू को इस वार और भी अचम्भा हुआ। वे वोले—क्या नाम है तुम्हारे दादा वावू का वताओ तो ?

—सुललित चाटुज्जे।

—तो, अव यहाँ क्या करते हैं तुम्हारे वावू ?

—कुछ भी नहीं करते।

—कैसे चलता है तो फिर ?

—मा के कुछ गहने-गाँठ दादा वावू के पास थे, दादा वावू उसे ही वेचते हैं और चलाते हैं···

वातें वताकर भगीरथ को कैसा खराव-सा लग रहा था। पुलिस का लगता है कायदा ही इसी तरह का है। लेकिन एक कोई खोज-खवर दें, ऐसा कोई इशारा नहीं मिला। सिर्फ नाम-ठिकाना, वाप का नाम, कलकत्ते का पता लिख लिया था। और वहाँ से लौटते वक्त ही इस कुन्दनलाल से भेंट हो गयी।

हठात् भगीरथ चिल्ला उठा—ठहरो-ठहरो, घर पहुँच गया।

घर का दरवाजा खोलने जाते ही लगता है कुछ आवाज हुई। वगल में ही घर के मालिक रहते हैं। भगीरथ को देखकर वे वोले—क्यों भाई भगीरथ, पा गये ? अपने दादा वावू का पता पा गये ?

भगीरथ वोला—नहीं वावू, थाने में जाकर नाम लिखवा आया···

—तो वहीं इतनी रात हो गयी ?

भगीरथ वोला—नहीं, और भी तमाम जगहों में घूमा, उसके वाद रास्ते में भेंट हो गयी दादा वावू के एक दोस्त के साथ···

—दोस्त ? कौन दोस्त ? कुन्दनलाल ? वही हरामजादा ?

—जी हाँ, हर [illegible] हा है। एकदम खून में हरामजादा। कहता क्या है, दादा बाबू एक औरत के पल्ले में पड़ गये हैं···

—औरत कौन है ?

—केसर बाई या क्या नाम बताया लगता है···

—केसर बाई ?

—कौन जाने ?

घरवाला कुछ समझ नहीं सका। अदरक के रोजगारी जहाज की खबर ही क्यों रखें ? लखनऊ शहर में तो लड़कियों की कमी नहीं है कुछ। नाच-गाना और बाईजी को लेकर ही तो लखनऊ शहर है। इस शहर की सब बाइजियों के नाम रटकर रखना क्या मुमकिन है किसी के लिए ! और जो गृहस्थ लोग हैं वे यह सब खबर भी क्यों रखेंगे ?

घरवाले आदमी ने फिर ये सब बातें लेकर सिर नहीं पचाया। लेकिन फिक्र हुई उसे अपने भाड़े के मामले में। इस महीने में अगर किरायेदार उसका भाड़ा न दे तब क्या होगा ?

लेकिन भगीरथ उस वक्त तक दरवाजे का ताला खोलकर भगीरथ भीतर घुस गया था।

कुन्दनलाल जिस प्रकार बहुत रात बीते घर लौटता है, उसी तरह नींद से उठने के वक्त लेकिन वह ज्यादा देर नहीं करता। हजरतगंज की एक बस्ती के एक कमरे में वह किसी तरह रात काटता है। सिर किसी तरह ढुकाने के लिए ही वह घर में आता है। उसका बाकी सब काम बाहर-बाहर ही होता है

उस दिन भी हमेशा की तरह वह सवेरे-सवेरे नींद से उठा। उठकर पहले ही उसे जो चाहिए वह हुई चाय, चाय के लिए वह दौड़ता है रास्ते के मोड़ की एक दूकान में।

दूकान में तब तक काफी भीड़ जम जाती है। उनमें से कोई तांगेवाला, कोई मजदूर, कोई फेरीवाला होता है। और कोई कुन्दनलाल के समान बेकार। लखनऊ शहर में इस तरह के बेकार बहुत हैं। सिर्फ लखनऊ क्यों, भारतवर्ष के सब शहरों में ही हैं। उनका जात-वंश क्या है, उनका रोजगार क्या है, उनके शुरू का इतिहास क्या है, यह कोई नहीं जानता। और उनका शुरू का इतिहास जैसे जाना नहीं जा सकता, उनका अन्त भी उसी तरह अदृश्य है। असल में वे ही पृथिवी के डस्टबिन हैं।

तिस पर इन डस्टबिनों से बात कीजिए, वे लोग आपको समझा देंगे कि वे अगर न होते तो मनुष्य-समाज एक दिन रसातल में डूब जाता।

कुन्दनलाल जब चाय की दूकान में बैठा गप्पें करता तब वह राजा को मारता, वजीरों को मारता। वे लोग साबित कर देंगे कि उन लोगों ने ही अंग्रेजों को भारतवर्ष से भगाया है, 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के समय बम गिराकर रेल लाइन उखाड़ फेंकी है, उन लोगों ने ही उस समय टेलिफोन और टेलिग्राफ के तार काट दिये थे और अन्त में जब देश आजाद हुआ तब जाने कहाँ से कितने सुविधावादी रुपयेवाले लोग उड़कर आकर उनके सिर पर जमे बैठे हैं।

कुन्दनलाल कहता—यही हुई दुनिया भाई, इसका नाम है दुनिया···

कुन्दनलाल चा पीते-पीते ही व्याख्यान देकर साबित करता कि शराबी गुण्डों, बदमाशों, चोरबाजारी करनेवाले लोगों के दल की वजह से देश जहन्नुम में चला गया है। यही उसका असली दुख है।

आसपास के गाहक कुन्दनलाल की बातों की तारीफ करते। कहते—ठीक बात, ठीक बात···

उसके बाद कोई-कोई पूछते—तो फिर इसका बदला लेने का क्या रास्ता है कुन्दनलालजी ?

कुन्दनलाल बोल उठता—अरे इसके लिए हमी साले जिम्मेदार हैं···

—क्यों ? क्यों ?

कुन्दनलाल एक सिगरेट जलाकर धुंआ छोड़ते-छोड़ते बोलता—अरे, हाँ, इसके लिए तो हमीं साले जिम्मेदार हैं। हम शराबी, गुण्डे, धोखेबाज, जुआड़ी हैं। हम लोग अगर इन्सान होते तो वे साले लोग हमारे सिर पर चढ़कर क्या बैठ पाते ?

आसपास के रिक्शेवाले, ताँगेवाले, मजूर-बोझेवाले, फेरीवाले सब चाय की चुस्की लेकर कुन्दनलाल की बातों में हाँ-में-हाँ मिलाते। कहते—ठीक बात है, ठीक बात है···

कुन्दनलाल कहता—हम लोग सब मुर्दा हैं···

सब बोल उठते—ठीक बात है, ठीक बात है···

लेकिन उसके साथ ही कुन्दनलाल उल्टे सवाल करता—बोलो तो भाई लोग, हम क्यों मुर्दा हैं ? क्यों बेवकूफ हैं ?

एक आदमी हठात् जवाब देता—क्योंकि हम लोग दारू पीते हैं।

सब कहते—ठीक बात है, ठीक बात है···

सब शराब पीते हैं यह बात उन्होंने कुन्दनलाल के सामने एक साथ मंजूर किया।

कुन्दनलाल फिर बोला—लेकिन हम लोग झूठ बात बोलते हैं, बोलते हैं कि नहीं ?

सबने सिर झुकाकर मंजूर किया—हाँ, झूठ बोलते हैं हम लोग।

—तो फिर ? तो हम लोगों का सर्वनाश नहीं होगा तो किसका होगा भइया ? हम लोग ही अपनी तकलीफ के लिए जिम्मेदार हैं, और कोई नहीं। और देखो जाकर चौक मे बाईजी के घर मे, वहाँ रुपये उड़ते हैं, शराब उड़ती है, राजा-महाराजा सब वहाँ जाकर मौज करते हैं, उन्हें तो कोई तकलीफ नही है, उन लोगों को तो रुपयों की कोई कमी नही हैं।

सच ही तो। सबने अच्छी तरह सोच-विचारकर देखा। सच ही तो। बड़े लोग तो बडे आराम से हैं। चौक के गली-मुहल्ले में जाने पर तो दिखायी पड़ता है कि कितने ही खानदानी नवाब-राजा-महाराजाओं की मोटरगाड़ियाँ एक-एक लाइन से खड़ी हैं। घर-घर में ठुमरी-गजल-कजरियाँ चल रही हैं और फूल, शराब, गोश्त-कबाब-मसालों की गन्ध से जगह गमगमा रही है। तो फिर वे लोग क्या शराब नही पीते, वे लोग क्या झूठ नही बोलते ? तो फिर क्यों वे लोग इस चाय की दूकान मे बैठकर नाश्ता करते हैं ?

कुन्दनलाल उन लोगों को खत्म करके तब उठता है।

कुन्दनलाल के उठ खड़े होते ही दूकानदार कहता है—कुन्दनलालजी, हमारा पैसा ?

—पैसा ? काहे का पैसा रे बाबा ?

—हुजूर चाय का दाम। आज एक महीने से चाय और नाश्ते का दाम जो बाकी पड़ा है···

टालमटोल के स्वर मे वह बोल उठा—अरे धत्, मैं क्या बड़ा आदमी हूँ जो तुम्हारा रुपया मार दूँगा ? मैं तो तुम्हारे समान मशक्कत करके खानेवाला आदमी हूँ,—गरीब लोग क्या रुपया मारते हैं ? पा जाओगे, पा जाओगे, मैं तुम्हें धोखा नही दूँगा—कुन्दनलाल ऐसा नमकहराम नही है—समझे ?

कहकर रास्ते की तरफ नजर पड़ते ही अकचका गया। ऐसा तो नहीं हो सकता। उस्तादजी इधर क्यों ?

—उस्तादजी, उस्तादजी—छरहरी दाढी, मेंहदी के पत्तों से रँगी हुई। पैरों में वे ही नागरा जूते, और देह मे कुरते के ऊपर मिरजई, पहनावे में चुस्त। ये उस्तादजी न हों यह हो नही सकता।

—उस्तादजी, उस्तादजी···

उस्तादजी ने लगता है तब बात सुनी। उन्होंने पीछे की तरफ देखा, लेकिन वे पहचान नहीं सके कुन्दनलाल को।

बोले—कौन ?

—मैं कुन्दनलाल हूँ उस्तादजी, कुन्दनलाल वाजपेयी। मुझे पहचान न सके ?

उस्तादजी तब भी पहचान नही सके। उन्होंने पूछा—कौन कुन्दन-

लाल ?

—जी कुन्दनलाल वाजपेयी, मैं केसर बाई की मजलिस में कितनी ही बार गया हूं, गाना सुना है मैंने, आपकी सारंगी सुनी है। आप केसर बाई के उस्ताद जी हैं, आपको कौन नहीं पहचानता ?

उस्तादजी के मुंह पर अब तक जाने कैसा उदास-उदास भाव था, इस बार मानो वे कुछ खुश दिखायी पड़े।

बोले—तुम वही कुन्दनलाल हो ? तुम्हारा दोस्त, तुम्हारा मीत तो इस वक्त केसर बाई के पास है।

—मेरा दोस्त ? मेरा दोस्त कौन ?

—अरे वही छोकरा। उसका नाम नहीं जानता। जिसे लेकर तुम केसर बाई के घर में गये थे, वही बंगाली छोकरा···

कुन्दनलाल मानो आसमान से गिरा—कौन चेटर्जी ? चेटर्जी की बात कह रहे हैं उस्तादजी ?

उस्तादजी बोले—हाँ, वही होगा···

—लेकिन वह किस तरह केसर बाई के पास गया ? उसे रुपये कहाँ मिले ? कितने रुपये दिये उसने ?

उस्तादजी बोले—यह मैं नहीं जानता। मैंने केसर बाई को छोड़ दिया है···

कुन्दनलाल चमक उठा। ऐसा अजीब मामला जिन्दगी में कभी देखा नहीं कुन्दनलाल ने। लखनऊ शहर के सब लोग जानते हैं कि केसर बाई का नाम-धाम, उसकी कीर्ति-प्रतिष्ठा, उसका रुपया-पैसा-मान-दान-गौरव सबकुछ की जड़ में ये ही उस्तादजी हैं। इन्हीं उस्तादजी की मेहरबानी से तमाम हिन्दुस्तान के खानदानी नवाब-नवाबजादे आज केसर बाई के घर में आकर भीड़ जमाते हैं। इन्हीं उस्तादजी की मेहरबानी से आज केसर बाई का नाम सबके मुंह-मुंह पर है। इस केसर-बाई के पास इन कुछ दिनों में ही इतना रुपया जम गया है, इसके पीछे भी ये ही उस्तादजी हैं।

कुन्दनलाल ने पूछा—केसर बाई को आपने छोड़ दिया ? क्यों, क्या किया था केसर बाई ने ?

उस्तादजी का मुंह मानो जहरीला हो उठा। वे बोले—वही तुम्हारा दोस्त। तुम्हारे दोस्त का किया हुआ ही यह मामला है···

—मेरा दोस्त ? चेटर्जी ? चेटर्जी ने यह तमाशा किया ?

—ना, चेटर्जी के केसर बाई के घर में जाने के बाद से ही उसका गाना-बजाना बन्द हो गया है। आमदनी खत्म। रामनगर के राजा साहब के मैनेजर आये थे, दस हजार रुपयों का मुजरा, उन्हें भी लौटाल दिया, एक बार मुलाकात

भी नहीं की। तुम्हारे दोस्त ने केसर बाई का यही सर्वनाश किया है, मेरा सर्वनाश किया…

—लेकिन चेटर्जी वहाँ किसके साथ गया ? किस तरह गया ? आपने मुझे एकदम अकचका दिया उस्तादजी ! जिस केसर बाई को आपने इतना ऊँचा उठाया है उसी ने क्या आज आपको रास्ते पर बिठाल दिया !

उस्तादजी बोले—इसका बदला मैं लूँगा कुन्दनलाल…

—जरूर बदला लीजिए आप। और मैं भी चेटर्जी को देख लूँगा। मेरे दोस्त ने ही आपका ऐसा सर्वनाश किया।

उसके बाद थोड़ा ठहरकर बोला—और अभी तो चेटर्जी के नौकर से मेरी भेंट हुई, वह तो कुछ भी नहीं जानता। वह तो पुलिस के थाने-थाने में घूम-फिर रहा है। तिस पर वह उधर केसर बाई के घर में जाकर बैठा है।

उस्तादजी बोले—उसका जो मन हो करे, उससे मेरा क्या आता-जाता है कुन्दनलाल ? वह क्या मेरा खाता है, या मैं उसका खाता हूँ ? लेकिन आज दोपहर से मैं रास्ते में आ खड़ा हुआ हूँ…

—तो आप अब फिर केसर बाई के घर में नहीं रहते ?

—नहीं, लेकिन मैं इसका बदला लूँगा, ठीक बदला लूँगा—देख लेना तुम !

—किस तरह बदला लेंगे उस्तादजी ?

—मैं उस बंगाली बाबू को वहाँ से भगाऊँगा।

—किस तरह भगाइयेगा ?

—यह अभी नहीं बताऊँगा कुन्दनलाल। लेकिन जिसने मेरा सर्वनाश किया है उसे मैं रिहाई नहीं दूँगा। किसी भी तरह उसी बंगाली बाबू की वजह से ही तो मुझे आज यह तकलीफ है, यह मैं बर्दाश्त नहीं करूँगा किसी भी तरह…

यह कहकर गुस्से से धड़धड़ाते हुए उस्तादजी आगे बढ़े जा रहे थे। लेकिन कुन्दनलाल ने उस्तादजी का साथ नहीं छोड़ा।

वह बोला—उस्तादजी, आप रह कहाँ रहे हैं अब ?

उस्तादजी ने कोई जवाब नहीं दिया। और भी जोर-जोर से पैर बढ़ाकर वे चलने लगे। कुन्दनलाल चलने लगा साथ-साथ। इतना बड़ा मौका उसे जिन्दगी में दोबारा नहीं मिलेगा। उस्तादजी का मुँह मानो गुस्से से फटा जा रहा था। साथ ही इन्हीं उस्तादजी को पहले कितना घमण्ड था। पहले का वक्त होता तो इस तरह वे रास्ते में भी नहीं फिरते, और कुन्दनलाल को देख-कर इस तरह खड़े होकर बात भी न करते।

चलते-चलते एक घर के सामने खड़े हुए उस्तादजी। कुन्दनलाल ने देखा, भीतर कुछ माल-असबाब नहीं है, सिर्फ मामूली एक खटिया है, उस खटिये पर मैली एक चादर बिछी है। उस पर वही सारंगी है। भीतर घुसकर उस्तादजी

ने मुंह फिराकर कुन्दनलाल को देखकर कहा—मैं यहीं रहता हूँ अब···

कुन्दनलाल ने कहा—मुझे एक बात कहनी है उस्तादजी···

—कौन-सी बात ?

कुन्दनलाल बोला—मैंने तमाम दुनियादारी देखी है, लेकिन केसर बाई के समान औरत कभी नहीं देखी उस्तादजी।

—क्यों ?

—एक बाबू के लिए एक बाजारू औरत इस तरह सब छोड़ दे यह तो बड़ी अजीब घटना है उस्तादजी ! ऐसी औरत को आपने कहाँ से जुटाया ?

उस्तादजी ने दाढ़ी में हाथ फिराते-फिराते कहा—नसीब कुन्दनलाल नसीब। असल में केसर बाई बंगाली है···

—बंगाली ? तो फिर चैटजी ने जो कहा है सब सच है ?

—हाँ, सब सच है।

—बंगाली मिलिटरी डाक्टर की लड़की ?

उस्तादजी बोले—हाँ, मैंने ही उसे तालीम देकर इन्सान बनाया है। लेकिन उसी ने मुझे आज निकाल बाहर किया कुन्दनलाल। मैं इसका बदला वाजिब तरीके से लूंगा कुन्दनलाल, तुम देख लेना। मैं आज बूढ़ा हो गया हूँ, मैं आज रास्ते का भिखारी हूं, मेरे पास इतना रुपया जमा नहीं है जो मैं अपना पेट चला सकूँ···

कुन्दनलाल बोला—तो इतने दिनों उस्तादी करके आपने कुछ जमा नहीं किया उस्तादजी ?

उस्तादजी बोले—रुपया जमा किसलिए करता ? मैंने मुजरों का हिस्सा पाया है, और जो पाया है, सब दोनों हाथों से खर्च किया है। उस वक्त सोचा रुपया जमा किसलिए करूंगा ? मेरे बीवी-लड़के-बाल-बच्चे कुछ भी तो नहीं हैं। मैंने सिर्फ रुपये पाये हैं और उड़ाया है। तब क्या सोचा था कि केसर बाई इस तरह मेरे साथ नमकहरामी करेगी ?

कुन्दनलाल सब सुनकर सोचने लगा।

वह बोला—उस्तादजी, तो फिर क्या कीजियेगा ?

—मैं भी बदला लूंगा, तुम देख लेना कुन्दनलाल···

यह कहकर और कुछ न कर सकने की वजह से हुक्के के गड़गड़े से कलक लेकर उसमें तम्बाकू सजाने लगा। अर्थात् लगता है बुद्धि के शुरू के हिस्से में धुंआ देने से एक कुछ मतलब की खोज मिलेगी।

कुन्दनलाल बोला—मैं एक सलाह दूं उस्तादजी ?

—क्या सलाह ?

—चैटर्जी का नौकर है भगीरथ। मैं उसे पहचानता हूं। वह अगर पुलिस

म डायरी लिखाये ?

—कौन-सी डायरी लिखायेगा ?

—थाने में जाकर इजहार देगा कि केसर बाई ने उसके बाबू को अपने घर में रोक रक्खा है, तो फिर पुलिस जाकर केसर बाई के घर पर जाकर हमला करेगी।

उस्तादजी हो-हो करके हँस पड़े। वे बोले—तुम बिल्कुल पागल हो ! शराब पिये बिना ही तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। तब पुलिस की बात से केसर बाई तुम्हारे दोस्त को छोड़ देगी, या तुम्हारा दोस्त ही केसर बाई को छोड़ देगा ? और पुलिस तो केसर बाई से मोटी रकम माहवारी पाती है, वही फिर केसर बाई के घर पर हमला क्यों करेगी ?

—तो फिर और क्या किया जाय उस्तादजी ?

—वह सब मैंने ठीक कर लिया है। अभी लजवन्तिया यहाँ आयेगी। वह मेरे दल की औरत है।

—लजवन्तिया कौन ?

—केसर बाई की नौकरानी। लजवन्तिया की आमदनी भी तो कम हो गयी है न। वह पहले की तरह बखशीश-बखशीश कुछ पाती नहीं। उसका भी तो बंगाली बाबू के ऊपर···

लेकिन बात फिर खत्म नहीं हुई। उसके पहले ही दिखायी पड़ा कि एक ताँगा आकर खड़ा हुआ उस्तादजी के घर के सामने के रास्ते में। सिर से पैर तक बुरका पहने हुए औरत।

उस्तादजी उठ खड़े हुए। बोले—वही लजवन्तिया आयी है, तुम अब जा सकते हो कुन्दनलाल, हम लोगों में अब काम की बात होगी···

कुन्दनलाल बोला—मैं भी तो आपके दल का हूँ उस्तादजी, मैं यहाँ ठहरूँ न। मैं भी तो आपको मदद दे सकता हूँ···

—नहीं-नहीं-नहीं, तुम अभी जाओ···

उसी वक्त बुरका पहनी हुई औरत घर के भीतर आयी। जाली से ढँकी आँखों से कुन्दनलाल को देखकर वह मानो कुछ संकोच करने लगी।

उस्तादजी ने हुक्के की नली नजदीक रखकर लजवन्तिया से कहा—बैठो इस चारपाई पर···

यह कहकर कुन्दनलाल की तरफ देखकर उसे डाँटने लगे।

बोले—तुम जाते क्यों नहीं ? जाओ—बाहर जाओ···

इसके बाद फिर कुन्दनलाल का खड़ा होना मुमकिन नहीं था। वह निहायत बे-तबीयत बाहर निकल गया। उस वक्त उसे नशा नहीं था। रात के नशे का घोर सवेरे की चाय के कप के साथ ही एकदम पूरी तरह से काफूर हो चुका

कुन्दनलाल के बाहर निकलने के साथ-साथ ही उस्तादजी के गले की आवाज सुनायी पड़ी—दरवाजा बन्द कर दो लजवन्तिया···

लजवन्तिया ने तब मुँह से बुरके का ढक्कन खोल दिया। मुँह का चेहरा देखकर ही मालूम पड़ा कि वह खूब डर गयी है। उसी हालत में उसने पहले दरवाजा बन्द कर दिया। उसके बाद घर की दोनों खिड़कियों के पल्ले भी बन्द करके वह बेफिक्र हुई। और उसके बाद आकर बैठी चारपाई पर···

उस्तादजी बोले—इतनी काँप क्यों रही है लजवन्तिया? डर लगता है?

लजवन्तिया उस वक्त भी हाँफ रही थी। उसके मुँह से कोई बात निकल नहीं रही थी।

उस्तादजी लजवन्तिया को भयभीत देखकर अभय देने लगे। वे बोले—डर क्या है तुझे लजवन्तिया, मैं तुझे बहुत-से रुपये दूँगा, फिर तेरे पास बहुत रुपये होंगे। तू इतना डरती क्यों है झूठ-मूठ, बोल तो भला? डरो मत···

इस बार लजवन्तिया के मुँह से थोड़ी-सी बात फूटी। उसकी हँफाई रुकी।

उस्तादजी ने फिर पूछा—सब ठीक है न?

लजवन्तिया बोली—बड़ा डर लगता है उस्तादजी, बाई साहिबा हर वक्त बंगाली बाबू के साथ-साथ रहती हैं···

—बंगाली बाबू अब कैसा है?

—पहले की बनिस्बत अब बहुत अच्छा है···

—अब भी शराब पीता है?

—बहुत शराब पीना चाहता है बंगाली बाबू, लेकिन बाई साहिबा शराब पीने नहीं देतीं।

—क्यों?

—डाक्टर साहब ने शराब पीने को मनाकर दिया है—सिर्फ दूध पीने को कहते हैं, मछली-मांस-अण्डा यही सब खाने को कहते हैं। लेकिन बंगाली बाबू सिर्फ शराब पीना चाहता है···

उस्तादजी बोले—शराब ही हो या दूध ही हो, तुझे ताक-ताककर रहना होगा···

—ताक-ताककर ही तो हूँ···

कुन्दनलाल घर के बाहर जरूर चला गया था, लेकिन थोड़ी दूर जाते ही उसे कुछ सन्देह हुआ। उसे उस्तादजी ने इस तरह घर से बाहर क्यों कर दिया! तो फिर कोई छिपा मतलब है क्या? कौन-सा मतलब हो सकता है? सोने-चाँदी के कारबार के खून से बना है कुन्दनलाल। बाजपेयी-वंश का खून उस वक्त भी उसकी नसों में बह रहा था। त्याज्यपुत्र ही हो या

शराबी-बदचलन-आवारा है
तब भी उसका ऊँचा था।
वह फिर लौट आया।
की तरफ घुसा। उधर ही
सो हों, लेकिन कान लगाने
भीतर की बातचीत अब
भी नजदीक कान लगाये रहने
कुन्दनलाल ने दाँतों से द
भीतर उस समय लगता है
न चैटर्जी, फल-गोश्त कुछ ख
लेकिन केसर बाई उसे शराब म
मना किया है। सब तरफ शायद
अकस्मात् एक बात से कुन्दन
जय संकटमोचनजी, जय मह

...आपको जरूरत नहीं है डाक्टर साहब,
...जायेगा तो डाक्टर बाबू
...अगर मुझे शराब पीने
...डाक्टर बाबू। ऐसी
...हैं...
...बंगला
[illegible]

फिर खड़ा नहीं हुआ कुन्दनलाल वहाँ। ज्यादा वहाँ खड़े होना उसके लिए खाली नहीं था। कुन्दनलाल सीधे रास्ते में आकर खड़ा हुआ। और उसके बाद हनहनाता हुआ एकदम बंगाली टोले की चौहद्दी में वह गायब हो गया।

लखनऊ शहर के पूरे इलाके में उस वक्त सबकुछ नियम-तरीके से चल रहा था। ट्रेन आकर ठहरती थी नियम से और छूटती भी थी नियम से। आफिस-बैंक, दूकान-हाट वक्त से खुलते थे। वक्त से ही नियम से मनुष्य सबेरे सोकर उठते थे और नियम-समय से फिर बिछौने पर सो जाते थे। लखनऊ के सिविल लाइन्स से लेकर बंगाली टोला तक का हर आदमी नियम से अपना काम-काज करता चला आ रहा था।

लेकिन तो भी समय-नियमपालन से बाहर अदृष्ट लोकदृष्टि की आड़ में कहाँ मानो क्या घट रहा है यह किसी के जानने की बात नहीं थी। हाँ न हो, न जानने का ही नियम है। जानने पर विश्व-विधाता के जगत-संसार के [illegible] के परिचालन में लगता है बाधा पड़ती। एक दिन हठात् कहीं एक [illegible] में उलट-पुलट होते ही उस दिन सबको होश आ जाता और [illegible] कहता—गया—गया…

यह भी ठीक वैसा है।

बहुत अच्छे थे केसर बाई के [illegible]
[illegible]

कुन्दनलाल के वाहर निकलने के ~दे जाते। या कभी दूर उत्सव-आयोज
आवाज सुनायी पड़ी—दरवाजा वन्को सन्तुष्ट करते और उसके वदले केसर वा
लजवन्तिया ने तव मुंह से गिनकर अपने को कृतार्थ-सफल समझते।
देखकर ही मालूम पड़ा जाने कहाँ से जाने क्या हो गया, हठात् एक दिन ए
दरवाजा वन्द कर दि~र वाई की मजलिस में घुसकर उसे आरती कहकर पुका~
करके वह वेफिक्र से सव नियमों के विधि-विधान चकनाचूर होकर चारों तर~
उस्ताद~ में छितर गये। केसर वाई की मजलिस में उस दिन से फिर घुंघ
~~ नहीं उठे, लजवन्तिया ने फिर अपनी वखशीश नहीं पायी, उस्तादजी
न~ौर केसर वाई के मुजरे का हिस्सा नहीं पाया, तवलची वरकत अली वरखास
हो गया, और सरदार अली सदर दरवाजे में भांग पीकर ऊँघने लगा।

डाक्टर कोठारी उस दिन भी आये। रोगी की परीक्षा की उन्होंने। केस~ वाई नजदीक ही खड़ी थी। उसने डाक्टर कोठारी से पूछा—कैसा देखा डाक्ट~ साहव ?

डाक्टर कोठारी का मुंह जाने कैसा भारी-भारी था।

सुललित विछौना छोड़कर उठ वैठा।

वह वोला—डाक्टर वावू, आरती मुझे शराव नहीं देती···

डाक्टर कोठारी वोले—नहीं, आपको शराव नहीं दी जा सकती। मैंने शराव देने को मना कर दिया है···

सुललित वोला—लेकिन डाक्टर वावू, शराव न पीने से मुझे सव वातें या~ आ जाती हैं, मैं कुछ भी भूल जो नहीं पाता···

—क्या नहीं भूल पाते आप ?

—मैं भूल नहीं पाता कि मेरी वजह से आरती का सर्वनाश हुआ है···

—कैसा सर्वनाश ?

आरती सुललित की वात में वाधा डालकर वोल उठी—तुम चुप रहो सुललित दादा, तुम ज्यादा वात मत करो, तुम चुप रहो, तुम सो जाओ···

डाक्टर कोठारी अवाक् हो गये सुललित की वात सुनकर। कौन है आरती ? यह तो केसर वाई है, इसे आरती कहकर पुकारता क्यों है वंगाली भला आदमी ?

—आप सुनिए डाक्टर वावू, आरती जानती है कि मैंने उसका क्या सर्वनाश किया है। मेरे लिए ही आरती ने अपने पति को छोड़ा है, संसार-परिवार छोड़कर, लड़के-लड़कियां छोड़कर यहां चली आयी है, यहाँ आकर केसर वाई हो गयी हैं—इस सवके लिए मैं ही जिम्मेदार हूँ डाक्टर वावू, यह वात मैं भूल नहीं सक~ रहा हूँ किसी तरह···

डाक्टर कोठारी ने केसर वाई की तरफ देखा। वे वोले—क्या मामला है केसर वाईजी ? क्या मामला है वोलिए तो···

आरती बोली—ये सब बातें सुनने की आपको जरूरत नहीं है, डाक्टर साहब, [illegible] आपको सुनने की जरूरत नहीं है…

सुललित बोला—उन्हें सुनने ही अगर नहीं दिया जायेगा तो डाक्टर बाबू [illegible]स तरह समझेंगे कि मैं क्यों शराब पीना चाहता हूँ? अगर मुझे शराब [illegible] न दीजिए तो आप मुझे दवाई देकर नींद में सुला दीजिए डाक्टर बाबू। [illegible]द में सुला दीजिए कि किसी दिन कभी मेरी वह नींद फिर न टूटे…

डाक्टर कोठारी कुछ भी समझ नहीं पा रहे थे। केसर बाई [illegible] बातें कर रही थी, तो फिर क्या सचमुच केसर बाई बंगाली है?

उन्होंने पूछा—आप क्या सचमुच बंगाली [illegible] हैं?

केसर बाई मानो कुछ शर्मिन्दा हो गयी। बोली—हाँ डाक्टर साहब, मैं [illegible]गाली हूँ…

सुललित बात के बीच में बोल उठा—डाक्टर बाबू [illegible] नहीं। मैं सब जानता हूँ। उसके साथ मेरे विवाह की सब बात [illegible], [illegible] मी है मेरी तकदीर कि एक दिन अकस्मात् [illegible] और आरती को लेकर उनके पिता [illegible], और उस दिन [illegible] भी तकदीर फूट गयी, और आरती का [illegible]…

—नरक, नरक क्यों कहते हैं [illegible]?

—नरक नहीं है? जानते हैं डाक्टर बाबू, आरती [illegible]? [illegible] पति की [illegible] है, [illegible] बर्बाद कर दिया है डाक्टर साहब, [illegible] कर दिया है [illegible]…

आरती बोली—[illegible] डाक्टर साहब, [illegible] करने को [illegible]।

डाक्टर कोठारी [illegible] हैं, [illegible] बदसूरत [illegible] देखने के लिए [illegible] देखा, न [illegible]।

उन्होंने [illegible]—[illegible]?

[illegible] कौतूहल [illegible] आदमी हैं। [illegible] बुढ़ापे में [illegible]। [illegible] श्रद्धा के [illegible] हैं। [illegible] इसलिए इस [illegible]

सुललित बोला—हर वक्त वे ही सब बातें मुझे याद आ जाती हैं डाक्टर बाबू। लगता है मैं कसूरवार हूँ, मैं गिल्टी हूँ···

—तो आप यहाँ इस मुहल्ले में कैसे आये ? कैसे केसर बाई से इतने दिनों के बाद आपकी मुलाकात हो गयी ?

सुललित बोला—अकस्मात्, अकस्मात् भेंट हो गयी डाक्टर बाबू, मैं अपने एक दोस्त के साथ रास्ते से जा रहा था, अकस्मात् एक गाना सुन पाया, जो गाना विवाह के पहले आरती मुझे गाकर सुनाती थी, झिंझिट खम्बाज का सुर नवाब वाजिद अली शाह का लिखा हुआ। मेरा दोस्त मुझे ऊपर ले आया, मैंने देखा जो मैंने सोचा था वही···

—आप यहाँ क्या करते हैं ?

सुललित बोला—करूँगा और क्या डाक्टर बाबू, यहाँ कुछ भी नहीं करता एक नौकरी करता था, पुलिस की नौकरी···

—पुलिस की नौकरी ?

हाँ, इंडिया गवर्नमेंट का एंटि-करप्शन अफसर था, एक दिन बिना जा मैंने आरती के पति को गिरफ्तार किया था···

—यह बात है क्या ? कहकर डाक्टर कोठारी ने केसर बाई की तरफ ताका।

आरती ने उस बात का कोई जवाब नहीं दिया, मानो शर्म-अपमान से अपने ऊपर घिन से वह सिर नीचा किये रही।

—डाक्टर बाबू ! मेरा एक अनुरोध मानियेगा ?

—क्या बोलिए।

—आप आरती को अपने पति के पास लौट जाने को कहिए। यह अगर अपने पति के पास लौट जाये तो फिर आप जो कहियेगा मैं वही मानूँगा मैं शराब पीना छोड़ दूँगा डाक्टर बाबू, मैं वायदा करता हूँ, फिर शराब छुऊँगा नहीं। मैं तब दूध पिऊँगा, मछली खाऊँगा, गोश्त खाऊँगा, आप जो खाने को कहियेगा, वही खाऊँगा, आरती को सुखी होते देखकर ही मैं सुखी होऊँगा···

डाक्टर बाबू ने फिर केसर बाई की तरफ देखा। उन्होंने पूछा—आप पति के पास लौट क्यों नहीं जातीं केसर बाईजी ? आपके पति कौन हैं ?

केसर बाई के कोई जवाब देने के पहले ही डाक्टर कोठारी बोले—जरूर मेरा डाक्टरी करने आकर ये सब बातें पूछना वाजिब नहीं है, लेकिन मैं इस रोगी के भले के लिए ही ये सब बातें पूछ रहा हूँ। आपके पति के पास लौट जाने से अगर ये अच्छे हो जायें तो इसमें आपको आपत्ति क्या है ? आप क्या यह नहीं चाहतीं ?

केसर बाई बोली—आप जो बोल रहे है वह मुमकिन नहीं है डाक्टर साहब…

सुललित बात करते-करते कभी उठ पड़ता था, कभी खड़ा हो जाता था। वह बोला—क्यों मुमकिन नहीं है डाक्टर बाबू ? आप ही बताइए ? पति-पत्नी में झगड़ा नहीं होता ? झगड़ा भी होता है और फिर मेल भी हो जाता है। इसीलिए यहाँ चली आयेगी, इस तरह जिन्दगी बितायेगी ? यह आप सोच सकते हैं, यह आप कल्पना कर सकते हैं ?

डाक्टर कोठारी दोनों की बातें सुनकर बड़े भरम में पड़ गये। इतने दिनों उन्होंने कितनी दवाएँ, कितने इंजेक्शन, कितना पथ्य कितना क्या नहीं दिया ? किसी से कुछ नहीं हो रहा था। उनकी इतने दिनों की इतनी जानकारी मानो इस रोगी के पास आकर सब झूठ में बदल गयी थी। वे इतने दिनों नियम से बराबर यहाँ आये हैं, नियम से उन्होंने इलाज किया है, लेकिन किसी से भी कुछ हो नहीं रहा था…

उसके बाद वे थोड़ा सोचकर बोले—ठीक जिस तरह दवाई चल रही थी उसी तरह चलेगी, मैं अब चलूँ…

सुललित बाधा डालकर फिर खड़ा हुआ, वह बोला—लेकिन कहाँ डाक्टर बाबू, आपने तो मेरा अनुरोध नहीं माना ? आपने तो आरती को पति के पास लौट जाने को नहीं कहा ?

डाक्टर कोठारी महामुश्किल मे पड़ गये। वे बोले—लेकिन मैं इस मामले में क्या कर सकता हूँ बोलिए ? यह आप लोगों का निजी मामला है, और मैं भी आप लोगों का कोई नहीं हूँ, निहायत पराया हूँ, मैं ही फिर उनसे यह अनुरोध करने क्यों जाऊँगा, और वे ही फिर मेरा अनुरोध क्यो मानने लगीं ? किससे उनका भला है क्या उनका बुरा है यह वे ही ज्यादा समझेंगी, इस मामले में क्या मेरा कुछ कहना वाजिब है ?

सुललित बोल उठा—तो फिर मैं क्या करूँगा डाक्टर बाबू ?

—क्यों, आपको चिन्ता क्या है ? आप फिर अच्छे हो जायेंगे !

सुललित बोला—लेकिन आरती अगर सुखी न हुई तो फिर मेरे अच्छे होने से क्या होगा डाक्टर बाबू ?

डाक्टर कोठारी बोले—क्यों, आप फिर नीरोग हो जायेंगे।

सुललित बोला—यह क्या ? आरती मेरे लिए ही इस नरक मे आ पहुँची, और मैं नीरोग होकर बचा रहूँ ? मैं क्या पत्थर हूँ डाक्टर बाबू, खा-पहनकर जन्तु-जानवरों की तरह जिन्दा रह सकने से ही मैं सुखी रहूँगा ? मेरे पास क्या मन नाम का कुछ नहीं है ? मैं क्या अपने मन का गला दबाकर उसे मार डाल … या … कोई … ऐसा कर सकता है ? बोलिए डाक्टर बाबू, यह

कोई कर सकता है ?

डाक्टर कोठारी को उस वक्त देर हुई जा रही थी। उन्होंने रिस्टवाच की तरफ ताका। उन्हें देर हुई जा रही है।

वे बोले—आप दोनों का मामला है, मैं इस मामले में क्या बोलूँगा बोलिए। तो भी एक बात कह सकता हूँ, आपको गैस्टिक-ट्रबल है। अगर बचे रहना चाहते हैं तो और कुछ खाइए चाहे न खाइए, जितना पी सकें उतना दूध पीना होगा। कम-से-कम दिन में एक सेर से लेकर दो सेर तक दूध पीना चाहिए, उससे आपका लिवर भी सुधरेगा···

सुललित भी अस्थिर हो उठा। बोला—तो भी मेरा अनुरोध नहीं रखियेगा डाक्टर बाबू···

लेकिन डाक्टर कोठारी फिर खड़े नहीं हुए। बोले—मैं कल फिर आऊँगा, अभी चलूँ···

सचमुच उस वक्त रुकने का समय नहीं था डाक्टर साहब को। उनके बहुतेरे रोगी हैं। सारे शहर में घूम-घूमकर उन्हें रोगी देखने पड़ते हैं। उनके चेम्बर में भी हर वक्त रोगियों की भीड़ रहती है। सुललित का कमरा छोड़कर बाहर आते ही पीछे से केसर बाई के गले की आवाज आयी—डाक्टर साहब···

डाक्टर कोठारी पीछे फिरे।

—एक बात है डाक्टर साहब, कैसा देखा बताइए। बचेंगे तो ?

डाक्टर कोठारी बोले—बहुत दिनों का पुराना रोग है केसर बाईजी। बहुत दिनों से शराब पीते-पीते जो होता है वही हुआ है। इसे अच्छा होने में वक्त लगेगा, लेकिन आप उन्हें और कुछ खाने को मत दीजियेगा, सिर्फ दूध पीने को दीजियेगा···

—लेकिन दूध वह बिल्कुल पीना नहीं चाहता। असल में बचना ही नहीं चाहता वह। सिर्फ शराब देने पर पियेगा। लेकिन मैं जान-बूझकर कैसे वह विष दूँ बोलिए ?

डाक्टर बाबू बोले—लेकिन यह कहने से तो चलेगा नहीं। तो फिर उन्हें उनके निजी घर में भेज दीजिए।

—उसके निजी घर में तो एक नौकर के अलावा और कोई है नहीं। उसे वहाँ देखनेवाला आदमी कोई नहीं है न···

डाक्टर कोठारी बोले—तो फिर वे जो कहते हैं आप वही कीजिए—आप अपने पति के पास फिर लौट जाइए···

—लेकिन वहाँ तो मेरे लौटने का कोई उपाय नहीं है। मेरा यह कुल भी गया वह कुल भी गया, मैं अब क्या करूँ बोलिए तो डाक्टर साहब ?

—तो सचमुच आपके साथ क्या एक दिन मिस्टर चैटर्जी के विवाह का सब

ठीक-ठाक हो गया था ?

केसर बाई ने सिर नीचा करके कहा—हाँ।

—लेकिन तो फिर वह विवाह हुआ क्यों नहीं ?

केसर बाई बोली—अभी तो आपने सुना, मेरे पिता थे मिलिटरी के डाक्टर, अकस्मात् एक दिन रात को उनका बुलावा आ गया, तब लड़ाई छिड़ गयी अकस्मात्, आने के वक्त मैं घरवाले के पास एक ठिकाना दे आयी थी, लेकिन उसके बाद लगता है वे वह कागज खो बैठे थे।

—उसके बाद ?

उसके बाद केसर बाई शुरू से आखिर तक जो घटा था सबकुछ गड़गड़ाकर बोल गयी। कहीं कोई बात छिपायी नहीं। कैसे एक दिन पिता के मर जाने के बाद उसकी एक दूसरे आदमी से शादी हो गयी। उसके बाद किस तरह एक दिन वह मिलने गयी सुललित से बिलासपुर में, और उसके बाद यह मामला। मामले में पति को बचाने के लिए झूठ कहकर सुललित ने उसके पति को छुड़वा दिया। सबकुछ एक साँस में बोल जाने के बाद मानो केसर बाई निश्चिन्त हुई।

सब सुनकर डाक्टर कोठारी थोड़ी देर चुप रहे।

उसके बाद बोले—स्ट्रेंज, वेरि स्ट्रेंज, यह एकदम उपन्यास के समान लगता है। आप बंगाली हैं, यह मैं समझ ही नहीं सका था···

उसके बाद थोड़ा ठहरकर उन्होंने पूछा—तो फिर केसर बाई आपका नकली नाम है ? असल नाम आरती है ?

—हाँ डाक्टर बाबू, आरती गांगुली···

—स्ट्रेंज, वेरि स्ट्रेंज इन्डीड। इट एपीयर्स लाइक ए नावेल।

उसके बाद अकस्मात् लगता है खयाल आया कि बड़ा वक्त नष्ट हो गया। वे बोल उठे—अच्छा चलूँ, कल इसी वक्त फिर आऊँगा। यह कहकर उनके जाते ही बगल के कमरे से लजवन्तिया आकर बोली—बाई साहिबा, दूध तैयार है, दूँगी ?

—हाँ, दे जा···

कहकर केसर बाई फिर सुललित के कमरे में घुसी। देखा, सुललित अपने मन से ही कमरे के भीतर छटपटाता हुआ घूम-फिर रहा है।

केसर बाई बोली—क्या हुआ सुललित दादा, क्या सोच रहे हो ?

सुललित बोला—तुम्हारी ही बात सोच रहा हूँ आरती। यह मैंने किया ? अगर किसी का भला ही न कर सका तो मैं क्यों मनुष्य होकर क्यों मैं पृथिवी पर आया था, और क्यों फिर इतने दिनों जीवित रहा ? जानती हो आरती, पहले मेरी कितनी आशाएँ थीं, मनुष्य का भला

तितिविधि थी, वह जो उस दिन उस्तादजी के डेरे से बाहर निकलकर
की की फाँक से उसने जो सब बातें सुनी थीं उसके बाद से ही वह आदमी
मूल से एकदम बदल गया। सब अवाक् होकर दूसरे एक कुन्दनलाल को
ने लगे। शराब की दूकान में जाकर वह बैठता अवश्य, लेकिन मुँह से न जाने
या बिड़-बिड़ करता हुआ बकता रहता हर वक्त। शराब भी पीता और अवि-
राम बकता भी रहता।

कहता—सत्यानाश हो गया···

नजदीक में कोई-कोई बैठा हुआ अवाक् हो जाता। पूछता—किसका सर्व-
नाश हुआ है कुन्दन भइया ?

कुन्दनलाल कहता—हिन्दुस्थान का···

—हिन्दुस्थान माने ? हिन्दुस्थान का और क्या सर्वनाश हो गया ?

ज्यादा तंग करने से गुस्सा हो जाता कुन्दनलाल। बिगड़कर मारने दौड़ता
कहता—भाग साले भाग, हिन्दुस्थान का सर्वनाश हुआ जा रहा है और तुम
साले बैठे-बैठे शराब निगल रहे हो, तुमको शरम नहीं आती ?

सब लोग कुन्दनलाल की बात सुनकर हंसते। कहते—शराब हम लोग
सिर्फ पी रहे हैं, और तुम शायद पी नहीं रहे हो ? तुम क्या पी रहे हो ?

कुन्दनलाल ने बोतल मुँह में ढालते-ढालते कहा—मैं विष पी रहा हूँ··
कहकर खुद ही हँसने लगा। उसके साथ-ही-साथ और सब लोग भी
लगे। वे जितना हँसते कुन्दनलाल भी उतना ही हँसता। हँसते-हँसते अक
एक समय एकदम गम्भीर हो जाता।

कहता—हिन्दुस्थान जहन्नुम में जायेगा···

अकस्मात् कुन्दनलाल को गम्भीर देखकर दूसरे लोग भी गम
जाते।

कहते—क्या हुआ कुन्दन भइया, नशा हो गया है ?

कुन्दनलाल नाराज होकर खाली बोतल लिये हुए मारने दौड़ता
दुर साले, मुझे नशा क्यों होगा ? मैं क्या तुम लोगों की तरह शरा
हूँ ? मैं तो जहर पी रहा हूँ, मैं जहर पी रहा हूँ···

कहकर फिर बोतल मुँह में ढालता और फफक-फफककर रोत
वह रो क्यों पड़ा, यह भी कोई समझ न पाता। यह फिर क्या हो
लाल को ? ऐसा तो पहले कभी था नहीं कुन्दनलाल ?

एक ने पूछा—रोते क्यों हो कुन्दन भइया ? रो क्यों रहे
कुन्दनलाल आँसू-भरी आँखों से रो रहा था। बोला—हि
मिट्टी में मिल गया···

हिन्दुस्थान के मिट्टी में मिलने के साथ कुन्दनलाल का

कोई समझ न पाता। रोते-रोते अकस्मात् मजलिस छोड़कर फिर चलना शुरू करता। कुन्दनलाल के चले जाने पर सब उसके बारे में चर्चा करने लगते। माने कुन्दनलाल को कुछ हो गया है। नहीं तो कुन्दनलाल तो पहले ऐसे नहीं थे।

शहर के सब लोगों के मुँह में यही एक बात थी।

बहुतेरों ने कहा—खबर सुनी?

—कौन-सी खबर?

—हमारा कुन्दनलाल पागल हो गया है भइया।

—पागल? पागल हो गया है?

—हाँ, एकबारगी दिमाग बिल्कुल खराब हो गया है।

—लेकिन ऐसा क्यों हुआ?

—इतना नशा करने पर दिमाग बिगड़ नहीं जायेगा? सिर्फ शराब ही तो नहीं पीते, शराब पीने के साथ भांग भी खाता-पीता है, गाँजा पीता है, चरस पीता है। देख आओ न, चौक की बदनाम गली में आकर इस वक्त रास्ते के नायदान पर बैठे-बैठे बेताला गाना गा रहा है।

—यह कैसी बात है?

बात झूठ नहीं है, जो लोग उस मुहल्ले की तरफ जाते हैं उन सबने देखा है सबकुछ। देखा है कि कुन्दनलाल का पहले का-सा चेहरा अब नहीं है। मुँह में झाँप-झाँप दाढ़ी बढ़ गयी है, कितने दिनों से उसने दाढ़ी नहीं बनायी इसका कोई हिसाब नहीं है। पास में एक कुत्ता कुण्डली मारकर बैठा है और उसके ही पास उसे पकड़कर चिपकाये हुए कुन्दनलाल गाना गा रहा है—

दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे...

एक दिन उस्तादजी देख पाये।

—अरे, कुन्दनलाल हो क्या?

कुन्दनलाल उस्तादजी को देखकर हँसा। बोला—हिन्दुस्थान जहन्नुम में चला गया उस्तादजी, मैं भी जहन्नुम में जा रहा हूँ...

—तेरी ऐसी हालत क्यों हुई रे?

लेकिन इस बात का जवाब कौन देगा? केसर बाई के मकान के सामने की तरफ आ रहा था सरदार अली। बोला—कुन्दनलालजी पागल हो गये उस्तादजी...

—क्यों ऐसा पागल हो गया रे?

—नसीब! इतनी दारू पीने से बेहोश नहीं होगा!

—कितने दिनों से यहाँ है?

—बहुत दिनों से यहाँ पड़ा है उस्तादजी। बीच-बीच में कहीं चला जाता है और फिर आकर यहीं सो जाता है।

—खाता कहाँ है ? कौन उसे खाने को देता है

सरदार अली बोला—किसी-किसी दिन मैं ही दे देता हूँ, रोटी खा चाहता है। फिर कमरे के भीतर घुसता है। लजवन्तिया जब खाना पकाती तब किसी-किसी दिन भीतर घुस पड़ता है, चूल्हे के किनारे जाकर कहता है—लजवन्तिया, रोटी खिलाओ मुझे···

उस्तादजी ने जीभ से एक चुक-चुक आवाज की। बोले—अजब दुनिया··

भगवान की खुद ही तो दस दशाएँ हैं और उनकी ही सृष्टि मनुष्य की हजार दशाएँ होंगी इसमें अचम्भा होने की कौन-सी बात है ! उस्तादजी निज की ही क्या कम दुर्दशा हुई ? उस्तादजी ने खुद उस्ताद मइजुद्दीन खाँ साह से कठिन शिक्षा पायी थी। मइजुद्दीन उस्ताद ने मार-मारकर अपने शागिर्द तालीम देकर लायक बनाया था। मइजुद्दीन खाँ साहब ने सोचा था कि ए शागिर्द के समान शागिर्द बना जायेंगे वे। उनकी जितनी कमाई की विद्या थ वह सब उन्होंने इस छोकरे में ढाल दी थी। इसी हामिद खाँ में। लेकि शिक्षा पूरी होने के पहले ही गुरु मर गये। उसके बाद से ही लड़ाई शुरू हु उस्तादजी की जिन्दगी की। सिर्फ प्रतिष्ठा पाने की लड़ाई नहीं, खा-पहनक जिन्दा रहने की लड़ाई भी जुटी हुई थी उसके साथ। इन सब बाईजी के मुहल में सारंगी बजाकर रकम कमाने का रास्ता साफ करने की कठिन साधना उस्ता जी ने दिन के बाद दिन की। उसके बाद जब थोड़ी तकदीर जागी तब थोड़े संगीत-भक्त लोग अपने घर के लड़के-लड़कियों को गाना सिखाने की तालो देने के लिए हामिद खाँ को बुलाने लगे। लेकिन इससे कितना रुपया कमाया ज सकता था ? ज्यादा-से-ज्यादा बीस-तीस रुपये। अगर इससे भी ज्यादा हो त सब मिलाकर पचास-साठ। इससे ज्यादा नहीं। उससे उस्तादजी का पेट च जाने पर भी नशे की खूराक ठीक तरह से जुट नहीं सकी। अच्छी तरह सु लेकर जादू पैदा करने की कोशिश करने पर सिर्फ रोटी-दाल खाने से तो गा नहीं चलता। मिजाज चाहिए। और इस मिजाज की पहली जरूरत ही हु नशा। नशे की मौज में सुर लेकर साधना करने पर ही तो मन को एकाग्र कि जा सकता है।

इसी तरह उस्तादजी ने जब अधेड़ उम्र में पैर रखा तभी मिल गयी य शागिर्द। इस केसर बाई का जैसा सुर का सिलसिला था वैसा ही लयकारी था सारंगी के साथ सपाट तान खींचकर सम पर ले आने में जरा भी मिहनत कर नहीं पड़ती। उसके साथ ही थी उम्र। केसर बाई भी उस समय ऐसे एक उस्ता को ढूँढ़ रही थी जो सिर्फ उसके साथ सारंगी ही नहीं बजायेंगे, सुर की तालो भी देंगे और बाईजी-जीवन की सोहबत भी सिखायेंगे। जिस सोहबत को सीख पर गुणियों का समाज तारीफ करेगा।

इसी तरह शुरू हुआ केसर बाई का कारबार। दिन-दिन कद्रदान-समाज में नाम फैल गया केसर बाई का। बनारस, इलाहाबाद, रामनगर, मैहर, कलकत्ता, बम्बई से जो लोग लखनऊ की इस बदनाम गली में महफिल के लिए आते, उनके कानों में जा पहुँचा केसर बाई का नाम। उन्होंने सुना कि बरकत अली की तबले की लहर के साथ उस्तादजी की सारंगी की लयकारी मिलकर केसर बाई के गजल श्रोताओं के कानों में मधु बरसाते हैं। इसलिए चलो लखनऊ। जाकर सुनें वह क्या चीज है।

चौक के बदनाम मुहल्ले में उन दिनों राजा-महाराजाओं के मुसाहबों में से किसी के आते ही दलाल उन्हें पकड़ते। बदनाम मुहल्ले में दलाल तमाम थे। ऐसा ही एक दलाल था कुन्दनलाल वाजपेयी। बाप का निकाला हुआ लड़का। रुपया चाहिए। रुपया न होने पर नशा कैसे जमेगा!

उसी समय से उस्तादजी से जान-पहचान है।

उस्तादजी से एक दिन जान-पहचान हो गयी कुन्दनलाल की। उस्तादजी मइजुद्दीन खाँ साहब के शागिर्द थे। रामपुर घराने के अन्तिम गुणी, अन्तिम कलमविद। इससे रुपये भले न रहें, इज्जत लेकर चलना होता है उन्हें।

उस्तादजी का असल नाम था हामिद खाँ। लेकिन मइजुद्दीन खाँ साहब के मर जाने के बाद इस नाम से और कोई नहीं पुकारता। हामिद खाँ खुद भी अपना यह नाम भूल गये थे। उन दिनों बदनाम मुहल्ले में उस्तादजी के नाम से ही सब उन्हें पहचानते थे।

—उस्तादजी, सलाम…

रास्ते से चलते-चलते पीछे से उनका नाम लेकर पुकारते ही मुँह फिराया उस्तादजी ने।

—कौन?

—मैं कुन्दनलाल हूँ उस्तादजी। कुन्दनलाल वाजपेयी।

—क्या चाहते हो?

कुन्दनलाल बोला—कुछ नहीं उस्तादजी, सिर्फ मेहरबानी।

अर्थात् कुछ भी नहीं चाहता कुन्दनलाल, सिर्फ कृपा पाने पर ही वह खुशी होगा।

ये सब तो मामूली बातें हुईं। किसी से कुछ भीख माँगने पर इस भाषा का व्यवहार करना ही लखनऊ के खानदानी समाज का कायदा है।

वह मेहरबानी ही अखीर तक पायी थी कुन्दनलाल ने। उठती हुई केसर बाई का जितना फैलाव बढ़ता, जितनी ख्याति फैलती, उतना ही उनके सारंगिये का यश फैलता, उनकी ख्याति बढ़ती। साथ-ही-साथ तबलची, नौकर-चाकर, यहाँ तक कि दलालों का प्रभाव, उनकी ख्याति, इज्जत

कुन्दनलाल का भी एक दिन ऐसा ही नाम फैला था, उसे भी यही ख्याति और इज्जत मिली थी। उसकी ख्याति के प्रसार और उसकी इज्जत की उन दिनों सीमा नहीं थी। तब कुन्दनलाल इस मुहल्ले में अपने हाथ से सबका गला काटता, उसके हाथ में मोटी आमदनी आती। केसर बाई के जितने मुजरे होते, सारंगीवाले भी उतना ही अपना हिस्सा पाते। केसर बाई की आमदनी का मतलब ही सबकी आमदनी होता था।

इसलिए कुन्दनलाल की भी बढ़िया आमदनी होती, मोटी रकम की।

लेकिन कुन्दनलाल का भाग्य सचमुच फूटा था। एक बार उसके बाप ने ही उसे घर से निकाल दिया, उसके बाद उस्तादजी की नेक नजर से वह गिर गया। गिरने की वजह हुई उसका नशा। इस नशे ने ही कुन्दनलाल को खाया। सिर्फ नशा नहीं, नशे के साथ लड़कियाँ भी। एक तो राम से ही रक्षा नहीं, सुग्रीव दूसरे। सिर्फ शराब का नशा होता तो भी उसे बचाया जा सकता, किन्तु उसके साथ लड़कियों का अनुपान लेने पर उसे बचाने की ताकत किसमें थी?

उस समय से ही कहना होगा कि कुन्दनलाल की लड़कियों की दलाली के कारबार में घाटा पड़ गया। उस समय से ही उसका शुरू हुआ आमोद-प्रमोद की उठती यारी पकड़ने का कारबार। एक-एक यार को पकड़ता और जब तक उसे चूसकर, खाकर पोपला करके फेंक न देता तब तक उसे रिहाई न देता। उसके बाद फिर नये यार की खोज में घूमता। नये यार की भी फिर अन्त तक यही हालत होती।

अन्त में आया चैटर्जी। सुललित चैटर्जी। चैटर्जी राजा-महाराजा भी नहीं था, नवाब—नवाबजादा भी नहीं था। निहायत एक बंगाली। डरपोक बंगाली। लेकिन लाइन में आना चाहता है। थोड़ा-थोड़ा घूंट-घूंट माल भी पीता है। कुछ दिनों निगाह लगाकर कुन्दनलाल ने समझा कि बंगाली की नौकरी भले न हो, कोई जमींदारी न हो, घर में कुछ पूंजी है। पूंजी माने सोने के गहने। उसके साथ कुछ जड़ाऊ गहने की गन्ध भी मिली। एक-एक करके उन्हें वह सोने-चाँदी की दूकान में जाकर बेचकर कलारी में आकर शराब पीता।

उसे ही अन्त में पकड़ा कुन्दनलाल ने। कहना होगा कि चैटर्जी ही कुन्दनलाल का आखिरी शिकार था!

वह आखिरी शिकारी भी जब हाथ से निकल गया तब भी कुन्दनलाल को कोई दुःख नहीं था। क्योंकि तब उसके हाथ में तुरूप का ताश आ पहुँचा था। वही दस हजार दाम की हीरे की अंगूठी। उसे उसने अखीर तक खर्च नहीं किया। सोचा था अभी तो वह है ही, जब कठिन विपत्ति में पड़ेगा तब उसकी शरण लेगा।

सो ऐसी ही जब हालत थी तब उसे चोट आ लगी एकदम दूसरी एक दिशा

से, और एकदम अकल्पित भाव से।

अकस्मात् बंगाली बाबू हाथ से निकल गया, और उधर केसर बाई ने भी मुजरा छोड़ दिया। यह सब कुन्दनलाल की जिन्दगी में एक अजीब घटना थी।

लेकिन सबसे ज्यादा उलट-पुलट हुआ उस्तादजी की तरफ से। उस्तादजी की बनिस्बत भी ज्यादा उलट-पलट हुआ लजवन्तिया की तरफ से। असल में कहना चाहिए कि ये ही लोग कुन्दनलाल के सबसे बड़े भरोसा थे। वे लोग खुद ही जब रास्ते में उतर आये हैं तब अब वह क्या करे?

कोई कहने लगे—कुन्दनलाल पागल हो गया रुपयों के अभाव में···

और कोई-कोई कहने लगे—शराब पी-पीकर कुन्दनलाल का दिमाग खराब हो गया है···

लेकिन कुन्दनलाल को खुद तब यह कोई फिक्र नहीं थी। वह भी तब रास्ते में उतर आया था। एकदम रास्ते के नाबदान में।

उस्तादजी ने एक बार चारों तरफ निगाह दौड़ाकर देखा। रोज की तरह उस दिन भी बदनाम गली में शराबियों और दलालों की भीड़ थी। उस दिन भी भेल-पूरी, मलाई-बरफ और फूलवालों की बिसाती बदस्तूर चल रही थी। आसपास के घरों से गाने, नाच और घुंघरुओं की आवाज हवा में लहरा रही थी। सिर्फ केसर बाई के घर के सामने थोड़ा अंधेरा-अंधेरा था। वहाँ उस वक्त दलालों की कोई भीड़ नहीं थी। चारों तरफ देखकर उस्तादजी घर के भीतर घुस पड़े।

भीतर घुसनेवाली गली में सिर पर टिमटिमाती हुई रोशनी उस दिन भी जल रही थी। सामने ही सिढ़ी है। कलेजे में धक्का लगानेवाले सिढ़ी के ऊँचे सब पग।

उसके ही किनारे से दाहिनी तरफ जाने पर एकतल्ले में लजवन्तिया का कमरा है। वहीं लजवन्तिया केसर बाई के रसोईघर में खाना पकाती है। वहीं खाना लजवन्तिया भी खाती है, सरदार अली भी खाता है। और उसके ही बगल में पहले रहते थे उस्तादजी। गुरु मइजुद्दीन खाँ साहब के जिगरी शागिर्द थे उस्ताद हामिद खाँ।

लेकिन इस घर में आज अब उस्तादजी के लिए जगह नहीं है। यहाँ अब उनकी कोई कदर नहीं है। इस घर में कदर अगर किसी की बाकी हो तो उसी जाने कहाँ के सिर्फ बंगाली बाबू की है।

रसोईघर की तरफ गये उस्तादजी। यहाँ इस कमरे में उस्तादजी घुसे हैं यह अगर केसर बाई न जान पायें यही अच्छा। अब बहुत लुक-छिपकर यहाँ आना पड़ता है उस्तादजी को। केसर बाई नहीं चाहती कि अब उस्तादजी यहाँ

त् उनके कानों में बातचीत के अस्पष्ट शब्द सुनायी पड़े । १८
त । बंगाली बाबू सिर्फ शराब पीना चाहता है और केसर बाई वह उसे
हीं देगी ।

लेकिन और एक झन-झन आवाज से उस्तादजी अकचका गये । यह काहे
आवाज हुई ? अन्दाज से लगा कि दुतल्ले में कोई एक चीज फर्श पर गिर-
टूटकर चूरमार हो गयी है । क्या टूटा अकस्मात् ? किसने तोड़ा ?

उसके बाद किसी के तर-तर करके सीढ़ी से नीचे उतरने की आवाज हुई ।
उस्तादजी थोड़ा छिपकर एक किनारे खड़े हुए । देखा लजवन्तिया है । लज-
वन्तिया तर-तर करके उतरकर तब एक झाड़ू लेकर फिर दुतल्ले की तरफ जा
रही थी ।

पीछे से उस्तादजी ने साड़ी पकड़कर खींचा ।

—लजवन्तिया…

लजवन्तिया भी उस्तादजी को देखकर अवाक् । गला दबाकर बोली—
उस्तादजी…

—चुप, धीरे । ऊपर आवाज काहे की हुई ? क्या टूटा ?

—गिलास । दूध का गिलास ।

उस्तादजी की दोनों आँखें डर के मारे सिकुड़ गयीं—आहट पा गयी है क्या

लजवन्तिया बोली—ना, बंगाली बाबू दूध नहीं पियेगा, सिर्फ शराब पी
चाहता है…

—उसके बाद ? क्या टूटा यह बता…

लजवन्तिया बोली—बाईजी साहिबा जोर करके दूध पिलाने जा रह
बंगाली बाबू के हाथ से गिलास को ठेलते ही वह फर्श पर गिरकर चूरम
गया । अब झाड़ू लेकर कमरा साफ करने जा रही हूँ…

उस्तादजी बोले—इतनी देर क्यों कर रही है तू ?

लजवन्तिया लगता है जाने कुछ कहने जा रही थी; लेकिन तभी
पैरों की आहट सुनकर उस्तादजी डर से सिहर उठे ।

—कौन ? कौन है ?

आधे अँधेरे में जगह सुमसुम कर रही थी । ऐसे वक्त कौन
है यह समझा नहीं जा सका । उस्तादजी ने एक दीवाल की आड़
छिपाने की कोशिश की । लेकिन उन्हीं सीढ़ियों के पीछे से एक
कानों में सुनायी पड़ा—लजवन्तिया…

उस्तादजी का सन्देह तब भी नहीं मिटा । बोले—कौन है

एक अनजाने आतंक से उस्तादजी का हृदय काँप उठा ।
लिया है क्या ?

लेकिन लजवन्तिया ने निर्णय किया। बोली—वह हमारा कुन्दनलाल है…

—कुन्दनलाल ? कुन्दनलाल यहाँ क्यों ? वह क्यों इधर आया ?

लजवन्तिया बोली—वह पागल हो गया है उस्तादजी, एकदम घोर पागल…

सचमुच कुन्दनलाल की तरफ देखकर उस्तादजी और भी अचम्भे में पड़ गये। उस्तादजी ने उसे रास्ते-रास्ते में भरमाया हुआ-सा घूमते देखा है। कई बार नर्दमे के किनारे धूल-कीचड़ में पड़े हुए भी देखा है। समझा शायद शराब पीकर बेहोश हो गया है। लेकिन यह तो वैसा नहीं है। यह तो सचमुच पागलों का चेहरा है।

कुन्दनलाल एकदम रसोईघर की तरफ घुसा जा रहा था। उस्तादजी ने उसे धमकाया—उधर कहाँ जा रहे हो ?

कुन्दनलाल बोला—जहन्नुम में उस्तादजी—जहन्नुम में…

—जहन्नुम में ? मतलब ?

—हुजूर, इसी का नाम तो जहन्नुम है ?

—कौन-सा जहन्नुम ?

कुन्दनलाल हो-हो करके हँसने लगा। बोला—आपने इतने दिन जहन्नुम में काटे और मैं आपको जहन्नुम पहचनवा दूँगा उस्तादजी ! आप जहन्नुम में रहकर भी जहन्नुम पहचान नहीं पाये…

—दूर बदतमीज, भाग यहाँ से, भाग…

यह कहकर उस्तादजी डाँटकर भगाने को हुए कुन्दनलाल की तरफ जाकर। कुन्दनलाल ने डर से सिकुड़कर लजवन्तिया को जकड़कर पकड़ लिया।

बोला—मुझे मारिए मत उस्तादजी, मैं खाने आया हूँ, मुझे भूख लगी है…

—छोड़-छोड़ बेटा, छोड़ उसे—छोड़…

लजवन्तिया ने कुन्दनलाल को बचा दिया। बोली—उसे मारिए मत उस्ताद जी, उस पर गुस्सा मत कीजिए, वह पागल है, वह पागल हो गया है…

कुन्दनलाल हाथ जोड़कर बोल उठा—नहीं उस्तादजी, मैं पागल नहीं हूँ, मैं कहता हूँ मैं पागल नहीं हूँ, मैं सिर्फ मिट्टी में मिल गया हूँ, मैं सिर्फ शराबी हो गया हूँ, मैं सिर्फ रंडीबाजी करके जहन्नुम में चला गया हूँ…

उस्तादजी गाली-गलौज कर उठे। बोले—दूर हो पगले…

कुन्दनलाल लेकिन उसी तरह हाथ जोड़कर बोला—आप गुलाम पर गुस्सा क्यों हो रहे हैं उस्तादजी ? शराबी हो गया हूँ इसलिए ? रास्ते में नशे में चूर र [illegible] हूँ [illegible] लिए ? शराबी तो सभी होते हैं उस्तादजी, कोई शराब के लिए

होता है, कोई पागल होता है भगवान के लिए। आ.र ..
हुआ हूँ इसीलिए मेरा इतना दोष है ? शराब क्या इतनी खराब चीज

ठात् ऊपर से केसर वाई की आवाज सुनायी पड़ी—लजवन्तिया…

लजवन्तिया ने चकित दृष्टि से ऊपर की तरफ देखा, बोली—जाऊँ, वह जी साहिवा बुला रही हैं…

कहकर ऊपर की तरफ जा रही थी, उस्तादजी बोले—मैं भी जा रहा हूँ, केन याद रखना, समझी ?

कहकर एक इशारे की निगाह से देखकर दरवाजे की तरफ वढ़ गये। चारों रफ का यह काण्ड देखकर कमरा फाड़कर हो-हो करके हँसते हुए कुन्दनलाल ने उस्तादजी की तरफ अंगुली से दिखाया—वह भाग गया, वह भाग गया—डर के मारे भाग गया…

उस्तादजी जाते-जाते एक वार कुछ वोलेंगे सोचकर पीछे फिरकर खड़े हो हुए। लेकिन कह न पाने पर जल्दी-जल्दी घर से उतरकर रास्ते में वढ़ गये।

जिस मुहल्ले में दिन के वक्त रात होती है, और रात का वक्त ही दिन के समान लगता है उसी मुहल्ले में केसर वाई के घर में मानो सव उलट-पुलट हो गया। रात को जव इस वदनाम मुहल्ले में विलास का गान लहरा उठता है तव खाँ-खाँ करता है केसर वाई का घर। अवश्य पहले के समान ही घर भी एक ही जगह स्थिर खड़ा है, पहले के समान ही सदर में घुसने के दरवाजे ऊपर शाम को टिम-टिम करके एक रोशनी भी जलती रहती है। ठीक पहले समान ही लजवन्तिया रसोईघर के भीतर खाना पका वाई साहिवा के दुतल्ले में खाना दे आती है, पहले के समान ही फूलवाला आकर रोज के फूलों के गुच्छ दे आता है। लेकिन जिसे कहते हैं लक्ष्मी, वह लक्ष्मी ही चली गयी थी घर से। उस वंगाली वावू के कुन्दनलाल के साथ मजलिस में आने से ही मानो इस घर से लक्ष्मी विदा हो गयी थी। राजा-महाराजा, वावू लोग विलास के लिए रुपये उड़ाने आकर भी मुँह काला करके वगल की और किसी वाईजी के कमरे में जाकर महफिल जमाते।

सरदार अली के दिन भी वड़े वुरे कट रहे थे। गाहक न आने के मालिक का जैसा नुकसान होता है, दूकान के दरवानों का भी वैसा होता है। उनकी भी आगे की तरह वैसी कोई ऊपरी आमदनी नहीं ऊपरी रोजगार-पात न रहने पर भांग के नशे में भी तो जोर पड़ता

जाते ही मलाई-रबड़ी खाना जरूरी होता है। दिन-दिन मलाई-रबड़ी की जो दर बढ़ रही है उससे ठीक से मलाई जुट नहीं पाती सरदार अली की।

लेकिन सवेरे-शाम एक आदमी नियम से आता है। वह हुए उस्तादजी। उस्तादजी आते जरूर हैं, लेकिन पहले की तरह वैसी छाती फुलाकर नहीं आते। उस्ताद मइजुद्दीन खाँ साहब के शागिर्द उस्ताद हामिद खाँ की सब उस्तादी मानो खतम हो गयी। केसर बाई जिससे जान न सके इसीलिए छिप-छिपाकर लुका-चोरी में आते हैं और चुपचाप सरदार अली से पूछते हैं—क्यों जी, बाई साहिबा कहाँ हैं ?

सरदार अली कहता है—मन्दिर में गयी हैं।

—मन्दिर में ? मन्दिर का नाम सुनते ही ताज्जुब होता उस्तादजी को।

—किस मन्दिर में ?

—अमीनाबाद में। महावीरजी के मन्दिर में···

—क्यों ?

—हुजूर, पूजा करने के लिए।

अचम्भा ! महावीरजी के मन्दिर में पूजा करने गयी है केसर बाई ? खबर अवाक् करने के समान है।

—कब गयी ?

—शाम को। आधा घण्टा पहले।

—कब लौटेंगी ?

—इसका ठीक नहीं है।

फिर वहाँ खड़े नहीं हुए उस्तादजी। पूछा—और लजवन्तिया ? लजवन्तिया भी क्या साथ-साथ गयी है ?

सरदार अली बोला—नहीं, बाई साहिबा अकेली ही गाड़ी में बैठकर गयी हैं—लजवन्तिया रसोईघर में है···

उस्तादजी सीधे भीतर जा पहुँचे। लजवन्तिया उस्तादजी को देखते ही आगे बढ़ आयी। बोली—उस्तादजी, आप इस वक्त आये क्यों ? अभी ही जो बाई साहिबा महावीरजी के मन्दिर से लौट आयेंगी···

उस्तादजी बोले—सुना है, सरदार अली ने मुझसे कहा है, लेकिन केसर बाई तो कहीं कभी निकलती नहीं, हठात् महावीरजी के मन्दिर में क्यों गयी ?

—पूजा करने के लिए, बंगाली बाबू के लिए हनूमानजी के पास मनौती मानने।

उस्तादजी ने बात सुनकर थोड़ी देर न जाने क्या सोचा। उसके बाद पूछा—बंगाली बाबू कहाँ है ?

—ऊपर।

उस्तादजी बोले—अब भी कुछ खाता-पीता नहीं ?

—ना।

—कुछ भी नहीं खाता ?

—ना।

उस्तादजी अवाक् हो गये—भात, मछली, मांस, मिठाई, लड्डू कुछ भी नहीं खाता ?

लजवन्तिया बोली—ना, सिर्फ शराब पीना चाहता है—लेकिन डाक्टर साहब ने मना कर दिया है। सिर्फ दूध पीने को कहा है। और बाई साहिबा भी शराब नहीं देंगी···

उस्तादजी बोले—तू एक काम कर न···

—कौन-सा काम ?

—मैं शराब ला देता हूँ, तू शराब दे आ न। केसर बाई तो इस वक्त मन्दिर में गयी है, इस समय तो ऊपर कोई है नहीं, चुपचाप शराब लेकर ऊपर जाकर दे आ तू। और वह पुड़िया तेरे पास है न ? उसे शराब के साथ मिला दे, कोई जान नहीं पायेगा···

—तो फिर आप शराब ला दीजिए उस्तादजी। शराब तो और घर में है नहीं···

उस्तादजी बहुत दिनों से यही मौका ढूँढ़ रहे थे। ऐसा सुयोग रोज-रोज आता नहीं। और शायद ऐसा सुयोग भविष्य में कभी आयेगा भी नहीं। और देर नहीं की उस्तादजी ने। तुरन्त फिर निकल गये कमरे से। घर से बाहर निकलते ही सीधे कलारी की दूकान की तरफ चल दिये।

—लजवन्तिया···

आवाज सुनकर लजवन्तिया चौंक उठी। नहीं, और कोई नहीं, कुन्दनलाल है। कुन्दनलाल इस बार कमरे के भीतर नहीं घुसा। खिड़की के बाहर से ही उझक रहा है।

—लजवन्तिया, एक-ठो रोटी खिलाओ मुझे···

—दुर-दुर, दुर मुँहजले, निकल। भरी शाम को 'रोटी खिलाओ'! पहले और भी रोटी बनाऊँ। रोटी बना लेने पर तो खायेगा।

कुन्दनलाल पागल होने के बाद से ही 'खाऊँगा खाऊँगा' शुरू करता है। पहले इतना खाना नहीं चाहता था। अब जब-तब उसके रसोईघर के आसपास फिरता रहता है। कभी घर के भीतर घुस जाता है, और कभी खिड़की से हाथ बढ़ाता है। खाने का बड़ा लोभ हो गया है पागल को। पागलों को लगता है जीभ का लोभ ज्यादा होता है।

लजवन्तिया ने जल्दी-जल्दी धक्के से खिड़कियों के दोनों पल्ले बन्द कर

दिये। क्यों बाबू, इस बदनाम मुहल्ले में क्या और रोटी खिलाने के लिए कोई घर नहीं है! और भी तो तमाम बाईजी हैं इस मुहल्ले में, दूसरे-दूसरे मकानों में तो कलिया-पोलाव-कबाव-मुर्गमुसल्लम पकता है, वहाँ जा न!

—निकल-निकल यहाँ से, भाग···

कुन्दनलाल को लेकिन इससे कुछ गुस्सा नहीं आता। नाराजी भी नहीं, दुःख भी नहीं। वह हो-हो करके हँसने लगा। भूख लगने पर मनुष्य हँसता भी है यह पहले लजवन्तिया ने सुना नहीं था।

हठात् सदर से बाई साहिबा के गले की आवाज सुनायी पड़ी।

—लजवन्तिया!

एक क्षण में चौंक उठी लजवन्तिया। इतनी जल्दी बाई साहिबा महावीरजी के मन्दिर से लौट आयेंगी यह वह सोच ही नहीं सकी थी। जल्दी-जल्दी बाई साहिबा के सामने जाते ही केसर बाई ने पूछा—बाबूजी कैसे हैं? बाबूजी को देखा है न? शराब तो नहीं दी?

लजवन्तिया बोली—ना बाई साहिबा, मैं क्यों शराब देने जाऊँगी, आपने तो मना कर दिया था···

केसर बाई तब फिर खड़ी नहीं हुई। तर-तर करके ऊपर सीढ़ियों से दुतल्ले पर चढ़ने लगी। जिस स्त्री ने एक दिन घाघरा-घुँघरू पहनकर घण्टे के बाद घण्टों नाच-गाकर बड़े खानदानी लोगों को पराजित किया है, उसके ही पहनावे में उस समय चौड़े लाल पाड़ की गरद की साड़ी थी। कपाल में सिन्दूर की बिंदिया। इस केसर बाई को मानो अब पहचाना ही नहीं जा सकता।

सुललित उस वक्त कमरे में अकेला चुपचाप सोया था। बगल में तिपाई पर दूध का गिलास रक्खा था।

केसर बाई ने दूध की तरफ देखकर कहा—यह क्या, दूध अभी तक पिया नहीं?

सुललित उस बात का कोई जवाब दिये बिना जैसा लेटा था, वैसा लेटा रहा।

केसर बाई बोली—तुम उठकर बैठो···

सुललित बोला—क्यों···

केसर बाई बोली—जो कहती हूँ वही करो न। इतने एकरुखे होने से तुम्हारी बीमारी कभी नहीं मिटेगी।

सुललित गम्भीर गले से बोला—मैं नहीं चाहता कि मेरी यह बीमारी अच्छी हो।

केसर बाई बोली—लेकिन मैं तो चाहती हूँ कि तुम नीरोग हो उठो, मैं

सुललित बोला—मैं अब अच्छा नहीं होऊँगा आरती, झूठमूठ तुम मुझे अच्छा करने की कोशिश कर रही हो···

आरती बोली—ना, तुम देखो, तुम जरूर अच्छे हो जाओगे। मेरी इतनी कोशिशें, इतनी पूजा सब क्या तब फिर झूठ है कहना चाहते हो?

सुललित बोला—तुम्हारे देवता-वेवता सब झूठ हैं आरती। ठाकुर-देवता अगर सचमुच होते तो इस तरह मुझे तुम्हारा सर्वनाश न देखना पड़ता।

आरती बोल उठी—छिः, ऐसी बात नहीं कहते। महावीरजी की दया से ही आज मैंने तुम्हें पाया। महावीरजी की दया से ही मेरे पति से मेरा झगड़ा हुआ, और अगर उनसे झगड़ा न होता तो मैं क्या इस तरह ठाकुर की दया से तुम्हें पाती?

सुललित बोल उठा—लेकिन इस तरह का पाना तो मैंने पाना चाहा नहीं था आरती। मैंने तो तुम्हें स्त्री के हिसाब से पाना चाहा था···

—अब से तो मैं तुम्हारी स्त्री ही होऊँगी सुललित दादा···

सुललित बोल उठा—तुम चुप करो, यह सब मुझसे मत कहो···

—क्यों? क्यों नहीं बोलूंगी यह बताओ! मेरे पति को क्या तुम मनुष्य समझते हो? वह एक शराबी, लम्पट, घूसखोर है,—इतने दिनों जो उसके साथ मैंने घर-संसार किया है वही मेरे लिए शर्म की बात है, वही मेरे जीवन का कलंक है···

—लेकिन ये सब बातें तुम्हें विवाह के पहले सोचना वाजिब था।

—तुम फिर वही एक ही बात कह रहे हो? कैसी हालत में मुझे वह विवाह करना पड़ा यह तुम नहीं जानते? तो भी क्यों बार-बार वही एक ही बात कहते हो यह तुम बताओ तो सुललित दादा? एक बार अजाने में जो अन्याय हो गया है उसका प्रायश्चित्त करने का भी क्या अधिकार नहीं है मेरा? उसकी क्या क्षमा भी नहीं है?

—क्षमा? मुझे किसने क्षमा किया है आरती, जो मैं दूसरे को क्षमा करूँगा? मेरे पिता जब मरे, हम लोगों की पुरखों की सम्पत्ति जब बँटी, मेरे हिस्से में मेरी मा के गहनों को छोड़कर जब और कुछ नहीं बचा, जब संसार में मैं एकदम निःस्व निराश्रय हो गया, तब क्या किसी ने मुझे देखा है, तब क्या किसी ने मेरी बात सोची है? मैं क्या खाऊँगा, कहाँ रहूँगा, किस तरह पेट चलाऊँगा यह बात लेकर तब किसी ने क्या सिर खपाया है? आज तुम मुझे क्षमा करने को कहती हो? क्षमा की बात कहते तुम्हारा मुँह एक बार अटका नहीं?

आरती बोली—जो हो गया सो हो गया। आज से तुम जो कहोगे मैं वही करूँगी। मैं अब नये सिरे से तुम्हारा संसार रचूँगी सुललित दादा,

तुम्हारे अच्छे होते ही यह मुहल्ला छोड़कर और एक देश में और एक जगह जाकर नयी जिन्दगी शुरू करेंगे···

बात करते-करते आरती सुललित के नजदीक आकर उससे चिपककर खड़ी हो गयी थी। सुललित सरककर खड़ा हुआ। बोला—यह अब नहीं हो सकता आरती—यह हो नहीं सकता···

—क्यों नहीं होगा ? होने में दोष क्या है ?

—ना, यह नहीं होगा, तुम जो परस्त्री हो···

आरती इस बार और भी खिसक आयी सुललित के सामने। बोली—तुम थोड़ा चुप होकर खड़े तो होओ सुललित दादा, मेरे अच्छे सुललित दादा, थोड़ा चुपचाप खड़े होओ, उसके बाद तुम जो बोलोगे, मैं वही सुनूँगी, वही करूँगी···

सुललित आरती की बात समझ नहीं सका। बोला—तुम क्या करोगी ?

—यह देखो न क्या करती हूँ !

बोलकर हाथ की तश्तरी से पूजा का प्रसादी सिन्दूर लेकर सुललित के माथे पर लगाने लगी।

सुललित बोला—यह क्या है ?

—महावीरजी का प्रसादी सिन्दूर। तुम्हारे लिए जो मैं कभी नहीं करती वही मैंने किया है, मैं खुद अमीनाबाद के महावीरजी के मन्दिर में जाकर पूजा करके आयी हूँ। यह उसका ही प्रसाद है···

बात सुनकर सुललित मानो पागल हो उठा। दोनों हाथों से प्रसाद की तश्तरी ठेलकर फेंकते ही वह फर्श पर गिरकर कमरे-भर में फैल गया और सुललित साथ-ही-साथ बोल उठा—रख लो तुम्हारा प्रसाद। मैं यह सब प्रसाद-वसाद पर विश्वास नहीं करता। मैं किसी पर अब विश्वास नहीं करता, मैं अपने भगवान पर भी विश्वास नहीं करता, मैं तुम्हारे महावीरजी पर भी विश्वास नहीं करता। सब झूठ हैं, सब धामधयाली है। सब सिर्फ लोगों को ठगने की कारसाजी है···

यह कहकर अकस्मात् उसकी नजर पड़ी तिपाई पर रखे गिलास-भरे दूध पर। हठात् मानो उसका गुस्सा जा पड़ा उस दूध के गिलास पर। उसे भी उसने पैर से ढकेलकर फर्श पर गिरा दिया। पैर से ढकेलते ही सब दूध भी फर्श पर फैल गया।

सुललित को मानो उस वक्त प्रमाद हो गया था। प्रमादी के समान ही वह चिल्लाकर रोते-रोते कहने लगा—यह दूध लजवन्तिया क्यों देती है मुझे ? मैंने तो बार-बार कहा है मैं दूध नहीं पियूँगा, तो भी क्यों रोज बार-बार खाली इस दूध का गिलास लाकर मेरे सामने रख जाती है ? तुम बोल नहीं सकती लजवन्तिया से कि वह कभी मुझे दूध न दे, बोल नहीं सकती तुम ?

दिन भी डाक्टर कोठारी जिस तरह आये थे उसी तरह चले गये। और उसके बाद बदनाम गली के घरों के भीतर गुलजार शुरू हुआ। भेल-पूरी, बेल फूल और मलाई-बरफ के साथ ताल रखकर कहरवा ताल में शुरू हुई ठुमरी—

आओ पिया सेज बिछाऊँ···
गरवा लागूं करूं
तोको पियार···

और उसके बाद जब रात बढ़ने के साथ-साथ बदनाम गली-मुहल्ले के लोग और भी उत्ताल हो उठते तब केसर बाई धीरे-धीरे अपना बिछौना छोड़कर उठती। उठकर टिप-टिप पैरों से सुललित के कमरे की फाँक से कमरे के भीतर झाँकती। झाँककर देखती, केसर बाई उस समय केसर बाई न रह जाती। एक मुहूर्त में फिर आरती में रूपान्तरित हो जाती। देखती कि सुललित का बिछौना खाली है और सुललित अकेला अपने कमरे में तेज चाल से चलता हुआ घूम रहा है। जाने क्या सोच रहा है। जाने कौन-सी चिन्ता उसे हैरान कर रही है।

अब चुपचाप ठहर नहीं सकी आरती। सीधे कमरे में घुस पड़ी वह।

—यह क्या, तुम अब तक सोये नहीं सुललित दादा?

सुललित चौंक उठा। बोला—तुम फिर इस वक्त इस कमरे में आयी क्यों? कहकर रोशनी जलाने जा रहा था। आरती ने खप-से उसका हाथ दबाकर पकड़ लिया। बोली—नहीं रहने दो, रोशनी जलाना नहीं होगा···

सुललित बोला—इसके माने?

आरती बोली—ना, रोशनी जलाने से फिर तुम्हें नींद नहीं आयेगी। तुम अब थोड़ा सोने की कोशिश करो। तुम जगे-जगे छटपट कर रहे हो इसीलिए मैं आयी, तुम सोते होते तो मैं कमरे में घुसती नहीं···

सुललित आरती का हाथ हटाकर बोला—तुम मेरा हाथ छोड़ दो आरती···

—क्यों? मुझसे क्या तुम्हें घृणा है?

सुललित बोला—मैंने तो तुमसे बार-बार यह बात कही है, तो भी एक ही बात बार-बार पूछती क्यों हो?

आरती बोली—लेकिन सुललित दादा, तुम क्या पत्थर हो? तुम्हारे मन में मेरे लिए [illegible] थोड़ी-सी भी माया-दया नहीं होती? तुम क्या आँखें खोलकर देख पाते [illegible] लिए मैं कितने नीचे उतर आयी हूँ? तुम्हारे लिए रुपया-[illegible] त्यागकर नरक में वास कर रही हूं? इतना करने के [illegible] क्या प्रायश्चित्त करने को कहते हो कहो? तुम जो [illegible] तुम···

[illegible] तो तुमसे पहले ही यह बात कही है, मैं और कितनी

बार बोलूंगा ?

आरती बोली—तो भी तुम फिर एक बार बोलो, चेष्टा करके देखूं कर सकती हूं या नहीं···

—तुम अपने पति के पास लौट जाओ···

—तुम क्या यह कहना चाहते हो कि मैं अपने शराबी पति के पास लौट जाऊँ ? तुम क्या चाहते हो कि मैं अपना वह अपमान सिर-माथे पर सह लूं ?

सुललित बोला—शराबी तो मैं भी हूं। तो फिर तुम मेरे पास आती क्यों हो ? एक शराबी को छोड़कर दूसरे एक शराबी की स्त्री क्यों होना चाहती हो ?

—तुम और वह क्या एक ही हैं ?

—एक नहीं तो क्या अलहदा हैं ?

—हां, अलहदा। वह और तुम एकदम अलहदा हो। वह शराब पीता है, घूस लेता है, सिर्फ शराबी बनकर रुपया अदा करता है विलासिता के लिए, और तुम तो शराबी हुए हो मेरे लिए, मुझे भूलने के लिए ! तुम अलहदा नहीं हो ?

सुललित हठात् आर्तनाद कर उठा—आरती···

आरती बोली—ना-ना-ना, तुम अब विरोध मत करो सुललित दादा, तुम्हारे मुझे मना करने पर भी मैं तुम्हारी बात सुनूंगी नहीं···

हठात् सुललित मानो डकर-डकरकर रो उठा। बोला—तुम मुझे दुर्बल मत बनाओ आरती, मैं तुम्हारी बात सुनते ही बहुत दुर्बल हो जाता हूं, मैं तो तुम्हारी बात सुनता लेकिन तुम तो दूसरे की स्त्री हो, तुम क्यों परस्त्री हुई ? क्यों—क्यों···

बोलते-बोलते उसका गला अटक गया। अब वह खड़ा नहीं रह सका। इतने दिनों खाया नहीं उसने, इतने दिनों सोया नहीं वह, इतने दिनों एक घूंट पानी तक गले से निगला नहीं। सिर्फ जोर करके डाक्टर कोठारी दवा की जो टेबलेट देते उन्हें ही निगला है, लेकिन दवाओं का कितना तेज हो सकता है ! आरती की बातें सुनते-सुनते वह और भी निस्तेज हो गया और निस्तेज अवस्था में ही बिछौने पर ढुलक गया।

उधर नीचे उस समय हठात् एक कुत्ते की हू-हू करके रोने की आवाज से लजवन्तिया की नींद टूट गयी है।

कौन ? क्या हुआ है ? कुत्ता बराबर भो-भो करके चिल्लाता है, लेकिन इस तरह तो आर्तनाद नहीं करता कभी ? रोता नहीं कभी ?

...ने से उठी। कुत्ता...
...ल गयी केसर बाई की भी। केसर बाई ... इतनी रात को कुत्ता
खोलकर बाहर गली की तरफ उसने देखा।
...गा है ? मानो कोई विपत्ति घटी है कहीं ?
...वन्तिया ने भी खिड़की खोलकर बाहर की तरफ ताककर देखा। बद-
...ली में भी तो फिर किसी-न-किसी वक्त रात होती है। और वह रात
नीरव होना भी जानती है। सचमुच पूरा मुहल्ला उस वक्त निस्तब्ध
...बाईजी लोगों की ठुमरी और उनके घुँघरुओं के बोल उस समय थम...
...से समय क्यों कुत्ता रो उठा ?

—कौन ?

लजवन्तिया ने जवाब दिया—वह कुन्दनलाल है बाई साहिबा—कुन्दनलाल
—कुन्दनलाल पागल हो गये हैं...

कुन्दनलाल ! केसर बाई उस अँधेरे में ही सीढ़ियों से नीचे उतर आयी।
...सरदार अली सदर के बगल में ही एक कोठरी में सोया रहता। वह भी कुत्ते
का रोना सुनकर जाग उठा है।

सबने देखा, कुन्दनलाल कूड़ेखाने की बगल में ही बैठा है। और हो-हो करके
हँस रहा है। और ठीक उसके ही सामने एक रास्ते का कुत्ता कूड़े में मुँह गुंजा...
रो रहा है।

लजवन्तिया बोली—वह कुन्दनलाल है बाई साहिबा—कुन्दनलाल—कुन्दन-
लाल पागल हो गया है...

—तू ठहर !

बाई साहिबा नाराज हो गयीं। बोलीं—तुझसे किसने बात करने को क...
है ? कुन्दनलाल पागल हो गया है—यह तो मुझे मालूम है !

लेकिन असल में मामला यह नहीं है, उस कूड़ेखाने में कुत्ता रो रहा है
कुन्दनलाल उसके बगल में बैठा एक निगाह से उसकी तरफ देख रहा है।

केसर बाई ने सरदार अली से कहा—कुन्दनलाल को मेरे पास बुला...
तो सरदार अली...

अँधेरी रात में एक पागल को बुला लाने का क्या फायदा है, यह ल...
समझ नहीं सकी।

वह तुरन्त बोल उठी—वह पागल है बाईजी साहिबा, कुन्दनल...
हो गये हैं...

—तू ठहर तो, जाओ सरदार अली, मैं जो कहती हूँ, वह करो...

सरदार अली तुरन्त कुन्दनलाल को बुला लाया। दाढ़ी-मूँछ...
गया है कुन्दनलाल का। केसर बाई ने देखा, पहले का कुन्दनलाल...
है। मैला-फटा कुर्ता-पाजामा। मुँह-भर दाढ़ी-मूँछें। भूत के स...

घिसलता केसर बाई के सामने खड़ा हुआ।

बोला—सलाम बाईजी साहिबा, बहुत सलाम। गुलाम को आपने बुलाया है?

केसर बाई बोली—कुत्ते को हुआ क्या? रोता क्यों है कुन्दनलाल? क्या हुआ है उसे? रो क्यों रहा है इस तरह?

कुन्दनलाल बोला—हुजूराइन, किसी ने जहर खिला दिया है···

—जहर? जहर कहाँ से आया? किसने जहर दिया?

कुन्दनलाल बोला—जहर देनेवाले लोगों की तो कमी नहीं है बाई साहिबा।

केसर बाई का तो भी कौतूहल नहीं मिटा। एक मामूली रास्ते का तुच्छ कुत्ता, उसके लिए केसर बाई के मन में इतना दर्द क्यों है यह भी कोई समझ नहीं सका।

लजवन्तिया बात के बीच में ही बोल उठी—उस पागल की बात मत सुनिए बाईजी साहिबा, वह भयानक एक पागल है···

—हाँ, बाई साहिबा, मेरी बात मत सुनिए। गुलाम की बात सुनी नहीं जाती। एक तो गुलाम तिस पर पागल। पागल गुलाम की बात क्या कोई सुनता है बाई साहब···

केसर बाई बोली—नहीं कुन्दनलाल, मैं सुनूँगी तुम बोलो···

—सुनियेगा बाई साहिबा?

—हाँ सुनूँगी। वह कुत्ता बराबर यहीं रहता है, उसे मैंने देखा है बराबर, लेकिन उसे किसने जहर खिलाया?

कुन्दनलाल हो-हो करके हँसने लगा। बोला—मैंने बाई साहिबा, मैंने—मैंने उसे जहर खिलाया है···

क्यों? क्यों जहर खाने को दिया?

कुन्दनलाल बोला—बाई साहिबा, वह जो मेरे हिस्से का खाना खा लेता था। मैं भी इस कुत्ते की जूठन समेटकर खाता था, वह भी खाता, उससे मेरे हिस्से में कम पड़ जाता था बाईजी साहिबा···

—इसीलिए तुम उसे जहर खिला दोगे कुन्दनलाल?

—तो मेरे हिस्से मे खाना कम पड़ने पर मैं जहर खिलाऊँगा नहीं बाईजी साहिबा? सभी तो यही करते हैं बाईजी साहिबा···

—सब यही करते हैं?

—तो सब लोग जहर नहीं खिलाते? हिन्दुस्थान मे कौन किसको जहर नहीं खिलाता यही बताइए बाईजी साहिबा! बाजार मे जो बिकता है वह सब ही तो जहर है बाईजी साहिबा! चावल मे जहर, दाल मे जहर, तेल-घी-नमक ज-दवा-मसाला-पानी-हवा सबमें तो जहर मिलाता है मनुष्य, ... कर

तो आजकल बाजार में मिलेगा नहीं बाईजी साहिबा, उसमें भी मिलावट करता है मनुष्य···

केसर बाई ने फिर उसे धमकाया। बोली—पागलपन छोड़ो, तुमने जहर कहाँ पाया यह बताओ···

—मैंने ? इस गुलाम ने ?

—हाँ-हाँ, तुमने···

लजवन्तिया बोल उठी—उसकी बात मत सुनिए बाईजी साहिबा, आप सोने जाइए, वह एक भयानक पागल है, पागल के साथ बकबक करने से आपका भी सिर घूम जायेगा···

—तू ठहर !

कुन्दनलाल बोला—वह ठहरे क्यों बाई साहिबा, वह तो ठीक ही कह रही है, मैं पागल हूँ, मैं भीषण एक पागल हूँ, मेरे साथ बकबक करने से आपका सिर भी खराब हो जायेगा, आप बल्कि सोने जाइए बाईजी साहिबा···

केसर बाई ने उसकी बात पर कान न देकर फिर पूछा—ना, वह बात जाने दो कुन्दनलाल, तुम बोलो तो कुन्दनलाल, तुमने क्यों कुत्ते को जहर खिलाया ? कहाँ से जहर पाया तुमने ?

कुन्दनलाल बोला—इसी लजवन्तिया ने, इसी लजवन्तिया ने जहर दिया है···

—लजवन्तिया ?

लजवन्तिया बोली—उसकी बात मत सुनिए बाई साहिबा, वह पागल है, पूरम्पूर एक पागल···

सरदार अली ने भी लजवन्तिया की बात का समर्थन किया। बोला—वह पहले ऐसा नहीं था बाई साहिबा, अब पागल हो गया है, रोज आकर रसोईघर में घुसता है और लजवन्तिया उसे खाने को देती है···

कुन्दनलाल बोला—जी हाँ, मैं पागल हूँ, सरदार अली ने ठीक ही कहा, मैं पागल हूँ, आप पागल का काण्ड लेकर सिर मत खराब कीजिए, आप सोने जाइए, बंगाली बाबू अकेला कमरे में है, आप भीतर जाइए बाई साहिबा—लजवन्तिया मुझे रोटी खाने को देती है···

इतनी देर में लगता है केसर बाई को ख्याल आया कि कुन्दनलाल सचमुच पागल है। कुन्दनलाल जो कुछ कहता है वह सब भी उसकी पगलामी है। उसकी बातों में सिर नहीं खपाना चाहिए। लेकिन तो भी आजकल जाने कैसा हो गया है केसर बाई को, किसी तरह उसे नींद नहीं आती। नींद लगते ही मानो सारे शहर की आवाज आकर उसके कानों में ढाक बजाने लगती है। छोटी-सी एक आवाज भी मानो प्रकाण्ड होकर दिमाग में आकर घाव करना शुरू करती है।

यह शायद पहले के तमाम अत्याचार का फल है। पहले तमाम रातों जगी है केसर बाई, पहले तमाम मुजरे किये हैं उसने, रुपयों के लोभ में रातों के बाद रात सो नहीं सकी। और सिर्फ रुपयों का लोभ नहीं, खातिर का लोभ भी था उसे। पिता ने इतनी तकलीफ से इतने रुपये खर्च करके उस्ताद रखकर गाना सिखाया था उसे। लेकिन गाना क्या इस मुहल्ले [illegible] बाईजी होने के लिए सिखाया था? पिता उसका यह जीवन देख पाते तो क्या खुश होते?

आजकल जितनी देर केसर बाई जागती रहती है, उतनी देर सिर्फ ये ही सब बातें सब समय उसके दिमाग में घूमती रहती हैं। खासकर इस कुन्दनलाल के यहाँ आने के बाद से।

कुत्ता रोते-रोते एक वक्त रुक गया। शायद मर गया। इसी तरह एक दिन यह कुन्दनलाल भी शायद मर जायेगा। उसके बाद एक दिन वह भी मर जायेगी। कुत्ते के मरते समय कुन्दनलाल ने उसकी सेवा की, लेकिन केसर बाई के मरने के वक्त कौन उसकी बगल में रहेगा, कौन उसकी सेवा करेगा? अभी वह गाना गा सकती है, नाच सकती है, अभी उसकी जवानी है, उसका जुलूस है, उसमें चिकनाई है, शायद बाईजी-समाज में उसकी देश व्यापी फैली ख्याति भी है।

लेकिन जिस दिन उसका यह सबकुछ नहीं रहेगा।

जवानी, जुलूस, चिकनाई, नाम, रुपया हमेशा तो किसी के पास रहता नहीं। जो लोग इस तरह गाना सुनकर शाबासी देते हैं, सुभानअल्ला बोलते हैं, उसका गाना सुनकर इनाम देते हैं, इज्जत देते हैं, नजराना देते हैं, तब भी क्या वे लोग यह सब देंगे? तब भी क्या वे उसका गाना सुनने के लिए मजलिस जमायेंगे?

तब? तब क्या होगा केसर बाई का?

पूरा लखनऊ शहर लगता है उस समय धीरे-धीरे नींद में सोया है। और किसी तरफ कहीं भी कोई आवाज नहीं है। बदनाम गली-मुहल्ले के ठुमरी-गजल-सारंगी की आवाज भी शायद इस वक्त नशे में सो रही है। मलाई-बरफ और भेल-पूरी और फूलवालों को भी जरूर नशा चढ़ गया है। सबको हर दिन कुछ क्षणों के लिए, कुछ घण्टों के लिए शायद नशा चढ़ता है। नहीं तो सब आवाज कुछ समय के लिए रुक क्यों जाती है!

लेकिन इस समय भी नींद क्यों नहीं आती केसर बाई को? चिन्ता में? कौन-सी चिन्ता? भविष्यत की? मौत की? या बीते दिनों की फिक्र? सबका जैसे एक अतीत होता है, केसर बाई का भी तो उसी प्रकार एक अतीत है। वही अतीत की भावना ही क्या आज उसे उद्वेलित कर रही है!

कुन्दनलाल पागल होकर बक रहा। एकदम चुप हो गया। अच्छा ही तो था वह। शराब पीता और चिल्लाता हुआ घूमता और बड़े आदमियों के शौक-

तो आजकल बाजार में मिलेगा नहीं बाईजी साहिबा, उसमें भी मिलावट करता है मनुष्य···

केसर बाई ने फिर उसे धमकाया। बोली—पागलपन छोड़ो, तुमने जहर कहाँ पाया यह बताओ···

—मैंने ? इस गुलाम ने ?

—हाँ-हाँ, तुमने···

लजवन्तिया बोल उठी—उसकी बात मत सुनिए बाईजी साहिबा, आप सोने जाइए, वह एक भयानक पागल है, पागल के साथ बकबक करने से आपका भी सिर घूम जायेगा···

—तू ठहर !

कुन्दनलाल बोला—वह ठहरे क्यों बाई साहिबा, वह तो ठीक ही कह रही है, मैं पागल हूँ, मैं भीषण एक पागल हूँ, मेरे साथ बकबक करने से आपका सिर भी खराब हो जायेगा, आप बल्कि सोने जाइए बाईजी साहिबा···

केसर बाई ने उसकी बात पर कान न देकर फिर पूछा—ना, वह बात जाने दो कुन्दनलाल, तुम बोलो तो कुन्दनलाल, तुमने क्यों कुत्ते को जहर खिलाया ? कहाँ से जहर पाया तुमने ?

कुन्दनलाल बोला—इसी लजवन्तिया ने, इसी लजवन्तिया ने जहर दिया है···

—लजवन्तिया ?

लजवन्तिया बोली—उसकी बात मत सुनिए बाई साहिबा, वह पागल है, पूरम्पूर एक पागल···

सरदार अली ने भी लजवन्तिया की बात का समर्थन किया। बोला—वह पहले ऐसा नहीं था बाई साहिबा, अब पागल हो गया है, रोज आकर रसोईघर में घुसता है और लजवन्तिया उसे खाने को देती है···

कुन्दनलाल बोला—जी हाँ, मैं पागल हूँ, सरदार अली ने ठीक ही कहा, मैं पागल हूँ, आप पागल का काण्ड लेकर सिर मत खराब कीजिए, आप सोने जाइए, बंगाली बाबू अकेला कमरे में है, आप भीतर जाइए बाई साहिबा—लजवन्तिया मुझे रोटी खाने को देती है···

इतनी देर में लगता है केसर बाई को ख्याल आया कि कुन्दनलाल सचमुच पागल है। कुन्दनलाल जो कुछ कहता है वह सब भी उसकी पगलामी है। उसकी बातों में सिर नहीं खपाना चाहिए। लेकिन तो भी आजकल जाने कैसा हो गया है केसर बाई को, किसी तरह उसे नींद नहीं आती। नींद लगते ही मानो सारे शहर की आवाज आकर उसके कानों में ढाक बजाने लगती है। छोटी-सी एक आवाज भी मानो प्रकाण्ड होकर दिमाग में आकर घाव करना शुरू करती है।

यह शायद पहले के तमाम अत्याचार का फल है। पहले तमाम रातें जगी है केसर बाई, पहले तमाम मुजरे किये हैं उसने, रुपयों के लोभ में रातों के बाद रात सो नहीं सकी। और सिर्फ रुपयों का लोभ नहो, खातिर का लोभ भी था उसे। पिता ने इतनी तकलीफ से इतने रुपये खर्च करके उस्ताद रखकर गाना सिखाया था उसे। लेकिन गाना क्या इस मुहल्ले में बाईजी होने के लिए सिखाया था? पिता उसका यह जीवन देख पाते तो क्या खुश होते?

आजकल जितनी देर केसर बाई जागती रहती है, उतनी देर सिर्फ ये ही सब बातें सब समय उसके दिमाग में घूमती रहती हैं। खासकर इस सुललित के यहाँ आने के बाद से।

कुत्ता रोते-रोते एक वक्त रुक गया। शायद मर गया। इसी तरह एक दिन यह कुन्दनलाल भी शायद मर जायेगा। उसके बाद एक दिन वह भी मर जायेगी। कुत्ते के मरते समय कुन्दनलाल ने उसकी सेवा की, लेकिन केसर बाई के मरने के वक्त कौन उसकी बगल में रहेगा, कौन उसकी सेवा करेगा? अभी वह गाना गा सकती है, नाच सकती है, अभी उसकी जवानी है, उसका जुलूस है, उसमें चिकनाई है, शायद बाईजी-समाज में उसकी देश व्यापी फैली ख्याति भी है।

लेकिन जिस दिन उसका यह सबकुछ नहीं रहेगा।

जवानी, जुलूस, चिकनाई, नाम, रुपया हमेशा तो किसी के पास रहता नहीं। जो लोग इस तरह गाना सुनकर शाबासी देते हैं, सुभानअल्ला बोलते है, उसका गाना सुनकर इनाम देते हैं, इज्जत देते हैं, नजराना देते हैं, तब भी क्या वे लोग यह सब देंगे? तब भी क्या वे उसका गाना सुनने के लिए मजलिस जमायेंगे?

तब? तब क्या होगा केसर बाई का?

पूरा लखनऊ शहर लगता है उस समय धीरे-धीरे नींद में सोया है। और किसी तरफ कहीं भी कोई आवाज नहीं है। बदनाम गली-मुहल्ले के ठुमरी-गजल-सारंगी की आवाज भी शायद उस वक्त नशे में सो रही है। मलाई-बरफ और भेल-पूरी और फूलवालों को भी जरूर नशा चढ़ गया है। सबको हर दिन कुछ क्षणों के लिए, कुछ घण्टों के लिए शायद नशा चढ़ता है। नहीं तो सब आवाज कुछ समय के लिए रुक क्यों जाती है!

लेकिन इस समय भी नींद क्यों नहीं आयी केसर बाई को? चिन्ता में? कौन-सी चिन्ता? भविष्यत की? मौत की? या बीते दिनों की फिक्र? सबका जैसे एक अतीत होता है, केसर बाई का भी तो उसी प्रकार एक अतीत है। वही अतीत की भावना ही क्या आज उसे प्रवंचित कर रही है!

कुन्दनलाल पागल होकर बच गया। सचमुच बच गया। अच्छा ही तो था वह। शराब पीता और विलासिता करता हुआ घूमता और बड़े आदमियों के नौजवान रसिक लड़कों को देखते ही केसर बाई की मजलिस में लाकर गला दबाकर

उनका सर्वनाश करके रास्ते का भिखारी वनाकर छोड़ता। कितनी ही वार केसर वाई की मजलिस में कितने ही उठते हुए रसिक जवानों को ले आया है वह उनके जरिये हजार-हजार रुपये उसके पैरों में नजराने भी दिलवाये हैं।

और अव ? अव उसके ही मकान के सामने वह कुन्दनलाल ही कूड़ेघर के एक किनारे सोया रहता है और एक तुच्छ कुत्ते के साथ हिस्सा-वँटवारा करके जूठन-काठन खाता है। वच गया है कुन्दनलाल। सचमुच वच गया है। केसर वाई भी अगर कुन्दनलाल के समान पागल हो जा सकती, केसर वाई भी अगर कुन्दनलाल के समान अपना अतीत भूल पाती !

अकस्मात् दूर लखनऊ जंक्शन स्टेशन के प्लेटफार्म से एक ट्रेन का इंजन गरज उठा, और उसके साथ ही केसर वाई को लगा मानो उसका अतीत-वर्तमान-भविष्यत् फटकर-टूटकर टुकड़ा-टुकड़ा हो गया एक क्षण में।

रात को अव नींद नहीं आयेगी केसर वाई को। केसर वाई बिछौने से उठी। एक वार उसने दीवाल की घड़ी की तरफ देखा। सर्वनाश ! सवेरा जो हो आया। सवेरे के पाँच वज गये। खिड़की के वाहर आकाश की तरफ ताककर उसने देखा मकवरा रोड की तरफ का आकाश कुछ फीका हो आया है। उसके वाद नीचे के रास्ते की तरफ भी एक वार उसकी निगाह पड़ी। केसर वाई ने देखा वह कुत्ता रो नहीं रहा है, लगता है मर गया है। लेकिन कुन्दनलाल ने तव भी उसका साथ नहीं छोड़ा। जगा है। जगा-जगा लगता है उस वक्त भी वेसुरे गले से गा रहा है—

दीवाना वनाना है तो दीवाना वना दे···

हठात् उसे याद आ गया कि सुललित को दवाई खिलाने का समय हो गया। जल्दी-जल्दी वगल के कमरे के भीतर जाकर देखते ही वह अवाक् हो गयी। कहाँ गया सुललित दादा ! वड़ी मुश्किल से उसे समझा-वुझाकर नींद की दवा खिलाकर उसने सुला दिया था, उसके वाद वह अपने कमरे में जाकर सोयी थी। सोचा था कि वह निश्चिन्त सो रहा है। लेकिन कमरे में क्यों नहीं है ? तो फिर कहाँ गया ?

—लजवन्तिया—लजवन्तिया···

लजवन्तिया भी लगता है भिनसारे के वक्त थोड़ा सो गयी थी। वाईजी साहिवा की आवाज से उठकर धड़मड़ करती हुई उठकर ऊपर आयी—जी वाईजी साहिवा !

—हाँ री, वावू कहाँ गये जानती है ?

लजवन्तिया भी अवाक्। वोली—यह तो मैं नहीं जानती वाईजी साहिवा।

—तो फिर तू अगर कुछ भी नहीं जानेगी तो घर में है क्या करने के लिए ? सरदार अली जानता है ?

सरदार अली वामा। वह भी नहीं जानता। वह भी काण्ड सुनकर हक्का-बक्का। अंदर दरवाजा जिस तरह वह बड़ी रात को बन्द कर देता है उस दिन भी उसने वैसे ही बन्द कर दिया था। तो फिर कब निकल गये बाबू? कहाँ से निकले?

—तो फिर खोज, खोजकर ला। भरापूरा मनुष्य कहाँ उड़ जायेगा घर से? सोता हुआ मनुष्य गया कहाँ?

इस बात का जवाब कौन देगा?

—उस्ताद्जी आये थे?

—ना, बाई साहिबा···

—तो फिर कहाँ गये वह बताओ? तुम लोगों में से कोई कुछ काम करेगा नहीं, सिर्फ बैठे-बैठे तनखा खायेगा, हमारा रुपया क्या इतना सस्ता है सोचते हो? जा, जहाँ से हो सके, उन्हें खोजकर ला···

कहते-कहते गुस्से से गर-गर करने लगी आरती। फिर बोली—जा, खड़ा क्यों है? जहाँ से हो सके खोजकर यहाँ ले आ, रोगी आदमी अगर अकेले-अकेले रास्ते में निकलकर मुँह के बल गिर पड़े? तब? तब क्या होगा?

उसके बाद दोनों की तरफ देखते ही फिर बोली—अब भी हाँ करके खड़े रहते क्या हो? जाओ, कहीं न पा सको तो थाने में जाकर एक खबर दे आओ···

सरदार अली और लजवन्तिया क्या करें, कुछ समझ नहीं सके। रास्ते की तरफ निकले।

रास्ते पर डस्ट-बिन की बगल में उस मरे कुत्ते के पास बैठा पगला कुन्दनलाल उस वक्त भी अपने आनन्द में बेसुरे गले से गुनगुना रहा था—दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे···

सरदार अली और लजवन्तिया को आते देखकर वह अकस्मात् गाना रोककर बोल उठा—हिन्दुस्थान जहन्नुम में जायेगा, बिल्कुल जहन्नुम में जायेगा···

उसके बाद अपने मन से ही हो-हो-हो करके एक अट्टहास की हँसी हँस उठा।

सवेरे के समय मकबरा रोड से हन्‌हन् करता हुआ पैदल चला जा रहा था मुललित। दुर्बल शरीर और उसकी बनिस्वत और भी दुर्बल उसका मन। इतने सवेरे वह किसी को बताये बिना कैसर बाई की बदनाम गली से सबके अनजाने में घर से निकल पड़ा था।

इसी तरह एक दिन बहुत दिनों पहले कितने ही महापुरुष रात के अँधेरे में

...व इतिहास में लिखा है। यह विषय ... जा चुके हैं। ...
...य-गाथाएँ, कितने ही धर्म-सम्प्रदाय गढ़े जा चुके हैं। ... उतर
...र एक सत्पुरुष किस अभिशाप से पाप की अन्तिम सीढ़ी में उतर
नऊ शहर के लोगों ने इसकी आहट भी नहीं पायी। कोई नहीं पा
मन की यन्त्रणा की इतिकथा। तथागत बुद्धदेव ने घर छोड़ा था मनुष्य
के उद्देश्य से, श्री चैतन्यदेव ने घर छोड़ा था समाज की दुर्नीति को
...ा मोचन करने के उद्देश्य से, लालाबाबू ने घर छोड़ा था अपना परि-
...जने के लिए। लेकिन ख्रीष्ठ, साक्रेटिस, शंकराचार्य—इनमें से किसी
...र आकर्षित नहीं कर सका। इन सबने पथ को ही संसार में परिणत
था।

लेकिन सुललित ?

थोड़ी-सी शराब ! मुक्ति नहीं, वैराग्य नहीं, यहाँ तक कि अपना परित्राण
नहीं। सिर्फ थोड़ी-सी शराब, शराब पीकर ही वह भूला रहेगा अपना पाप,
...ना कलंक। शराब पीकर ही वह अपने को ध्वंस करके चिरकाल के समान
...निःशेष कर देगा। एक दिन जिस पृथिवी को उसने उन्नत करने के लिए आप्राण
यत्न किया है, छुटपन से अन्याय का प्रतिकार करने के लिए जितनी लड़ाई करता
आया है, उसी पृथिवी ने ही आज उसे प्रवंचित किया है, वही अन्याय आज उसे
आमूल ग्रास किये जा रहा है। इससे मुक्ति पाना हो तो एकमात्र जिस वस्तु की
जरूरत है, वह वैराग्य नहीं है, त्याग नहीं है, संयम नहीं है, शराब है। शराब
ही सिर्फ उसे अब बचा सकती है।

रास्ते में उस वक्त भी अच्छी तरह लोगों का आना-जाना शुरू नहीं हुआ
था। सुनसान। तब भी पहचान-पहचानकर वह दूकान के नजदीक जाकर खड़ा
हुआ। गली के भीतर घुसने पर छोटा एक घर है। बाहर से देखकर कुछ समझा
नहीं जा सकता। एक दिन पहले-पहल खुद ही इस कलारी को उसने खोज
निकाला था। यहीं उसका परिचय हुआ था कुन्दनलाल से। लेकिन वह कुन्दन-
लाल ही फिर आज कहाँ गया !

अकस्मात् पीछे से उसे किसी ने पुकारा—सुललित दादा—सुललित दादा
सुललित अकचकाकर खड़ा हुआ। आरती...

आरती को देखकर अवाक् हो गया सुललित।

—तुम ?

—तुम मुझे बिना बताये चले आये ? अगर रास्ते में सिर में चक्कर आकर
गिर पड़ते ? चलो, चलो, घर चलो।

सुललित अवाक् होकर ताकता रहा आरती के मुँह की तरफ।

—तुम रास्ते में निकलकर आ गयी हो ?

ारती बोली—क्या करती बोलो, तुम्हारे लिए आज मुझे उस रास्ते में
ा पड़ा। सरदार अली, लजवन्तिया सब तुम्हें ढूंढ़ने निकले हैं, उन लोगों
हर भेज देने पर भी मैं निश्चिन्त रह नहीं सकी, इसीलिए खुद भी घर से
पड़ी। लेकिन यह क्या किया तुमने सुललित दादा, तुम क्यों इस तरह
सर्वनाश कर रहे हो? तुम्हें ऐसा शराब का नशा है?
ुललित बोला—शराब के नशे के लिए क्या मैं जिम्मेदार हूँ आरती?
ा मुझे शराब का नशा दिलवाया है?
आरती ने सुललित का हाथ पकड़ा। पकड़कर खींचने लगी।
बोली—छि, एक तुच्छ स्त्री के लिए तुम ऐसे अध:पतन में जाओगे? तुम्हें
नहीं आती यह बात कहते? तुम क्या थे और आज क्या हो गये हो, बोलो
ला! कहाँ आ उतरे हो! शराब पीने के लिए घर से छिपकर निकलकर
देशी कलारी के सामने आकर खड़े हुए हो!
सुललित बोला—मैं क्या था यह मैं ही जानता हूँ, यह तुम्हें मुझे याद नहीं
ाना होगा। लेकिन तुम?
—मेरी बात छोड़ दो।
—क्यों छोड़ दूं? तुम भी सोचो तो कि तुम क्या थी और क्या हो गयी
?
—लेकिन इसके अलावा मेरी और कौन-सी गति थी यह बताओ! तुम
ा चाहते हो कि मैं घूसखोर लम्पट पति के साथ एक घर में संसार चलाऊँ?
सुललित बोला—तो फिर यह अभी जो कर रही हो वही करती रहोगी?
लोग इस समय तुम्हारे पास आते हैं, जो लोग तुम्हारा नाच देखकर, गाना
नकर वाहवाही देते हैं वे शायद साधु-पुरुष हैं?
—लेकिन उन लोगों के साथ तो मुझे एक घर में रहकर एक साथ गृहस्थी
रने की विडम्बना सहन नहीं करनी पड़ती?
—इसको भी अगर गृहस्थी करना न कहें तो गृहस्थी-संसार करना और
ऱ्से कहते हैं, बोल सकती हो?
आरती बोली—तो फिर मैं क्या करूँ, बता दो? तुम जो बोलोगे, मैं वही
ऱूँगी…
सुललित बोला—तुम अपने पति के पास ही लौट जाओ…
—और तुम?
—मैं? मेरी बात क्या किसी दिन तुमने सोची है जो आज मेरी बात सोच-
कर कष्ट पा रही हो?
—तुम्हारी बात न सोचती तो मैं आज सबकुछ छोड़कर इस तरह रास्ते
? ~ े सल`— दादा, मैं तम्हारे लिए और क्या कर

रे लिए तुम्हें कुछ भी नहीं करना होगा आरती। मेरी बात अब तुम्हें
ो नहीं होगी।

रती बोली—लेकिन तुम्हारे इस अधःपतन के लिए मैं अपने को कौन-सा
ही दूंगी ?

ललित बोला—तुमने तो अपनी ही बात सिर्फ़ कही, मेरी भी तो एक
दारी है, मैं ही फिर तुम्हारे इस अधःपतन के लिए अपने को कौन-सा जवाब
?

—तो फिर तुम मुझे अपनी स्त्री बना लो…

बात सुनने के साथ-साथ ही कोई मानो हठात् उसे धक्का देने लगा—
बूजी, बाबूजी…

सुललित ने आँखें खोलकर ताकते ही देखा, यह वह कहाँ सोया है ! आरती
कहाँ गयी ? अच्छी तरह आँखें फैलाकर देखते ही विश्वास हुआ कि साहुजी
की उस गली के भीतर कलारी के आँगन में एक काठ की बेंच पर वह सोया है
और दूकान के मालिक साहुजी उसके मुंह की तरफ ताक रहे हैं।

सुललित अपना दुर्बल शरीर लेकर किसी तरह उठकर बैठा। तो फिर क्या
अब तक सपना देख रहा था वह ? यह कैसा भयानक सपना है ? क्यों उसने ऐसा
सपना देखा ? तो फिर क्या वह मन-ही-मन चाहता है कि आरती उसकी स्त्री
बने ? यह कैसा बिना प्रसंग का सपना है ? आरती बाईजी ही हो या जो भी
हो, वह तो परस्त्री है ! ऐसा अधःपतन क्यों हुआ उसका ? ऐसा अवैध लोभ
क्यों उसको होगा ?

—बंगाली बाबू, उठिए, उठिए, घर जाइए—घर जाइए…

साहुजी के पास बहुत दिनों से शराब का लाइसेन्स है। बहुत दिनों से
यही कारबार कर रहे हैं। कहना होगा कि शराबियों को चराकर ही उन्
धन कमाया है। इसलिए शराबी ही हुआ साहुजी के सामने लक्ष्मी। ल
की अवहेलना या उसका अपमान नहीं किया जाता। इसीलिए हाथ पकड़
धीरे-धीरे बंगाली बाबू को उन्होंने उठाकर बिठाया।

बोले—आप घर जाइए बाबूजी, सवेरा हो गया है, घर चले जाइए

सचमुच उस वक्त सवेरा हो गया था। एकदम धूप निकल गयी है
रहते-रहते ही सुललित आरती के घर से निकल आया था।

साहुजी कलारीखाने के कारबारी हैं, इसलिए ऐसी घटना उन्होंने
देखी है। कितने लोगों ने उनके ही आँगन के सामने उल्टी करके वहा
इस पर कुछ बोले नहीं हैं साहुजी। गाहक को सुखी न रखने पर ल
जाती है, यह बात साहुजी जानते थे। इसीलिए उस समय मेहतर को

उल्टी साफ करवाके फिनाइल डलवाकर धुलवा-पुँछवाकर आँगन साफ़ करवा देते। दूकान की झाफड़ी बन्द करने के बाद भी कोई टलना नहीं चाहता, तब भी पियेगा। आहा, नशा करने पर क्या ज्ञान रहता है मनुष्य को!

बोले—आप घर तो जा सकेंगे बाबूजी, या मैं अपने आदमी से पहुँचवा दूँ?

सुललित उस समय सीधा होकर खड़ा हो गया था।

बोला—नहीं, आदमी नहीं देना होगा, मैं अकेला ही चला जा सकूँगा···

कहकर घर की तरफ उसने पैर बढ़ाये। रास्ते मे उस वक्त बहुतेरे लोगों का चलना-फिरना शुरू हो गया था। शहर फिर से कर्मव्यस्त हो उठा था। सबको जल्दी थी, सब हड़बड़ाकर चल-फिर रहे थे। जीवन-संग्राम की प्रतियोगिता में कोई पिछड़ा नहीं रहेगा। दूसरों को पार करके और भी सामने बढ़ जाना होगा। सामने बढ़ जा सकने से और भी रुपये, और भी ख्याति, और भी सम्मान और प्रतिष्ठा मिलेगी।

संसार में सुललित ने भी एक दिन हो-न-हो, इस तरह ही बढ़ जाना चाहा था। सबको पार करके सबके सामने की श्रेणी में खड़े होने का यत्न किया था। और आज वही सुललित एक बोतल शराब के लिए सवेरे के समय कलारी की दूकान के सामने आकर खड़ा हो गया है।

तिस पर यह सुललित ही एक दिन मित्रों के सामने कहता—मनुष्य का जीवन परमायु से मापा नहीं जाता, मापा जाता है उसके काम से। क्या काम वह कर गया वही होगा, मनुष्य के सम्बन्ध में उसके विचार का मापदण्ड···

इस समय अगर उस मकबरा रोड पर चलते हुए सुललित को कोई वे सब बातें याद दिला दे तो वह शायद उन सब बातों को याद भी नहीं कर पायेगा।

और ठीक उसी समय मेरे साथ उसकी भेंट हुई।

पहले ही तो मैंने कहा है कि मैं पहले उसे पहचान नहीं सका। कहाँ गया उसका वह चेहरा, कहाँ गया उसका वह पौरुष! रास्ते के किनारे से चल रहा है, तो भी मानो किसी तरफ उसके आँखों की दृष्टि नहीं है।

पूछा—सुललित हो न?

मैंने सुललित की शुरुआत ही देखी थी, लेकिन उसका अन्त इस तरह होगा, यह कौन जानता था!

लेकिन सुललित मुझे पहचान गया अन्त तक।

उसने पूछा—तुम यहाँ?

प्रश्न किया मैंने ही। मैं बोला—लेकिन तुम्ही यहाँ आखिर क्यों

सुललित वोला—यहाँ आने की एक वजह है मेरी। लेकिन वह वात तो रास्ते में खड़े होकर वतायी नहीं जा सकेगी···

मैंने पूछा—तुम तो नौकरी करते थे सुना है, तुम्हारा आफ़िस कहाँ है ?

सुललित वोला—मेरा आफ़िस ? आफ़िस तो नहीं है ? आफ़िस कैसे रहेगा ? मैंने तो आफिस छोड़ दिया है···

मैंने अवाक् होकर पूछा—नौकरी छोड़ दी है माने ? तुमने खुद ही नौकरी छोड़ दी है या आफ़िस ने तुम्हें नौकरी से छुड़वा दिया है ?

सुललित वोला—मैंने खुद ही नौकरी छोड़ दी है···

—क्यों ?

सुललित वोला—मैं झूठ वोला था। झूठ वोलने के वाद क्या फिर आफ़िस में रहा जा सकता है ? विवेक में वाधा जो पड़ती है···

मैंने पूछा—तो विवाह किया है ?

सुललित ने हँसकर कहा—हाँ भाई, किया है···

—किससे ? वही जो जिसके साथ तुम्हारे विवाह की वात ठीक हुई थी, उसीसे ? उसी आरती से ?

सुललित वोला—हाँ भाई, वही आरती अव मेरी स्त्री है···

उसके वाद मानो किस तरह वह अनमना हो गया। वोला—तुम एक दिन आओ न मेरे घर में। अपनी स्त्री से तुम्हारी जान-पहचान करवा दूंगा—कव आओगे ?

मैं वोला—अगले इतवार को तीसरे पहर···

सुललित वोला—ठीक है, मैं रहूँगा···

कहकर मुझे अपने रहने का ठिकाना देकर वह चला गया।

मैं थोड़ी देर उसकी तरफ अवाक् होकर देखता रहा। उस सुललित की क्या सी हालत होनी चाहिए ! लेकिन क्यों उस दिन सुललित ने वह वात कही थी सके माने मैं आज तक भी समझ नहीं सका। हो सकता है उसकी मनोगत इच्छा ही थी, इसीलिए। अथवा शायद वह···

लेकिन वह वात अभी नहीं। इसके वाद जो उलट-पलट हुआ, वही पहले हूँ।

स्टर वैनर्जी वड़े काम के आदमी हैं। मिस्टर वैनर्जी सचमुच काम के दमी हैं, दो दिनों के वाद ही उसका प्रमाण मिल गया। मामला इस तरह ाम लोगों के खिलाफ़ ही होता है। पृथिवी में जैसे सवका तुम्हारी तरह तमाम ों के खिलाफ़ ही होता है। पृथिवी में जव सवका तुम्हारा हितू होना सम्भव

लोग पूछते—क्या सर ?

मस्टर बैनर्जी कहते—वह है मारल कैरेक्टर। नैतिक चरित्र। हमारे गवर्नमेंट स की बहुत बड़ी एक बदनामी है कि यहां के सब स्टाफ करप्ट हैं। माने गेर हैं। इसके लिए हम करोड़ों रुपये खर्च करते हैं इस घूस का कारबार करने के लिए। लेकिन तो भी घूस लेना बन्द नहीं हो रहा। मैं चाहता क अन्ततः हमारे आफिस में कोई किसी दिन घूस न ले सके। अगर कभी मैं पाऊँगा कि हमारे किसी स्टाफ ने किसी मर्चेंट से घूस लिया है तो उसे मैं मीडिएटली सैक कर दूंगा···

उसके बाद सिगरेट का धुआँ उड़ाकर कहते—जाइए, आप लोग आज ही पने-अपने डिपार्टमेंट में जाकर यह सर्कूलर दे दीजिए—बोल दीजिए कि यह रा आर्डर है···

वह सर्कूलर ठीक समय पर सब डिपार्टमेंट में घुमा-घुमाकर सबकी नजरों में ले आया गया। सबने उस पर दस्तख्त भी किये।

लेकिन स्टाफ ने उस पर दस्तख्त करने पर भी आपस में बातचीत की—अरे, बाबा, यह तो साला भूत के मुँह में राम-नाम है रे !

दे, स्टाफ चाहे जितनी गालियाँ दे, मिस्टर बैनर्जी के मुँह के सामने लेकिन किसी की ये सब बातें कहने की हिम्मत नहीं थी। वे लोग कैंटीन में बैठे-बैठे मिस्टर बैनर्जी के चौदह पुरखों का श्राद्ध करते, और उसके बाद आफिस में घुसते ही सिर नीचा करके काम करते। लेकिन काम माने काम का बहाना। पहले तिस पर भी थोड़ा-बहुत काम-काज करते, लेकिन यह सर्कूलर पाने के बाद फिर कोई भी कोई काम न करता।

मिस्टर बैनर्जी दिल्ली के हेड क्वार्टर में चिट्ठी लिख देते—हमारे आफि में कोई करप्शन नहीं है, कोई इर्रेगुलैरिटी नहीं है, मैंने आकर सब ठीक कर f है, एवरिथिंग ओ-के···

दिल्ली भी खुश रहती। पार्लमेंट में किसी विरोधी पक्ष से प्रश्न उठ कैबिनेट मिनिस्टर गर्व के साथ कहते—सारे अभियोग झूठे हैं···

कैबिनेट मिनिस्टर स्टैटिस्टिक्स देकर समझा देते—हमारी मिनिस्ट्री करप्शन नहीं है—यह देखिए फिगर, नाइन्टीन-फिफ्टी-टू और नाइन्टीन-रे टू के फिगर देखिए, देखिए प्रोडक्शन कितने पर्सेंट बढ़ा है···

—और स्ट्राइक ?

मिस्टर बैनर्जी इस मामले में धुरन्धर हैं। खास-खास कुछ स्टाफ को देकर फेवर दिखाकर वे पहले ही उन्हें अपने हाथ में कर लेते। वे ही का स्ट्राइक भंग करने के अस्त्र।

कोई आकर कहता—सर, हरीश गोखले आपको गाली-गलौज कर

—क्या गाली-गलौज कर रहा था ?

—बोल रहा था कि आप शायद भर, जब बरेली में थे तब आपके नाम से मामला चला था···

—क्या नाम बताया ?

—हरीश गोखले !

—कौन-सा डिपार्टमेंट ?

—स्टोर्स, स्टोर्स का सब-हेड···

बस ! दो दिन के बाद ही हरीश गोखले के बारह बज गये। उसके नाम से चार्ज-शीट निकला। गोखले ने मर्चेंट लोगों से शायद घूस लिया है। सो काज ! आफिस के विजिलेन्स डिपार्टमेंट ने घर सर्च किया। भाग्यचक्र से पाये गये बंडल-बंडल नोट। सब मिलाकर पाँच हजार के करीब रुपये। पाँच हजार रुपये ऐसे कुछ ज्यादा रुपये नहीं हैं। हरीश गोखले ने तमाम कैफियतें दीं। बोला, मेरी स्त्री ने अपने पिता के घर से दहेज पाया था। लेकिन इससे उसका केस टिका नहीं। मिस्टर बैनर्जी करप्शन बर्दाश्त नहीं करेंगे। उनकी सिर्फ एक बात है डिसिप्लिन। आफिस में अगर डिसिप्लिन न रहे तो करप्शन शुरू हो जायेगा। उससे गवर्नमेंट का नुकसान है, देश का नुकसान है, देश के मनुष्यों का और पूरे समाज का नुकसान है।

हरीश गोखले की नौकरी चली गयी।

और इसके फल से मिस्टर बैनर्जी के निजी प्रोमोशन के बाद प्रोमोशन होने लगे। बड़े एफिशिएट आफिसर हैं, बड़े काम के आदमी हैं, बढ़िया एडमिनिस्ट्रेटर हैं मिस्टर बैनर्जी। जहाँ कहीं काम सुधारने की जरूरत हो, जहाँ कहीं स्पेशल अफसर की जरूरत हो वहीं भेजो मिस्टर बैनर्जी को। कभी बरेली, कभी भोपाल, कभी नागपुर, कभी अहमदाबाद और कभी लखनऊ। जहाँ कहीं बदली हो, मिस्टर बैनर्जी के वहीं सारे बन्दोबस्त मौजूद हैं। क्वार्टर से शुरू करके टेबुल-चेयर-खानसामा-ख्वाम-बवर्ची-डाक्टर-गाड़ी-ड्राइवर सबकुछ।

और वह गाड़ी क्या ऐसी ही तुम्हारे-मेरे समान गाड़ी ? ये सब गाड़ियाँ कहाँ से आती हैं, कहाँ बनती हैं, इसका भी पता-ठिकाना नहीं दे सकेगा कोई। या तो अमरीका, अथवा जर्मनी, नहीं तो फ्रान्स, या फिर इंग्लैंड।

लेकिन उससे मिस्टर बैनर्जी को कुछ सुभीता हो या न हो, सुभीता होता है इंडिया गवर्नमेंट को। मिस्टर बैनर्जी के समान अफसर मौजूद हैं इसीलिए इंडिया गवर्नमेंट का काम इतने निर्दोष तरीके से चल रहा है। क्योंकि इंडिया के प्राइम मिनिस्टर तो इंडिया को चलाते नहीं, चलाते हैं इन्हीं मिस्टर बैनर्जी के समान एफिशिएंट अफसर लोग, इन लोगों की वजह से ही गवर्नमेंट का काम इतने पक्के और भले तरीके से चल रहा है, इन लोगों की वजह से ही आज

इंडिया गवर्नमेंट का इतना सुनाम है।

सो उन दिनों मिस्टर बैनर्जी का हेड क्वार्टर था लखनऊ में। लखनऊ के सिविल लाइन्स में मिस्टर बैनर्जी का क्वार्टर था।

मिस्टर बैनर्जी के ब्वाय-बवर्ची-नौकर-चाकर-खानसामा-ड्राइवर सवेरे से ही मौजूद रहते। किस मिनिट साहब उन्हें बुला लेंगे यह विधाता पुरुष भी नहीं बता सकते थे। साहब रात को दो बजे भी अगर बुलायें तो इतने पर भी वे कुछ बोल नहीं सकते थे। उसी मिनिट हुजूर के दरबार में हाजिर होकर सलाम बजाना होगा। यही बैनर्जी साहब की चाकरी के जीवन का नियम था। हुक्म की तामील करने में अगर एक सेकेंड उनसे देर हो जाये तो इंडिया गवर्नमेंट का करोड़-करोड़ रुपया बर्बाद हो जायेगा।

और इसी आदमी को एक दिन घूस लेने के अपराध में कोर्ट के कटघरे में आसामी बनकर हाजिर होना पड़ा था।

सोचने पर भी अवाक् हो जाना पड़ता है। वह सब अतीत का मामला है। पकड़ने में लाज भी नहीं आयी उसे, जरा भी संकोच नहीं हुआ उसे! शेमलेस ब्रूट कहीं का! इडियट···पूरा एक इडियट है वह सुललित चैटर्जी!

रहने भी दो वे सब बातें। वह सब अतीत का मामला है। पास्ट इज पास्ट! अतीत अतीत ही है। उसे लेकर सिर खपाने का भी इतना समय नहीं है बैनर्जी को। मिस्टर बैनर्जी जीवन में सिर्फ एक बात समझते हैं, वह हुई स्पीड, माने गति। गति ही तो लाइफ है! और लाइफ ही तो एक रेस-ग्राउंड है। जिस लाइफ में स्पीड नहीं है, वह लाइफ तो फेल्योर है। तुम पृथ्वी में आये हो दौड़ने के लिए। दौड़ना ही जब हो तो दौड़कर फर्स्ट न आने पर जिन्दा रहने का क्या फायदा हुआ बोलो?

रास्ते में जाते-जाते ड्राइवर को वे इसीलिए कहते हैं—रघुवीर, जरा जल्दी चलो···

मिस्टर बैनर्जी के लिए घण्टे में पचास-साठ-सत्तर माइल का कोई मतलब नहीं है। उससे उन्हें लगता है मानो वे पिछड़ गये हैं, लगता है कि मानो वे हार गये हैं। उसे अस्सी करो, नब्बे करो, एक सौ करो! जरूरत होने पर एक सौ बीस करो! लोग समझें कि यह गाड़ी जिसकी-तिसकी, टाम-डिक-हैरि की गाड़ी नहीं है, इंडिया गवर्नमेंट के क्लास वन गजेटेड आफिसर की गाड़ी है। इस गाड़ी के धीरे चलने से मिस्टर बैनर्जी का अपमान है, इंडिया गवर्नमेंट का भी अपमान है।

मिसेज बैनर्जी उस बार बहुत डर गयी थीं।

उन्होंने कहा था—इतनी तेज गाड़ी क्यों चलाता है रघुवीर? थोड़ा धीरे चलाने को बोल नहीं सकते रघुवीर को···

मिस्टर बैनर्जी ने कहा था—तुम देखता हूँ बड़ी नर्वस हो न···

मिसेज बैनर्जी ने कहा था—नर्वसनेस नहीं, कहीं कोई एक्सिडेंट न हो जाये, इसीलिए कहती हूँ···

मिस्टर बैनर्जी ने कहा था—एक्सिडेंट अगर होगा तो होगा···

—लेकिन कोई अगर दब जाये ! तब तो तुम्हें ही पकड़ेगी पुलिस !

मिस्टर बैनर्जी हो-हो करके हँस पड़े थे। बोले थे—पकड़ेगा ! क्या कहती हो तुम ? एक बार तो मुझे उस बास्टर्ड ने पकड़ा था, याद है ? वही बंगाली बास्टर्ड ! एक बंगाली होकर तूने बंगाली को पकड़ा, तेरे विवेक मे भी जरा भी बाधा नही पड़ी ? लेकिन जाने दो वह बात, तुम तो उस बार भी नर्वस हो गयी थी। उस बार भी तो तुम डर गयी थी, सोचा था मुझे जेल हो जायेगी। कहा था तुम्हारी जान-पहचान है उस बास्टर्ड से, तुम्हारे जाकर थोड़ा अनुरोध करने पर ही वह मुझे छोड़ देगा। लेकिन कहाँ, उसने कुछ किया ? तुम तो आखिर मे इन्सल्टेड होकर लौट आयी, तुमने कहा कि उसने तुम्हारा अपमान करके तुम्हे भगा दिया। लेकिन अन्त में मेरा कुछ हुआ ? कुछ हुआ, तुम्ही बताओ ?

मिसेज बैनर्जी ने कोई बात नही कही, कोई जवाब नही दिया उस बात का।

—लेकिन तुम कितना डर गयी थी, बताओ तो ! अरे मैं हुआ क्लास वन गजेटेड आफिसर, मेरी बात पर इंडिया गवर्नमेंट उठती-बैठती है, मुझे पकड़ेगा वह ब्लडी बास्टर्ड···

मिसेज बैनर्जी यह सब गालीगलौज पसन्द नही करती थी। ज्यादा बोलने पर कहती—इतनी गाली-गलौज क्यो कर रहे हो, उसने ऐसा क्या किया है ? वह अपनी ड्यूटी नही करेगा ?

मिस्टर बैनर्जी नाराज हो जाते। कहते—तुम फिर उसको सपोर्ट कर रही हो ! उस ब्लडी बास्टर्ड को अब सपोर्ट करने में तुम्हें जरा भी शर्म नही आती ! तुम्हारा देखता हूँ अब तक उसके प्रति वीकनेस है, थोड़ा साफ्ट कार्नर है उसके लिए !

इस बात का कोई जवाब न देती मिसेज बैनर्जी। कहती—जाने दो, जाने दो, वे सब बातें जाने दो।

—ना, मुझे लगता है अब तक उसके ऊपर तुम्हारी एक दुर्बलता है। लेकिन याद रक्खो, उससे विवाह होने पर तुम्हारी भी वैसी ही दुर्दशा होती। ऐसी इम्पोर्टेड गाड़ी मे भी बैठ न पाती, इतनी पार्टी-डिनर-लंच से न्यौता भी न पाती, और इतने चपरासी-नौकर-खानसामा-बवर्ची लेकर संसार भी न कर पाती। तुम्हें वही दूसरी लड़कियों की तरह रसोईघर के धुएँ मे बैठे-बैठे हांडी सरकानी पड़ती···

मिसेज बैनर्जी बात में बाधा डालती। लगता है ये बातें उसे अच्छी नहीं लगती थीं।

कहती—प्लीज, ये सब बातें जाने दो अब। इसके बदले दूसरी बातें करो, सुनूं···

ये सब बहुत दिनों पहले की बातें हैं। उन दिनों बरेली में रहते थे मिस्टर-बैनर्जी। जितने दिनों मामला चला था उतने दिनों बैनर्जी थोड़े मलिन हो गये थे। जमानत पर छूटे जरूर थे, लेकिन दुर्भावना भी थी उनके मन में। उन दिनों दुर्भावना मिटाने के लिए सिर्फ बोतल ह्विस्की पीते और दुनिया के सब-को ब्लडी-बास्टर्ड बोलकर गालीगलौज करते।

लेकिन संसार में दण्ड पाने का भाग्य लगता है सिर्फ यीशु क्रीष्ट का, साक्रेटिस का, तथागत बुद्धदेव का और महात्मा गान्धी आदि का था। जो लोग मनुष्य का भला करने का यत्न करते हैं उन्हें ही लगता है सिर पर काँटों का मुकुट पहनना पड़ता है। पार पा जाते हैं कितने ही चंगेज खाँ और कालापहाड़ आदि, क्योंकि पृथ्वी का समसामयिक मनुष्य लगता है सम्पूर्ण सत्य को सहन नहीं कर पाता। सुललित ने भी इसीलिए हम लोगों से कितनी ही बार कहा है—कंटेम्परेरी वर्ल्ड डज नेवर टालरेट ऐब्सोल्यूट ट्रूथ···

लेकिन इतिहास ?

सो इतिहास मिट्टी में मिल जाये। मेरे मर जाने के बाद पृथ्वी रही या रसातल में चली गयी, यह लेकर सिर खपाने की क्या जरूरत ! मैं अच्छा खाऊँगा, अच्छा पहनूंगा, रुपयों की मर्यादा से—प्रतिष्ठा से सबके सिर पर चढ़कर बैठूंगा, सिर्फ यही लेकर तो मेरा सिर खपाना वाजिब है। मर जाने के बाद तो मैं देखने आऊंगा नहीं कि मर जाने के बाद लोग मेरे लिए रो रहे हैं या मुझे गाली-गलौज कर रहे हैं। अथवा इतिहास के पन्नों में हमारे बारे में क्या लिखा जा रहा है, निन्दा या प्रशंसा या अवज्ञा, यह भी मैं देखने आऊंगा नहीं।

इसलिए आराम किये जाओ, जितनी खुशी हो आराम करो और आगे बढ़े चलो। और भी स्फूर्ति, और भी गति, और भी वेग।

एक बार रिस्टवाच की तरफ देखते ही मिस्टर बैनर्जी ने फिर जोर दिया—रघुवीर, जरा जल्दी चलो···

रघुवीर ने गाड़ी की स्पीडोमीटर का काँटा और भी ऊँचा कर दिया।

और साथ-ही-साथ रघुवीर के अकस्मात् ब्रेक कसते ही मिस्टर बैनर्जी धक्का खाकर एकदम सामने की सीट के पीछे की तरफ गिर पड़े।

घटना एक मुहूर्त की थी। लेकिन उसी एक मुहूर्त में एक एक्सिडेंट हो गया।

रास्ते के आस-पास के जिन लोगों ने घटना देखी, वे लोग आतंक से एकदम

हा-हा कर उठे।

—गया, गया, गया,...

हाँ, सचमुच चला गया। गाड़ी का धक्का खाकर बेवकूफ आदमी छिटककर एकदम रास्ते के फुटपाथ पर जोर से गिर पड़ा।

ड्राइवर रघुवीर अप्रतिम। शायद वह थोड़ा घबड़ा भी गया।

मिस्टर बैनर्जी ने उसी एक ही तरह गाड़ी के भीतर एक तरफ झुके पड़े हुए पूछा—क्या हुआ रघुवीर?

—हुजूर, एक्सिडेंट!

—एक्सिडेंट? क्या एक्सिडेंट?

लेकिन रघुवीर को उनकी बात का जवाब देना नहीं पड़ा। मिस्टर बैनर्जी अपनी निजी आँखों से ही देख पाये कि एक कमजोर लम्बा आदमी गाड़ी का धक्का खाकर फुटपाथ पर छिटककर मुँह के बल जा गिरा है। मिस्टर बैनर्जी ने सोचा था कि आदमी शायद मर गया है। लेकिन नहीं, उन्होंने देखा कि ऐसा कुछ नहीं हुआ, आदमी सोया था, उसके बाद खुद ही शरीर झाड़कर उठकर खड़ा हुआ। सिर की धूल झाड़ने लगा।

छुट्टी मिली, मिस्टर बैनर्जी बेफिक्र हुए। आदमी खुद भी बच गया, उन्हें भी उसने बचा दिया। नहीं तो फिर उस लोफर को लेकर अभी अस्पताल में पहुँचाकर आना पड़ा। उसके बाद थाने में जाकर रिपोर्ट करनी पड़ती। वह तमाम बोदरेशन था।

रघुवीर उस समय भी हुक्म का रास्ता देखता हुआ गाड़ी रोककर चुपचाप बैठा था।

मिस्टर बैनर्जी नाराज हो गये। बोले—क्या देख रहे हो, जल्दी आगे बढ़ो...

रघुवीर सिर्फ हुक्म पाने की राह देख रहा था। हुक्म पाने के क्षण ही उसने गाड़ी का स्पीडोमीटर ऊँचा कर दिया। फिर बीस से चालीस, चालीस से पचास, पचास से साठ, साठ से सत्तर, सत्तर से अस्सी-नब्बे तक स्पीडोमीटर का काँटा जाकर रुका।

मिस्टर बैनर्जी ने फिर पाइप सुलगायी। पाइप जलाकर धुआँ छोड़ा। जो सब छोटे लोग रास्ते के बीच से चलते हैं, खयाल भी नहीं रखते कि इंडिया गवर्नमेंट के क्लास वन आफिसर जा रहे हैं।

जानते नहीं कि इंडिया गवर्नमेंट का कितना जरूरी काम करना पड़ता है उन्हें! वे अगर जल्दी-जल्दी न जायें तो इंडिया जो मिट्टी में मिल जायेगा, यह बेवकूफ लोग समझ ही नहीं सकते। समझते तो क्या आज देश की ऐसी [illegible]?

—रघुवीर, जरा जल्दी चलो···

रघुवीर ने गाड़ी की स्पीड और भी बढ़ा दी।

सरदार अली और लजवन्तिया ने तव तक सारा शहर खोज लिया था। वाईजी साहिवा का हुक्म था कि चाहे जहाँ से हो वंगाली वावू को खोजकर लाना ही होगा।

केसर वाई बोली—तुम लोग और एक वार जाओ···

—सव जगह तो जा चुके हैं वाईजी साहिवा।

—हजरतगंज, सिविल लाइन्स, वाकरगंज, हुसेनगंज, अमीनावाद, सव जगहों में देखा है ?

—देखा है वाईजी साहिवा।

—तो फिर सिविल लाइन्स ?

—सिविल लान्स में भी गये हैं वाईजी साहव। निषादगंज में भी गये हैं···

केसरवाई वोली—तो फिर गया कहाँ वह आदमी ? तो फिर क्या रातो-रात पंख उगाकर आदमी उड़ गया वोलना चाहते हो ? तो फिर थाने में गये थे ? कोतवाली में ? अस्पताल में ? उनका घर कहाँ है जानते हो ?

थाने में कोई नहीं गया, अस्पताल में भी किसी ने खोज नहीं की। और उनका घर कहाँ है, यह भी कोई नहीं जानता। जानता है सिर्फ कुन्दनलाल। लेकिन वह तो पागल है !

तो फिर दोनों अव दौड़े कोतवाली में, अस्पताल में।

केसर वाई एक वार खिड़की के नजदीक आकर खड़ी होती है, फिर भीतर चली जाती है। भीतर जाकर भी उसकी छटपटाहट नहीं मिटती। फिर वाहर की खिड़की में आकर खड़ी होती है। रात के आखिरी पहर से ही ऐसा ही चल रहा है। कहना होगा कि इतने दिनों अच्छी तरह वह एक रात को भी सोयी नहीं। जव मुजरा किया है, घर में महफिल की है, मजलिस विठा ली है, तव की वात अलग है। तव दिन का भी हिसाव नहीं था, हिसाव नहीं था रात का भी। एक-एक पूरी रात गाना गाकर, काटकर जव घर आयी है तव हो न हो और किसी स्टेट का जागीरदार आकर उसी हालत में उसे वुलाकर ले गया है। उस समय भी अच्छी तरह हाथ-मुँह धो नहीं सकी, नाश्ता भी नहीं कर सकी—सव होगा वहाँ वाईजी साहिवा ! वहाँ सव वन्दोवस्त है। आपको कोई तकलीफ नहीं होने देंगे। वहाँ विल्कुल सारा इन्तजाम है। आपकी सेवा के लिए मैं सवकुछ तैयार कर चुका हूँ।

और रुपया ? नजराना ?

उसकी बात केसर बाई से नही होगी। रुपयों की बात होगी उस्तादजी से। उस्तादजी शुरू से हैं। उस्तादजी मुजरे का रेट जानते हैं। दर-दस्तूर सब कुछ उस्तादजी से हो जाता है। इस मामले मे सिर खपाना नही पड़ता केसर बाई को। उस्तादजी केसर बाई का रेट जितना बढ़ा सकेंगे उनका निज का हिस्सा, निज का भाग भी उतना ही बढ़ेगा।

इसी तरह कितने ही बरस बीते हैं केसर बाई के, दोनों हाथों से कितना ही रुपया कमाया है उसने, इसी लखनऊ शहर के चौक में कितने ही घर खरीदे हैं। उन सब घरों से भी बहुत रुपया भाड़े मे आता है महीने-महीने। और हिन्दुस्तान में गाने के इतने भक्त भी हैं जो एक दरबारी कानड़ा की ठुमरी सुनकर, खुश होकर अपना सर्वस्व उजाड़कर तुम्हारे पैरों पर डाल दे सकते हैं। उसके लिए तुम्हें कुछ करना नही होगा, सिर्फ दया करके उनके मकान मे हाजिर होकर उनकी तरफ तिरछी नजर से ताककर हँसना और गाना गाना। बस, यही तक!

लेकिन सब गोलमाल हो गया इन कुछ महीनों में। फिर मानो केसर बाई को सबकुछ याद आ जाता। फिर आगे का जीवन सिनेमा की तरह केसर बाई की आँखों के सामने तैरने लगता। सुललित जब बगल के कमरे मे सोया रहता, एक-एक बार उस कमरे में उसे देखने जाती केसर बाई। केसर बाई को देखते ही सुललित डर जाता। साथ-ही-साथ वह उठकर बैठ जाता।

कहता—तुम?

केसर बाई बोलती—मैं देखने आयी हूँ तुम सोये हो कि नही।

सुललित कहता—रात को क्यो तुम मेरे कमरे मे आती हो आरती…मैंने तो कहा है रात को मेरे कमरे में तुम मत आओ…

—ना, नीद के झोंक मे तुम बिछौने से गिर भी पड़ सकते हो, इसी से डर लगता है।

सुललित कहता—नीद आये तब तो गिरूँगा, नीद तो मुझे आती नही…

—क्यों, नीद क्यों नही आती तुम्हे?

सुललित कहता—मेरे समान हालत होने पर तुम्हें भी नीद न आती आरती। मुझे सब याद जो आ जाता है, वही कलकत्ते में दिन के बाद दिन शाम को एक साथ घूमने जाना, वहाँ घास पर तुम मेरी गोद पर सोये-सोये गाना गाती, और मैं सुनता, वे ही सब बातें जो मुझे याद आ जाती हैं…

केसर बाई क्या बोले समझ न पाती। ये सब घटनाएँ सुललित के मुँह से ही उसने सुनी हैं। कई बार सुन-सुनकर उसे वे सब बातें कण्ठाग्र हो गयी थीं।

सुललित कहता—तुम्हे भी क्या वे सब बातें याद आती हैं आरती? तुम्हें

प्रतिदिन की तरह केसर बाई भी कहती—हाँ, सबकुछ याद है, वे सब बातें क्या भूली जा सकती हैं, बोलो ?

सुललित कहता—तुम्हें भी शायद इसीलिए नींद नहीं आती ?

केसर बाई कहती—वह सब रहने दो अभी। दिन के वक्त वे सब बातें जितनी इच्छा हो सोचो। रात को थोड़ा सोने की कोशिश करो सुललित दादा, रात को न सोने से तुम्हारा शरीर और भी खराब हो जायेगा···

—लेकिन···लेकिन···

बोलते-बोलते सुललित का गला मानो रुंध जाता। कहता—लेकिन विवाह करते समय ये सब बातें क्यों तुम्हें याद नहीं आयीं आरती ? तब क्या एक बार भी तुम्हें याद नहीं आया कि तुम्हें छोड़कर मैं क्या लेकर रहूँगा, किस तरह जियूँगा ?

इसका जवाब केसर बाई क्या देती ? तब उसे मन से बना-बनाकर झूठ बात बोलनी पड़ती। कहती—क्या करूँ बोलो, पिताजी के मर जाने के बाद मेरी उस समय क्या हालत थी तुम कल्पना कैसे करोगे !

सुललित कहता—तो तुम न हो कोई एक नौकरी कर ले सकती थीं। ऐसी कितनी ही लड़कियों के ही तो विवाह नहीं होते, वे लोग क्या जीवित नहीं हैं ? वे लोग तो अच्छी-भली नौकरी करके सुख-स्वच्छन्दता से दिन बिता रही हैं—तुम भी तो उसी तरह जीवन काट सकती थीं, मेरे लिए प्रतीक्षा कर सकती थीं, तो फिर आज तुम्हें दूसरे की स्त्री न बनना पड़ता, यह बाईजी भी न होना होता···

केसर बाई को तब और भी झूठ बात कहनी पड़ती—लेकिन तुम तो सब बातें जानते नहीं, तो फिर तुमसे खुलकर ही बात करूँ, मेरे पिता के मर जाने की खबर पाकर हमारे देश से हमारे एक दूर सम्बन्ध के चाचा ने आकर मुझे यह विवाह करने को बाध्य किया, तब मैं फिर ना न कर सकी···

—तुम्हारे चाचा ? लेकिन तुम्हारे तो कोई चाचा थे यह कभी सुना नहीं···

केसर बाई कहती—वे तो हमारे दूर सम्बन्ध के चाचा थे। उनकी बात तुम जानोगे कैसे ?

—लेकिन जब तुम बिलासपुर में मेरे घर में गयी थीं तब तो तुमने ये सब बातें कुछ भी बतायीं नहीं आरती ?

केसर बाई कहती—कहती कैसे ? उस दिन तुम तो मेरे माथे में सिन्दूर देखते ही एकदम गुस्सा हो गये थे, तुमने मुझे यह बात कहने का समय कब दिया ?

बातें सुनते-सुनते सुललित, लगता है कुछ शान्त होता।

कहता—तो फिर मैं क्या करूँ आरती, तुम बताओ ! मैं किस तरह तुम्हें भूल पाऊँगा !

केसर बाई कहती—मुझे भूलोगे क्यों ? अब तो मैं तुम्हारे निकट-निकट ही रहूँगी।

—लेकिन···लेकिन किस तरह निकट रहोगी ? किस तरह तुम मेरी ही होगी ? तुम तो अब मेरी नहीं हो, तुम तो दूसरे की स्त्री हो !

केसर बाई कहती—किसने कहा मैं दूसरे की स्त्री हूँ ? देखते नहीं हो मेरे सिर की माँग में सिन्दूर नहीं है, मैं मिस्टर बैनर्जी को छोड़कर चली आयी हूँ। मैं तो अब तुम्हारी हो गयी हूँ, मैं तो अब केसर बाई भी नहीं हूँ, मैं तो फिर तुम्हारी आरती हो गयी हूँ, तुम समझ नहीं पा रहे हो ?

—तो फिर थोड़ी शराब दो आरती। थोड़ी शराब दो—मुझ जो बड़ा आनन्द आ रहा है सोचने में···

केसर बाई कहती—दूँगी, दूँगी, लेकिन डाक्टर बाबू ने जो तुमको शराब पीने से मना किया है यह जानते नहीं हो ? तुम अच्छे हो जाओ पहले, उसके बाद फिर मैं तुम्हें शराब पीने को दूँगी ··

—सचमुच मैं अच्छा हो जाऊँगा आरती ? सचमुच मैं फिर अच्छा होऊँगा ?

केसर बाई कहती—जरूर अच्छे होओगे सुललित दादा, तुम आज से रोज दूध पियो, तुम ठीक अच्छे हो जाओगे—पियोगे ? दूध पियोगे ? लजवन्तिया से दूध लाने को कहूँ ?

—ना-ना, खबरदार, नहीं। दूध देखते ही मुझे उल्टी होने लगती है, दूध लाने को मत कहो, दूध देने पर उस दिन के समान फिर गिलास फेंक-फेंक दूँगा···

किसी-किसी दिन लजवन्तिया भी नजदीक रहती है। कहती—बाबूजी के लिए दूध लाऊँगी बाईजी साहिबा ?

—ना—ना—ना···

कहकर अपनी जगह से दूसरी तरफ भाग जाता है। दूध का नाम सुनते ही सुललित मानो पागल हो उठता। कहता—तुम मुझे शराब दो न आरती, एक बूँद शराब दो, एक बूँद शराब पीने से मेरा कौन-सा नुकसान हो जायेगा ? दो न आरती, थोड़ी-सी शराब दो···

लेकिन जिस आदमी को केसर बाई इतने दिनों आँखों-आँखों में रखती आयी, दिन के बाद दिन इतना नाटक करती आयी, जिसे बचाने के लिए केसर बाई ने अपना गाना-बजाना, मुजरा लेना तक छोड़ दिया है, वही मनुष्य क्यों इस तरह रात के अँधेरे में घर से लापता हो गया !

हठात् सरदार अली कमरे में घुसा।

केसर बाई ने पूछा—क्यों रे, पाया ?

—ना, बाई साहिबा। सब जगह गया, कहीं नहीं पाया।

—कलारी की दूकान में ? कलारीखाने भी ढूंढ़े हैं ?

सरदार अली बोला—कलारी तो सवेरे बन्द रहती है, दस बजे दिन के पहले वे लोग दरवाजा नहीं खोलते···

—चोरी-छिपे की कलारियाँ ? चौक के भीतर तो तमाम घरों में लुक-छिप-कर शराब बिकती है, वहाँ भी तो जा सकते हैं ! वहाँ देखा ?

सरदार अली बोला—सो इतने सवेरे कौन उन्हें शराब देगा ?

—देंगे, देंगे ! इस मुहल्ले का रोजगार तू जानता नहीं ? यहाँ दिन-रात सब समय शराब मिलती है, पैसा फेंकने पर यहाँ क्या नहीं मिलता ? तुम लोगों के माथे में थोड़ी भी बुद्धि-उद्धि कुछ नहीं है !

सरदार अली डर के मारे फिर बंगाली बाबू को ढूंढ़ने निकला।

लेकिन कहाँ वे लोग उसे ढूंढ़ें ? इतने बड़े लखनऊ शहर में एक मनुष्य को ढूंढ़ पाना क्या इतना सहज है ?

सोचते-सोचते केसर बाई का सिर मानो चकराने लगा। आरती ने क्यों ऐसा किया ? क्यों इस तरह एक आदमी का जीवन नष्ट कर दिया ? आरती कहाँ है, यह खबर भी जान सकने पर वह वहाँ चली जाती ! जाकर कहती—ओ री, तू एक बार आ, तू एक बार यहाँ आकर उससे दो बातें कर ! मैं तो अब सक नहीं रही हूँ। तेरी जिम्मेदारी के लिए मेरी यह कैसी बुरी हालत है ! मैं और कितने दिनों इस तरह आरती सजकर उसे भुलाऊँगी ?

लेकिन फिर सोचा, जाने पर भी और क्या होगा ? वह यदि उसका अप-मान करके भगा दे ? अगर कहे—तुम निकल जाओ हमारे घर से—अगर कहे—अपने मुँह में कालिख लगाकर अब फिर हम लोगों के मुँह में कालिख पोतने आयी हो ?

यह वह कह सकती है। आज उसे यह बात कहने का अधिकार है। उसने आरती के मुँह पर कालिख लगायी है, उसने अपने पिता के मन को कष्ट दिया है, उसने उनके वंश का नाम डुबाया है। और यह कलंक सब आत्मीयों-मुहल्ले-पड़ोसियों सबका कलंक है !

उसे याद है, वह जब उस्तादजी के साथ घर से भाग आयी थी तब पहले-हल तमाम दिनों तमाम जगहों में छिपकर रही थी। वह जानती थी कि उसके र से भाग आने की खबर अगर बाहर के लोग कोई जान जायें तो आरती विवाह होने का रास्ता चिरकाल के समान बन्द हो जायेगा, उसके पिता को न में कष्ट होगा···

पिता की बात याद आते ही जाने कैसी मलिन हो गयी केसर बाई।

पिता खुद गाने के भक्त थे। पिता को खुद गाना सीखने का शौक था। लेकिन वे खुद गाना सीख नहीं सके, इसलिए लड़कियों को मास्टर रखकर उन्होंने उस्तादी गाने सिखाये थे।

लेकिन बाहर कहीं गाना गाने के लिए जाने देने को राजी नहीं होते थे पिता।

पिता कहते—नहीं-नहीं रानू, कोई अगर तुम्हारा गाना सुनना चाहे तो वह हमारे घर में आये···

केसर बाई कहती—लेकिन कान्फरेन्स में गाने से मेरा कितना नाम होता, मैं कितने मेडल पाती!

पिता कहते—ना, मेडल की हमें जरूरत नहीं है, तुम्हें कितने मेडल की जरूरत है बताओ न, मैं तुम्हें बाजार से खरीद देता हूँ···

ग्रामोफोन कम्पनी से लोग आते पिता के पास। कितनी धर-पकड़ करते पिता को। मिस गांगुली का ऐसा गला है, रिकार्ड करने पर मिस गांगुली का खूब नाम होगा, रायल्टी भी पायेंगी बहुत-सी···

और भी कितने ही लोभ दिखाते पिता को!

वे लोग कहते—देखिए, लता मंगेशकर का कितना नाम है, कितना सम्मान है!

पिता कहते—ना, रुपयों का लोभ हमें मत दिखाइए जनाब, नाम-सम्मान किसी की हमारी लड़की को जरूरत नहीं है। उसका विवाह होने के बाद उसके पति, उसकी ससुराल के लोग अगर चाहें तो जितना मन हो गानों के रिकार्ड करें, तब उसमें मैं विरोध नहीं करूँगा···

इसके बाद उनके पास कुछ कहने को न रहता। वे लोग हताश होकर चले जाते।

और घर में भी जिस-तिसके आकर गाना सुनना चाहते ही लड़की यों ही गाना गाकर सुनायेगी, यह भी नहीं चलेगा। हाँ, अगर पिता के आफिस का कोई अफसर या अफसर की पत्नी मिलने आती तो उन्हें गाना सुनाने पर पिता को कोई आपत्ति न होती। इसके अलावा डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट अथवा रेलवे के डिपुटी जेनरल मैनेजर या चीफ इंजीनियर लोग अगर कहीं सपरिवार आयें तो गाना सुनाना चल सकता था।

लेकिन सबकी वही एक ही बात। सब कहते—आपकी लड़कियाँ जीनियस हैं, प्रतिभा उनमें है मेजर गांगुली। इस तरह के गाने ग्रामोफोन रिकार्ड पर भी सुनने को नहीं मिलते···

तो पिता की तो बदली की नौकरी थी। कभी कश्मीर, कभी मेरठ, कभी

दिल्ली, कभी अम्वाला और कभी असम की गोहाटी में वदली होती पिता की। लड़कियाँ किन्हीं आपस के परिवार में रहतीं उस समय और मुश्किल होती उनके लिखना-पढ़ना सीखने में। गाना जिस तरह सीखती थीं उसी तरह लिखना-पढ़ना भी अच्छा होना चाहिए। स्कूल-कालेज में रिजल्ट अच्छा आना चाहिए। परीक्षा का फल खराव होने पर गाना वन्द हो जाता। उन कई दिनों तानपूरा छूने की मनाही !

आरती ही ज्यादा आँखों-आँखों में रखती दीदी को। पिता के घर में आते ही आरती पिता से वता देती।

वोलती—जानते हो पिताजी। रानू दीदी एक दिन फिर तानपूरा लेकर वैठी थी···

पिता धमकाने लगते रानू को। वोलते—क्यों तानूपरा छुआ था तुमने ? मैं तो लेकिन तुम्हारा तानूपरा-हारमोनियम-तवला सव फेंक दूंगा। कहे देता हूँ···

उसके वाद से पिता की वात को टालती नहीं वह।

लेकिन मनुष्य के भगवान नाम का कुछ रहे न रहे, यहाँ ऐसा एक कुछ है जिसके निर्देश से प्रतिदिन सूर्य उगता है, फिर प्रतिदिन शाम होती है। जिसके निर्देश से पेड़ों के पत्ते प्रतिदिन हिलते हैं, नदी में जल की धारा वहती है, वर्षा होती है, श्मशान की भस्म में भी घास के अँकुर सव वाधाओं को पार करके सिर ऊँचा करके खड़े होते हैं। वह कौन-सी चीज़ है, वह कौन-सा तत्त्व है, वह कौन-सा रहस्य है, यह वह जानता नहीं। जानने की जरूरत भी नहीं है उसे। उसे लेकर पण्डित दार्शनिक सिर खपायें। एक दिन सुरों के आकर्षण से वह आकृष्ट हुई थी, एक दिन सुरों में उसने अपना स्वाद पाया था, अपनी सत्ता को खोज निकाला था, वही उसकी सम्पत्ति है। उसी सम्पत्ति ने उसे एकदम संगीत की साम्राज्ञी वना वृहत् पृथिवी में उसे परिव्याप्त कर दिया।

उस्तादजी ने उसे अपनी कन्या के समान प्यार किया था।

वोले थे—लेकिन वेटी, तुम घर से भाग जाओगी तो कोतवाली में खवर देंगे तुम्हारे पिता, तव तो मैं ही दोषी होऊँगा···

केसर वाई वोली—लेकिन पिता की वनिस्वत मेरा गाना वड़ा है उस्ताद जी···

उस्ताद की अवस्था किसी समय अच्छी नहीं थी। खुद किसी तरह गाना सिखाकर पेट चलाने का सामर्थ्य उन्होंने कमाया था, लेकिन उससे ज्यादा नहीं।

सो कोई ईश्वर के लिए घर छोड़ता है, कोई छोड़ता है धन कमाने के लिए अथवा कोई घर छोड़ता है परमार्थ के लिए।

लेकिन एक कोमल गान्धार के साथ कहीं मध्यम मिलाने पर अथवा एक कोमल निषाद में खड़े होकर धैवत में हाथ बढ़ाने पर कौन-सा जो परमार्थ लाभ होता है इसका मजा जिसने समझा है, वह बाधा-निषेध के संसार में रह ही कैसे सकता है ?

एक बार रामपुर के नवाबजादा केसर बाई का गाना सुनकर पागल हो गये थे।

बोले थे—आप क्या लीजियेगा बताइए बाईजी साहिबा—आप माँगिए कुछ—कुछ भी माँगिए···

केसर बाई हँसी थी। यह अच्छा लगना सचमुच का विशुद्ध अच्छा लगना है। केसर बाई पर नवाबजादे का कोई लोभ नहीं था, सिर्फ लोभ था उनका उसके उस दरबारी कानड़े के उस कोमल निषाद पर। जितनी बार सुर छूकर उदारा के कोमल निषाद में आ उतरती, उतनी बार 'हाय हाय' कर उठता नवाबजादा।

ऐसा ही कितनी ही बार। कितनी ही घटनाएँ हैं केसर बाई के जीवन में। और केसर बाई ऐसी जगह में भी मुजरा करने गयी है जहाँ सुर की कोई कदर नहीं है, सिर्फ इज्जत दिखाने के लिए केसर बाई को ले जाते वे लोग। कोमल रैखब के साथ कोमल गान्धार का मेल-बन्धन घटाकर जब केसर बाई मशगूल होकर गाती तब उसके पेट की काँचुली और आँखों के कटाक्ष की तरफ ही उनकी नजर रहती।

सो हो, सिर्फ गाने को ही जब उसने अपना धर्म मान लिया है तब धर्म की विच्युति से वह आत्मरक्षा कैसे होगी ?

उसके बाद जीवन के तमाम घाटों में अटकते-अटकते कब वह फिर इस लखनऊ शहर के इस चौक के बदनाम मुहल्ले में घर भाड़े पर लेकर बाईजी-जीवन के पेशे में सम्मान के शिखर पर उठ गयी थी, यह सोचने का समय नहीं था उसे तब।

ठीक ऐसे ही समय ऐसी एक घटना घटी जिसके हिसाब-किताब का फल आ पहुँचा यहाँ। और इतने दिनों के बाद उसे लौट जाना पड़ा अपने अतीत में, अपनी सत्ता के मूल की गम्भीरता में।

लजवन्तिया भी लौट आयी।

—क्यों री, पता-ठिकाना मिला ?

—नहीं, बाईजी साहिबा···

—तो फिर एक काम कर, तू तैयार हो जा, मैं निकलूँगी, मेरे साथ तुझे जाना होगा।

—कहाँ बाईजी साहिबा ?

—चल न तू, तुझे इतनी बातों की जरूरत क्या है ?

कहकर खुद भी तैयार होने लगी केसर बाई। तैयार होने के लिए और है ही क्या ! साज-बाज, गहना-साड़ी, तबला-हारमोनियम-तानपूरे की तो जरूरत नहीं थी। असल में केसर बाई तो खुद जा नहीं रही, जा रही है मेजर गांगुली की बड़ी लड़की रानू गांगुली !

रास्ते के कितने ही लोग पहले समझ नहीं पाये कुछ भी। और तब सवेरा भी नहीं हुआ था अच्छी तरह। चौक से ज्यादा दूर नहीं, सिर्फ करीब दो माइल के भीतर ही। जिस तरह रोज सवेरा होने के साथ-साथ ही लखनऊ शहर नींद से जाग जाता है, चौक का इलाका उस तरह का नहीं है। चौक में कुछ सोने-चाँदी की दूकानें हैं, वे लोग नियम से ही दूकान खोलते और बन्द करते हैं।

लेकिन भीतर की तरफ बाईजी-मुहल्ला है। वहाँ जिस तरह देर से रात होती है, उसी तरह सवेरा भी देर से होता है। वहाँ रात दो-तीन के बाद से आँखें झिमझिमा आती हैं सबकी। लेकिन रात एक तक वहाँ शाम है। इसीलिए नौ बजे तक इस मुहल्ले में किसीकी टनक भी सुनायी नहीं पड़ती। कहाँ अब अमीनाबाद के संकटमोचनजी के मन्दिर में घण्टा बजा, कब सवेरे की आरती शुरू हुई, उसकी आवाज इस मुहल्ले में पहुँचती नहीं।

उस्तादजी उस समय खूब चुपचाप आकर केसर बाई की खिड़की के सामने खड़े हुए।

—लजवन्तिया ?

लजवन्तिया सिर्फ उसके थोड़ा पहले ही सोयी थी। बाईजी साहिबा अभी नीचे से ऊपर चली गयी थीं। रास्ते के किनारे कूड़ेखाने के नजदीक उस समय भी कुन्दनलाल कुत्ते के नजदीक बैठा-बैठा गाना गा रहा था—दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे···

उधर भौं भी नहीं उठी उस्तादजी की। इतने दिनों की सब आशा, इतने दिनों का सब सपना, इतने दिनों की सब प्रतिष्ठा नष्ट करके केसर बाई ने उसे रास्ते पर बिठाल दिया है, इसका बदला उसे लेना ही होगा। बदला न लेने पर उस्तादजी को नींद नहीं आयेगी।

कितने दिनों से उस्तादजी के सारंगी पर हाथ नहीं पड़े। सिर्फ धूल जमी है उसमें। हजरतगंज के छोटे-से डेरे में बैठे-बैठे उस्तादजी केवल गाँठा करते हैं।

अगर दूध न पिये बंगाली बाबू तो शराब—शराब के साथ ही उसे मिला दे न लजवन्तिया !

—लजवन्तिया ?

लजवन्तिया उठकर आयी और खिड़की के पास खड़ी हुई।

बोली—कौन, उस्तादजी ?

—क्या खबर है ? कुछ नयी खबर है क्या ?

लजवन्तिया बोली—बंगाली बाबूजी गायब हो गये उस्तादजी ?

—गायब हो गये हैं माने ?

—माने अब पता नहीं मिल रहा है उनका। बाईजी साहिबा के पास सिर्फ शराब पीना चाहते थे, इसीलिए शराब पीने को न पाकर बाहर निकलकर चले गये हैं। कहीं वे मिल नहीं रहे हैं।

अँधेरे में खड़े-खड़े बात कर रहे थे उस्तादजी, हठात् चौंक उठे। पास में मानो कोई आकर खड़ा हुआ। पूरी गली शान्त-सुनसान है। ऐसे समय कौन यहाँ आयेगा !

—कौन ! कौन है ?

—मैं कुन्दनलाल हूँ, उस्तादजी।

—कुन्दनलाल ! यह बात है।

कुन्दनलाल का नाम सुनकर मानो कुछ निश्चिन्त हुए उस्तादजी। पागल के कोई अक्ल नहीं है। यही थोड़े पहले कूड़ाघर में मरे कुत्ते के पास बैठा-बैठा गाना गा रहा था, और जाने कब यहाँ उठकर आ गया !

—उस्तादजी, कुछ पैसे दीजिए…

—पैसे ? पैसे कहाँ पाऊँगा रे मैं, भाग, भाग, यहाँ से—भाग…

—दो न पैसा उस्तादजी…

उस्तादजी नाराज हो उठे। एक जरूरी बात कहने आये हैं लजवन्तिया से और यह ठीक ऐसे ही समय आकर तंग करने लगा।

—जा, जा, यहाँ से दूर हो जा, अभी पैसा-वैसा कुछ मिलेगा नहीं बाबा। पैसा मैं कहाँ पाऊँगा, मेरे निज के पास भी पैसा नहीं है…

तो भी कुन्दनलाल हिलेगा नहीं। उस्तादजी ने लजवन्तिया की तरफ देखकर कहा—यह पागल यहाँ पड़ा क्यों रहता है री ? यह क्या चाहता है !

लजवन्तिया बोली—उसकी बात पर कान मत दीजिए उस्तादजी, शराब पी-पीकर इस तरह का हो गया है—अब रुपये खतम हो गये हैं इसीसे अब शराब पीने को नहीं पाता, भीख माँगता फिरता है। उसकी बात पर कान मत दीजिए आप…

उस्तादजी बोले—तो बंगाली बाबू भागा क्यों, बता सकती है ?

लजवन्तिया बोली—कैसे बताऊँगी उस्तादजी, बाई साहिबा बंगाली बाबू के लिए बड़ी व्याकुल हो गयी हैं, सरदार अली गया है चौक की कोतवाली में खबर देने…

हठात् ऊपर से केसर बाई का गला सुनायी पड़ा—लजवन्तिया···

साथ-ही-साथ लजवन्तिया बोल उठी—आयी बाई साहिबा···

बोलकर लजवन्तिया जल्दी-जल्दी दुतल्ले की तरफ दौड़ी।

रात बीती जा रही है। बड़ी आशा करके आये थे उस्तादजी। अनेक दिनों राह देखी है। रुपयों की आय बन्द हो गयी है उनकी। एक भी पैसा हाथ में नहीं है अब। इतने दिनों का सब मतलब मानो ढह गया उस्तादजी का। उस्तादजी सिर्फ सारंगी ही बजाते इतना ही तो नहीं है, वे थे केसर बाई के दल के सर्वेसर्वा। उनकी ही बात पर केसर बाई इतने दिनों उठती-बैठती। केसर बाई का काम तो सिर्फ गाना गाकर और अपना हिस्सा लेकर पूरा हो जाता। लेकिन इतना ही तो सब नहीं है। कब कहाँ जाना होगा, कब मुजरा करना होगा, किस महीने की किस तारीख को केसर बाई का दिन खाली है, कितनी पेशगी पहले देनी होगी, इसका हिसाब कौन रखता? सब तो यही उस्तादजी। इन्हीं उस्तादजी के पास नोट-बही रहती एक। उसमें केसर बाई के रुपयों का और मुजरे का हिसाब लिखा रहता, उसी तरह खर्च का हिसाब भी लिखा रहता उसमें। और खर्च ही क्या था एक! नौकर-चाकर, और तबलची-हारमोनियम, तानपूरा और जो लोग बजायेंगे उन सबका भी खर्च है।

उस्ताद मइजुद्दीन खाँ साहब जहाँ जाते, वहीं ये उस्तादजी जाते साथ-साथ। उनका हिसाब भी उस वक्त रखते यही उस्ताद हामिद खाँ। तब से ही यह हिसाब लिखने की आदत पड़ गयी थी उस्तादजी की। ये उस्तादजी न होते तो क्या केसर बाई का इतना नाम होता, या इतना रुपया उनके पास होता!

सचमुच बड़ी आशा लगी थी उस्ताद हामिद खाँ के मन में। जिस दिन पहले-पहल केसर बाई ने उस्तादजी से कहा कि अब वह मुजरा नहीं करेगी, उस दिन वे अवाक् हो गये थे बात सुनकर।

उस्तादजी बोले थे—तो फिर इतने आदमियों का क्या होगा?

—किनका क्या होगा?

—यही इनायत अली, बरकत खाँ, जलीलुद्दीन, इन लोगों ने जो इतने दिनों तुम्हारी सेवा की है, मदद की है, ये लोग क्या करेंगे?

केसर बाई बोली थी—वे लोग और किसी बाईजी के पास काम ढूँढ़ लें, मुझे छोड़कर क्या और बाईजी नहीं है चौक में? और मैं क्या चिरकाल नाच-गाकर ही दिन काटूँगी? मेरी क्या तबीयत खराब नहीं होगी? मैं अगर अकस्मात् मर ही जाती तो फिर ये लोग क्या करते?

उस्तादजी बोले थे—वह बात अलहदा है। मर जाने की बात कोई नहीं बोल सकता। सिर्फ तुम क्यों मैं भी तो मर जा सकता हूँ। लेकिन इतने दिनों

जिन लोगों ने हमारी खिदमत की उनकी बात एक बार सोचो तुम ! वे लोग क्या अब उपास करेंगे बोलना चाहती हो ?

केसर बाई भी वैसी ही तेज लड़की ठहरी । उसने कहा था—तो मैं क्या सरकार हूँ जो उन लोगों को पेन्शन दूँगी ? आप क्या कहना चाहते हैं कि चिरकाल उनके खाने-पीने-पहनने की जिम्मेदारी मेरी है ? आपने जो मद्जुद्दीन खाँ साहब से तालीम ली है, उनकी खिदमत की है, उसके लिए आप ही क्या अब पेन्शन पा रहे हैं ?

उस्तादजी नाराज हो गये थे यह बात सुनकर । बोले—तुम्हें मैंने काबिल बनाया है और तुमने आज यह बात कही बेटी ? तुमने अपने गुरु को इस तरह बेइज्जत किया ?

केसर बाई बोली—तो गुरु हैं इसलिए मेरी इच्छा-अनिच्छा, साध-आह्लाद, जीवन-जिन्दगी नाम का कुछ नहीं रहेगा । गुरु हैं इसलिए आपके अन्याय की बात कहने पर भी मुझे सिर झुकाकर उसे मानना होगा ?

उस्तादजी बोले—तो फिर मैं भी इसका बदला लूँगा, यह कहे रखता हूँ···

—कौन-सा बदला लेंगे ? मेरी बदनामी करेंगे ? मैंने आपका क्या किया है जो मुझसे आप बदला लेंगे ?

उस्तादजी ने कहा था—मैं सिर्फ बदला ही नहीं लूँगा, तुम्हारा जीवन भी बरबाद कर दूँगा···

केसर बाई हँस उठी थी बात सुनकर । बोली थी—जीवन ? जीवन की बात कर रहे हैं गुरुजी ! जीवन मैंने कौन-सा पाया है बोलिए तो ?

—यह क्या ? बोल क्या रही हो तुम ? तुमने कुछ भी पाया नहीं ?

उस्तादजी अवाक् हो गये थे—तुम एक दिन क्या थी और वहीं तुम आज क्या हुई हो बोलो भला ? मैंने तुम्हारे मुजरे का रेट पाँच हजार रुपये बढ़ा दिया है । इतना रुपया इस चौक में कोई बाईजी आज पाती है ? मैं गाना न सिखाता तो यह तुम्हें मिलता ? और अगर बाप के पास रहती तो बहुत ज्यादा किसी आदमी से तुम्हारा विवाह होना और रसोईघर में बैठकर तुम्हें हाँडी सँभालनी होती । इससे ज्यादा और लड़कियों की गृहस्थी आखिर क्या होती है सुनूँ ? किस लड़की का और क्या हुआ है ?

—उस्तादजी, आपको मैं होशियार कर देती हूँ, मेरे पिता का नाम आप मुँह पर मत लाइयेगा···

उस्तादजी ने कहा था—तो बाप पर तुम्हारा अगर इतना ही दरद है तो उसी बाप को छोड़कर चले आने में तो उस दिन तुम्हें कुछ लगा नहीं ! तो क्यों फिर उस दिन बाप को छोड़कर चली आयी थी ?

केसर बाई उस समय उत्तेजित हो उठी थी—उस्तादजी, आप f

ने सब बातें उठा रहे हैं ?

—उठाऊँगा नहीं ? अपना काम सँभाल लेकर अब मुझे तुम निकाल दे रही हो और मैं वे सब बातें भूल जाऊँ कहना चाहती हो ?

केसर बाई इस बार अब ठहर नहीं सकी। बोली थी—आप निकल जाइए मेरे घर से, निकल जाइए कहती हूँ, निकल जाइए···

—न निकलने पर तुम क्या करोगी ? क्या कर सकती हो ?

—सरदार अली को बुलाकर आपके गले में धक्के देकर निकाल दे सकती हूँ।

—क्या बोलीं ?

इसी समय बगल के कमरे से गोलमाल सुनकर सुललित आकर खड़ा हुआ। सुललित को देखते ही उस्तादजी मानो और ज्यादा उत्तेजित हो उठे।

उस्तादजी के कुछ बोलने जाने के पहले ही सुललित अपना दुर्बल शरीर लेकर सामने बढ़ आया। बोला—आप क्यों चिल्ला रहे हैं उस्तादजी ?

उस्तादजी भी छोड़नेवाले जीव नहीं थे—तुम कौन हो ? केसर बाई मेरी शागिर्द है, मैं उसका उस्तादजी हूँ, मैं केसर बाई से मुकाबिला कर रहा हूँ, तुम क्यों बीच में बात करने आ रहे हो ?

सुललित बोला—मेरा बात करने का हक है, इसीलिए मैं बोल रहा हूँ···

—तुम्हारा हक ? तुम्हारा काहे का हक ? तुम क्यों आये हो यहाँ ?

सुललित बोला—मेरा हक है उस्तादजी, आप सब जानते नहीं इसीलिए यह बात कह रहे हैं। मैं आपकी केसर बाई के पिता को पहचानता था, मेरे पिता के मित्र, मेरे साथ आपकी केसर बाई की शादी का सब ठीक-ठाक हो गया था। मेरे कारण ही आज आपकी केसर बाई की यह हालत है। मैं उसका भला चाहता हूँ, आपकी केसर बाई भी मेरा भला चाहती है। आपकी केसर बाई के भले के लिए ही मैं कहता हूँ, आप यहाँ से जाइए, केसर बाई अब आपका गाना-बजाना-मुजरा कुछ नहीं करेगी···

उस्तादजी बिगड़ गये। बोले—केसर बाई गाना-बजाना-मुजरा करेगी या नहीं, यह हम लोग समझेंगे, तुम चुप रहो···

सुललित बोला—नहीं, मैं किसी तरह चुप नहीं रहूँगा···

—तो फिर तुम निकल जाओ इस घर से···

सुललित बोला—मैं तो निकल ही जाना चाहता हूँ, मैं तो यहाँ रहना नहीं चाहता, आपकी केसर बाई ने ही तो मुझे यहाँ अटका रक्खा है···। मैं अब यहाँ रहना नहीं चाहता, केसर बाई अगर मुझे छोड़ दे तो मैं अभी यहाँ से चला जाऊँ···

—तो जाओ तुम, तो फिर जाओ। तुम्हारे चले जाने पर हम लोग हाँ क

छोड़कर बचें।

अब तक केसरबाई चुप थी। अब वह दोनों के बीच में आ खड़ी हुई।

उस्तादजी की तरफ देखकर उसने सुललित को अटका रखा। बोली—वे नहीं जायेंगे, सुललित दादा को मैं जाने नहीं दूंगी, आप जो कर सकिए कीजिए···

उस्तादजी गुस्से से थर-थर करने लगे। बोले—तुमने आज मेरा इतना बड़ा अपमान किया ?

—हाँ, अपमान किया। इसके बाद अगर फिर इनसे इसी तरह की बात कहें तो फिर आपका ऐसा ही अपमान करूँगी···

उस्तादजी इसके बाद फिर खड़े नहीं हुए।

बोले—ठीक है, मैं चला जाता हूँ, लेकिन यह बोल रखता हूँ इसका बदला मैं एक दिन लूंगा ही, लूंगा ही, लूंगा ही···

—आप जो कर सकिए कीजिए। मैं आपकी परवा नहीं करती···

—परवा करो या न करो, यह मैं उस दिन देख लूंगा। उस दिन मेरे पास आकर ही तुम्हें पैर पकड़कर मनाना होगा···

बोलकर गुस्से में तनफनाते हुए उस्तादजी चले गये।

उस्तादजी ने बाहर से सुन पाया कि सुललित केसर बाई से कह रहा है—क्यों तुमने उस्तादजी को इतना नाराज कर दिया बोलो तो ? अगर वे तुम्हारा कोई नुकसान करें ? इस मुहल्ले में कितनी खूनाखूनी होती है सुना है, वे अगर तुम्हारा खून करें···

—मेरा खून करेंगे ?

—वह आदमी सब कर सकता है। वह आदमी अच्छा नहीं है, मैं उसके मुँह का चेहरा देखकर ही समझ गया हूँ, इसके बदले तुम अपने पति के पास लौट जाओ न। तुम्हारे पति जितने ही लम्पट, जितने घूसखोर ही क्यों न हों, इसकी बनिस्बत वे बहुत अच्छे हैं···

—तो फिर तुम पहले शराब छोड़ दो सुललित दादा। तुम्हारे लिए ही मेरी इतनी चिन्ता है, तुम्हारे शराब छोड़ देने पर तुम जो करने को कहोगे मैं वही करूँगी, तुम थोड़ा दूध पियो। तुम्हारे लिए रोज दूध लिया जाता है और रोज सब फेंक देना पड़ता है, मैं लजवन्तिया को बुलाऊँ ?

कहकर बुलाना शुरू किया—लजवन्तिया—लजवन्तिया···

इतना ही सुनकर उस्तादजी फिर खड़े नहीं हुए। वहाँ से जल्दी-जल्दी सीढ़ियों से तर-तर करते हुए नीचे उतर गये थे।

ये सब तमाम दिनों पहले की बातें हैं। वह गुस्सा अभी तक गया नहीं उस्तादजी का। उसी गुस्से से उस्तादजी हजरतगंज जाकर एक छोटा कमरा

ाड़े पर लेकर रह रहे हैं। और मन-ही-मन मतलब गाँठ रहे हैं कि एक दिन वे इसका बदला लेंगे ही।

लेकिन आज यहाँ आते ही जब उन्होंने खबर पायी कि बंगाली बाबू चला ाया है तब बड़ा आनन्द हुआ उनके मन में। इतना आनन्द मानो बहुत दिनों से उन्हें नहीं मिला था।

गली से बाहर निकलते ही फिर भेंट हुई कुन्दनलाल से।

कुन्दनलाल को देखकर ही उस्तादजी चिल्ला उठे—भाग यहाँ से, भाग-ाग, जा···

कुन्दनलाल लेकिन भागा नहीं। हठात् रो उठा। रोते-रोते बोला—कुत्ता ार गया है उस्तादजी···

—किसने मारा? कौन मरा?

कुन्दनलाल उस वक्त भी उसी तरह रोता रहा। बोला—दूध पीकर उस्तादजी, दूध पीकर···

—दुर पागल। पागल का बच्चा कहीं का। दूध पीकर कोई मरा है?

—हाँ उस्तादजी, दूध पीकर ही मरा···

—किसने दूध दिया?

—लजवन्तिया उस्तादजी, लजवन्तिया ने दूध दिया है···

हठात् मानो कैसे चौंक उठे उस्तादजी। मानो सारंगी बजाते-बजाते हठात् े-पर्दे में हाथ पड़ गया हो। बोले—जा, पागल कहीं का, भाग, भाग, जा···

कहकर खुद ही भागने लगे सामने की तरफ। और कुन्दनलाल तब हठात् रोते-रोते हँस पड़ा। हो-हो करके हंसने लगा। लेकिन वह हंसी आस-पास के मकानों में जिसके भी कान में गयी, उसने ही समझा कि पागल फिर रो रहा है। उसकी हँसी को भी उस दिन लोग रोना समझकर भूल कर बैठे।

कुन्दनलाल तब हँसते-हँसते ही कहने लगा—भाग गया, भाग गया, भाग गया···

यह जीवन जो कितना विचित्र है आज भी यही बीच-बीच में सोचता हूँ। बीच-बीच में सोचता हूं तो लगता है इस जीवन का एक लेखा-जोखा पा गया हूँ। और ठीक उसके दूसरे क्षण ही सब हिसाब बेहिसाब हो जाता है। जिस दिन कलकत्ता के बड़े बाजार में एक साधु आकर शक्तिधर चाटुज्जे के पास एक पोटली जमा करके रख गया था, उस दिन क्या शक्तिधर चाटुज्जे ने ही सोचा था कि उसके भीतर इतने रुपये हैं! और उन्हीं रुपयों का अन्त में यह नतीजा होगा, यह भी अगर वे जानते तो क्या वे वह रुपया लेते? नवकुमार यदि जानते

कि कपालकुण्डला को घर में लाने पर उन्हें इस तरह कापालिक के कोपानल में पड़ना होगा तो क्या वे उसे अपनी स्त्री के रूप में घर में लाते ?

शाहजहाँ यदि जानते कि औरंगजेब बुढ़ापे में उन्हें कैद करके रक्खेंगे तो क्या वे दिल्ली का सिंहासन स्पर्श करते ?

लगता है भविष्यत् के सम्बन्ध में मनुष्य अन्धा रहता है, इसीलिए मनुष्य सुख की आशा में संसार-यात्रा का निर्वाह करता है। लेकिन दुःख ही जो मनुष्य को सुख की मरीचिका दिखाकर सर्वनाश के रास्ते में खींच ले जाता है, यह तब उसे खयाल नहीं रहता। नहीं तो क्यों हम सब जानकर भी उस रास्ते में पैर बढ़ाते हैं ! क्यों दुःख को ही शान्ति समझकर इस तरह आत्म-प्रवंचना करते हैं ?

ये सब बातें हम लोगों के पक्ष में जिस प्रकार सच हैं, सुललित और केसर बाई के सम्बन्ध में भी ठीक उतनी ही सच हैं। सुललित ने क्यों अपना सबकुछ शिक्षा-दीक्षा-आदर्श छोड़कर कहाँ की कौन-सी एक तुच्छ लड़की के आकर्षण में अपना सर्वनाश बुला लिया, और केसर बाई ने ही क्यों अपना घर, अपने आत्मीय-स्वजन-कुलधर्म सबका परित्याग कर एक सारंगीवाले के साथ अनिश्चय के पथ में पैर बढ़ाया ?

लेकिन भविष्यत् सोचने की क्या मनुष्य की इच्छा भी होती है, सोचने का मनुष्य को समय होता है ? पृथिवी में जितना कुछ सच है उसमें से मृत्यु ही तो सबकी बनिस्बत बड़ा सच है ! तो भी क्या, हम सब लोग क्या दल-दल में आत्महत्या करते हैं ?

और आरती ?

ना, आरती की बात अभी रहने दी जाये। आरती ठीक समय पर ही तो कहानी में आकर हाजिर हो जायेगी।

उस दिन केसर बाई ने कहीं भी पता नहीं पाया तब ठीक किया कि जैसे भी हो आरती का पता खोजकर निकालना है !

बहुत दिनों पहले एक बार एक मुजरा लेकर केसर बाई बरेली गयी थी। एक राजा के महल में उसकी मजलिस बैठी थी। वहीं उसने सुना था कि आरती के पति शायद वहाँ नौकरी करते हैं।

आदमी ने कहा था—यहाँ बहुतेरे बड़े-बड़े अफसर हैं, गवर्नमेंट अफसर—वे भी आपका गाना सुनने आयेंगे !

—बड़े-बड़े अफसर ?

—हाँ, गजेटेड आफिसर सब। वे लोग आपका गाना सुनना चाहते हैं। सबने सुना है कि केसर बाई गाना गाने आयेंगी, इसीलिए राजा साहब से कहा है कि वे भी आयेंगे…

अवश्य एक पलक की भेंट ।

तो कहना होगा कि वह न देखने में ही शामिल है। गाना हो रहा था मजलिस में। केसर बाई वही गाना उस समय गा रही थी—

डोले रे जोबन मदमाती गुजरिया
तेरा संग जुड़ा मुझसे मारा ले कटरिया
लटपट पोहट कुंज भवन में
पहर कुसुम रंग की रे चुनरिया···

गाना सुनकर सब वाह-वाह कर रहे हैं, जैसा कि केसर बाई का गाना सुनकर साधारणतः सभी तारीफ करते हैं। झिझिट खम्माच का ऐसे जमक का ठुमरी ठाठ गान के जगत में सहसा सुनायी नहीं पड़ता। गा सकने पर इसी एक गाने से मजलिस को मात कर दिया जा सकता है। लेकिन गाना शुरू होते ही गाने के बीच में एक दुर्घटना घटी। ताल कट गया बरकत अली तबलची का, सुर नष्ट हो गया। सारंगीवाले उस्तादजी ने भी उस वक्त सारंगी रोक दी थी।

—क्या हुआ ? क्या हुआ ?

कोई मानो एक-दो लोग गाने की मजलिस छोड़कर हठात् बाहर चले गये। लेकिन वह सिर्फ एक मिनट के लिए। उसके बाद फिर गाना शुरू हुआ। फिर वही मजलिस। फिर महफिल जम गयी। फिर 'शाबाश' 'शाबाश' की ध्वनि गूंजी। फिर तबलची बरकत अली ने बँधे तबले पर तिहाई मारी। सारंगी वाले उस्ताद हामिद खां ने फिर केसर बाई के ठुमरी के कामों को अपनी छड़ी से हूबहू खींच लिया।

एक समय मजलिस भी टूटी।

लेकिन केसर बाई के मन में एक खीज रह गयी। उसके गाने के बीच में दो लोग इस तरह उठ क्यों गये ? उसके गाने की मजलिस में तो सभी मशगूल होकर गाना सुनते हैं। जब तक उसका गाना खतम नहीं होता तब तक कोई उठकर जा नहीं सकता। तो फिर क्या उसका गाना उन लोगों को अच्छा नहीं लगा !

उसका गाना किसी को खराब लगा है, यह बात सोचने में भी केसर बाई को तकलीफ होती है।

गाने के अखीर में घर के मालिक सेठजी ने आकर खूब तारीफ करनी शुरू की। गाना बहुत अच्छा हुआ, मजलिस खूब जमी, वगैरह तमाम बातें।

सुनते-सुनते एक समय केसर बाई ने सेठजी से पूछा—अच्छा सेठजी, एक बात है, गाने की मजलिस से दो आदमी उठ क्यों गये गाने के बीच में ?

सेठजी को याद आया—ओह, बैनर्जी साहब की बात कह रही हैं ?

केसर बाई बोली—यह मैं जानती नहीं···

—हाँ, वे बैनर्जी साहब थे और उनकी बीबी थीं। गाना सुनते-सुनते बैनर्जी साहब की बीबी अकस्मात् बेहोश हो गयी, इसीलिए सब उनको धर-पकड़कर उनके घर पहुँचा आये।

—बैनर्जी साहब कौन हैं?

—यहाँ के डिवीजनल सुपरिंटेंडेंट साहब। उनकी बीबी की तबीयत खराब हो गयी थी।

—तो उनकी बीबी को क्या कोई बीमारी है? अकस्मात् वह बेहोश क्यों हो गयी?

सेठजी यह नहीं जानते। लेकिन केसर बाई समझ गयी। मुँह देखकर ही समझ गयी थी, वह उसकी बहन है। वही आरती। उसके दूसरे दिन ही बरेली छोड़कर दल-बल लेकर चली आयी थी केसर बाई। फिर कभी बरेली नहीं गयी उसके बाद। बरेली से तमाम मुजरों में माँग आयी बाद को, तमाम रुपयों का लोभ दिखाया सेठजी लोगों ने। लेकिन फिर कभी जाने को राजी नहीं हुई केसर बाई। बहन का मुँह काला करने के बदले खुद ही बल्कि अपना काला मुँह लेकर जीवन काट लेगी, यही तो भी अच्छा है। तो भी कभी बरेली वह नहीं जायेगी।

लेकिन इस बार वह जायेगी। इस बार वह बरेली में ही जायेगी, उसे ढूँढ़ निकालने के लिए। केसर बाई हिसाब से नहीं जायेगी, जायेगी ऐसे ही सहज-स्वाभाविक भाव से। आरती की दीदी के हिसाब से। जाकर कहेगी—यह तूने क्या किया बोल तो आरती, तूने मेरा यह सर्वनाश क्यों किया? मैंने तेरा क्या सर्वनाश किया था जो आज तेरे पाप का जिम्मा मुझे सहना पड़ रहा है? एक आदमी ने तेरे लिए अपना जीवन इस तरह नष्ट कर दिया है, और तू यहाँ पति-लड़के-लड़कियाँ लेकर संसार चला रही है? तू एक बार उसके पास जाकर खड़ी हो, मैं अब कितने दिनों आरती बनकर अपने मन को आँखों का झूठा भरोसा दूँगी? तू जाकर मुझे बचा आरती, मैं मुक्ति पाऊँ। यह तेरा ही बोझ है। चाहे तो तू यह बोझा सँभाल ले, और नहीं तो मुझे मुक्ति दे, मैं अब सह नहीं पा रही···

केसर बाई ने जल्दी-जल्दी सामने जो पाया उसी से एक सूटकेस सजा लिया। दो सादी लाल पाड़ की मामूली साड़ियाँ, एक तौलिया और दो पेटी-कोट-ब्लाउज। और उसके साथ छोटी-मोटी और दो-एक फुटकर चीजें। अपने साथ कुछ रुपये भी लिये। ट्रेन-भाड़ा और रास्ते का खरचा-वरचा।

नीचे लजवन्तिया भी तैयार हो गयी थी। बाईजी साहिबा का हुकुम। घर में रहनेवालों में रहेगा सिर्फ सरदार अली। वह घर का पहरा देगा और

अपनी रसोई खुद पका लेगा।

केसर बाई ने पुकारा—लजवन्तिया···

नीचे से जवाब आया—जी···

बोलते-बोलते ऊपर आयी। केसर बाई ने पूछा—तू तैयार है?

—तैयार बाईजी साहिबा।

—तो फिर एक टैक्सी बुला ले। स्टेशन जाना होगा···

लजवन्तिया नीचे चली जा रही थी, लेकिन केसर बाई ने उसे फिर पुकारा—और एक बात सुन, तू ठहर, सरदार अली से टैक्सी बुलाने को बोल···

लजवन्तिया बोली—लेकिन सरदार अली तो घर में नहीं है···

—कहाँ गया है?

—बंगाली बाबू को खोजने।

—बंगाली बाबू को अब भी खोज रहा है? एक बार तो खोज आया है!

—आपने तो उसे फिर खोजने को भेजा है?

अब याद आया केसर बाई को। सरदार अली को तो सचमुच भेजा है उसने। और कितनी जगहों में खोजेगा उसे? कोतवाली में खोजा है, निषाद-गंज से बाकरगंज तक सब जगहों में तो खोजा है। लेकिन और कहाँ जा सकता है वह? सचमुच तो, वह तो उड़ नहीं जा सकता हवा की तरह! अकस्मात् सरदार अली हाँफता-हाँफता घुसा।

केसर बाई ने पूछा—क्यों रे, पाया?

—हाँ, पा गया बाईजी साहिबा।

—कहाँ? कहाँ पाया? जल्दी बोल?

—बड़े अस्पताल में।

—बड़े अस्पताल में? जिन्दा हैं न?

सरदार अली बोला—यह नहीं जानता।

केसर बाई गुस्सा हो गयी। बोली—तो जानता नहीं तो कौन-सी खबर तूने पायी? अस्पताल गये क्यों? क्या हुआ था? शराब पीकर रास्ते में बेहोश हो गये थे?

सरदार अली ने तब भी कहा—यह नहीं जानता बाईजी साहिबा।

—ना, तेरे जरिये देखती हूँ कोई भी काम होगा नहीं, तू सिर्फ भांग खाकर नशा करके सोया रह सकता है, चल, मैं जाऊँगी अस्पताल में···

बोलकर केसर बाई थोड़ा ठहरकर सरदार अली से फिर बोली—तू एक टैक्सी बुला, मैं तेरे साथ जाऊँगी···

ग्हाँ बरेली जायेगी सोचकर सब ठीक कर लिया था केसर बाई ने, और वहाँ एक घटना से उसका सबकुछ ताल-मेल बिगड़ गया।

इमर्जेन्सी वार्ड की टेबिल पर उस समय सुललित का लम्बा शरीर सुला-कर रख दिया था अस्पताल के डाक्टरों ने। ऐसा कोई सीरियस केस नहीं है। लेकिन मरने के करीब हो सकता था। समय रहते रास्ते के कुछ दयालु लोग पकड़कर लिटाकर अस्पताल पहुँचा गये हैं।

डाक्टर ने पूछा था—एक्सिडेंट कहाँ हुआ था ?

भले आदमियों ने कहा था—रास्ते में···

—किस रास्ते में ?

—चौक के मोड़ पर।

डाक्टर ने नियमकायदे से सबकुछ अपने रजिस्टर में नोट कर लिया। जो लोग रोगी को ले आये थे उनका भी नाम-गाँव लिखने का कायदा है। उन लोगों ने भी अपना नाम-ठिकाना लिखा दिया।

उसके बाद डाक्टर ने पूछा—आप लोगों ने एक्सिडेंट अपनी आँखों से देखा था ? लोगों ने कहा—हाँ सर, देखा है—देखा कि एक प्राइवेट कार खूब स्पीड से रास्ते से जा रही थी और यह भला आदमी उस गाड़ी का धक्का खाकर गिर पड़ा।

—ये रास्ते में किधर से जा रहे थे ?

—बीच से।

डाक्टर ने रोगी की परीक्षा करके देखा। चौक से इतने सवेरे जब निकल रहे थे तो जरूर सारी रात बाईजी के घर में काटी है, और शराब-वराब भी जरूर पी है। उस मुहल्ले से अस्पताल में ऐसे केस अक्सर आते हैं। ये सब केस आने पर मामूली तरह से कोतवाली में खबर भेजनी पड़ती है। वे लोग ही आकर इन्क्वायरी करते हैं, वे लोग ही भार ले लेते हैं रोगी का। उसके बाद कानून उनका निजी रास्ता पकड़कर चलता है।

लेकिन मुश्किल हुई नाम को लेकर। रोगी का नाम आखिर क्या है और घर का ठिकाना क्या है सो कोई जानता नहीं था। रोगी का हार्ट दुर्बल देखकर ही समझा जा सकता था कि कई दिनों से इसने कुछ खाया नहीं है। फिर भी शराब है, लगता है शराब पीता है खूब। जो बड़े आदमी रोगी होते हैं उनके इस वार्ड में आने पर डाक्टरों में हल्ला मच जाता है। छोटे से बड़े डाक्टर तक सब देखने को दौड़े आते हैं। लेकिन इन गरीब के रोगों के लिए, इनके लिए, पृथिवी के किसी भी मनुष्य के सिर में दर्द नहीं होता। इसीलिए इतना ध्यान नहीं लगा रहा था कोई।

रोगी ने एक बार थोड़ी-सी आँखें खोलीं।

डाक्टर ने पूछा—आपका नाम क्या है ? आप रहते कहाँ हैं ?

रोगी के कानों में मानो बातें घुसी नहीं। उसने जैसे आँखें खोली थीं वैसे ही फिर आँखें मूँद लीं।

लेकिन पुलिस के लोगों ने आते ही इन सब बातों का भार लिया। रास्ते का ट्रैफिक रूल बड़ा कड़ा है। उस कानून में जरा-सा भी इधर-उधर होने पर कोर्ट में उसे फाइन हो जायेगी। उन्होंने ही पूछ-ताछकर पता लगाया कि असल अपराधी का नाम क्या है ! नाम और किसी का नहीं था, मिस्टर बैनर्जी का था। सिविल लाइन्स के बी० आई० पी० मिस्टर बैनर्जी।

मिस्टर बैनर्जी के खिलाफ रिपोर्ट गयी ऊपर वालों के पास। एस० आई० से ओ० सी० के पास।

ओ० सी० खण्डेलवाल चौंक उठे नाम देखकर।

साथ-ही-साथ कोतवाली से उन्होंने टेलिफोन किया मिस्टर बैनर्जी को।

—मिस्टर बैनर्जी, मैं खण्डेलवाल बोल रहा है···

मिस्टर बैनर्जी ने खण्डेलवाल के साथ एक टेबिल पर बैठकर कितनी ही बार बीयर पी है। जिसे कहते हैं एक रास का यार। एक ही क्लब के मेम्बर हैं दोनों। एक ही कोर्ट में टेनिस खेलते हैं। और मिस्टर बैनर्जी के सिविल लाइन्स के घर में जाकर तास भी खेलते हैं।

मिस्टर बैनर्जी टेलिफोन उठाते ही बोले—कैसा हाल है ?

—मजे में सर, लेकिन एक बात···

—क्या बात है ?

—आपने कुछ एक्सिडेंट किया है क्या ?

—एक्सिडेंट ? कैसा एक्सिडेंट ?

खण्डेलवाल ने घटना समझाकर बताया। एक आदमी को शायद मिस्टर बैनर्जी, आपकी गाड़ी ने धक्का दे दिया है। वह आदमी अभी अस्पताल में है।

—मरा नहीं तो ?

खण्डेलवाल बोले—नहीं, मरा नहीं, सिर्फ हाथ-पैर छिल गये हैं थोड़े, लगता है शराबी है। शराब पीकर रास्ते के बीच से चला जा रहा था···

—करेक्ट ! तो मुझे क्या कोर्ट में जाना होगा फिर ?

—नो नो, नेवर। मेरे रहते फिर आपको कोर्ट में क्यों जाना होगा ? किसी एक लोफर ने आपकी गाड़ी का नम्बर दिया है मुझे। मैं सब हाश-पाश किये देता हूँ—कोई जान नहीं सकेगा···

मिस्टर बैनर्जी बोले—थैंक यू—थैंक यू सो मच, यह सब करके आ रहे हैं इधर ? नयी इम्पोर्टेड ह्विस्की आयी है, किंग आफ किंग्स···

—किंग आफ किंग्स ! माई गाड, एकदम लिविंग गोल्ड, मैं अभी जीप लेकर आ रहा हूँ···

बोलकर साथ-ही-साथ पुकारा—ड्यूटी···

ड्यूटीदार कान्स्टेबिल ने भीतर घुसकर जूते ठोंककर सेल्यूट किया—हुजूर··

खण्डेलवाल उठ खड़े हुए। बोले—जीप रेडि ?

—जी हुजूर···

खण्डेलवाल साहब जीप लेकर ड्यूटी में निकल पड़े। अकस्मात् बड़ा जरूरी काम लग गया उन्हें। तब कोतवाली के और सब काम पड़े रहे। उस समय उनका सबसे बड़ा काम हुआ मिस्टर बैनर्जी से मिलना। मिस्टर बैनर्जी से न मिलने पर मानो इंडिया गवर्नमेंट अचल हो पड़ेगी।

लेकिन बैनर्जी साहब की गाड़ी का नम्बर फिर उस दिन पुलिस के रोजनामचे में लिखा नहीं गया। उसमें लिखा गया कि एक आदमी शराब पीकर रास्ते के बीच से चल रहा था, ऐसे ही समय एक अनजाने नम्बर की गाड़ी अकस्मात् उसे धक्का देकर भाग गयी। बहुत कोशिश करने पर भी उसका कोई पता मिल नहीं सका।

सिविल लाइन्स के मिस्टर बैनर्जी के घर के बगीचे से घिरे ड्राइंग रूम में खण्डेलवाल साहब की जरूरी ड्यूटी चल रही थी उस वक्त। एक पेग के बाद और एक पेग। उसके बाद और फिर एक पेग।

खण्डेलवाल बोले—नो मोर, और नहीं मिस्टर बैनर्जी···

मिस्टर बैनर्जी ने लेकिन छोड़ा नहीं। बोले—नो, नो, वन मोर पेग फार दि रोड, रास्ते के लिए और एक पेग लीजिए···

मिसेज बैनर्जी बगल के कमरे से सब सुन पा रही थी। खण्डेलवाल के चले जाते ही भीतर आयी।

पूछा—क्या हुआ था ? कौन आकर बैठा था अभी तक ? कौन आया ड्रिंक करने ?

मिस्टर बैनर्जी बोले—वह एक स्काउंड्रेल है, कोतवाली का ओ० सी० आफिसर-इनचार्ज···

—तो उसके साथ तुम्हें ड्रिंक करने में शर्म नहीं आती ? वह कितना वेतन पाता है ? उसका स्टेटस क्या है ?

मिस्टर बैनर्जी बोले—अरे साथ में क्या उसको खातिर की है ! पुलिस का आदमी ठहरा न, इसीलिए उन लोगों को हाथ में रखना पड़ता है—इसीलिए इम्पोर्टेड ह्विस्की पिलाकर उसे थोड़ा खुश कर दिया !

मिसेज बैनर्जी अकस्मात् बोली—तो तुमने फिर एक्सिडेंट किया था क्या ?

मिस्टर बैनर्जी सतर्क हो उठे—तुमने जाना कैसे ?

मिसेज बैनर्जी बोली—मैंने बगल के कमरे से सब सुन लिया है, मैंने तुमसे कितनी बार कहा है रघुवीर से धीरे गाड़ी चलाने के लिए कहने को, तो भी तुम नहीं सुनते···

मिस्टर बैनर्जी के उस वक्त पाँच पेग पेट में ढल चुके थे। बोले—तुम जानतीं नहीं इसीलिए यह बात कह रही हो, मेरा कितना जरूरी काम रहता है यह नहीं जानतीं। एक सेकेंड देर हो जाने पर दिल्ली से कड़ी-कड़ी चिट्ठियाँ आती हैं···

—तो तुम्हें छोड़कर और कोई लगता है गवर्नमेंट का काम नहीं करता ?

मिस्टर बैनर्जी और एक पेग गिलास में ढालने जा रहे थे।

मिसेज बैनर्जी ने उनका हाथ पकड़ लिया घप-से। बोली—और पीना नहीं होगा, वही विष पी-पीकर तुम मेरा सर्वनाश करोगे !

—तुम इसे विष कहती हो ?

—हाँ, विष न हो तो मनुष्य उसे पीकर जानवर के समान क्यों हो जाता है ?

मिस्टर बैनर्जी पागल हो उठे। बोले—क्या कहा ?

—बोली उसे पीने पर मनुष्य अमनुष्य हो जाता है। उस समय फिर मनुष्य को भले-बुरे का ज्ञान नहीं रह जाता, तब मनुष्य का मनुष्यत्व चला जाता है। जानते नहीं तुम्हारे लड़के-लड़कियाँ हैं, वे लोग अगर देखें कि उनके पिता इसे पीकर नशाबाजी करते हैं तब तो वे भी एक दिन यही सब पीना सीखेंगे, तब वे भी तो तुम्हारे समान होंगे, तब मैं क्या कहकर उनका मुँह बन्द करूँगी बोलो तो ?

मिस्टर बैनर्जी बोले—इसीलिए तो उन्हें देहरादून के स्कूल में रखकर पढ़ा रहा हूँ, जिससे वे लोग अच्छी शिक्षा पायें,—जिससे मेरे लिए उन्हें झूठी शर्म न उठानी पड़े···

—अच्छा किया है, भला किया है, लेकिन तुम तो अपना आफिस और अपने यार-दोस्त लेकर हो, तो फिर मैं क्या लेकर रहूँ बोलो तो, तो फिर मेरा किस तरह समय कटे ?

—क्यों, तुम्हारी भी तो गाड़ी है, तुम्हें भी तो गाड़ी दी है एक, तुम भी तो वह गाड़ी लेकर जहाँ मन हो जा सकती हो। तुम्हारे जाने की जगहों की क्या कमी है ? यहाँ के लेडीज क्लब की मेम्बर हो जाओ न। दूसरे आफिसरों की औरतें जैसे सोशल-वर्क करती हैं, तुम भी तो उसी तरह सोशल-वर्क करके इन्दिरा गांधी के समान एक प्राइम मिनिस्टर हो सकती हो—। आजकल सोशल-वर्क करने पर गवर्नमेंट मोटी रकम देती है। थोड़ी कोशिश करने पर तुम भी तो पाओगी, कोशिश करने पर अखबारों में नाम भी छपवा सकोगी, फोटो भी छपवा

सकोगी—उसके बाद थोड़े ऊपरी समाज में तदबीर-तरकीब लगाकर पद्मश्री भी पा जा सकती हो, कहा नहीं जा सकता कुछ, सभी तो ऐसे ही पाते हैं…

—तुम ठहरो, एक बार जब तुम्हारे हाथों में पड़ी हूँ तब मेरे भविष्यत् में क्या है यह मैं ही जानती हूँ…

इस बार मिस्टर बैनर्जी शराब के नशे में झूमकर हा-हा करके एक अट्टहास से हँस उठे। उसके बाद हँसी रोककर बोले—देखता हूँ सचमुच हँसा दिया तुमने आरती…

—यह तो कहोगे ही। सच बात कहने पर तुम्हें वह हँसी की बात की तरह ही लगेगी…

—ना ना, इसलिए नहीं कह रहा, कहता हूँ ऐसी एक स्त्री दिखा सकती हो जो अपने पति से यह न बोले कि तुम्हारे हाथ में पड़कर मेरा जीवन एकदम नष्ट हो गया ? सचमुच दिखा सकती हो ऐसी एक स्त्री को ? मैं दस हजार रुपयों की शर्त करता हूँ—दिखाओ, अभी-अभी तुम्हें दस हजार रुपये दे दूँगा…

मिसेज बैनर्जी बोली—देखो, वह सब रसिकता रहने दो, मैंने एक बार बड़ी मुश्किल से तुम्हें जेलखाने के फन्दे से बचाया है, अपनी इज्जत खोकर इस बार मैं तुम्हें बड़ी मुश्किल से जेल से छुड़ा लायी हूँ, लेकिन याद रखना इस बार मैं वह कर नहीं सकूँगी। मेरे भी मान-अपमान नाम की एक चीज है…

मिस्टर बैनर्जी बोले—अरे, तुम्हारा मान-अपमान-ज्ञान भी [illegible] क्या टनटनाता हुआ है, तुमसे तो मैंने कितनी बार कहा है, संसार में इज्जत-विज्जत सब गलत बात है। इस दुनिया में जिसके पास रुपया है, उसकी ही इज्जत है— रुपया न होने पर तुम हजार ईमानदार ही क्यों न होओ, कोई तुम्हें पूछेगा नहीं…

मिसेज बैनर्जी बोली—लेकिन अभी जो तुमने इस तरह पूरी बोतल [illegible] की दामी ह्विस्की पिलायी, यह भी तो एक तरह की खुशामद है। ऐसा काम तुम क्यों करो जिसके लिए दूसरे की खुशामद करनी पड़े ! [illegible] तुम्हारे लिए खुशामद करने जाकर बे-इज्जत होकर लौट आती हूँ, उसका भी तुम्हें [illegible] नहीं आती ? तुम्हारी स्त्री होकर मेरे बे-इज्जत होने पर उससे तुम्हें भी शर्म आना वाजिब है !

नहीं उसकी ? मैंने जो उसके नाम से डिफेमेशन चार्ज नहीं लगाया यही तो बहुत है !

—सचमुच नौकरी चली गयी ?

—अरे, नौकरी गयी माने क्या, इंडिया गवर्नमेंट ने तो उसको नौकरी से डिस्चार्ज कर दिया है···

—क्यों ?

—सीधी बात है, एक क्लास वन गजेटेड आफिसर के नाम से झूठा चार्ज लगाया था, उसने इसलिए !

मिसेज बैनर्जी ने कहा—लेकिन तुम तो घूस लेते हो···

—कौन कहता है मैं घूस लेता हूँ ?

—मैं कहती हूँ तुम घूस लेते हो। सिर्फ मैं नहीं, सब कहते हैं, सब जानते हैं। निहायत तुम बड़ी नौकरी करते हो इससे कोई मुँह से कहने की हिम्मत नहीं करता, तुमसे कह नहीं सकता। यही जो तुमने आज किसीको गाड़ी से दबाया है, तुम्हें क्या कोई पकड़ सकेगा ? पकड़ नहीं सकेगा, क्योंकि जो लोग बोलते उन्हें तुमने हाथ की मूठ में रख लिया है घूस खिलाकर···

—घूस खिलाकर ? तुम कह क्या रही हो ?

—तो दामी शराब पिलाना और घूस देना क्या एक बात नहीं है कहना चाहते हो ? क्यों तुम जोर से गाड़ी चलाने को कहते हो रघुवीर से, क्यों निर्दोष आदमी तुम्हारी गाड़ी के नीचे दब जाता है ?

मिस्टर बैनर्जी बोले—यह देखो, इसीलिए लोग कहते हैं औरत की जात ! शराब पीकर मतवारी करते-करते कोई अगर हमारी गाड़ी के ऊपर कूद पड़े तो वह भी मेरा दोष है ?

—नहीं, कभी नहीं, मैंने बगल के कमरे से सब सुना है। उस आदमी ने शराब नहीं पी थी, वह सिर्फ रास्ते से पैदल चला जा रहा था, तुमने उसे धक्का देकर फेंक दिया है। लेकिन तुमने जब देखा कि वह तुम्हारी गाड़ी से धक्का खाकर गिर पड़ा तब तो तुम्हारी ड्यूटी थी उसे गाड़ी में बिठालकर अस्पताल पहुँचा देने की। सो तुमने उसे पहुँचाया है ?

मिस्टर बैनर्जी बोले—एक लोफर की जिन्दगी बड़ी है, या इंडिया-गवर्नमेंट की ड्यूटी बड़ी है ? तुम जानती हो मैं अगर एक दिन आफिस न जाऊँ तो इंडिया गवर्नमेंट का कितने करोड़ रुपयों का नुकसान होगा ? तुम्हें वह आइडिया है ? वह आइडिया रहने पर तुम यह बात न कहतीं—खण्डेलवाल तो अब तक यही कह रहा था···

अकस्मात् एक नौकर आकर सलाम करके खड़ा हुआ। बोला—हुजूर, डाक्टर कोठारी···

—डाक्टर कोठारी ? अन्दर लाओ···

मिसेज बैनर्जी डाक्टर कोठारी का नाम सुनते ही दरवाजे की तरफ बढ़ गयी।

डाक्टर कोठारी बड़े व्यस्त डाक्टर हैं। हजरतगंज से बाकरगंज, अमीनाबाद, बंगाली टोला सब कहीं उनका बुलावा होता है। मनुष्य के हिसाब से भी डाक्टर कोठारी जितने अच्छे हैं, डाक्टर के हिसाब से भी उतने ही चतुर काबिल हैं।

डाक्टर कोठारी के घुसते ही मिसेज बैनर्जी बोली—आइए डाक्टर कोठारी! इतनी देर हो गयी आपको, हम लोग आपके लिए ही अब तक रास्ता देख रहे थे···

—मुझे थोड़ी देर हो गयी हजरतगंज में···

कहकर उन्होंने ब्लड-प्रेशर मापने का यन्त्र निकाला। गले में स्टेथिसकोप लगाया। उसे लगाते-लगाते बोले—अभी फिर एक जगह जाना होगा, आप लेट जाइए मिस्टर बैनर्जी···

मिसेज बैनर्जी बोली—देखिए डाक्टर कोठारी, ये तो आपका इन्स्ट्रक्शन कुछ मानते नहीं हैं···

—क्यों, मानते क्यों नहीं ?

मिसेज बैनर्जी बोली—ठीक से दवा ही नहीं खाते···

डाक्टर कोठारी ने तब तक अपना काम शुरू कर दिया था। वे ब्लड-प्रेशर का यन्त्र मिस्टर बैनर्जी के हाथ में लगाकर देखने लगे। रक्त का दबाव मिस्टर बैनर्जी का बराबर ऊँचा रहता है। तिस पर मिजाज रूखा है। थोड़े में ही उत्तेजित हो जाते हैं। यह ब्लड-प्रेशर के रोगियों के लिए अच्छा लक्षण नहीं है। डाक्टर कोठारी कई बार मिस्टर बैनर्जी से कह गये हैं—चारों तरफ हंगामा होने पर भी आपको अपना मन कंट्रोल करना होगा, तब आप नीरोग रहेंगे मिस्टर बैनर्जी···

लेकिन कौन सुनता है किसकी बात! मिसेज बैनर्जी हर दिन नियम से मिस्टर बैनर्जी के मुँह के पास दवाइयाँ रख जाती है। हर दिन ठीक समय पर खाने को, ठीक समय पर सोने को कहती। लेकिन मिस्टर बैनर्जी के आफिस के काम की वजह से यह ठीक-ठीक होता नहीं है।

डाक्टर कोठारी कहते हैं—लेकिन इस रोग में अगर रात को नींद न आये तो फिर प्रेशर कम नहीं होगा, यह मैं कहे रखता हूँ। इसीलिए तो मैंने कहा है कि आप नियम से उन्हें रोज नींद टेबलेट खिला दीजियेगा···

मिसेज बैनर्जी कहती—लेकिन रात को तो घर ही लौटते हैं देर से।

—क्यों ?

आया ! एक क्षण में मानो एकदम अन्यमनस्क हो गया उनका चेहरा !

डाक्टर कोठारी बोले—केसर बाई बहुत अच्छा ठुमरी गाना गाती हैं। बहुत अच्छा गला है। कभी उनका गाना सुना है ?

मिसेज बैनर्जी 'हां'-'ना' क्या बोले, समझ नहीं सकी। बरेली में जब थी तब केसर बाई का गाना सुनने जाकर कितनी दुःखदायी घटना घटी थी वह याद आते ही सिहर उठी।

डाक्टर बाबू बोले—वह भी एक अद्‌भुत घटना है मिसेज बैनर्जी। रोगी देखने जाकर जो कितनी घटनाएँ कानों में आती हैं, कितनी विचित्र कहानियाँ जो सुन पाता हूँ उन्हें कहकर पूरा नहीं किया जा सकता। लेकिन अचम्भा है, उन्हीं केसर बाई का इतना नाम है, उनके पास इतना रुपया है, उन्होंने अब गाना-बजाना-मुजरा एकदम छोड़ दिया है···

—छोड़ दिया ? क्यों ?

डाक्टर कोठारी बोले—वह लम्बी बात है, अभी वह सब बताने का समय नहीं है मुझे, बाद को जब आऊँगा, बताऊँगा, अभी चलूँ···

कहकर वे घर का पोर्टिको पार करके अपनी गाड़ी में जा बैठे। उसके बाद गाड़ी एंजिन का धुआँ उड़ाकर मिसेज बैनर्जी की आँखों के सामने से चली गयी। पोर्टिको के उस किनारे ही मिस्टर बैनर्जी का कम्पाउंड से घिरा बगीचा है। गेट पर सरकारी बिजली ज्वल-ज्वल करके जल रही है। उसके ही सामने सरकारी दरबान स्टूल पर बैठा पहरा दे रहा है। सतर्क पहरा। जिससे चोर-डाकू-गुण्डा कोई घुस न सके। जिससे उनमें से कोई इस घर में घुसकर कोई अशान्ति पैदा न कर सके। सरकारी दरबान की आँखें बचाकर जिससे कोई इस घर का कुछ चुरा न सके, कुछ लूट न सके। लेकिन इन सब बातों की तरफ उसकी निगाह नहीं थी। उस समय भी मिसेज बैनर्जी के दिमाग में बात चक्कर काट रही थी—केसर बाई ! केसर बाई ! गाना-बजाना छोड़ दिया है केसर बाई ने !

डाक्टर कोठारी की बातें उस समय भी उसके कानों में बज रही थीं—वह भी एक अद्‌भुत घटना है मिसेज बैनर्जी। रोगी देखने जाने पर जो कितनी विचित्र घटनाएं कानों में आती हैं, कितनी विचित्र कहानियाँ जो सुनने को मिलती हैं, उन्हें बोलकर खत्म नहीं किया जा सकता। लेकिन अचम्भा है उन केसर बाई का इतना नाम, इतना रुपया है, उन केसर बाई ने गाना-बजाना-मुजरा एकदम सब छोड़ दिया है···

अकस्मात् पीछे से पुकार आयी—मेमसाब ?

मिसेज बैनर्जी पीछे फिरीं। देखा उनका बवर्ची हरीलाल है।

—मेमसाब, खाना तैयार···

मिसेज बैनर्जी ने अपने को सँभाल लिया। बोली—टेबुल पर लगाओ, मैं आ रही हूँ ··

मनुष्य के जीवन में कब जो किस घटना से किस तरह कौन-सी प्रतिक्रिया होनी है, लगता है कि मनुष्य के सृष्टिकर्ता भी उसे बता नहीं सकते। जिस सृष्टि-कर्ता के निर्देश से सिर के ऊपर के इस आकाश से एक दिन बादल जमकर वर्षा होती है, मैदानों-खेतों मे हरीतिमा प्लावन बह जाता है, उन्हीं आकाश के देवता की रोषाग्नि से फिर एक दिन पत्थर फाड़नेवाली धूप से खेत के धान, खेत की फसल जल-भुनकर छार-खार हो जाती है, मनुष्य के मसार में अनाहार का हाहा-कार उठता है, उसका रहस्य कौन उद्घाटित कर सकता है ?

केसर बाई के जीवन मे भी लगता है ठीक वही प्रतिक्रिया हुई थी। प्रति-दिन शाम को केसर बाई जाकर हाजिर होती महावीरजी के मन्दिर मे। मन्दिर में दूसरे पूजार्थियों की भीड़ होने पर भी केसर बाई का उनसे कुछ आता-जाता नहीं। उनकी वही लाल पाड़ की साड़ी, वही माथे पर सिन्दूर की टिकुली, और उनके वही महावर-लगे खाली पैर देखकर कौन कल्पना करेगा कि वे चौक के बदनाम मुहल्ले की बाईजी केसर बाई हैं ? कौन कल्पना करेगा इन्हीं केसर बाई ने एक दिन राजा-महाराजाओ को ठुमरी-कजरी-दादरा-गजल सुनाकर मह-फिल मात की है। घाघरा-ओढ़निया उड़ाकर उठते नवाबजादों और रईस लोगों की शिराओं के खून में तूफान की तरंग पैदा की है। उस समय वे भक्तिमती कुलवधू के समान, महावीरजी के सामने घुटने झुकाकर अपने प्राणों का निवेदन जनातीं। वे मन-ही-मन कहतीं—अपनी बहन के सब पापों का प्रायश्चित्त मैं कर रही हूँ देवता, मैंने अपने पिता के मन मे भी जो कष्ट दिया है मैं उसका भी प्रायश्चित्त कर रही हूँ। तुम मेरे सब पाप क्षमा करो प्रभु, सब संकट का मोचन करके मुझे तुम मुक्ति दो···

कितने लोग, कितने पूजार्थी, कितने यात्री पृथ्वी-भर के कितने देवताओं की कितनी मानताएँ करते हैं, कितनी अर्जियाँ पेश करते हैं, कितना आर्त निवेदन जताते हैं कौन उसका हिसाब रखता है ! और एक मनौती, एक अर्जी, एक निवेदन जो सब जिन देवता के पास जाकर पहुँचते हैं वे देवता भी उनका क्या प्रतिविधान करते हैं उसका भी हिसाब कोई नहीं रखता, लगता है वह रखना सम्भव भी नहीं है। क्योंकि मनौती-अर्जी-निवेदन की जैसे सीमा-संख्या नहीं है, लगता है उसका समाधान भी विश्व-ब्रह्माण्ड के किसी देवता के द्वारा सम्भव नहीं है। तो भी मनुष्य अनादिकाल से इसी तरह मन्दिर में, मसजिद मे, गिर्जे मे जाकर अर्जी जतायेगा और पत्थर के देवता अपनी निर्वाक् दृष्टि से अनादि-अनन्तकाल तक

उसकी तरफ ताकता रहेगा, यही लगता है विश्व-सृष्टि का नियम है। इसी तरह पृथिवी का इतिहास चला आ रहा है, लगता है इसी तरह ही और, और भी अनादि-अनन्तकाल तक यह चलेगा।

उसके बाद जब तमाम समय कट जाता, तब एक समय केसर बाई उठ खड़ी होतीं। धीरे-धीरे माथे का घूँघट मुँह पर अच्छी तरह खींचकर मन्दिर के बाहर आकर गाड़ी में बैठतीं।

इसी तरह चल रहा था, अकस्मात् जिस दिन बंगाली बाबू नहीं मिले, उसी दिन से केसर बाई छटपट करने लगी दिन-रात। उसके बाद खबर आयी कि सरकारी अस्पताल में जो आदमी मिला है, उसका नाम ही सुललित चैटर्जी है और वह खबर लेकर आया सरदार अली।

केसर बाई बोली—तो तू अपने साथ यहाँ क्यों नहीं ले आया? फिर अगर भाग जाये?

सरदार अली बोला—बाबूजी जो आये नहीं, इसीलिए तो मैं दौड़ते-दौड़ते आपके पास आया···

केसर बाई तब हैरान हो उठी। बोली—चल-चल, अभी चल—चल, जाकर देख आऊँ···

अस्पताल के इमर्जेंसी वार्ड में तब ठीक तरह से आँखें खोलकर देखा सुललित ने। चारों तरफ देखकर अवाक् हो गया। यह कहाँ आया है वह!

डाक्टर ने पूछा—आपका नाम क्या है? आप किस तरह गिर गये? किसी गाड़ी ने क्या आपको धक्का दिया था?

असंख्य प्रश्न उनके। सुललित पहले-पहल कुछ समझ न पाता। सब मानो धुँधला लगता। लगता वह मानो एक परम प्रशान्ति में निमग्न हो गया है, तन्मय हो गया है, गम्भीर भाव से उसने अपनी आत्मा को परमात्मा में एकदम मिला-जुला दिया है। उसे अब किसी यन्त्रणा की जलन नहीं है; वह मुक्त है। सब जिम्मेदारियों, सब जंजीरों, सब सम्बन्धों से वह मुक्ति पा गया है। वह सिर्फ जागता-जागता सोया रहता!

पहले दिन ही समझ में आ गया था कि हालत गम्भीर नहीं है। थोड़ा-सा ज्ञान होने पर रोगी को छोड़ देने का इन्तजाम किया गया था। लेकिन ज्ञान ही नहीं फिर रहा था रोगी का। अन्त में जिस दिन ज्ञान हुआ उस दिन डाक्टर ने फिर वही सवाल किया—आपका नाम क्या है? आप किस तरह गिर पड़े? किसी गाड़ी ने क्या आपको धक्का दिया था?

जवाब में सुललित उठकर बैठने की कोशिश करने लगा।

नर्स ने उसे पकड़कर उठाकर बिठाल दिया।

डाक्टर ने पूछा—आप कहाँ रहते हैं?

सुललित ने उस बात का जवाब दिये बिना कहा—मैं घर जाऊँगा···

—घर ? आपका घर कहाँ है ? आपके घर में हम लोग ही खबर दे सकते हैं। घर का पता बताइए ?

सुललित के सिर में उस समय भी बैंडेज बँधा था। डाक्टर की तरफ देखकर वह बोला—आपने मेरे सिर में यह क्या बाँधा है ?

इसी समय सरदार अली वार्ड में घुस गया था। बोला—बंगाली बाबू, आप यहाँ हैं ? बाईजी साहिबा आपको ढूँढ जो रही हैं···

—आरती ? आरती कहाँ है सरदार अली ?

सरदार अली बोला—बाईजी साहिबा ने तो आपको खोजने के लिए ही मुझे भेजा है बाबूजी, मैंने पूरे शहर में आपको खोजा है—आप चलिए—घर चलिए···

सुललित बोल उठा—कहाँ जाऊँगा ! तुम्हारी बाईजी साहिबा के घर में ? नहीं, मैं वहाँ नहीं जाऊँगा—तुम चले जाओ, मैं वहाँ नहीं जाऊँगा···

सरदार अली बोला—लेकिन बाईजी साहिबा ने तो आपको ढूँढकर ले आने को कहा है बाबूजी···

सुललित बोला—नहीं, मैं किसी तरह नहीं जाऊँगा वहाँ, मैं अब वहाँ कभी नहीं जाऊँगा···

सरदार अली फिर वहाँ खड़ा नहीं हुआ। सीधे एकदम चौक में लौटकर उसने केसर बाई को खबर दी।

केसर बाई उस समय बरेली जाने को ही तैयार थीं। सरदार अली से खबर पाते ही एक गाड़ी बुलाने को बोलीं। गाड़ी आते ही लजवन्तिया से बोली—तू घर में रहना, कहीं चली मत जाना, मैं बाबूजी को लेकर तुरन्त चली आऊँगी।

उसके बाद सीधे अस्पताल की तरफ केसर बाई की गाड़ी चलने लगी।

लजवन्तिया के घर के भीतर जाते ही उस्तादजी घुसे। इतनी देर तक कहाँ मुँह-छिपे थे कौन जाने ! गला धीमा करके उन्होंने पुकारा—लजवन्तिया···

लजवन्तिया डरकर चौंक उठी उस्तादजी को देखकर।

बोली—उस्तादजी, आप ?

उस्तादजी ने अपने मुँह पर एक उँगली रखकर इशारा किया—हुश, हल्ला मत कर। मैं सब जानता हूँ। केसर बाई सरकारी अस्पताल में गयी है बंगाली बाबू को लाने···

—आपने जाना कैसे उस्तादजी ?

उस्तादजी बोले—मैंने सब सुना। बाहर खड़े-खड़े सब सुना है। यही मौका, यही फुरसत है, यह सुयोग अब आयेगा नहीं लजवन्तिया, खूब होशियार, मैं अब खड़ा नहीं होऊँगा यहाँ, मैं चलूं, फिर आऊँगा···

—लजवन्तिया !

बड़ा करुण सुर। बड़ा मर्मान्तक सुर।

—कौन ?

दोनों ने देखा कुन्दनलाल को। कुन्दनलाल कब खिड़की से बाहर आकर खड़ा हो गया था, किसी को आहट नहीं मिली। वही चेहरे-भर में दाढ़ी-मूंछें, वही गन्दी, भयानक मूर्ति। दिन-दिन कुन्दनलाल को मानो घोर पागलपन हो गया है। कभी-कभी कहीं लापता हो जाता है, तब फिर उसका पता ही नहीं लगता। और फिर एक दिन अकस्मात् आकर उदय हो जाता है। बोलता है—लजवन्तिया, एक रोटी खिलाओ मुझे···

लजवन्तिया रोटी देती है। बीच-बीच में कुन्दनलाल पर माया भी होती है उसको। ऐसा एक खानदानी घर का लड़का अपने कर्मफल से पागल हो गया, आखिर में क्या मर जायेगा ! पागल में बुद्धि-विवेचना भले न रहे, भला-बुरा वह जो भी करे, नाबदान-कूड़ाघर जहाँ भी पड़ा रहे, भूख तो उसको है। भूख से तो किसी की रिहाई नहीं है दुनिया में।

केसर बाई ने एक दिन देख पाया था।

पूछा था—तेरे पास कुन्दनलाल इतना क्यों आता है री लजवन्तिया ?

लजवन्तिया ने कहा था—वह सिर्फ रोटी खाना चाहता है बाईजी साहिबा···

केसर बाई को भी देखकर माया हुई थी। दामी चीज-वस्तु तो कुछ चाहता नहीं, सिर्फ खाना चाहता है। वह भी सूखी एक रोटी। एक समय दलाली करके जो पैसे-कौड़ी जमा किये थे, सब नशा करके उड़ाकर अब पागल हो गया है।

केसर बाई बोली थी—तो दे दे, रोटी दे, बेचारा खाने को नहीं पाता···

उसके बाद कुन्दनलाल से पूछा था—तू यहाँ सारे दिन रहता क्यों है रे कुन्दनलाल ? और कोई तुझे खाने को नहीं देता ? यहाँ और कोई बाईजी नहीं है ? उन लोगों के घर में जा न···

कुन्दनलाल पागलों की तरह हँसने लगा। वह एक विचित्र हँसी थी।

लजवन्तिया ने पूछा था—तू हँसता क्यों है ? बाईजी साहिबा की बात का जवाब दे न ? और कोई तुझे खाने को नहीं देता ?

कुन्दनलाल तो भी दाँत निकालकर हँसने लगा। बोला—खाने को देते हैं, लेकिन मैं खाता नहीं—उन लोगों की रोटी मैं नहीं खाऊँगा···

कहकर फिर ही-ही करके हँसने लगा।

—क्यों ? खाता क्यों नहीं ?

बात का जवाब देते हुए कुन्दनलाल बोला—उन लोगों की रोटी खाकर ही तो हिन्दुस्थान जहन्नुम में गया है। हिन्दुस्थान जहन्नुम में जायेगा बाई साहिबा, हिन्दुस्थान जहन्नुम में जायेगा…

लजवन्तिया बोली—देखा तो बाईजी साहिबा, पागल के मुँह में सिर्फ यही एक बात है, हिन्दुस्थान जहन्नुम में जायेगा!

केसर बाई तो भी बात समझ नहीं सकी। कुन्दनलाल से उसने पूछा—क्यों रे कुन्दनलाल, हिन्दुस्थान जहन्नुम में क्यों जायेगा?

कुन्दनलाल बोला—जहन्नुम में जायेगा नहीं? घी में मिलावट करने से हिन्दुस्थान जहन्नुम में नहीं जायेगा?

—घी में मिलावट करते हैं?

—जी हाँ, घी में मिलावट करते हैं, पानी में मिलावट करते हैं, दवा में मिलावट करते हैं, दूध में भी मिलावट करते हैं…

—दूध में भी मिलावट करते हैं? कौन लोग?

कुन्दनलाल बोल उठा—गाय!

—गाय! केसर बाई अवाक् हो गयी। गाय दूध में मिलावट किस तरह करती है?

लजवन्तिया बात सुनकर चौंक उठी। लेकिन अपने को सँभालकर बोली—उससे बात मत कीजिए बाईजी साहिबा, उसकी बात छोड़ दीजिए, वह पागल है…

कुन्दनलाल बोला—ना बाई साहिबा, दुनिया का सबकुछ मिलावट है, पेड़ के फल में भी मिलावट है, नदी के जल में भी मिलावट है, पछिया हवा में भी मिलावट है। दुनिया में सबकुछ मिलावट है बाई साहिबा। इन्सान भी मिलावट हो गया है।

लेकिन पागल से ज्यादा बात करने का समय फिर किसके पास ही होता है? केसर बाई ने लजवन्तिया से कह दिया था—पागल हो, छागल हो, उसे तू बीच-बीच में रोटी देना लजवन्तिया, समझी, आदमी अच्छा है…

ये सब बातें उस्तादजी भी जानते थे। उस्तादजी कहते—आदमी का दिमाग खराब हो जाने से क्या होगा, मन अच्छा है री, खाना चाहने पर रोटी देना…

लेकिन जब कभी उस्तादजी कोई जरूरी बात कहने इस घर में आयें, तभी कुन्दनलाल आकर रोटी खाना चाहेगा यह अच्छा नहीं लगता उस्तादजी को। बीच-बीच में डराते-भगाते—जा जा, अभी जा, अभी भाग यहाँ से…

लेकिन उस दिन की हालत दूसरी तरह की थी। ठीक जब केसर बाई फिर अस्पताल में बंगाली बाबू को लेने गयी उसी वक्त तमाम जरूरी बातें कहने को थी लजवन्तिया से, जो और किसी के सामने कही नहीं जा सकतीं। लेकिन

कुन्दनलाल फिर उस वक्त रोटी माँगने आता है···

लौटकर जाते समय उस्तादजी ने कहा—तो फिर मैं अभी चलूँ लजवन्तिया···

लजवन्तिया बोली—आप जाइए, आप कुछ फिक्र मत कीजिएगा उस्तादजी, जो करना है, मैं ठीक वही करूँगी···

उस्तादजी के रास्ते में निकलते ही पीछे से अकस्मात् हा-हा करके अट्टहास उठा—भाग गया, उस्तादजी भाग गया—भाग गया···

उस्तादजी को तब जल्दी थी। उसी वक्त केसर बाई आ जायेगी। पीछे फिरकर उस्तादजी ने सिर्फ एक बार कहा—भाग जा, भाग जा पागल कहीं का, भाग···

बोलकर उस्ताद जोर-जोर से पैर चलाकर बड़े रास्ते में खो गये। लेकिन तब भी उनके कानों में गूंज रही थी कुन्दनलाल की हँसी। तब भी कुन्दनलाल हा-हा करके हँसते-हँसते कह रहा था— भाग गया, उस्तादजी भाग गया—भाग गया···

डाक्टर कोठारी को सवेरे से ही मशगूल रहना पड़ता है। सवेरे छह बजे से रोगी जो आना शुरू करते हैं तब से सवेरे नौ बजे तक उन्हें फिर फुरसत नहीं मिलती। उसके बाद ही वे चले जाते हैं चेम्बर में। अमीनाबाद के चेम्बर में लोग लाइन लगाकर खड़े रहते हैं। लेकिन रोगियों को देखते-देखते वे ज्यों ही देखते कि घड़ी में बारह बजे हैं तभी उठ पड़ते हैं। उसके बाद फिर तीसरे पहर के पहले चेम्बर में रोगी नहीं देखेंगे। दोपहर को चेम्बर से निकलते ही जायेंगे तमाम रोगियों के घर में। कोई रहता हजरतगंज में, या फिर कोई सिविल लाइन्स में, और कोई चौक में। तो भी खास-खास रोगियों की खबर मिलने पर एक-एक दिन में उनके घर में दो बार तीन बार भी जाना पड़ता। और मिस्टर बैनर्जी के पास जाना होता है हफ्ते में एक बार। न जाने पर मिसेज बैनर्जी बार-बार तकाजा करके लोग भेजती।

मिस्टर बैनर्जी के लिए मिसेज बैनर्जी की चिन्ता का अन्त नहीं था।

हर बार प्रेशर देखने के बाद ही कौतूहल की निगाह से डाक्टर कोठारी के मुँह की तरफ ताकती रहती, पूछती—कितना, डाक्टर कोठारी ?

मिस्टर बैनर्जी को लेकिन इस तरह कोई फिक्र नहीं थी। उनका प्रेशर बढ़ा या कम हुआ इसके लिए जितना सिरदर्द होता वह सब उनकी स्त्री का होता।

प्रेशर देखने में आखिर कितनी देर लगती है ! वह तो जिस किसी छोटे-मोटे डाक्टर से भी दिखाया जा सकता है। लेकिन मिसेज बैनर्जी का उससे

[illegible] अपने पति को दिखाकर वह निश्चिन्त नहीं हो सकती।

डाक्टर कोठारी ने एक बार कहा था— अच्छा मिसेज बैनर्जी, मुझसे क्यों अपने पति का ब्लड-प्रेशर दिखाती हैं, इससे तो आपका बहुत खर्च पड़ता है। एक आर्डिनरी रेल के डाक्टर को भी तो इस काम के लिए बुला सकती हैं।

मिसेज बैनर्जी कहती—सो तो कर सकती हूँ, उसमें तो मेरा पैसा भी खर्च नहीं होगा। लेकिन आप ही बताइए, रेलवे के डाक्टर क्या डाक्टर हैं? वे नौकरी करते-करते डाक्टरी भी भूल गये हैं—कितनी ही बार उनसे दिखाया है, लेकिन उन सबकी बात वे बिल्कुल नहीं सुनते···। लेकिन आपकी बात अलहदा है। आपसे वे डरते हैं···

—डरते हैं माने?

—डरते नहीं, मानते हैं, वे जानते हैं न कि आपके कितने कॉल आते हैं, आपके समय का कितना दाम है! इसीलिए आपके आते ही वे थोड़े शान्त-शिष्ट हो जाते हैं। नहीं तो सारे दिन जब तक घर में रहते हैं ड्राय-बवर्ची-खानसामा सबको सिर्फ बकते-झकते हैं। मैं बहुत समझाती हूँ उनको, इतना मत चिचियाओ, डाक्टर कोठारी ने चिल्लाने-विल्लाने से मना किया है, तो भी सुनेंगे नहीं···

डाक्टर कोठारी को बहुत भली लगती मिसेज बैनर्जी। इतने घरों में वे रोगी देखने गये हैं, लेकिन किसी घर में किसी स्त्री को पति के लिए इतना परेशान होते उन्होंने नहीं देखा। मानो पति-अन्त प्राण। पति को क्या खाना वाजिब है, क्या खाने से पति का स्वास्थ्य अच्छा रहेगा यह अच्छी तरह जान लेती। बात-बात में बुला भेजती डाक्टर कोठारी को। किसी-किसी दिन रात को मिस्टर बैनर्जी को अच्छी नींद नहीं आयी, और साथ-ही-साथ डाक्टर कोठारी को टेलिफोन!

—डाक्टर कोठारी, एक बार आइयेगा?

डाक्टर कोठारी भीषण व्यस्त हैं उस समय। टेलिफोन उठाते ही गला सुनकर समझते, मिसेज बैनर्जी हैं।

मिसेज बैनर्जी कहती—एक बार अभी आइए डाक्टर कोठारी, मिस्टर बैनर्जी की खूब सीरियस कंडीशन है···

—क्यों? क्या हुआ है उनको?

—आप आइए, खुद आकर एक बार देख जाइए···

साथ-ही-साथ रोगियों को छोड़कर डाक्टर कोठारी उस अमीनाबाद से सिविल लाइन्स में गाड़ी लेकर चले जाते। आकर देखते, मिस्टर बैनर्जी को कुछ भी नहीं हुआ। अच्छी तरह रोज के समान उन्होंने ब्रेकफास्ट खाया है, हमेशा की तरह फिटफाट।

[illegible] करते । [illegible]

[illegible] ही है—[illegible]

[illegible] हो जाता।

[illegible] तो फिर [illegible]

[illegible] कहते हैं [illegible]

[illegible] जी को [illegible]

[illegible] के बाद ही फिर [illegible]

[illegible] आकर, [illegible]

[illegible]

देकर बुलवा लिया, बोली, आपकी तबीयत खूब खराब है !

—यह क्या ?

मिस्टर बैनर्जी अवाक् होकर मिसेज बैनर्जी की तरफ देखकर बोले—मेरी तबीयत खराब है, किसने कहा तुमसे ?

मिसेज बैनर्जी पति को धमका उठी—तुम ठहरो तो, तुम्हारी तबीयत खराब है या अच्छी यह क्या तुम मेरी बनिस्बत ज्यादा जानते हो ?

उसके बाद डाक्टर कोठारी की तरफ देखकर बोली—आप उनका प्रेशर तो थोड़ा चेक कीजिए डाक्टर कोठारी···

—मेरा प्रेशर ? यही तो परसों प्रेशर लिया गया। दो दिन में ही फिर प्रेशर क्यों ?

मिसेज बैनर्जी ने फिर धमकाया। बोली—तुम ठहरो तो, मैं जो कहती हूँ, वह करो···

डाक्टर कोठारी ने प्रेशर देखा। ना, जैसा प्रेशर था वैसा ही है। कोई खास खराब लक्षण नहीं है···

मिस्टर बैनर्जी बोले—मैं भी तो कहता हूँ, मुझे कोई ट्रबल नहीं है···

मिसेज बैनर्जी ने पति को रोक दिया। बोली—तुम रुको तो···

उसके बाद डाक्टर कोठारी की तरफ देखकर बोली—जानते हैं डाक्टर कोठारी, कल मैंने अपने हाथ से उन्हें चिकेन-सैंडविच बना दिया, इन्होंने एक मुँह में लेकर चबाते ही फेंक दिया, एक भी नहीं खाया। बोले—खाना मुझे अच्छा नहीं लग रहा है···

मिस्टर बैनर्जी बोले—तो खाने में अच्छा न लगने पर भी मैं कहूँ कि खाना अच्छा लगता है ?

मिसेज बैनर्जी फिर बोल उठी—तुम ठहरो तो, मुझे बोलने दो···

कहकर डाक्टर कोठारी की तरफ देखकर बोली—जानते हैं, हलकी-सी थोड़ी बिरियानी तैयार कर दी, उसे भी उन्होंने नहीं खाया। भात भी नहीं खाया, बिरियानी भी नहीं खायी, चिकेन-दोप्याजा भी नहीं खाया। कुछ भी अगर वे मुँह में न डालें तो वे खायेंगे क्या ? आप ही बोलिए डाक्टर कोठारी, इस तरह बिना खाये रहने पर आफिस की इतनी मिहनत वे कैसे सँभालेंगे ? और तिस पर पेट खाली रहने पर नींद आती है किसको ?

—क्यों मिस्टर बैनर्जी, रात को आपको नींद नहीं आती ?

मिस्टर बैनर्जी बोले—हाँ, मुझे तो नींद···

बात पूरी होने के पहले ही मिसेज बैनर्जी बोल उठी—तुम ठहरो तो, तुम रात को सोते हो ?

मिस्टर बैनर्जी बोले—सोता नहीं ?

—खाक सोते हो ! तुम सोते हो या नहीं सोते, यह मेरी बनिस्बत तुम ज्यादा जानते हो ? जानते हैं डाक्टर कोठारी, कल सारी रात जाग-जागकर ये बिड़-बिड़ करके बकते रहे । इसे नींद कहते हैं ? इसी तरह सोने से मनुष्य का शरीर अच्छा रह सकता है ?

डाक्टर कोठारी मिसेज बैनर्जी की तरफ देखकर बोले—तो फिर आपको खुद भी तो सारी रात नींद नहीं आती !

मिसेज बैनर्जी बोली—मुझे नींद कैसे आयेगी बोलिए ? बगल में वे जागते-जागते बात करेंगे और मैं सोऊँगी ? यह भी कभी सम्भव है ?

इसी तरह बार-बार । एक कहता है नींद आती है, और दूसरा कहता है नींद नहीं आती । डाक्टर कोठारी को ये ही सब बातें थोड़ी देर बैठे-बैठे सुननी पड़ती हैं । सुनना जरूर पड़ता है, लेकिन मन-ही-मन वे छटपटाते रहते हैं । उधर चेम्बर में असंख्य रोगी उनके लिए 'हाय राम' करते-करते बैठे हैं और यहाँ वे यही सब बेकार बातें सुनते-सुनते मोटी रकम पाकेट में भरकर चले जाते हैं । ऐसा ही हर हफ्ते करीब दो-तीन दिन । किसी दिन मिस्टर बैनर्जी का प्रेशर मापना, किस दिन उनका नींद न आना, और किसी दिन उन्हें भूख न लगना । तो भी मिस्टर बैनर्जी को स्वस्थ कर दें, डाक्टर कोठारी के डाक्टरी-शास्त्र में ऐसी कोई दवाई नहीं है ।

लेकिन तो भी एक कोई प्रेसक्रिप्शन न लिख देने पर मिसेज बैनर्जी खुश नहीं होती । इसीलिए लिखकर वे खड़े होते हैं ।

मिसेज बैनर्जी पोर्टिको तक पहुँचा देने को आती है ।

गाड़ी पर बैठने के बाद मिसेज बैनर्जी फिर पूछती है—अच्छा बोलिए तो डाक्टर बाबू, मिस्टर बैनर्जी आखिर अच्छे हो जायेंगे न ?

डाक्टर कोठारी बोलते हैं—जरूर अच्छे हो जायेंगे—और इसके अलावा उन्हें तो कुछ सीरियस हुआ भी नहीं है । सिर्फ एक काम कीजियेगा, उनका मिजाज थोड़ा ठण्डा रखने की कोशिश कीजियेगा, उनसे ज्यादा तर्क मत कीजियेगा । वे जो बोलें उसे ही 'हूँ' करते जाइयेगा···

कहकर वे गाड़ी स्टार्ट करके चले जाते ।

लेकिन आज दूसरा आदमी । टेलिफोन आते ही सोचा, फिर लगता है मिसेज बैनर्जी है । लेकिन नहीं, इस बार अस्पताल से आया है टेलिफोन ।

—कौन ?

—मैं केसर बाई हूँ डाक्टर साहब ।

—क्या हुआ बाईजी साहिबा ? मेरा वह पेशेंट कैसा है ?

केसर बाई अस्पताल से ही बोल उठी—उन्हीं बंगाली बाबू के लिए ही मैं टेलिफोन कर रही हूँ, बंगाली बाबू इस वक्त अस्पताल के इमर्जेंसी वार्ड में हैं, मैं

न्हें अभी अपने घर में लिये जा रही हूँ, आप दया करके एक बार अभी मेरे र में आइए…

—ठीक है, मैं आ रहा हूँ…

कहकर डाक्टर कोठारी ने रिसीवर रख दिया। रखकर उठ खड़े हुए। जो रोगी लोग अभी तक राह देख रहे थे वे सब हाँ-हाँ कर उठे—डाक्टर बाबू, हम लोग जो बड़ी देर से बैठे हैं…

डाक्टर कोठारी चेम्बर के बाहर निकलते-निकलते बोले—तुम लोग जरा बैठो, मैं अभी चौक से आता हूँ…

कहते-कहते ही गाड़ी स्टार्ट करके अदृश्य हो गये।

केसर बाई के घर में सुललित बिछौने पर सोया था। डाक्टर कोठारी के पहुँचते ही उठकर बैठ गया।

साथ-ही-साथ केसर बाई ने पकड़ रक्खा उसे। बोली—तुम उठे क्यों, सोये रहो…

सुललित बोला—तुम मुझे यहाँ ले आयी?

—लेकिन यहाँ न ले आने से तुम्हारी बीमारी जो बढ़ जाती!

सुललित बोला—तो तुम क्या मुझे शान्ति से मरने भी नहीं दोगी आरती?

केसर बाई बोली—लेकिन तुम मरने क्यों जाओगे आखिर सुललित दादा? जिसके जीवन में कोई आशा नहीं है वही मरना चाहता है, लेकिन तुम्हें इतनी हताशा किस बात की है? तुमने जो चाहा था सो तो पाया है!

सुललित बोला—मैंने आखिर क्या चाहा था और क्या पाया आरती…

केसर बाई बोली—क्यों, तुमने तो अपने मुँह से ही कहा है कि तुमने मुझे ही चाहा था, अब तो तुम वही मुझे पा गये हो!

सुललित बोला—इसे क्या पाना कहते हैं, तुम्हीं बताओ?

केसर बाई बोली—इसे अगर पाना नहीं कहते तो पाना किसे कहते हैं, यह मैं नहीं जानती। तुम्हारे लिए ही तो मैंने अपने पति को छोड़ा है, तुमको पाऊँगी सोचकर ही तो मैं वह संसार छोड़कर चली आयी—जानती थी एक-न-एक दिन तुम आओगे ही…

सुललित की एक लम्बी साँस निकली इस बार—लेकिन जिसे इतने दिनों के बाद पाया, वह क्या पहले की वही उसी तरह है? ऐसा यदि होता तो फिर मैं इस तरह कोर्ट के कठघरे में खड़े होकर झूठ बात बोलता? या मैं छोटे लोगों के समान कलारी में जाकर शराब गुटकता!

केसर बाई बोली—लेकिन इस दुर्बल शरीर से क्यों तुम रास्ते में निकले,

बताओ तो !

सुललित बोला—शराब पीने को—तुम जो मुझे शराब नहीं देतीं···

केसर बाई बोली—छिः, शराब भले आदमी पीते हैं ?

सुललित बोला—क्यों ? जो लोग यहाँ तुम्हारा गाना सुनने आते हैं वे लोग शराब नहीं पीते ? उन्हें तुम शराब मँगाकर पिलाती नहीं ? ये लोग लगता है सब छोटे लोग हैं ?

—छोटे लोग ही तो ! तुम्हारे यहाँ आने के बाद से उन्हीं छोटे लोगों में से फिर किसी को यहाँ आते तुमने देखा है। फिर मैंने यहाँ घुसने दिया है ?

—और तुम्हारे पति ? मिस्टर बैनर्जी, वे भी शराब पीते हैं ? तो फिर वे भी क्या छोटे आदमी हैं ?

—वे क्या सिर्फ शराब पीते हैं ? शराब पीते हैं, घूस लेते हैं, चरित्रहीन, लम्पट, क्या नहीं हैं वे ? इसीलिए तो उन्हें छोड़कर मैं चली आयी हूँ···

—लेकिन इतने दिनों तो उन्हें बचाने के लिए ही तुमने मेरे पास दरबार किया था आरती ! उन्हें बचाने के लिए ही तो एक दिन मुझसे झूठ बात कहने को बोली थीं !

केसर बाई बोली—मैंने तुमसे बार-बार स्वीकार किया है सुललित दादा, कि मैंने पाप किया है। पति के लिए तुम्हारे पास दरबार करने जाकर पाप किया है, पति के लिए तुमसे झूठ बात बुलवाकर मैंने अन्याय किया है। उसी पाप, उसी अन्याय के लिए ही तो आज मैं यह सजा भोग रही हूँ। अब उस पाप का ही प्रायश्चित्त कर रही हूँ। जानते हो, जीवन में जो मैंने कभी नहीं किया, अब मैं वही कर रही हूँ। मैं रोज महावीरजी के मन्दिर में जाकर पूजा करती हूँ, रोज महावीरजी के पास जाकर प्रार्थना करती हूँ जिससे तुम अच्छे हो जाओ, जिससे तुम स्वस्थ होओ, जिससे तुम सुखी होओ···

सुललित केसर बाई की तरफ थोड़ी देर ताकता रहा—सचमुच तुम कहती हो कि मैं अच्छा हो जाऊँगा आरती···?

केसर बाई और भी नजदीक सरक आयी। बोली—जरूर तुम अच्छे हो जाओगे सुललित दादा, हम लोग फिर नये सिरे से जीवन शुरू करेंगे। हम-तुम यहाँ से दूर कहीं चले जायेंगे, ऐसी एक जगह जायेंगे जहाँ मुझे केसर बाई के के समान कोई पहचानेगा नहीं, कोई मुझे मिसेज बैनर्जी के समान नहीं पहचानेगा—सिर्फ आरती के समान पहचानेगा और तुम्हें पहचानेगा सिर्फ सुललित चैटर्जी के समान, सब जानेंगे कि मैं तुम्हारी स्त्री हूँ···

—सच बोलती हो आरती, सच बोलती हो ?

केसर बाई बोली—सच बोलती हूँ सुललित दादा, मैं जो बोलती हूँ सब सच···

मुललित बोला—लेकिन मेरे जीवन में क्या इतना सुख सहा जायेगा ?

—जरूर सहा जायेगा, तुम इतना डरते क्यों हो ? मेरी बात का तुम्हें विश्वास नहीं हो रहा ? इतने पर भी अगर विश्वास न हो तो फिर मेरी महावीरजी की पूजा झूठ जो हो जायेगी मुललित दादा···

बातें सुनते-सुनते मुललित मानो जाने कैसा विह्वल हो गया। जीवन में जो उसने पाया नहीं हठात् मानो वह उसे पा गया है। जीवन में जो उसने खोया है वह मानो उसे फिर लौटकर मिल गया है। फिर मानो उसकी बकने की इच्छा हो रही है।

उसने इतने दिनों के बाद यही पहले दिन केसर बाई का हाथ पकड़ा। बोला—आरती···

केसर बाई ने मुललित के मुँह की तरफ मुँह उठाकर कहा—बोलो···

मुललित कुछ बोलना चाहने पर भी मानो रुक गया। उसके बाद बोला—नहीं रहने दो···

केसर बाई बोली—क्यों, रहने क्यों दोगे, क्या बोल रहे थे, बोलो न ?

मुललित बोला—देखो आरती, छुटपन में जीवन में एक दिन मैंने प्रतिज्ञा की थी कि मैं सत् होऊँगा, सब समय सच बात बोलूँगा, मैं विश्वास करता था कि झूठ से जो पाऊँगा, वह पाना नहीं खोना है, और सच से जो खोता है वह खोना नहीं पाना है।

केसर बाई बोली—तुम्हारा यह विश्वास ही तो सच्चा विश्वास है मुललित दादा···

मुललित बोला—मेरे चाचाओं और ताऊओं ने मुझे जो ठगा है वह मेरा ठगाना नहीं है, वही मेरी जय है। मैं मनप्राण से विश्वास करता था कि सब खोकर एक दिन मैं सब पाऊँगा। समस्त जय-पराजय को चूरमार करके एक दिन मैं अपनी लक्ष्यवस्तु को लाभ करूँगा। लेकिन क्यों मेरा यह विश्वास आज इस तरह टूट गया ?

केसर बाई बोली—तुम्हारी इतनी सब बड़ी बातें मैं समझ नहीं पाती मुललित दादा !

—लेकिन ये सब बातें तो मैंने तुमसे कलकत्ता में भी कितनी बार कही हैं, तुम क्या इतने दिनों में ही वे सब भूल गयी ? तुम क्या सच इस तरह बदल गयी ?

केसर बाई बोली—नहीं, बदलूँगी क्यों ? बाईजी हो गयी हूँ इससे क्या तुम्हारी वे सब बातें भूल सकती हूँ ! और भूल ही अगर पाती तो तुम्हारे लिए क्या मैं इस तरह सब छोड़ पाती ?

मुललित कहने लगा—ना-ना, मैं क्या बोल रहा हूँ, तुम उसे ठीक समझ

नहीं पा रही हो आरती ! मुझे लगता है मैंने कोर्ट में खड़े होकर झूठ बात बोलकर अपना सब धर्म, सब विश्वास खो दिया है, मैं धर्मभ्रष्ट हो गया हूँ। मुझे दण्ड मिलना उचित है,…

केसर बाई बोली—अभी वे सब बातें रहने दो, बाद को मैं तुम्हारी उन सब बातों का जवाब दूंगी, अभी मैं थोड़ा महावीरजी के मन्दिर से घूम आऊँ…

सुललित बोला—नहीं-नहीं आरती, तुम मुझे छोड़कर मत जाना। तुम्हारे चले जाने पर मुझे अच्छा नहीं लगेगा, मैं अकेला रह नहीं सकूँगा…

केसर बाई बोली—ज्यादा देर तुम्हें अकेले रहना नहीं होगा, मैं जाऊँगी और आऊँगी। देखो, मैं ठीक जाऊँगी और आऊँगी। तुम गाड़ी से दबते-दबते बच गये हो, इसलिए आज मुझे महावीरजी के मन्दिर में जाना ही होगा ! तब तक मैं लजवन्तिया को बुलाती हूँ, वह तुम्हें थोड़ा दूध दे जाये…

—फिर दूध !

—हाँ, तुम बड़े अच्छे हो, तुम दूध पीने को मना मत करो…

कहकर केसर बाई मन्दिर जाने के लिए तैयार हो गयी। वही लाल पाड़ की गरद की साड़ी, पैरों में महावर और माथे पर सिन्दूर की बिंदिया लगाकर फिर सुललित के सामने आ खड़ी हुई।

बोली—मैं चलूं तो फिर, मैं जाऊँगी और आऊँगी…

उसके बाद कुछ सोचकर बोली—लजवन्तिया को कहे जाती हूं कि तुम्हें पीने को दे जाये…

सुललित बोला—तुम लेकिन आज बहुत अच्छी दिखायी पड़ रही हो आरती…

केसर बाई हँसने लगी।

सुललित फिर बोला—पहले तुम जैसी देखने में थीं, ठीक उसी तरह—सिन्दूर की बिंदिया लगाने पर लेकिन तुम खूब शोभन लगती हो…

केसर बाई बोली—ये सब बातें अभी रहने दो, शाम हो जाने पर फिर लौटने में देर हो जायेगी मुझे, मैं आकर तब फिर बातें करूंगी, अभी चलूं…

कहकर सीढ़ियों से नीचे चली गयी। उसके बाद नीचे क्या हुआ, यह फिर सुललित जान नहीं सका।

केसर बाई उसी समय जाकर हाजिर हुई महावीरजी के मन्दिर में। मन्दिर में घुसने के पहले ही माथे पर अपना घूंघट खींच लेती। हाथ में नैवेद्य की तश्तरी लेकर मन्दिर का सदर दरवाजा पार करके एकदम सीधे भीतर चली

जाती। किसी तरफ ताकती नहीं।

उस दिन भी ऐसा ही हुआ। मन्दिर के भीतर महावीरजी की मूर्ति के सामने दूसरे दिनों के समान मनुष्यों की भीड़ थी। सबकी सब तरह की प्रार्थनाएँ। कोई चाहता है रोग से मुक्ति, कोई चाहता है दरिद्रता से छुट्टी। किसी को धन चाहिए, किसी को चाहिए ख्याति। किसी को नौकरी में उन्नति चाहिए, किसी को चाहिए सन्तान, किसी को चाहिए स्त्री। और कोई चाहता है परीक्षा में पास होना। कोई नहीं जानता कि महावीरजी के कानों में ये सब अर्जियाँ पहुँचती हैं कि नहीं, लेकिन महावीरजी के पास मनुष्यों की अर्जियों का अन्त नहीं है। जब बैनर्जी साहब हाई स्पीड में गाड़ी चला ले जाते हैं, चौक के बाईजी मुहल्ले में जब ठुमरी गाने के साथ सारंगी की तान उठती है और तबले की तिहाई चलती है तब महावीरजी के मन्दिर में लेकिन उसकी कोई प्रतिध्वनि ही नहीं पहुँचती। वहाँ सिर्फ अर्जी और प्रार्थनाएँ हैं। निवेदन और आवेदन की शान्त आरती। वहाँ सब सिर्फ चाहते हैं। चाहते और कहते हैं—महावीरजी, मुझे संकट से मुक्ति दो, मुझे यश दो, धन दो, मुझे निःशत्रु करो···

लेकिन केसर बाई का उस समय सिर्फ एक ही निवेदन होता। दोनों आँखें मूँदकर वह उस समय एक ही प्रार्थना करती। कहती—मैं अब नाटक नहीं कर पा रही हूँ देवता। अब मैं नहीं कर पा रही। एक दिन संसार को धोखा देकर अपनी वासना की चरितार्थता में ही मैंने मन लगाया था। उस दिन मैंने संसार को ही खो दिया, मैंने अपने को ही खो दिया। इस बार मैं अपनी बहुत के पाप का प्रायश्चित्त करना चाहती हूँ, तुम बता दो महावीरजी, मैं क्या करूँ? बोल दो और कितने दिनों में मेरे भोग की शान्ति मिलेगी?

बीच-बीच में मन्दिर का बड़ा घंटा टँग-टँग करके बज उठता। लेकिन प्रार्थना करते-करते उस तरफ केसर बाई के कान न जाते। वह तन्मय हो जाती। छायानट का ठुमरी-गान गाते-गाते जिस तरह पहले वह तन्मय हो जाती थी, उसी तरह तन्मय हो जाती। इतने दिनों जो काम करती आयी हूँ उससे मैं आनन्द नहीं पा सकी देवता! वह काम मेरे लिए बेड़ियों के समान था, वह योग मेरे लिए था बन्धन। मैंने पहले गाना गाया है, गाना गाकर अपने श्रोताओं के पास, अपने खरीदारों के पास मैंने अपने को बेचा है। उस गाने ने, उस कर्म ने सिर्फ मेरी जरूरत ही मिटायी है, सिर्फ मेरे विलास का उपकरण ही जुटाया है। इसीलिए वह काम तो मेरे लिए था बेड़ियों से घिरा हुआ। लेकिन इस बार मैं जो गान गाऊँगी, वह मेरे आनन्द का साधन जुटायेगा। आनन्द से जो गान निकलेगा, वही तो मेरी मुक्ति है। उसी मुक्ति का गान तुम मुझे सिखा दो देवता, मुझे परित्राण दिला दो।

प्रार्थना करते-करते कब जो उसकी आँखों से झर-झर करके उसके दोनों

गालों पर जमते आँसू बह जाते, इसकी उसे आहट भी न मिलती। तब फिर उसकी भौंहें भी न उठतीं किसी तरफ। तब उसे याद हो आतीं वे ही छुटपन की बातें, वही पिता की बात, माँ की बात, आरती की बात। तब फिर वह मानो पहले के समान एक शिशु हो जाती। तब पिता ने उसे कितना मना किया, उसे कितना अनुशासित किया, उसे कितना मनाया-डाँटा, वह सब मनाना-डाँटना उसने तब सुना नहीं, उन सब आग्रह अनुशासनों की तरफ उसने तब कान नहीं दिया। आज लगता है कि फिर अगर वह उस दिन की तरह शिशु बन जा सकती, फिर अगर वह अपने अतीत में लौट जा सकती तो फिर शायद वह नये प्रकार से अपना जीवन शुरू कर पाती। तब वह समझ पाती कि किसी प्रयोजन से, अभाव से कर्म की जो प्रेरणा होती है वह बन्धन है, लेकिन आनन्द से कर्म की जो प्रेरणा होती है वह तब फिर बन्धन नहीं रहती, वह हो जाती है मुक्ति !

लेकिन अभाव भी उसे काहे का था तब ? पिता उसे कहीं किसी के घर में गाना गाने को जाने न देते, किसी से मिलने-जुलने न देते, वही क्या उसका अभाव था ? उसे अगर उस्ताद रखकर गाना ही सिखाया था पिता ने तो फिर क्यों लोक-समाज में वे गाने सुनाने का अधिकार नहीं देते थे ? तो फिर लगता है उसे ख्याति का लोभ था। उस्तादजी ने उसे सोचना सिखाया था कि वह प्रतिभामयी है। लेकिन प्रतिभा ही अगर हो तो फिर उस प्रतिभा के विकास के सुयोग से क्यों वह वंचित रहेगी ?

एक मन से केसर बाई देवता से ऐसी ही कितनी बातें कहती, इसका ठीक नहीं था। वे बातें दूसरा कोई आदमी सुन भी न पाता। तो भी सब समय याद आती उसके घर के उस मनुष्य की बात ! बीच-बीच में अदृश्य आरती को भी उद्देश्य करके वह कहती—मुँहजली, तूने इस तरह क्यों उस मनुष्य का ऐसा सर्वनाश किया ? और उसका सर्वनाश ही अगर किया तो मैं क्यों उसका बोझ लादकर घूमूँ ! मेरी काहे की जिम्मेदारी है ? मैं तो बच्ची थी, मैं बाईजी हुई थी, नाच-गाकर विलासी मनुष्यों को तृप्त करके विलास के स्रोत में शरीर बहाकर इतने दिनों सबकुछ भूली हुई थी। तो फिर तेरे पाप का बोझ क्यों मुझे उठाना पड़ रहा है ? यह तुमने मेरा क्या किया देवता ! इससे मैं कैसे मुक्ति पाऊँगी, इस जिम्मेदारी से मैं कैसे छुट्टी पाऊँगी, तुम मुझे बता दो देवता···

लाल पाड़ की गरद की साड़ी पहने होने पर भी कोई-कोई केसर बाई को पहचान जाते।

केसर बाई की तरफ उँगली से दिखाकर कहते—वह देखो, केसर बाई है रे···

—केसर बाई ? कौन केसर बाई !

—अरे केसर बाई को पहचानते नहीं ? केसर बाई का नाम नहीं सुना ? चौक की बाईजी···

मित्र अवाक् हो जाता। कहता—अरे एकदम घर की बहू-सी जो सजी है रे ! बाईजी लोग भी मन्दिर में आती है ! कितनी चाल देखेंगे रे भाई दुनिया में···

—अरे चाल क्यों होगी ? देवता के पास मनौती करने आयी है···

—काहे की मनौती ?

—जिससे और भी बड़े-बड़े जवान विलासी गाहक घायल कर सके।

आसपास की भीड़ में कौन क्या कह रहा है, वह कानों में नहीं आता केसर बाई के। वह मुंह के ऊपर घूंघट बड़ा करके खींचकर धीरे-धीरे आंखें नीची करके घर में आकर पहुँच जाती।

दूसरे दिनों की तरह चौक से निकलकर उस दिन भी केसर बाई लाल पाड की साड़ी पहनकर कपाल पर सिन्दूर की टिकुली लगाकर गाड़ी में जा बैठी। शाम होने-होने को थी। अभी यह मुहल्ला गान-नाच-विलास-मद में गुलजार हो उठेगा।

जाते समय लजवन्तिया से कह गयी—लजवन्तिया, देखना, बाबूजी अकेले हैं, फिर जिससे बाबूजी घर से न चले जायें, खूब होशियार···

सरदार अली को भी एक बार याद दिला गयी। बोली—देखना सरदार अली, बाबूजी अकेले हैं, जिससे निकल न जायें घर से, देखना···

लजवन्तिया यही सुयोग ढूंढ रही थी। बोली—बाबूजी को दूध दे आऊँगी बाईजी साहिबा ?

केसर बाई बोली—देना, जैसे रोज देती है, वैसे ही देना, बाबूजी अगर पियें तो पियेंगे और अगर न पियें तो मैं तो अभी आ ही रही हूँ। मैं जाऊँगी और आऊँगी, मुझे ज्यादा देर नहीं लगेगी···

उसके बाद गाड़ी केसर बाई को लेकर अमीनाबाद के महावीरजी के मन्दिर की तरफ चलने लगी।

गाड़ी के अदृश्य होते ही कहीं से अकस्मात् उदय हो गये उस्तादजी।

—लजवन्तिया ?

लजवन्तिया जानती है, ठीक इसी समय का रास्ता देखते रहते हैं उस्तादजी। उस्तादजी ने घर में घुसते ही दरवाजे के दोनों पल्ले बन्द कर दिये।

—आज क्या हाल है ?

लजवन्तिया बोली—आज तो हाल अच्छा ही है। बंगाली बाबू ऊपर हैं।

—आज फिर एक बार कोशिश कर तू लजवन्तिया। तुझे मैं बहुत-से रुपये

दिलवा दूँगा, तुझे फिर जीवन में नौकरी करके खाना नहीं होगा···

—लजवन्तिया ! एक रोटी खिलाओ मुझे !

गला सुनते ही दोनों ने खिड़की की तरफ देखा। देखा, कुन्दनलाल है ! जब कभी उस्तादजी आते तभी मानो कुन्दनलाल एकदम भूखा हो जाता है ! तभी मानो उसे रोटी चाहिए। परेशानी हो गयी है पागल को लेकर !

उस्तादजी ने तुरन्त अपने हाथों से खिड़की के दोनों पल्ले झपाट से बन्द कर दिये। बोले—तूने उसे रोटी खाने को दे-देकर ही उसकी हिम्मत बढ़ा दी है···

कुन्दनलाल काण्ड देखकर हा-हा करके फिर उसी विकट एक अट्टहास से हँस उठा—उस्तादजी दीवाना बन गया···

कहकर वही पुराना गाना ही फिर गा उठा—

दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे···

अर्थात् मुझे अगर तुम पागल बनाकर ही खुश होओ तो मुझे पागल ही कर दो !

और उधर महावीरजी के मन्दिर में उस समय टन-टन करके घंटा बज रहा है और देवता की आरती हो रही है। लाल पाड़ की गरद की साड़ी पहनकर केसर बाई उस समय देवता को उद्देश्य करके कहती चल रही है—मैं तो इतने दिनों अच्छी थी ! देवता, मैं बाईजी बनी थी, नाच-गाकर विलासी लोगों को तृप्त करके विलास के स्रोत में शरीर बहाकर सबकुछ भूली हुई थी, इतने दिनों के बाद तुमने मुझे सब याद दिला दिया ! क्यों आरती के पाप का बोझा मुझे लादना पड़ रहा है ? यह तुमने क्या किया देवता, इससे मैं कैसे मुक्ति पाऊँगी, इस जिम्मेदारी से मैं किस तरह उद्धार होऊँगी देवता, तुम बता दो···

उस दिन भी कुछ लोगों ने पहचान लिया केसर बाई को।

बोले—वह देख, केसर बाई रे—आज भी आयी है···

—वही तो, यह मानो एकदम घर की बहू-सी सजी है रे, बाईजी लोग भी मन्दिर में आती हैं देखता हूँ, कितनी चाल देखेंगे भाई रे दुनिया में···

डाक्टर कोठारी को उस दिन आने में थोड़ी देर हो गयी थी। मिस्टर बैनर्जी के मकान के पोर्टिको के नीचे गाड़ी ठहरने की आवाज होते ही भीतर से मिसेज बैनर्जी दौड़कर बाहर आ गयी।

—डाक्टर कोठारी, आपने आने में इतनी देर की ?

डाक्टर कोठारी बैग लेकर भीतर के ड्राइंग रूम में घुसते-घुसते बोले—मैं

बहुत दुखी हूँ मिसेज बैनर्जी, मैं अपनी बात रख नहीं सका। क्यों, मिस्टर बैनर्जी कहाँ हैं ?

मिसेज बैनर्जी ने कहा—मैंने उन्हें बड़ी देर तक अटकाकर रखा था, आपके आने में देर देखकर मैंने आपको टेलिफोन किया था, मैं आपको पा नहीं सकी, और इधर बड़ी देर तक रास्ता देखकर वे भी चले गये…

—कब लौटेंगे ?

—उनका क्या ठीक है ? इस बार मैंने पतवार छोड़ दी है, डाक्टर कोठारी, उनका रोग अब अच्छा नहीं होगा, मेरा सर्वनाश किये बिना देखती हूँ अब वे मुझे छोड़ेंगे नहीं ! कितनी बार बोली, और थोड़ी देर ठहरो, अभी डाक्टर कोठारी आ जायेंगे और थोड़ा बैठो, किसी तरह सुनी नहीं मेरी बात। सचमुच इस बार मैंने पतवार छोड़ दी है, मैं अब उनको बचा नहीं सकूंगी…

डाक्टर कोठारी बोले—तो आप इतना सोचती क्यों हैं ? कल उन्हें नींद आयी थी न ?

—नींद आती तो क्या मैं इतना सोचती ?

—तो वही पिल खिलायी थी न, जिसे मैं लिख गया था ?

—हाँ।

—तो फिर सोचने की कोई बात नहीं है। दवाएँ ठीक तरह से खिला देने से, खिलाते रहने से ही काम होगा। आज मैं यहीं आ रहा था, अकस्मात् एक जरूरी काम पाकर एक बार चौक के बाईजी मुहल्ले में जाना पड़ा था, वहाँ मुझे थोड़ी देर हो गयी…

मिसेज बैनर्जी कौतूहली हो उठीं—चौक में ? बाईजी-मुहल्ले में ?

—हाँ, केसर बाई के घर में।

मिसेज बैनर्जी चौंक उठी मन-ही-मन।

—केसर बाई ?

—हाँ, उस मुहल्ले में केसर बाई नाम की एक बाईजी है, नाम जरूर सुना होगा, बहुत रुपया है उसके पास। लेकिन वह एक अद्भुत केस है !

—कौन-सा केस ? कौन-सी बीमारी हुई है उसे ?

डाक्टर कोठारी बोले—उसे निज को कोई बीमारी नहीं हुई। बीमारी हुई है एक बंगाली छोकरे को। उसे लेकर केसर बाई को जितनी झंझट है मुझे भी उतनी ही झंझट हो गयी है…

—बंगाली ?

डाक्टर कोठारी बोले—एक शराबी लम्पट, उसके न है चावल, न है चूल्हा। उसके लिए केसर बाई के सिर में जो इतना दर्द है सो मैं समझ नहीं सकता, दिन-रात सिर्फ मेरे पास आदमी भेजेगी, और मुझे जाकर उसे देख आना

होगा। लेकिन वह अब अच्छे होने का केस नहीं है। शिव के पिता भी आकर उसे बचा नहीं पायेंगे···

—क्यों?

—वह किस तरह बचेगा बोलिए मिसेज बैनर्जी? ये जो मिस्टर बैनर्जी हैं, मैं जो-जो दवाइयां लिख जाता हूं उन्हें आखिर आप जोर करके मिस्टर बैनर्जी को खिलाती हैं। लेकिन वह छोकरा किसी की बात नहीं सुनता, जो दवाई खाने को कह जाऊं उसे भी खायेगा नहीं। तिस पर पेट में हुआ है उसके अल्सर। एकदम घाव हो गया है। मैंने सिर्फ दूध पीने को कहा है, लेकिन वह तो पियेगा नहीं। सिर्फ शराब पीना चाहेगा···

—शराब?

—हां, शराब। शराब पीते-पीते अब ऐसा हो गया है उसे कि शराब न पाने पर एक दिन केसर बाई के घर से वह भाग गया···

—उसके बाद?

डाक्टर कोठारी बोले—उस समय कलारी में दूकान बन्द थी, कहीं शराब नहीं पा रहा था, रास्ते में भटक रहा था, शरीर भी खूब वीक, ऐसी ही हालत में एक गाड़ी उसे धक्का देकर फेंककर चली गयी। जिन लोगों ने देखा था, उन्होंने कहा है कि वह गाड़ी शायद मिस्टर बैनर्जी की गाड़ी थी, मैं जरूर सच-झूठ नहीं जानता···

मिसेज बैनर्जी के आंख-मुंह में एक उद्वेग फूट उठा।

बोली—आप ठीक कह रहे हैं? कब बताइए तो?

—यही कल तो। बीते कल। गत कल सवेरे के वक्त। तब ढूंढ़-ढांढ़ शुरू हो गयी चारों तरफ। कहीं पता नहीं चलता था। कुछ लोगों ने शायद छोकरे को अस्पताल में पहुंचा दिया था···

मिसेज बैनर्जी को याद आया—हां, हां, कल तो खूब सवेरे ही निकले थे, आफिस में खूब जरूरी एक काम है। देख रहे हैं काण्ड! मैंने उनसे कितना कहा है कि रघुबीर को इतने जोर से गाड़ी चलाने को मत कहो। लेकिन तो भी चलते-चलते सिर्फ बोलेंगे—रघुबीर, जरा जल्दी चलो, जरा जल्दी चलो। इसी तरह करके कितनी बार वे कितने एक्सिडेंट से बच गये हैं, इसका ठीक नहीं है। तो उसके बाद क्या हुआ? आदमी जिन्दा है?

अकस्मात् टेलिफोन बज उठा।

मिसेज बैनर्जी उठकर रिसीवर उठाकर बोली—हलो···

उधर मिस्टर बैनर्जी का गला था—आरती, आज अब घर नहीं लौट पा रहा हूं, तुम खा लेना, मैं अभी कानपुर जा रहा हूं—जरूरी काम है···

—कानपुर जा रहे हो? तो कब आओगे?

—कल—कल सवेरे—कहकर रिसीवर बन्द करने जा रहे थे, लेकिन मिसेज बनर्जी बोली—तो खा-पीकर जाने से ही होता, कौन-सा ऐसा जरूरी काम है जो एकदम अभी जाना होगा···

—मा वहाँ पावर हाउस में एक सीरियस ब्रेक-डाउन हुआ है, मुझे अभी दौड़ना होगा···

कहकर फिर टेलिफोन बन्द करने जा रहे थे, लेकिन मिसेज बैनर्जी ने छोड़ा नहीं। बोली—सुनो, सुनो, बन्द मत करो, एक बात है। तुमने क्या एक्सिडेंट किया था कल ? कल सवेरे ?

—क्यों, क्या हुआ है ?

—एक्सिडेंट हुआ है कि नही यह बताओ न ! तुमने तो मुझसे कुछ बताया नही ?

मिस्टर बैनर्जी का गला सुनकर लगा कि वे खूब अनमने हुए। बोले—एक्सिडेंट हुआ है तो क्या हुआ ! जितने शराबी लोफर सब शराब पीकर रास्ते में बीच से चलेंगे और एक्सिडेंट होते ही जितना दोष सो सब ड्राइवर का ! क्यों आदमी मर गया है क्या ! तुमसे किसने बतायी यह बात ? तुमने जाना कैसे ?

—सो जिसने भी कहा हो, तुम तो फिर एक आदमी को यों ही दबा दोगे ? दबाने के बाद तुम उसे अस्पताल क्यो नही ले गये ?

मिस्टर बैनर्जी का गला चढ़ उठा—सो तुम इस मामले में इतना सिर क्यों खपा रही हो ? ये सब बातें लेकर अभी सोचने का समय नही है मुझे···

कहकर मिस्टर बैनर्जी ने रिसीवर रख दिया।

मिसेज बैनर्जी ने भी मानो अनिच्छा से टेलिफोन रख दिया। डाक्टर कोठारी ने देखा कि मिसेज बैनर्जी का मुँह मानो काला हो गया है।

मिस्टर बैनर्जी के बरेली से लखनऊ मे बदली होने के बाद से ही डाक्टर कोठारी इस घर मे नियम से आ रहे हैं। मिसेज बैनर्जी को भी उसी समय से देखते आ रहे हैं वे। इतने बड़े एक अफसर की स्त्री, लेकिन कभी पार्टी मे नही जाती, किसी महिला-समिति मे जाकर दूसरों की तरह सोशल-वर्क करके नाम कमाना भी नही चाहती। यह डाक्टर कोठारी को बड़ा अस्वाभाविक लगता।

एक दिन डाक्टर कोठारी ने बात-बात में पूछा था—अच्छा मिसेज बैनर्जी, आपसे एक दूसरी बात पूछूँ ?

मिसेज बैनर्जी ने अवाक् होकर पूछा था—दूसरी बात ? क्या बोलिए न ?

—आप क्या सारे दिन घर में ही रहती हैं ?

मिसेज बैनर्जी ने हँसकर कहा था—घर में रहूँगी नहीं तो कहाँ जाऊँगी ?

डाक्टर कोठारी बोले थे—ना, देखता हूँ आपकी निज की भी तो एक गाड़ी

है, आपको तो कहीं देख नहीं पाता ?

मिसेज बैनर्जी बोली थी—कहां जाऊं बोलिए ? जाने की जगह ही देख नहीं पाती। और तिस पर मैं अगर क्लब लेकर मत्त हो उठूं तो उन्हें कौन देखेगा ? जितने कुछ नियम से उन्हें दवा खिलाती हूं उतना भी फिर तब कर नहीं पाऊंगी। उनका शरीर तब एकदम टूट जायेगा···

सचमुच इस प्रकार की स्वामी-भक्ति डाक्टर कोठारी और किसी गृहस्थी में देख नहीं पा सके। इसलिए जब कभी मिसेज बैनर्जी के घर में आते तभी थोड़ा समय निकालकर उनसे बातें करते।

टेलिफोन का रिसीवर रखने के साथ-साथ ही मिसेज बैनर्जी फिर डाक्टर कोठारी के पास आकर बैठी। बोली—आपने ठीक-ठीक ही कहा था डाक्टर कोठारी, उन्होंने ही एक्सिडेंट किया था। इससे उनको फिर कोर्ट में जाना पड़ेगा शायद !

—क्यों ?

—कोर्ट में जाना नहीं होगा ? एक्सिडेंट करने पर तो पुलिस-कोर्ट में जाना पड़ता है !

—लेकिन उनका कुछ भी न होगा। उनके ड्राइवर को भी कुछ नहीं होगा। आप इस मामले में कुछ डरिए मत।

—क्यों डाक्टर कोठारी ? कुछ होगा नहीं, कैसे कहते हैं ?

डाक्टर कोठारी बोले—प्रमाण कहां है कि उनकी गाड़ी से ही धक्का लगा है ! पुलिस तो उनका नाम सुनते ही उस केस को अन्याय होने पर भी दबा देगी। और तिस पर इस मामले में उस आदमी का ही तो असल दोष है। उस आदमी को तो मैं देख रहा हूं। मैं ही ट्रीटमेंट कर रहा हूं उसका। नहीं तो विचार करके देखिए, कोई भला आदमी बाईजी के घर में पड़ा रहता है ?

—वह केसर बाई का क्या लगता है ?

डाक्टर कोठारी बोले—कौन फिर होगा, कोई भी नहीं।

—तो फिर बाईजी के घर में पड़ा क्यों रहता है ? बड़े आदमी का लड़का है शायद ?

—ना, मिसेज बैनर्जी, तो भी उसका चेहरा देखने पर लगता है एक समय खूब बड़े वंश में पैदा हुआ था, लगता है कुसंग में पड़कर उसने इस तरह नशे की आदत डाल ली है, नशा करके-करके लिवर को भी सड़ा लिया है—केसर बाई को सिर्फ आरती कहकर बुलाता है, केसर बाई खुद भी बंगाली है यह मैं जानता नहीं था—उस आदमी की बात से ही मैं पहले जान सका···

मिसेज बैनर्जी चेयर में और भी सीधी होकर बैठी—केसर बाई को आरती कहकर पुकारता है ! आदमी का नाम क्या है बताइए तो ?

डाक्टर बोले—सुललित चैटर्जी—पहले शायद वह खूब बड़ी कोई नौकरी ...ा था···

—सुललित चैटर्जी ?

डाक्टर कोठारी ने पूछा—आप पहचानती हैं क्या ? सुना, वह कलकत्ता में ...ा था···

मिसेज बैनर्जी मानो क्षण-भर के लिए विचलित होती हुई दिखायी पड़ीं। ...केन सिर्फ एक मुहूर्त के लिए। बोलीं—उसे ही क्या मिस्टर बैनर्जी ने [illegible] ...र फेंक दिया है ?

डाक्टर कोठारी बोले—मैंने तो यही सुना है···

—लेकिन वह बाईजी के घर में कैसे गया ?

—यह मैं कैसे बताऊँगा, सिर्फ जो केसर बाई के मुँह से सुना है वही बोला। तो वहीं से अभी आ रहा हूँ—लेकिन वह एक बड़ा बीहड़ पेशेंट है···

—बीहड़ ? इसके माने ?

डाक्टर कोठारी बोले—माने कुछ खायेगा नहीं जो ! मैं जो-जो दवा दे... ह जाऊँगा वह कभी नहीं खायेगा, सिर्फ कहेगा आरती, तुम मेरे लिए शराब ...गवा दो···

—आरती ! केसर बाई को वह आदमी आरती कहकर पुकारता है क्या ? ...सर बाई का असल नाम क्या आरती है ?

डाक्टर कोठारी बोले—डाक्टर होकर ये सब बातें तो मैं पूछ नहीं सकता। तो भी मुझे लगता है कि केसर बाई अब बंगाली लड़की है तब लगता है, उसका असल नाम आरती है। यह भी हो सकता है कि बाईजी होने के पहले केसर बाई के साथ लड़के की जान-पहचान थी। ऐसा होता है। मैंने पहले भी देखा है, जाने कैसे शायद उतने दिनों के बाद फिर अकस्मात् भेंट हो गयी।

मिसेज बैनर्जी अकस्मात् बोलीं—अच्छा डाक्टर कोठारी, वह अच्छा हो जायेगा न ?

—किसकी बात कह रही हैं ? उसी लड़के की बात ?

—हाँ, क्या किसी तरह उसे बचा नहीं सकते ?

डाक्टर कोठारी बोले—[illegible] कर रहा हूँ, लेकिन वह [illegible] कोशिश कर रही है [illegible] है, जितने ही [illegible] वह किसी भी तरह [illegible]

प्रकार की जानकारी हुई मुझे, लेकिन सचमुच ऐसा अद्भुत प्रेम मैंने देखा नहीं। लड़के के लिए केसर बाई कहना होगा कि एकदम जोगिनी बन गयी है···

—जोगिनी ? इसके माने ?

—जोगिनी नहीं कहूँगा तो और क्या कहूँगा बोलिए ? कहाँ का कौन एक गरीब आदमी। उसकी एक पैसे की भी हैसियत नहीं, उसके लिए कोई इतना करता है ? इसे प्रेम छोड़कर और क्या कहूँगा बोलिए ? कैसा प्रेम, जानती हैं ? जिससे मनुष्य अच्छा हो जाये इसलिए केसर बाई रोज मन्दिर में जाती है···

—मन्दिर में ? किस मन्दिर में ?

—अमीनाबाद के महावीरजी के मन्दिर में। वहाँ रोज पूजा करने जाती है।

उसके बाद थोड़ा ठहरकर बोले—लेकिन मनुष्य जो हो गया है बीहड़। बड़ा बीहड़ रोगी। उससे कहता हूँ दूध पीने को, रोज अगर वह और कुछ न खाकर सिर्फ रोज एक सेर दूध पिये तो इतना करने पर ही वह अच्छा हो जाये, लेकिन सो पियेगा नहीं, जितना झोंक है उसका वह उसी शराब पर···

मिसेज बैनर्जी अधीर आग्रह से बातें सुन रही थी। बोली—कोई उसे दूध पिला नहीं सकता ?

—ना, केसर बाई ने बड़ी कोशिश की है। पैर तक पकड़कर समझाया है, मेरे सामने कितनी बार बोली है—सुललित दादा, तुम इतना-सा दूध पी लो, डाक्टर बाबू की बात सुनो, लेकिन उसकी वही एक जिद। वह कहता है, तुम पहले पति के पास लौट जाओ आरती, तब मैं दूध पियूँगा—तब मैं अच्छा होऊँगा, ऐसा न होने पर मुझे जिन्दा रहने की जरूरत नहीं है···

मिसेज बैनर्जी और भी अचम्भे में पड़ गयी। उसने पूछा—पति माने ? केसर बाई के पति भी है क्या ?

डाक्टर कोठारी बोले—पति है यही सुना है। पहले शायद लड़के-लड़कियाँ थीं, घर-गृहस्थी थी, पति थे, सबकुछ था, तब केसर बाई का नाम था आरती, उन सबको, सबकुछ छोड़ आने के बाद शायद आरती नाम बदलकर अपना नाम केसर बाई रख लिया है। असल में केसर बाई छद्म नाम है और क्या !

—लेकिन पति को छोड़कर आरती चली क्यों आयी थी ?

डाक्टर कोठारी बोले—ये सब तमाम बातें हैं मिसेज बैनर्जी, मेरे उधर और तमाम रोगी चेम्बर में बैठे हैं, मैं चलूं, और मिस्टर बैनर्जी भी तो आज आयेंगे नहीं···

कहकर उठने जा रहे थे, लेकिन मिसेज बैनर्जी दुराग्रह करने लगी। बोली—ना ना, डाक्टर कोठारी, और थोड़ा बैठिए, मुझे बताइए कि क्यों आरती पति को छोड़कर चली आयी थी ?

डाक्टर कोठारी बोले—मैंने भी तो यही पूछा था केसर बाई से।

—क्या जवाब दिया केसर बाई ने ?

—केसर बाई बोली—उसके पति जाने कहाँ शायद बरेली में बहुत बड़ी एक नौकरी करते थे, लेकिन एक बार घूस लेने के कारण पकड़े गये। और पकड़ा उस लड़के ने ही, वह लड़का उस समय पुलिस अफसर था।

कहकर डाक्टर कोठारी एक-एक करके सब घटना बता गये। हू-ब-हू वही एक ही घटना जो मिसेज बैनर्जी के जीवन में घटी थी। आरती उसी सुललित के पास गयी थी अनुरोध करने कि वह उसके पति को…।

—उसके बाद ?

उसके बाद भी वही एक ही घटना। मिसेज बैनर्जी के जीवन में जो-जो घटा था सब हू-ब-हू बोल गये डाक्टर कोठारी। बोले—यह एकदम उपन्यास के समान लगता है सुनने में मिसेज बैनर्जी; एकदम रोमांटिक उपन्यास। मैं इस केसर बाई के घर में न जाता तो इस प्रकार की घटना की कल्पना भी नहीं कर सकता था।

मिसेज बैनर्जी ने पूछा—केसर बाई ने आपको खुद कहा है कि उसके पति थे, गृहस्थी थी, लड़के-बच्चे थे ?

डाक्टर कोठारी बोले—हाँ, खुद कहा है सब मुझसे…

—तो फिर उनको छोड़कर क्यों बाईजी बनी ?

—वही जो कहा, सुललित चैटर्जी जब कोर्ट में खड़े होकर बोला कि आसामी की स्त्री के प्रति मेरी दुर्बलता थी, तब केसर बाई के स्वामी छूट जरूर गये, लेकिन उन्हें सन्देह होने लगा अपनी स्त्री पर। तब से ही झगड़ा होने लगा पति-पत्नी में। झगड़ा होते-होते एक दिन वह ऐसी हालत में आ पहुँचा कि फिर वह पति के घर में एक छत के नीचे रह नहीं सकी।

—उसके बाद ?

—उसके बाद छुटपन से पिता ने उसे उस्ताद रखकर गाना सिखाया था, उस गाने पर भरोसा करके ही वह इस लाइन में चली आयी—केसर बाई के पिता थे एक मिलिटरी डाक्टर, मेजर…

—लेकिन सुललित चैटर्जी से फिर आरती की भेंट किस तरह हुई ?

डाक्टर कोठारी बोले—वह भी एक आश्चर्य की घटना है ! छोकरे ने तब नौकरी छोड़कर शराब पीनी शुरू कर दी थी। जीवन में जो कभी झूठ बात नहीं बोला, उसने कोर्ट में खड़े होकर झूठ बोलकर आरती के पति का उपकार जरूर किया, लेकिन अपने ऊपर उसे घृणा हो गयी। तब से ही वह अपने पाप का प्रायश्चित्त करने लगा शराब पी-पीकर। शराब पीते-पीते एकदम धीरे-धीरे … र में चोर की गली में धक्के-धक्के

अकस्मात् उसके कान में आया एक गाना। बहुत दिनों पहले आरती के मुंह से जो गाना उसने सुना था···

—गाना, कौन-सा गाना?

—वह एक विख्यात ठुमरी गाना है और क्या। मैं तो गाना-वाना ऐसा समझता नहीं, नवाब वाजिद अली खां का लिखा···डोले रे जोवन···

उसके बाद गाने की बाद की लाइनें डाक्टर कोठारी याद करने की कोशिश करने लगे, लेकिन याद नहीं आयीं। उसके बाद अकस्मात् बाहर की तरफ देखते ही मानो खयाल आया। उधर असंख्य रोगी बैठे उनके लिए रास्ता देख रहे हैं और वे यहाँ बैठे मजे में बातें कर रहे हैं! वे हठात् उठ खड़े हुए। बोले—मैं उठूं मिसेज बैनर्जी, आज तो अब मिस्टर बैनर्जी आयेंगे नहीं, इसलिए बैठे रहने से भी कोई फायदा नहीं होगा अब···

मिसेज बैनर्जी तुरन्त डाक्टर को फीस देने लगी।

डाक्टर कोठारी बोले—ना-ना, रुपये क्यों दे रही हैं? और तिस पर मेरा ही तो दोष है, मैं ही तो ठीक समय पर नहीं आ सका···

—नहीं डाक्टर कोठारी, यह आपको लेना ही होगा।

—क्यों? ना-ना, मैं ये रुपये नहीं लूंगा।

—नहीं, ये रुपये आपको लेने ही होंगे, आपने मेरा जो उपकार किया उसे मैं जीवन में भूलूंगी नहीं।

—उपकार? मैंने फिर कब आपका क्या उपकार किया?

मिसेज बैनर्जी रुपये डाक्टर कोठारी के हाथ में जबर्दस्ती ठूंसकर बोली—वह आप समझेंगे नहीं, आप कल्पना भी नहीं कर सकेंगे कि क्या उपकार किया मेरा आपने···

डाक्टर कोठारी और भी अचम्भे में पड़ गये मिसेज बैनर्जी की बात सुनकर। मिसेज बैनर्जी के मुंह की तरफ थोड़ी देर तक देखते रहे। रुपये लेते समय मिसेज बैनर्जी के हाथ से उनका हाथ छू जाते ही उन्हें लगा कि मानो मिसेज बैनर्जी के हाथ की उंगलियां थर-थर कांप रही हैं।

—आपको क्या हुआ मिसेज बैनर्जी? आपका शरीर खराब है क्या? बुखार आया है?

—ना-ना, ऐसा कुछ नहीं है, मैंने आपका तमाम समय नष्ट कर दिया···कहकर तुरन्त मिसेज बैनर्जी अपने कमरे में घुस गयी। डाक्टर कोठारी मिसेज बैनर्जी के व्यवहार से अवाक् हो गये। ऐसा व्यवहार तो कभी किया नहीं मिसेज बैनर्जी ने! ऐसा क्यों हुआ हठात्?

लेकिन इतनी सब बातें सोचने का समय नहीं था डाक्टर कोठारी को। गाड़ी स्टार्ट करते ही बाहर निकल गये। कमरे के भीतर से मिसेज बैनर्जी ने

डाक्टर की गाड़ी के चले जाने की आवाज सुन ली। उसके बाद अपने कमरे के बिछौने पर बड़ी देर तक पट पड़ी रही। लगा इतने दिनों से वह जो गृहस्थी चलाती आ रही थी उसमें मानो एक अस्वास्थ्य, एक अशान्ति और एक अनिश्चयता थी। वह निःसंग होकर सिर्फ उसी अनिश्चयता में इतने दिनों जीवन-समुद्र का तीर ढूँढ़ती घूमी है। कभी वह सन्देह के झूले में झूली है और कभी आघात की शत्रुता ने उसे घायल किया है। लेकिन तीर का स्पर्श वह पा नहीं सकी इस जीवन में। यही पहली बार उसने जाना कि वह सचमुच निःसंग है। प्रतिदिन सूर्योदय के साथ-साथ उसने सिर्फ इतने दिनों अपने पति के मन से जुड़कर चलने के लिए अपने को क्षत-विक्षत करके अपनी सत्ता का अपमान किया है। और सिर्फ अपमान ही उसने अपना नहीं किया, अपमान किया है अपने परम प्रीतिभाजन का भी। एक मुहूर्त में वह मिसेज बैनर्जी से मानो एकदम वही पहले के दिन की पुरानी आरती में रूपान्तरित हो गयी।

धीरे-धीरे सब याद आने लगा आरती को। वे ही कलकत्ते के दिन, वही दोनों का मिलकर तीसरे पहर घूमने जाना, वही प्रतिदिन रात को घर में लौटकर पिता के आमने-सामने होना। वही पिता का एक प्रश्न—क्यों री, सुललित ने और कुछ कहा तुमसे ?

आरती बीच-बीच में नाराज हो जाती। कहती—क्या बोलेगा बोलो तो ? बोलने को है क्या ?

पिता मन-ही-मन दुःख पाते। उसके बाद हिचकते मन से कहते—ना-ना, तू गलत मत समझ, सुललित हमारा उस तरह का लड़का नहीं है। जानती है, ऐसे लड़के आजकल के युग में होते नहीं। देखती तो है रोज पूजा-जप किये बिना जल ग्रहण नहीं करता। और तिस पर हम लोग गरीब आदमी हैं यह बात तुमसे किसने कही। क्या सोचती है कि मैं तेरे विवाह में रुपये खर्च नहीं करूँगा ? तेरे विवाह के लिए मैंने बैंक में कितने रुपये जमा करके रक्खे हैं जानती है ? तेरी मा का गहना तक मैंने एक भी खर्च नहीं किया। सोचा था सबकुछ तुम दोनों में बाँट दूँगा, यह···

बोलते-बोलते दीदी की बात याद आ जाती पिता को। रानू दीदी की बात उठते ही पिता के मुँह की बात मानो अटक जाती और तब एक भी बात न निकलती मुँह से।

उसके बाद जो कहाँ से सब क्या हो गया, जीवन के खिचाव से भरी ज्वाला में कौन कहाँ छिटक पड़ा! और वह हो गयी मिसेज बैनर्जी और रानू दीदी हो गयी केसर बाई!

तिस पर भाग्य का ऐसा ही दोष है कि वही आरती मिसेज बैनर्जी होकर फिर एक दिन भीख की झोली लेकर खड़ी हुई उसी सुललित दादा के पास ही।

फूटे भाग्य हैं उसके। फूटा भाग्य ही तो ! नहीं तो किस लाज से वह मांग में सिन्दूर भरकर जा खड़ी हुई सुललित के सामने ? और अगर गयी ही तो फिर किस लज्जा से अपने सुललित दादा का फिर इस तरह अपमान कर बैठी ! सच ही तो, आत्मदान करने का असंगत प्रस्ताव करके उसने तो अपमान ही किया था अपने सुललित दादा का। तब क्या इतने दिनों मिल-जुलकर भी वह अपने सुललित दादा को पहचान नहीं सकी ! उस दिन जो उसके सुललित दादा ने उसके गाल पर चांटा मारा था, उस चांटे ने आरती को जितना आघात किया था उसकी बनिस्वत हजार गुना ज्यादा आघात कर बैठेगी सुललित दादा को, यह अगर वह उस दिन समझ पाती तो फिर क्या वह ऐसा प्रस्ताव करती ? प्रवृत्ति को बुद्धि की तराजू से वजन करने पर लगता है ऐसा ही कष्ट घटता है। आरती भी उस दिन मरने को वह भूल कर बैठी थी। इससे भी अगर उसके भाग्य न फूटें तो फूटा भाग्य और किसको कहते हैं ?

लेकिन उस दिन जो थी मामूली एक भूल, वही इतने दिनों के बाद पहाड़ के रूप में लौटकर इतने हृदयवेधी रूप से उसको ही प्रत्याघात करेगी यह क्या उस दिन उसने कल्पना की थी ?

—मेमसाब ?

आरती ने कोई जवाब नहीं दिया।

आया ने फिर डरते-डरते बुलाया—मेमसाब···आपका टेलिफोन···

कौन इस तरह टेलिफोन कर रहा है उसे, क्यों टेलिफोन कर रहा है, कहां से टेलिफोन कर रहा है, कहीं कुछ जानने का कौतूहल नहीं हुआ उसे। हो सकता है आफिस से वे टेलिफोन कर रहे हों। हो सकता है कहें रामदीन के हाथ से मेरी व्हिस्की की बोतल भेज दो, उसे कानपुर में अपने साथ ले जाऊंगा।

आरती ने अब जवाब दिया। बोली—बोल मेम साहब की तबीयत खराब है, अभी सो रही हैं। टेलिफोन उठा नहीं सकेंगी···

कहकर फिर तकिये में मुंह छिपाकर जैसी पड़ी थी वैसी ही सोयी पड़ी रही। दूसरा दिन होता तो इस समय वह बवर्ची की रसोई में जाकर उसका खाना पकाना देखती, माली से दो बार बक-झक करती, फ्लावर पाट में फूल नहीं दिया कहकर दो बातें भी सुनाती, या रूम नये सिरे से सजाने को कहती। मेंटल-पीस पर मूर्तियां सजी रहती हैं, उन्हें साफ करती, अथवा कोई काम न रहने पर रेडियो खोलकर आखिर कोई गलत-सलत गाना ही सुनती। लेकिन उस दिन कुछ भी नहीं किया उसने। उसी तरह चुपचाप सोयी रही एकमन से।

हठात् क्या हुआ कौन जाने, आरती उठ बैठी।

पुकारा—रामदीन···

आया दौड़कर आ गयी मेम साहब के पास।

जाने क्या सोचकर बोली—आइए, मेरे साथ आइए···

कहकर सीढ़ियों से आरती के आगे-आगे चलने लगी। पीछे-पीछे आरती। घर के भीतर चारों तरफ का चेहरा देखकर आरती चौंधिया गयी। यही उसकी रानू दीदी का घर है ! इस घर में रहकर ही वह अपना गाना-बजाना करके विलासी मनुष्यों के पास से पैसे कमाती है ? बचपन की वही रानू दीदी आज इतने नीचे उतर आयी है, इतना अधःपतन हुआ है उसका ! और सुललित दादा ने भी इतनी जगह रहते उसे खोजने के लिए यहाँ आकर आश्रय लिया है !

चारों तरफ देखते-देखते आरती की आँखें झंप उठीं। इसके लिए कौन जिम्मेदार है ? आरती ? या रानू दीदी, कौन ? या उसके पति मिस्टर बैनर्जी ? पति की बात याद आते ही आँखों के सामने उनका चेहरा उतर आया। उसके स्वामी लगता है इस समय कानपुर के रास्ते में हैं। रघुवीर शायद जोर से गाड़ी चलाकर ले जा रहा है अपने साहब को। और उसके पति हो-न-हो उससे कहते रहे हैं, जरा और जल्दी चलो···

या हो सकता है अब तक कानपुर पहुँच गये हैं उसके पति। रेस्ट हाउस के लाउंज में बैठकर हो-न-हो स्काच-ह्विस्की की बोतल खोल बैठे हैं। ह्विस्की पीते-पीते आफिस की फाइल देख रहे हैं। या यह भी हो सकता है कि चारों तरफ छोटे-मोटे अफसर लोग डर से किनारे होकर उनकी तरफ देखकर 'सर' 'सर' करके खुशामद कर रहे हैं।

एकतल्ले में उस्तादजी मुँह बाये खड़े छटपटा रहे थे।

लजवन्तिया के नीचे आते ही मानो उस्तादजी साँस छोड़कर बच गये। पूछा—क्या हुआ ? वह कौन है ?

लजवन्तिया बोली—क्या मालूम ? बंगाली बाबू की जान-पहचान की कोई औरत है।

उस्तादजी ने पूछा—जान-पहचान की अगर कोई हो तो उसने कैसे जाना कि बंगाली बाबू यहाँ हैं ?

लजवन्तिया कैसे जानेगी वह बात। वह उस समय भी थर-थर काँप रही थी।

उस्तादजी बोले—खूब डर लग रहा है तुझे ? डर क्या है, मैं तो हूँ···

उसके बाद थोड़ा झुककर उन्होंने असल बात पूछी। बोले—लेकिन दूध ? बंगाली बाबू ने क्या दूध पिया है ?

—नहीं।

—पिया क्यों नहीं ? तूने पीने को क्यों नहीं कहा ?

है भइया…?

केसर बाई जरूर इस मुहल्ले की प्रसिद्ध बाईजी है। नहीं तो लोगों ने साथ ही-साथ घर क्यों दिखा दिया?

रामदीन गाड़ी में आकर फिर बैठा। उसके बाद एक घर के सामने ले जाकर उसे खड़ा किया।

पूछा—आप यहां उतरेंगी मेम साहब?

—हां।

'हां' बोलते ही रामदीन गाड़ी से निकलकर गाड़ी का दरवाजा खोलकर खड़ा रहा। आरती ने गाड़ी से उतरकर एक बार चारों तरफ देख लिया। देखा आसपास के लोग उसकी तरफ ताक रहे हैं। उधर अपनी भौंहें उठाये बिन सीधे वह सदर दरवाजे से भीतर घुसी। रोज की तरह सरदार अली उस दिन भी भांग खाकर झूम रहा था। बाईजी साहिबा को देखकर उसने उठकर खड़े होने की कोशिश की।

आरती ने पूछा—घर में कोई है?

लजवन्तिया उसी क्षण ऊपर से नीचे उतर रही थी। अकस्मात् एक अनजान महिला को देखकर वह अचम्भे में पड़ गयी। एकदम ठीक बाईजी साहिबा के समान देखने में। बाईजी साहिबा क्या इतनी जल्दी-जल्दी महावीरजी के मन्दिर से लौट आयीं?

बोली—बाबूजी को मैं दूध दे आयी हूं बाई साहिबा…

लेकिन झिम-झिम करती हुई बत्ती की रोशनी में अच्छी तरह नजर पड़ते ही समझ गयी कि ये बाई साहिबा नहीं हैं, और कोई है। बोली—आप किसे चाहती हैं?

आरती बोली—केसर बाई कोठी में हैं?

—जी नहीं। बाई साहिबा तो महावीरजी के मन्दिर में गयी हैं…

—और कोई है घर में? बंगाली बाबूजी?

—हां, बंगाली बाबूजी हैं। वे तो बीमार हैं।

—कहां हैं वे?

—ऊपर में।

आरती ने पूछा—तुम कौन हो?

लजवन्तिया बोली—मैं केसर बाईजी साहिबा की नौकरानी हूं…

आरती बोली—मुझे ऊपर बंगाली बाबू के पास ले जा सकती हो? मैं भी बंगाली हूं, मैं बंगाली बाबूजी से एक बार मिलना चाहती हूं…

लजवन्तिया ने जाने क्या सोचा एक बार। अनजान-अनपहचानी स्त्री, उसे ऊपर के कमरे में ले जाऊं? तिस पर बाई साहिबा घर में नहीं हैं! उसके बाद

जाने क्या सोचकर बोली—आइए, मेरे साथ आइए···

कहकर सीढ़ियों से आरती के आगे-आगे चलने लगी। पीछे-पीछे आरती। घर के भीतर चारों तरफ का चेहरा देखकर आरती चौंधिया गयी। यही उसकी रानू दीदी का घर है ! इस घर में रहकर ही वह अपना गाना-बजाना करके विलासी मनुष्यों के पास से पैसे कमाती है ? छुटपन की वही रानू दीदी आज इतने नीचे उतर आयी है, इतना अधःपतन हुआ है उसका ! और सुललित दादा ने भी इतनी जगह रहते उसे खोजने के लिए यहाँ आकर आश्रय लिया है !

चारों तरफ देखते-देखते आरती की आँखें झँप उठीं। इसके लिए कौन जिम्मेदार है ? आरती ? या रानू दीदी, कौन ? या उसके पति मिस्टर बैनर्जी ? पति की बात याद आते ही आँखों के सामने उनका चेहरा उतर आया। उसके स्वामी लगता है इस समय कानपुर के रास्ते में हैं। रघुवीर शायद जोर से गाड़ी चलाकर ले जा रहा है अपने साहब को। और उसके पति हो-न-हो उससे कहते रहे हैं, जरा और जल्दी चलो···

या हो सकता है अब तक कानपुर पहुँच गये हैं उसके पति। रेस्ट हाउस के लाउंज में बैठकर हो-न-हो स्काच-ह्विस्की की बोतल खोल बैठे हैं। ह्विस्की पीते-पीते आफिस की फाइल देख रहे हैं। या यह भी हो सकता है कि चारों तरफ छोटे-मोटे अफसर लोग डर से किनारे होकर उनकी तरफ देखकर 'सर' 'सर' करके खुशामद कर रहे हैं।

एकतल्ले में उस्तादजी मुँह बाये खड़े छटपटा रहे थे।

लजवन्तिया के नीचे आते ही मानो उस्तादजी साँस छोड़कर बच गये। पूछा—क्या हुआ ? वह कौन है ?

लजवन्तिया बोली—क्या मालूम ? बंगाली बाबू की जान-पहचान की कोई औरत है।

उस्तादजी ने पूछा—जान-पहचान की अगर कोई हो तो उसने कैसे जाना कि बंगाली बाबू यहाँ हैं ?

लजवन्तिया कैसे जानेगी यह बात। वह उस समय भी थर-थर काँप रही थी।

उस्तादजी बोले—खूब डर लग रहा है तुझे ? डर क्या है, मैं तो हूँ···

उसके बाद थोड़ा झुककर उन्होंने असल बात पूछी। बोले—लेकिन दूध ? बंगाली बाबू ने क्या दूध पिया है ?

—नहीं।

—पिया क्यों नहीं ? तूने पीने को क्यों नहीं कहा ?

है मइया···?

केसर बाई जरूर इस मुहल्ले की प्रसिद्ध बाईजी है। नहीं तो लोगों ने साथ-ही-साथ घर क्यों दिखा दिया?

रामदीन गाड़ी में आकर फिर बैठा। उसके बाद एक घर के सामने ले जाकर उसे खड़ा किया।

पूछा—आप यहां उतरेंगी मेम साहब?

—हां।

'हां' बोलते ही रामदीन गाड़ी से निकलकर गाड़ी का दरवाजा खोलकर खड़ा रहा। आरती ने गाड़ी से उतरकर एक बार चारों तरफ देख लिया। देखा, आसपास के लोग उसकी तरफ ताक रहे हैं। उधर अपनी भौंहें उठाये बिना सीधे वह सदर दरवाजे से भीतर घुसी। रोज की तरह सरदार अली उस दिन भी भांग खाकर झूम रहा था। बाईजी साहिबा को देखकर उसने उठकर खड़े होने की कोशिश की।

आरती ने पूछा—घर में कोई है?

लजवन्तिया उसी क्षण ऊपर से नीचे उतर रही थी। अकस्मात् एक अनजान महिला को देखकर वह अचम्भे में पड़ गयी। एकदम ठीक बाईजी साहिबा के समान देखने में। बाईजी साहिबा क्या इतनी जल्दी-जल्दी महावीरजी के मन्दिर से लौट आयीं?

बोली—बाबूजी को मैं दूध दे आयी हूं बाई साहिबा···

लेकिन झिम-झिम करती हुई बत्ती की रोशनी में अच्छी तरह नजर पड़ते ही समझ गयी कि ये बाई साहिबा नहीं हैं, और कोई है। बोली—आप किसे चाहती हैं?

आरती बोली—केसर बाई कोठी में हैं?

—जी नहीं। बाई साहिबा तो महावीरजी के मन्दिर में गयी हैं···

—और कोई है घर में? बंगाली बाबूजी?

—हां, बंगाली बाबूजी हैं। वे तो बीमार हैं।

—कहां हैं वे?

—ऊपर में।

आरती ने पूछा—तुम कौन हो?

लजवन्तिया बोली—मैं केसर बाईजी साहिबा की नौकरानी हूं···

आरती बोली—मुझे ऊपर बंगाली बाबू के पास ले जा सकती हो? मैं भी बंगाली हूं, मैं बंगाली बाबूजी से एक बार मिलना चाहती हूं···

लजवन्तिया ने जाने क्या सोचा एक बार। अनजान-अनपहचानी स्त्री, उसे ऊपर के कमरे में ले जाऊं? तिस पर बाई साहिबा घर में नहीं हैं! उसके बाद

जाने क्या सोचकर बोली—आइए, मेरे साथ आइए···

कहकर सीढ़ियों से आरती के आगे-आगे चलने लगी। पीछे-पीछे आरती। घर के भीतर चारों तरफ का चेहरा देखकर आरती चौंधिया गयी। यही उसकी रानू दीदी का घर है! इस घर में रहकर ही वह अपना गाना-बजाना करके विलासी मनुष्यों के पास से पैसे कमाती है? छुटपन की वही रानू दीदी आज इतने नीचे उतर आयी है, इतना अधःपतन हुआ है उसका! और सुललित दादा ने भी इतनी जगह रहते उसे खोजने के लिए यहाँ आकर आश्रय लिया है!

चारों तरफ देखते-देखते आरती की आँखें झँप उठीं। इसके लिए कौन जिम्मेदार है? आरती? या रानू दीदी, कौन? या उसके पति मिस्टर बैनर्जी? पति की बात याद आते ही आँखों के सामने उनका चेहरा उतर आया। उसके स्वामी लगता है इस समय कानपुर के रास्ते में हैं। रघुवीर शायद जोर से गाड़ी चलाकर ले जा रहा है अपने साहब को। और उसके पति हो-न-हो उससे कहते रहे हैं, जरा और जल्दी चलो···

या हो सकता है अब तक कानपुर पहुँच गये हैं उसके पति। रेस्ट हाउस के लाउंज में बैठकर हो-न-हो स्काच-ह्विस्की की बोतल खोल बैठे हैं। ह्विस्की पीते-पीते आफिस की फाइल देख रहे हैं। या यह भी हो सकता है कि चारों तरफ छोटे-मोटे अफसर लोग डर से किनारे होकर उनकी तरफ देखकर 'सर' 'सर' करके खुशामद कर रहे हैं।

एकतल्ले में उस्तादजी मुँह बाये खड़े छटपटा रहे थे।

लजवन्तिया के नीचे आते ही मानो उस्तादजी साँस छोड़कर बच गये। पूछा—क्या हुआ? वह कौन है?

लजवन्तिया बोली—क्या मालूम? बंगाली बाबू की जान-पहचान की कोई औरत है।

उस्तादजी ने पूछा—जान-पहचान की अगर कोई हो तो उसने कैसे जाना कि बंगाली बाबू यहाँ हैं?

लजवन्तिया कैसे जानेगी वह बात। वह उस समय भी थर-थर काँप रही थी।

उस्तादजी बोले—खूब डर लग रहा है तुझे? डर क्या है, मैं तो हूँ···

उसके बाद थोड़ा झुककर उन्होंने असल बात पूछी। बोले—लेकिन दूध? बंगाली बाबू ने क्या दूध पिया है?

—नहीं।

—पिया क्यों नहीं? तूने पीने को क्यों नहीं कहा?

लजवन्तिया बोली—मैंने पीने को कहा था। बाबूजी बोले—टेबुल पर र दो। मैंने टेबिल पर रख दिया है।

—अभी जाकर क्या देखा ?

—उस वक्त भी वह दूध टेबुल पर ही पड़ा है···

उस्तादजी नाराज हो गये। बोले—तुझसे कोई काम नहीं बनेगा। बिल्कुल बेकार औरत···

और उधर महावीरजी के मन्दिर में हर दिन की तरह आरती का घं बज रहा है। चारों तरफ असंख्य भक्तों की भीड़ है। उसी के बीच में ह दिन की तरह लाल पाड़ की गरद की साड़ी पहने, पैरों में महावर लगाये केस बाई महावीरजी के सामने अपनी नित्य की अर्जी पेश करती चली जा रही है- देवता, यह तुमने क्या किया मेरा ? और कितने दिनों अपनी बहन के पापों प्रायश्चित्त करना होगा मुझे ? मैंने तो सब त्याग दिया है, मैंने तो अपने को अ में तुम्हारे पैरों पर अर्पण किया है, मैंने तो अपनी सारे जीवन की साधना ग गान को ही आपके पैरों पर उत्सर्ग किया है। मैं तो जान गयी हूँ मैंने इतने दि जो किया है सब भूल की है, अपनी उन समस्त भूलों का प्रायश्चित्त मैं आ कर रही हूँ देवता। मैंने समझा है मेरी प्रसिद्धि, मेरा धन, मेरा गान, सबकु का कृतित्व मैंने खुद पाना चाहा है, इसलिए वह सबकुछ मिथ्या हो गया है। अगर वह ख्याति, वह धन, वह गान तुम्हारे चरणों पर अर्पित करती तो मेरा स कुछ आज सच होता ! वासना-कामना के मुंह में मैंने शरीर को शिथिल व दिया, इसलिए वह सब इतने दिनों मुझे ही बहा ले गया था, आज उसे ज्वार समान पीछे बहा ले आने के लिए मुझे ही ठेलठाल करके खींचतान करके मर पड़ रहा है। पहले मैं यह सब समझती नहीं थी देवता। मुझे आज तुम इस यन्त्र से मुक्ति दो देवता, उससे मेरा उद्धार करो···

उस दिन भी वही एक ही मतलब—वह देख रे केसर बाई···

—यह क्या है रे ! बाईजी लोग भी मन्दिर में आती हैं ? यह सब सि चाल···

जिन लोगों के जो भी मतलब क्यों न हों, केसर बाई का उससे कुछ आत जाता नहीं। उसके कानों में कुछ भी नहीं पहुँचता। वह उस समय तन्मय होक जमीन पर लेटकर महावीरजी के सामने प्रणाम कर रही है।

और उसके बाद थोड़ी देर में सिर का घूंघट मुंह पर और भी अच्छ तरह खींचकर मन्दिर के बाहर आकर गाड़ी पर बैठ जाती। तब उसे याद आ जा घर की बात। घर में उसे अकेला छोड़ आयी है। लजवन्तिया से कह आयी वह ज्यादा देर नहीं करेगी, जायेगी और आ आयेगी।

अमीनाबाद के रास्ते में भीड़ के बीच से फिर चौक की तरफ फिरकर आ

ऊपर से अकस्मात् बंगाली बाबूजी का गला सुनायी पड़ा।

—लजवन्तिया !

उस्तादजी भी चौंक पड़े हैं, लजवन्तिया भी चौंक गयी है। बंगाली बाबू तो कभी लजवन्तिया को नहीं बुलाते। तो फिर आज अकस्मात् बुलाया क्यों?

लजवन्तिया तर-तर करके सीढ़ियों से फिर ऊपर चढ़ गयी। उस्तादजी चुपचाप रास्ता देखने लगे नीचे ही। इतनी देर क्यों हो रही है लजवन्तिया को? देर होने से तो सब गोलमाल हो जायेगा। और तिस पर अभी जो केसर बाई महावीरजी के मन्दिर से लौट आयेगी। केसर बाई के लौटने के पहले तो सब खतम करना चाहिए।

लजवन्तिया के पैरों की आवाज सुनायी पड़ी फिर। फिर वह लौटकर रसोई घर में घुसी। वह उसी तरह हांफ रही थी उस समय।

उस्तादजी खड़े हुए—क्या हुआ? क्यों बुलाया बाबूजी ने···

लजवन्तिया बोली—और एक गिलास दूध मँगाया है।

—क्यों?

लजवन्तिया बोली—क्या मालूम, जानती नहीं···

बोलकर और एक गिलास दूध फिर ढाल लिया।

उस्तादजी बोले—उसमें भी वह मिला दो···

उस्तादजी पक्के आदमी हैं। कोई मतलब जब वे हासिल करना चाहते हैं तब उसमें कमी वे कोई फांक नहीं रखते। दुश्मन का निशान रखना नहीं चाहिए, यही उनका बराबर का नियम है। सारे जीवन वे यही नियम मानते आये हैं।

उसी क्षण लजवन्तिया ने गिलास भरकर दूध ले लिया था। दूध से भरा गिलास लेकर वह फिर सीढ़ियों से चढ़कर ऊपर जा रही थी।

उस्तादजी को मानो जाने कैसा कौतूहल हुआ। पूछा—वह औरत कौन है?

लजवन्तिया बोली—कौन जाने?

—आयी क्यों है?

लजवन्तिया बोली—यह भी नहीं जानती, तो भी बाबू के साथ खूब जमकर बात कर रही है। मालूम होता है जान-पहचान की कोई है। वह भी बंगाली है···

उस्तादजी बोले—तू जा···

लजवन्तिया ने फिर देर नहीं की। वह फिर सीढ़ियों से ऊपर चढ़ गयी। उस्तादजी अपने मन से ही वह करने लगे जो उन्होंने कभी किया नहीं। लेकिन कोई एक खुट् करके आवाज होते ही उस्तादजी चमक उठे। आवाज हुई क्यों?

लजवन्तिया बोली—मैंने पीने को कहा था। बाबूजी बोले—टेबुल पर रख दे। मैंने टेबिल पर रख दिया है।

—अभी जाकर क्या देखा ?

—इस वक्त भी वह दूध टेबुल पर ही पड़ा है…

उस्तादजी नाराज हो गये। बोले—तुझसे कोई काम नहीं बनेगा। तू बिल्कुल बेकार औरत…

और उधर महावीरजी के मन्दिर में हर दिन की तरह आरती का घंटा बज रहा है। चारों तरफ असंख्य भक्तों की भीड़ है। उसी के बीच में हर दिन की तरह लाल पाड़ की गरद की साड़ी पहने, पैरों में महावर लगाये केसर बाई महावीरजी के सामने अपनी नित्य की अर्जी पेश करती चली जा रही है—देवता, यह तुमने क्या किया मेरा ? और कितने दिनों अपनी बहन के पापों का प्रायश्चित्त करना होगा मुझे ? मैंने तो सब त्याग दिया है, मैंने तो अपने को अन्त में तुम्हारे पैरों पर अर्पण किया है, मैंने तो अपनी सारे जीवन की साधना उस गान को ही आपके पैरों पर उत्सर्ग किया है। मैं तो जान गयी हूँ मैंने इतने दिनों जो किया है सब भूल की है, अपनी उन समस्त भूलों का प्रायश्चित्त मैं आज कर रही हूँ देवता। मैंने समझा है मेरी प्रसिद्धि, मेरा धन, मेरा गान, सबकुछ का कृतित्व मैंने खुद पाना चाहा है, इसलिए वह सबकुछ मिथ्या हो गया है। मैं अगर वह ख्याति, वह धन, वह गान तुम्हारे चरणों पर अर्पित करती तो मेरा सब-कुछ आज सच होता ! वासना-कामना के मुँह में मैंने शरीर को शिथिल कर दिया, इसलिए वह सब इतने दिनों मुझे ही बहा ले गया था, आज उसे ज्वार के समान पीछे बहा ले आने के लिए मुझे ही ठेलठाल करके खींचतान करके मरना पड़ रहा है। पहले मैं यह सब समझती नहीं थी देवता। मुझे आज तुम इस यन्त्रणा से मुक्ति दो देवता, उससे मेरा उद्धार करो…

उस दिन भी वही एक ही मतलब—वह देख रे केसर बाई…

—यह क्या है रे ! बाईजी लोग भी मन्दिर में आती हैं ? यह सब सिर्फ चाल…

जिन लोगों के जो भी मतलब क्यों न हों, केसर बाई का उससे कुछ आता-जाता नहीं। उसके कानों में कुछ भी नहीं पहुँचता। वह उस समय तन्मय होकर जमीन पर लेटकर महावीरजी के सामने प्रणाम कर रही है।

और उसके बाद थोड़ी देर में सिर का घूँघट मुँह पर और भी अच्छी तरह खींचकर मन्दिर के बाहर आकर गाड़ी पर बैठ जाती। तब उसे याद आ जाती घर की बात। घर में उसे अकेला छोड़ आयी है। लजवन्तिया से कह आयी है, वह ज्यादा देर नहीं करेगी, जायेगी और आ जायेगी।

अमीनाबाद के रास्ते में भीड़ के बीच से फिर चौक की तरफ फिरकर आने

लगी केसरबाई की गाड़ी।

ऊपर से अकस्मात् बंगाली बाबूजी का गला सुनायी पड़ा।

—लजवन्तिया !

उस्तादजी भी चौंक पड़े हैं, लजवन्तिया भी चौंक गयी है। बंगाली बाबू तो कभी लजवन्तिया को नहीं बुलाते। तो फिर आज अकस्मात् बुलाया क्यों ?

लजवन्तिया सर-सर करके सीढ़ियों से फिर ऊपर चढ़ गयी। उस्तादजी चुपचाप रास्ता देखने लगे नीचे ही। इतनी देर क्यों हो रही है लजवन्तिया को ? देर होने से तो सब गोलमाल हो जायेगा। और तिस पर अभी जो केसर बाई महावीरजी के मन्दिर से लौट आयेगी। केसर बाई के लौटने के पहले तो सब खतम करना चाहिए।

लजवन्तिया के पैरों की आवाज सुनायी पड़ी फिर। फिर वह लौटकर रसोई घर में घुसी। वह उसी तरह हाँफ रही थी उस समय।

उस्तादजी खड़े हुए—क्या हुआ ? क्यों बुलाया बाबूजी ने···

लजवन्तिया बोली—और एक गिलास दूध मँगाया है।

—क्यों ?

लजवन्तिया बोली—क्या मालूम, जानती नहीं···

बोलकर और एक गिलास दूध फिर डाल लिया।

उस्तादजी बोले—उसमें भी वह मिला दो···

उस्तादजी पक्के आदमी हैं। कोई मतलब जब वे हासिल करना चाहते हैं तब उसमें कभी वे कोई फाँक नहीं रखते। दुश्मन का निशान रखना नहीं चाहिए, यही उनका बराबर का नियम है। सारे जीवन से यही नियम मानते आये हैं।

उसी क्षण लजवन्तिया ने गिलास भरकर दूध ले लिया था। दूध से भरा गिलास लेकर वह फिर सीढ़ियों से चढ़कर ऊपर जा रही थी।

उस्तादजी को मानो जाने कैसा कौतूहल हुआ। पूछा—वह औरत कौन है ?

लजवन्तिया बोली—कौन जाने ?

—आयी क्यों है ?

लजवन्तिया बोली—यह भी नहीं जानती, तो भी बाबू के साथ खूब जमकर बात कर रही है। मालूम होता है जान-पहचान की कोई है। वह भी बंगाली है···

उस्तादजी बोले—तू जा···

लजवन्तिया ने फिर देर नहीं की। वह फिर सीढ़ियों से ऊपर चढ़ गयी। उस्तादजी अपने मन से ही वह करने लगे जो उन्होंने कभी किया नहीं। लेकिन कोई एक खुट् करके आवाज होते ही उस्तादजी चमक उठे। आवाज हुई क्यों ?

कोई देख रहा है क्या ? ना। कमरे में घुसकर ही कमरे की खिड़कियाँ सब बन्द कर दी थीं उस्तादजी ने। आज अब कुन्दनलाल घुसेगा कहाँ से ?

अकस्मात् उस्तादजी के मन में हुआ मानो बाहर केसर बाई की गाड़ी आने की आवाज हुई है ! केसर बाई क्या इतनी जल्दी आ जायेंगी ?

मन-ही-मन जप करने लगे उस्तादजी। उस्तादजी ने जीवन में कभी जप नहीं किया। खुद मुसलमान होने के कारण कभी महावीरजी का नाम नहीं लिया मुँह से। तो भी मन-ही-मन बोले—जय महावीरजी, जय संकटमोचनजी…

बाहर सरदार अली का गला सुनायी पड़ा।

—उस्तादजी !

उस्तादजी दौड़ गये—क्या हुआ ?

सरदार अली बोला—होशियार, बाईजी साहिबा आ गयीं…

और लगता है सँभाला नहीं जा सका। उस्तादजी ने जल्दी-जल्दी रसोई-घर की ताख की आड़ में अपने को छिपा लिया।

केसर बाई गाड़ी से उतरी। केसर बाई का वही एक ही रूप, एक ही पोशाक, एक ही लाल पाट की साड़ी। एक ही तरह की महावर-रंगी एड़ी-उँगलियाँ। गाड़ी का भाड़ा चुकाकर केसर बाई घर में घुसने जा रही थी। सरदार अली से पूछ बैठी—बाबूजी ठीक हैं ?

सरदार अली हर दिन जो बोलता है उस दिन भी वही बोला—जी, सब-कुछ ठीक है बाईजी साहिबा…

उसके बाद जाने क्या एक बात याद आ गयी।

बोला—एक औरत आयी है बाईजी साहिबा।

—औरत ? कौन औरत ?

सरदार अली बोला—यह मैं नहीं जानता बाईजी साहिबा। नयी औरत,…

—नयी औरत ? कहाँ से आयी ? क्यों आयी इस घर में ? क्या चाहती है ?

—यह मुझे मालूम नहीं…

—मालूम नहीं तो घुसने क्यों दिया ? क्या मुश्किल है ? जिसको-तिसको तुम लोग अगर मेरे घर में घुसने दोगे तो तुम लोगों को तनखा देकर पोसा क्यों जाता है ? लजवन्तिया कहाँ है ?

सरदार अली बोला—वह ऊपर गयी है…

उस्तादजी रसोईघर की ताख की आड़ में लुके-लुके सब बातें सुन रहे थे। बहुत दिनों की बहुत आग उनके दिल में पुसी हुई थी। बहुत साध भी थी उनकी। उस्ताद मइजुद्दीन खाँ उन्हें अपना शागिर्द बनाते समय बोले थे—तुमसे काम बनेगा…

उस्ताद मइजुद्दीन खाँ साहब के मुँह से ऐसी तारीफ की बात निकलना कम सौभाग्य की बात नहीं थी। तब से ही उस्ताद हामिद खाँ जानते थे कि उनसे

तमाम काम होगा। बहुत नाम होगा उनका, बहुत रुपया होगा, तमाम शागिर्द होंगे। तब से ही उस्तादजी की साध थी कि दुनिया-भर में उनका नाम फैल जायेगा। और नाम के माने ही रुपया है। तमाम नाम और तमाम रुपयों की गद्दी पर बैठकर दुनिया में अपना लोहा मनवायेंगे।

लेकिन केसर बाई ने सब गोलमाल कर दिया। जाने कहाँ से एक बंगाली बाबू ने आकर उसके ताश के ताजमहल से दुश्मनी करके उसे तोड़-फोड़कर मीज-कर चूरमार कर दिया। इसका बदला उसे लेना ही होगा, इसका बदला न लेने पर उसकी जिन्दगी बरबाद हो जायेगी।

अकस्मात् केसर बाई की आवाज फिर सुनायी पड़ी।

—आप लोग कौन हैं?

साथ-ही-साथ बहुतेरे लोगों के जूतों की आवाज से समूची आबहवा सितार की झंकार के काम के समान झन-झन कर उठी। और जाने कौन लोग सीधे आकर रसोईघर के भीतर घुसे, एकदम चूल्हे के नजदीक, और उसके बाद ही उन लोगों ने उसे देख लिया···

कोई मानो साथ-ही-साथ बोल उठा—यह जो साला मिला—पकड़ो साले को···

और तभी दुतल्ले पर जनाना गले का एक करुण तीक्ष्ण आर्तनाद हठात् आबहवा को चीरकर टुकड़े-टुकड़े करके फिर हठात् बन्द हो गया।

चौक के बाईजी-मुहल्ले में एक बार अगर हल्ला उठे तो लोगों की भीड़ जमने में ज्यादा देर नहीं लगती। खून-खराबी की हवा इस मुहल्ले में कोई नयी घटना नहीं है। तो भी कहीं कुछ आदमियों की भीड़ होते ही और तमाम लोग वहाँ आकर भीड़ जमा लेते हैं।

उस दिन भी यही हुआ।

उस दिन भी केसर बाई के घर के सामने ठसाठस भीड़ जम गयी।

मिस्टर बैनर्जी के घर का टेलीफोन बार-बार बज उठा, लेकिन वे मकान में मिले नहीं। बैनर्जी साहब के खानसामा ने हर बार जवाब दिया—साहब कोठी में नहीं हैं···

इस बार सवाल हुआ—कहाँ गये?

खानसामा बोला—ड्यूटी में···

उसके बाद जब सवेरे बैनर्जी साहब घर में लौटे तब मामला सुनकर भौचक्के रह गये।

—हुजूर, घर में नहीं है···

—घर में नहीं हैं तो गयीं कहां ? रामदीन को बुलाओ···

—रामदीन भी नहीं है हुजूर। रामदीन गाड़ी में मेम साहब को लेकर निकल गया है···

मिस्टर बैनर्जी के जीवन में ऐसा अघटन कभी घटा नहीं। बराबर वे टूर से हेडक्वार्टर में जब लौटे हैं तब गाड़ी की आवाज सुनते ही आरती आकर खड़ी हो जाती पोर्टिको के सामने। मिस्टर बैनर्जी को देखकर पहले ही आरती ने पूछा है—कैसे हो ? नींद आयी थी न ?

लेकिन उस दिन फिर कोई नहीं आया। मिस्टर बैनर्जी के गाड़ी से उतरते ही उनका चपरासी आफिस की फाइलें लेकर भीतर रखने गया। वे गट-गट करके घर के भीतर जाकर घुसे। कहां, तो भी आरती दिखायी नहीं पड़ी !

अचम्भा, दूसरा कोई होता तो वे तभी उसे डिस्चार्ज कर देते। या सस्पेंड करते। कर्तव्य के मामले में गफलत देखने पर मिस्टर बैनर्जी कभी बर्दाश्त नहीं करते। वे आफिस में और घर में सिर्फ एक ही बात चाहते हैं, वह है डिसिप्लिन। नियम-पालन। यह नियम-पालन किसी के द्वारा न करने पर वे नाराज हो जाते हैं। इंडिया में कोई अगर काम न करे तो गवर्नमेंट चलेगी कैसे ? वे खुद एक क्लास वन गजेटेड आफिसर होकर यह अनियम सहन नहीं कर सकते ! वे जब सारी रात काम करने के बाद घर से लौटकर आयें तब उनकी स्त्री आकर खड़ी होगी। पूछेगी—कैसे हो ? रात को नींद आयी थी न ?

लेकिन कहां, यह तो हुआ नहीं ! मिसेज बैनर्जी तो आयी नहीं। यह अनियम है। मिसेज बैनर्जी जानती थीं कि मैं इस वक्त आऊंगा, और ठीक इसी वक्त वे घर में क्यों नहीं हैं !

खानसामा से पूछा—मेमसाहब कब गयी हैं ?

खानसामा बोला—कल शाम को हुजूर···

यह कैसी बात है ! कल शाम को गयी हैं और सारी रात घर में लौटीं नहीं ! दिस इज बैड ! दिस इज वैरी बैड, वेरी वेरी बैड ! यह अन्याय है, यह अत्यन्त अन्याय है !

सोचते-सोचते मिस्टर बैनर्जी कमरे में छटपट करने लगे। क्या करें समझ नहीं सके। आफिस-स्टाफ होने पर अब तक उसे चार्ज-शीट दे देते, या सस्पेंड करते। लेकिन—लेकिन ··

अकस्मात् टेलिफोन बज उठा।

—यस, बैनर्जी स्पीकिंग हीयर···

उधर से आवाज आयी—मैं खण्डेलवाल बोलता हूं मिस्टर बैनर्जी···

—यस खण्डेलवाल ! क्या खबर है ?

—आप मिसेज बैनर्जी की खबर जानते हैं ?

—मिसेज बैनर्जी तो मकान में नहीं हैं, मैं तो उन्हें ही ढूँढ़ रहा हूँ, कहाँ हैं वे ! ह्वेयर इज शी ?

खण्डेलवाल बोले—आप इसी मिनिट चले आइए मिस्टर बैनर्जी । अभी । मूव अर्जेंट, बहुत जरूरी मामला है । अभी चले आइए…

—कहाँ ? कहाँ आऊँगा ?

—मेरे पास । इस चौक में । चौक के केसर बाई के घर में—मैं वहीं से टेलिफोन कर रहा हूँ । एक एक्सिडेंट हुआ है—अभी चले आइए…

और कोई सवाल करने का समय नहीं दिया खण्डेलवाल ने । बात खतम करते ही रिसीवर रख दिया । मिस्टर बैनर्जी कुछ क्षण किंकर्तव्यविमूढ़ के समान रिसीवर कान में रक्खे रहे, लेकिन कोई उपाय न देखकर उसे फिर उन्होंने ठीक जगह पर रख दिया । उसके बाद वहीं से पुकारा—रघुवीर…

रघुवीर बड़ा डिसिप्लिंड ड्राइवर है । वह बराबर नियम मानकर चलता है । ज्यों ही उसे जोर से गाड़ी चलाने को कहा जाता है तभी वह जोर से गाड़ी चलाता है । एक बार भी नहीं कहता कि जोर से गाड़ी चलाने पर एक्सिडेंट हो जायेगा । उसके नजदीक आते ही बैनर्जी साहब बोले—गाड़ी निकालो…

मैं यह सबकुछ भी जानता नहीं था । भगीरथ की कोई भी खबर नहीं थी । वही जो एक दिन रास्ते में मेरे साथ सुललित से अकस्मात् अस्वाभाविक प्रकार से भेंट हो गयी थी, वही जो उसने कहा था कि उसने आरती से विवाह किया है, बोला था उसके घर जाने पर आरती से मिलवा देगा, उसी घटना के बाद एक दिन सिर्फ सुललित का पता ढूँढ़कर उसके घर में जाकर भगीरथ से मैंने थोड़ा कुछ सुना था । उसके बाद मैं अपने आफिस के काम में इतना रम गया कि फिर आँख-कान से कुछ देख या सुन नहीं सका ।

इतने दिनों मेरे लखनऊ-प्रवास की मियाद भी पूरी हो आयी थी । मैंने ठीक किया था कि जिस दिन मैं लखनऊ छोड़कर जाऊँगा, उसके पहले एक बार सुललित से मिलूँगा । और मुझसे भेंट होने के बाद ही सुललित मिस्टर बैनर्जी की गाड़ी से धक्का खाकर अस्पताल में पड़ा था, यह बात भी मेरी जानकारी में नहीं थी । तो भी तमाम कामों के बीच में भी मुझे सुललित की बात याद जरूर आती थी। याद आते ही मनुष्य के जीवन की विचित्रता की बात ही सबसे पहले स्मरण आती । उन सब पुराने दिनों की बातें याद आते ही बड़ा अचम्भा होता । लगता, जीवन के सम्बन्ध में कितने कवि, कितने दार्शनिक, कितने साहित्यिक कितनी ही बातें तो लिख गये हैं, लेकिन तो भी किसी ने क्या जीवन का पता-

ठिकाना पाया है ? ठीक सुललित के उत्थान अथवा पतन की बात नहीं, मैं केवल सोचता मनुष्य के जीवन की विचित्रता की बात। सोचता, यह भी क्या सम्भव है ? तिस पर मैंने कितने अख्यात-विख्यात मनुष्यों की जीवनियां तो पढ़ी हैं, उन्हें पढ़कर तो इस तरह चकित होना नहीं पड़ा। छापे के अक्षरों के लिखे और वास्तव जीवन के प्रत्यक्ष के साथ जरूर कोई फर्क है। नहीं तो सुललित से भेंट होने के बाद से ही उसके सम्बन्ध में जानने के लिए मेरे मन में इतना कौतूहल ही क्यों हुआ ?

उन दिनों मेरी थी बदली की नौकरी। कुछ महीने कलकत्ते में रहता और तब अकस्मात् हो-न-हो मैं दो महीने के लिए पटना या तमिलनाडु चला जाता। ठीक जैसे नदी के जल पर पत्ते के समान बहते हुए घूमना।

लेकिन जिस दिन सचमुच लखनऊ शहर से चले जाने का दिन-तारीख-क्षण सबकुछ ठीक हो गया, उस दिन फिर मैं ठहर नहीं सका। रात दस बजे मेरी ट्रेन थी, उसके पहले ही तीसरे पहर में सुललित के घर की तरफ रवाना हुआ। एक बार मिले बिना जाने से सुललित का मन दुखी होगा।

घर जाकर दरवाजे का कड़ा हिलाते ही वही भगीरथ निकल आया।

मुझे अच्छी तरह देखे बिना ही बोला—दादा बाबू घर में नहीं हैं···

मैंने अच्छी तरह याद दिला देने के लिए कहा—मुझे तुम पहचान नहीं पा रहे हो भगीरथ ? मैं तुम्हारे दादा बाबू का वही कलकत्ता का दोस्त हूं। मैं आज रात को गाड़ी से कलकत्ता चला जा रहा हूं, इसीलिए एक बार मिलने आया था···

तब भगीरथ के मुंह की मुद्रा मानो अकस्मात् दूसरे प्रकार की हो गयी। बोला—अब मिलकर क्या कीजियेगा बाबू, मिलने के लायक मनुष्य अब वे नहीं रहे···

मैंने पूछा—क्यों, क्या हुआ ?

भगीरथ बोला—आपने सुना नहीं, दादा बाबू तो मोटर का धक्का लगने से अस्पताल में पड़े थे···

—ऐसी बात है क्या ? तो अब भी अस्पताल में ही हैं क्या वे ?

भगीरथ बोला—अस्पताल में क्यों रहेंगे, अब उस राक्षसी ने आकर उन्हें फिर अपने निजी घर में ले जाकर रखा है···

मैं बोला—लेकिन वह तो उन्हीं गांगुली बाबू की लड़की आरती है···

भगीरथ बोला—उसी कालसांपिनी ने तो दादा बाबू का इस तरह सर्वनाश किया, उसीके लिए तो दादा बाबू ने शराब पीने की आदत डाली—और अन्त में वही लड़की शायद स्वामी-संसार छोड़कर यहां आकर बाईजी हो गयी है। और दादा बाबू ने शायद उससे ही विवाह किया !

उसके बाद अपनी दोना आँखें पोछते-पोंछते बोला—आज बाबू भी जीवित नहीं हैं, मा भी नहीं हैं, वे लोग पुण्यात्मा हैं, मरकर वे लोग बच गये हैं, इसीसे इतना पाप उन्हें आँखें खोलकर देखना नहीं पड़ा…

देखा, भगीरथ वही पहले का भगीरथ ही है। मुर्शलिन जितना भी बदल क्यों न जाये, भगीरथ में मानो फिर भी कोई परिवर्तन नहीं है।

बोला—मैं आज ही यहाँ से चला जा रहा हूँ भगीरथ। सोच रहा था जाने से पहले उससे एक बार मिलकर जाऊँगा। तो एक बार अभी तुम मुझे उसके पास ले जा सकते हो?

भगीरथ चौंक उठा। बोला—ना-ना बाबू, आप वहाँ मत जाइए, वह नरक है। आप भले आदमी हैं, आप क्यों वहाँ मरने जायेंगे? एक गुण्डे से दोस्ती हो गयी थी दादा बाबू की, उसी गुण्डे-मतवार-बदमाश ने दादा बाबू का यह सर्वनाश किया है…

—गुण्डा-मतवार माने? वही कुन्दनलाल, जिसकी बात तुमने बतायी थी? वह अभी कहाँ है? वह तुम्हारे दादा बाबू के साथ अब भी वहाँ रहता है क्या?

भगीरथ बोला—ना, जिसने दादा बाबू का ऐसा सर्वनाश किया, उसका क्या कभी अच्छा हो सकता है बाबू? उसका कभी भला नहीं हो सकता। वह पागल हो गया है—ठीक हुआ है…

—पागल हो गया है माने?

—हाँ बाबू, यह मैं अपनी आँखों से देख आया हूँ। वह एकदम भीषण पागल हो गया है। केसर बाई के मकान के सामने नाबदान के किनारे तुच्छ कुत्ते के ऊपर पड़ा रहता है और घर-घर में भीख माँगकर खाता है। और सिर्फ बिड़-बिड़ करके बकता है। तो पागल नहीं होगा? भले आदमी का इस तरह सर्वनाश करने पर क्या किसी का भला होता है?

मैंने सबकुछ सुना। उसके बाद मैं बोला—लेकिन वह नरक ही हो चाहे जहन्नुम ही हो, मैं एक बार वहाँ जाऊँगा ही और हो सकता है जीवन में फिर कभी यहाँ आने का मौका नहीं मिलेगा, इतने दिनों के बाद लखनऊ में आया हूँ, मुझे एक बार तुम वहाँ ले चलो…

भगीरथ बोला—आपका जब मिलने का इतना मन है तब मैं आपको पता देता हूँ, आप ही जाइए…

मुझे जाने कैसा सन्देह हुआ। भगीरथ क्या मुझे टालने की कोशिश कर रहा है?

भगीरथ बोला—आप चौकवाली जगह पहचानते हैं न?

बोला—सो तो पहचानता हूँ…

—वहाँ घुसकर आप पहले ही देखिएगा कि बहुतेरी छोटी-मोटी दूकानें हैं।

वहाँ तमाम सोना-चांदी बिकती है। उसके बाद थोड़ा बढ़कर जिससे पूछियेगा, वही आपको केसर बाई का घर दिखा देगा···

और क्या करता ! मैं अकेला ही गया ! भगीरथ ने जैसा-जैसा बता दिया था, ठीक उसी तरह जाकर एक आदमी से पूछने पर उसने मुझे केसर बाई के घर की ठीक-ठीक जगह समझा दी। मैं समझा, इस मुहल्ले में केसर बाई सचमुच प्रसिद्ध बाईजी है।

चारों तरफ उस समय मानो शाम का अँधेरा घना हो रहा था। आस-पास ठीक वही भेलपूरी-मलाई-बरफ और दलालों का आना-जाना चल रहा था। मुझे देखते ही लगता है एक दलाल-श्रेणी का आदमी आगे बढ़ आया।

बोला—कहाँ जाइयेगा बाबूजी ?

और भी जाने कितनी लुकी-छिपी खबरें देने लगा, जो काम की नहीं थीं। मैंने जब उससे केसर बाई के घर जाने का इरादा बताया तब वह आदमी जाने कैसा हतवाक् होकर मेरी तरफ थोड़ी देर ताकता रहा।

बोला—लेकिन केसर बाई ने तो नाचना-गाना छोड़ दिया है···

उसके बाद उँगली से एक घर दिखाकर बोला—वही जो घर देख रहे हैं, सामने खूब पुलिस की भीड़ है, वही घर, वही केसर बाई का घर है। वहाँ मत जाइए···

कहकर दलाल फिर खड़ा नहीं हुआ। लगता है और किसी गाहक की खोज में भागा।

मैं थोड़ा किंकर्तव्यविमूढ़ की तरह वहाँ खड़ा रहा। उसके बाद धीरे-धीरे उसी भीड़ की तरफ बढ़ गया। जितना ही बढ़ने लगा, उतना ही देखता हूँ केसर बाई के घर के सामने भीड़-ही-भीड़ है। मैं और भी किंकर्तव्यविमूढ़ !

दसों बीस पुलिस के लोग केसर बाई के घर का पहरा दे रहे हैं। किसी को भीतर नहीं जाने देते, घर के भीतर से किसी को बाहर भी आने नहीं देते।

मैं एक किनारे असहाय के समान उधर ही देखता हुआ खड़ा था। लेकिन कितनी देर खड़ा रहता ? मुझे भी तो लखनऊ छोड़कर चले जाना होगा !

नजदीक के एक आदमी से मैंने पूछा—यहाँ क्या हुआ है भइया ?

वह आदमी बोला—सुना है खून !

खून ? मैं तो चौंक उठा।

—किसका खून हुआ है ?

जिस आदमी से पूछा वह कुछ नहीं जानता, उसके बाद नजदीक के दूसरे एक आदमी ने जवाब दिया—केसर बाई का···

—केसर बाई का खून हुआ है ? किसने उसका खून किया ?

असल में कोई नहीं जानता कि असल मामला क्या है ! केसर बाई तो आरती

का ही नाम है। आरती गांगुली। मेजर भूधर गांगुली की लड़की। भगीरथ ने तो मुझसे यही बात कही थी। तो फिर भगीरथ क्या जानता नहीं यह खबर! भगीरथ के कानों में क्या यह खबर अभी तक पहुँची नहीं?

एक आदमी अब तक हम लोगों की बातचीत सुन रहा था। उसने मतलब की बात बतायी—नहीं-नहीं, एक बंगाली बाबू इस कोठी में था, उसका ही खून हो गया···

मैं फिर चौंक उठा। बंगाली बाबू के माने तो सुललित है। उसका ही खून हुआ है क्या? कैसा सर्वनाश है! खबर सुनकर मैं सिर से पैर तक सिहर उठा। वही सुललित! उसी सुललित का शायद इस बाईजी के घर में खून हो गया? यही उसकी परिणति है?

मैं अब ठहर नहीं सका। मैंने पूछा—किसने बंगाली बाबू का खून किया?

उस आदमी ने कहा—एक पागल ने···

—पागल? कौन पागल? कहाँ का पागल? पागल ने क्यों बंगाली बाबू का खून किया? बंगाली बाबू ने क्या किया था उसका?

और एक आदमी बोला—अरे नहीं-नहीं, उस्तादजी का खून हुआ है···

—कौन उस्तादजी?

नजदीक का आदमी बोला—अरे उस्तादजी को पहचानते नहीं? बेगम बाई का सारंगीवाला, उस्ताद हामिद खाँ···

इतनी परस्पर-विरोधी खबरों से मैं भ्रमित हो गया। किसने किसका खून किया है, क्यों खून किया है, हजार सवाल करके भी उसका कोई पता नहीं पा सका।

अन्त में हताश होकर पूछा—खून किया किसने?

आदमी ने अनमने होकर कहा—कह तो रहा हूँ एक अजीब पागल···

—अजीब पागल माने? उसका कोई नाम नहीं है?

आदमी बोला—उसका नाम कुन्दनलाल है···

कुन्दनलाल! भगीरथ के मुँह से सुने हुए नाम का वही [illegible] बार? वह क्यों खून करेगा सुललित का! सुललित पर उसका किस बात का गुस्सा है? आरती उसके हाथ से छूट गयी थी इसलिए? या वह स्वभाव का [illegible] है! शराब के नशे में [illegible] करते-करते शायद सुललित के साथ [illegible] के मामले में [illegible] करते-करते सुललित का खून कर बैठा है! इस मुहल्ले में सब सम्भव है। इस [illegible] में [illegible] होना-न-होना, रोज का मामला है। [illegible] सुनाता।

मुझे और उस मकान [illegible] देखने का [illegible]

तरफ देखते ही मुझे ध्यान आया। सात बज रहे हैं। मुझे चीज-वस्तु बाँधना-बँधना होगा। मेरा तब और खड़े होकर प्रतीक्षा करने से नहीं चलेगा। मैं चौक छोड़कर अपने घर की तरफ रवाना हुआ।

यह घटना, यह जानकारी यहाँ खत्म हो जाने पर साहित्य के जीवन-दर्शन की दिशा सम्भवतः समाप्त हो जाती, परन्तु कहानी समाप्त न होती। इतना ही लिखकर शायद पूर्णविराम की लकीर खींच दे सकता था। दिखा सकता था कि मनुष्य का जीवन बड़ा विचित्र है, दिखा सकता था कि मनुष्य के जीवन का शुरू देखकर उसके शेष का अनुमान करना असम्भव है। मुललित का जीवन आरम्भ ही किस प्रकार हुआ था और उसका अन्त भी किस प्रकार हुआ, इसके निर्दोष विवरण के साथ पाठकों को पाप की पराकाष्ठा का एक उज्ज्वल दृष्टान्त दिखाकर बंकिमचन्द्र के 'कृष्णकान्त के विल' के समान शास्त्रसम्मत एक परिणति खींच ले आ सकता था। उससे पाठक भी मेरी वाहवाही करते और मैं भी लेखक के हिसाब से अमरत्व पा जाता।

लेकिन मेरे भाग्य फूटे हैं, इतना सौभाग्य मेरे भाग्य में नहीं है। मैं अत्यन्त एक अभाजन हूँ। मेरी मुश्किल यही है कि मैं जीवन का सबकुछ तिरछी निगाह से देखता हूँ। काले को ठीक काला मानने में मेरी निगाह का निर्धारण नहीं होता, इसीलिए काले के पिछले भाग में क्या है उसे देखने के लिए ही मैं छटपटाता हूँ। उसी प्रकार सफेद को भी ठीक सहज मन से सफेद के समान मान लेने में मुझे बाधा होती है। अर्थात् मेरा मन ही अवश्य कुटिल है। नहीं तो बंकिमचन्द्र, शरच्चन्द्र ने जिस तरह कहानी शेष की है, मैं उस प्रकार शेष क्यों नहीं कर पाता ?

वही शेष कथा अब कहूँ।

मैंने पहले भी कई बार कहा है कि उमर ज्यादा बढ़ने का एक सुभीता यह है कि जिसका शुरू देखा है उसका अन्त भी देखा जाये। इस बार भी ठीक यही हुआ।

मैंने नाना घाटों का पानी पीकर, नाना घाटों के धूल-कीचड़ से अपने शरीर को लपेटकर जीवन काटा है। धीर-स्वस्थ भाव से एक जगह में बैठकर स्थिर होकर कुछ करूँ यह शायद मेरे भाग्यविधाता का विधान नहीं है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक की बात बहुत पुरानी है। इसकी बनिस्बत कहूँ कि कलकत्ता से कोचीन तक किसी ने मुझे सब जगहों में घाट-अघाट में नाक में रस्सी लगाकर खींच-घसीटकर घुमाकर मारा है।

अन्त में एक दिन कर्मसूत्र से जा पहुँचा मध्यप्रदेश के बस्तर स्टेट में।

जगदलपुर शहर में। बस्तर एक समय एक स्टेट था। अब वही बस्तर मध्यप्रदेश के एक जिले में बदल गया है। रायपुर स्टेशन से एक सौ चौरासी मील दूर का रास्ता है जगदलपुर। कलकत्ता, लखनऊ या दिल्ली की तुलना में जगह कुछ भी नहीं है।

जहाँ जब मैं रहता हूँ तब वह जगह ही मेरा देश हो जाती है। भारतवर्ष की सब जगहें ही मेरे लिए अपनी हैं। कोई मेरा पराया नहीं है।

इसीलिए बस्तर के जगदलपुर में कुछ दिन रहते-रहते बहुतेरे लोगों से मेरी जान-पहचान हो गयी। कोई कारबारी है या कोई नौकरी करता है, या कोई राजनीतिक नेता है, कोई विद्यार्थी है और कोई वकील। और पहचान हुई एक डाक्टर से। डाक्टर प्रभुदयाल। डाक्टर प्रभुदयाल का बहुत बड़ा नाम है। वह नाम सिर्फ बस्तर अंचल में ही सीमाबद्ध हो ऐसा नहीं है। दण्डकारण्य के भीतर मलकानगिरि, कोंडागाँव, उधर धरमपुरा, दन्तेवाड़ा, भोपालपटनम, कांकेर सब कहीं उनकी गतिविधि है। छुट्टी के दिनों में डाक्टर प्रभुदयाल के साथ मैं भी घूमता हूँ। उनकी एक दुरही गाड़ी थी, वह गाड़ी वे खुद ही चलाते। उससे मुझे एक सुभीता यह होता कि मैं भी अनेक जनपद, अनेक मनुष्य देख लेता। कितना बड़ा देश है हमारा यह भारतवर्ष, और कितनी उसकी विचित्रता है, उसे देखकर मैं अवाक् हो जाता।

एक-एक दिन एक-एक जगह में वे ले जाते। बोलते—चलिए, आज कांकेर जायें—वहाँ मेरा एक पेशेंट है···

मैं भी राजी हो जाता। रोगी के घर में ही खाते-पीते, राज-समादर के समान हमारा जो समादर होता, उसी प्रकार रोगी का इलाज भी होता, एक-एक कष्ट का। और डाक्टर को भी मोटी रकम की कमाई होती। और मेरा पावना था बिना खर्च के भ्रमण।

इसी तरह जब चल रहा था तब वे एक दिन बोले—आप तो धरमपुरा की तरफ कभी गये नहीं। जगदलपुर के नजदीक ही तो है यह।

मैं बोला—नहीं···

—तो फिर खाना-पीना करके आज एक बार चलिए, धरमपुरा जायें। देखियेगा उधर भी अच्छा डेवेलप हो रहा है आजकल। पहले ऐसे ही दो-चार पुराने टूटे घर थे, लेकिन अब वहाँ तमाम बंगाली पुनर्वासी आ गये हैं···

मैंने पूछा—कितनी देर लगेगी वहाँ ?

—ज्यादा दूर नहीं, यहाँ से चार-पाँच मील का रास्ता है। एक डेलिवरी केस है। थोड़ा सीरियस है इसीसे मुझे बुलाया है··

बोला—तो चलिए···

गाड़ी में जाने पर चार-पाँच मील कुछ भी नहीं है। देखते-देखते पहुँच गये।

ागह खुली हुई है। डाक्टर प्रभुदयाल मुझे गाड़ी में ही बैठाकर एक बस्ती के ीतर घुस गये। मैं गाड़ी में बैठा हूँ तो बैठा ही हूँ। देखकर लगा कि रोगी रीब है। आदिवासी सम्प्रदाय का आदमी है। आदिवासी सम्प्रदाय का आदमी ाक्टर प्रभुदयाल के समान डाक्टर को एक विजिट देकर रोगी दिखाने को : गया है, यह सोचकर मुझे कुछ अचम्भा होने लगा। इन लोगों के पास क्य तना रुपया है! उनकी झोपड़ी की हालत देखकर तो ऐसा नहीं लगता।

एक घण्टे के बाद डाक्टर प्रभुदयाल जब लौट आये तब देखा उनके साथ औ ़क भले आदमी हैं।

देखते ही चौंक उठा। सुललित है क्या?

सुललित लगता है पहले मुझे पहचान नहीं सका। जाने क्या सब जरूरी ातें करने लगा डाक्टर प्रभुदयाल से। वह सब मेरे कानों में भी सुनायी नहीं ड़ा।

अन्त में मैं और ठहर नहीं सका। फिर पूछा—सुललित हो क्या?

सुललित ने मुझे देखकर पहचानने की कोशिश की। उसके बाद निरासक्त ले से वह बोला—तुम? तुम यहाँ? लखनऊ से कब आये?

मैं बोला—मेरी बात छोड़ो, मैं तो घूम-घूमकर नौकरी में इधर-उधर ाता रहता हूँ, घूमने की ही मेरी नौकरी है। लेकिन तुम? तुम्हें यहाँ देख ाऊँगा, यह तो कल्पना भी नहीं कर सका था···

डाक्टर प्रभुदयाल हम लोगों की बात-चीत सुनकर अवाक् हो गये थे। न्होंने आग्रह से पूछा—आप पहचानते हैं क्या मिस्टर चैटर्जी को?

मैं बोला—हम दोनों एक समय एक स्कूल में, एक ही कालेज में पढ़ते ···

सुललित मुझसे बोला—मैं तो जानता नहीं था कि तुम डाक्टर बाबू के साथ ाये हो···

मैं बोला—तुम यहाँ क्या करते हो? इस सुदूर अंचल में? लखनऊ से ब आये? और तुमने लखनऊ छोड़ा भी क्यों?

सुललित बात सुनकर जाने कैसा गम्भीर हो गया।

बोला—यह सब बातें यहाँ इतने थोड़े समय में तो हो नहीं सकतीं···

मैं बोला—तुम अगर कहो तो मैं ही फिर एक दिन आ सकता हूँ तुम्हारे ास—कितने दिनों से भेंट नहीं हुई तुमसे! लखनऊ छोड़कर आने के दिन मसे भेंट करने के लिए चौक में गया था। लेकिन इतने पुलिस-कान्स्टेबिल खकर फिर घुस नहीं सका। कोई कह रहा था, तुम्हारा खून हो गया है, और ोई-कोई कह रहे थे कि शायद केसर बाई का खून हो गया है? लेकिन केसर ाई के साथ तुम्हारा सम्बन्ध क्या है?

सुललित बोला—तुम्हारे पास अभी कोई काम है ?

मैं बोला—आज तो मेरा इतवार है, आफिस की छुट्टी है, सारे दिन मेरा कोई काम नहीं है। लेकिन तुम्हारा ? तुम्हारे पास तो काम है···

सुललित बोला—मेरे पास और क्या काम है, मैं तो यहाँ अकेला रहता हूँ···

—अकेले ! मुझे जाने कैसा अचम्भा हुआ बात सुनकर। इस जंगल और आदिवासियों के बीच में सुललित अकेला निःसंग जीवन काट रहा है ! तो फिर आरती कहाँ गयी ? खून किसका हुआ ? तो फिर क्या उस्तादजी, या कुन्दन-लाल या लज्जवन्तिया का ! मैं सुललित को देखकर उसके मुँह की तरफ बड़ी देर तक एक निगाह से ताकता रहा। मुझे मानो अपनी आँखों पर भी विश्वास नहीं हो रहा था। यह क्या वही सुललित है ? जो सुललित 'शराब' न होने पर एक पल रह नहीं सकता था, जो सुललित 'शराब शराब' करता हुआ केसर बाई को परेशान किये रहता था, जो सुललित कुछ खाता-पीता नहीं था, जिसे खून करने के लिए उस्तादजी बैठते-बैठते पीछे पड़े थे—उसी सुललित को क्या मैं अपनी आँखों के सामने देख रहा हूँ ? या यह और कोई है ?

मैंने डाक्टर प्रभुदयाल से कहा—अच्छा, डाक्टर प्रभुदयाल, मिस्टर चैटर्जी मेरे पुराने दोस्त हैं, बहुत दिनों के बाद उनसे भेंट हुई है, आज मैं यहीं रह जाऊँ···

डाक्टर प्रभुदयाल को इस सम्बन्ध में कोई आपत्ति कैसे हो सकती थी ! वे गाड़ी लेकर चले गये। सुललित मुझे अपने घर ले गया।

याद है उस दिन उसके घर में जाकर ही पहले-पहल मैंने समझा कि मनुष्य का जीवन किसे कहते हैं। और साथ-ही-साथ यह भी समझा कि मौत किसे कहते हैं। जीवन का अर्थ हम लोग समझते हैं केवल पैदा होना और उसके बाद संग्राम करके खाने-पीने और छाया का इन्तजाम करते-करते एक दिन विलास-वैभव के शिखर पर उठना। और मौत को हम समझते हैं केवल अन्त होना। लेकिन जीवन और मृत्यु की एकमात्र सार्थकता जो अमृत में है। और अमृत-योग ही जो जीवन का एकमात्र सार्थक योग है, यह सुललित के साथ भेंट न होनेपर हो सकता है उस दिन मैं समझ ही न पाता।

सुललित मुझसे बोला—जानते हो भाई, जीवन में एक उमर आती है जब उससे और कोई प्रत्याशा करना उचित नहीं है। आज मेरी वही उमर आ गयी है। मैंने पहले तुम लोगों से बड़ी-बड़ी बातें की हैं, लेकिन कोई धर्म-निष्ठा लेकर उसका पालन नहीं किया। जो काम किया है उस काम का कोई माने नहीं समझा। इतने समझा है कि केवल काम किये जाना ही जीवन की सार्थकता है। लेकिन इतने दिनों में जो सब काम करता आया हूँ वह सब किया है अपनी जरूरत से, अपने

अभाव से, इसीलिए वह सब काम था मेरे लिए बन्धन। लेकिन आज इतने दिनों के बाद मैं जो काम कर रहा हूँ वह प्रयोजन से ही नहीं, सिर्फ अपने आनन्द से। आनन्द से ही यह काम कर रहा हूँ, यह मेरे लिए मुक्ति है। मैं इसीलिए भाई, आज मुक्त पुरुष हूँ। मेरे लिए मेरे निज का कोई अतीत नहीं है, भविष्यत् भी नहीं है। मैं सवेरे से शुरू करके इसीलिए सिर्फ वह काम ही करता हूँ...

मैंने पूछा—कौन-सा काम ?

सुललित ने जो जवाब दिया उससे मेरा मुँह बन्द हो गया। इसी बस्तर में बहुत दिनों पहले एक बाढ़ आयी थी। तब उसी बाढ़ से त्रस्त लोगों की रक्षा के लिए वह यहाँ आया था। उसके बाद से यहीं वह रह गया। यहाँ इन आदिवासियों के बीच ही वह अपना शेष जीवन काट देगा, यही उसका मन है। इन लोगों के सुख-दुःख के साथ उसने अपने निजी सुख-दुःख को एकाकार करके सुख पाया है। वह बोलने लगा—मैं बहुत तरह के मनुष्यों से घुला-मिला हूँ। एक बार मैंने ऐसी एक नौकरी की थी जिससे मैंने सोचा था कि मैं मनुष्य-समाज से असत्य दूर कर सकूँगा, समाज को पाप और दुर्नीति से मुक्त कर सकूँगा। लेकिन क्यों मैं वह कर नहीं सका ? क्यों मैंने केसर बाई के घर में जाकर आश्रय लिया ? क्योंकि मैंने वह नौकरी की थी अपने खाने और अपनी छाया का प्रयोजन मिटाने के लिए। अभावमोचन करने के लिए। उस कर्म का स्रोत आनन्द नहीं था। था प्रयोजन। इसीलिए मैं व्यर्थ हुआ था। यह जो उपलब्धि है, एक मर्मान्तिक घटना से यह उपलब्धि हुई। भाई, तुमने क्या सोचा है कि यह जो विश्व-सृष्टि है, यह जो अनन्त काल से इतिहास के दुर्गम-पथ में मानवात्मा का विजयरथ दिन-रात पृथिवी को आगे बढ़ाती हुई चल रही है, इसका कोई सारथी नहीं है ? है। एक दिन आरती ही मेरे मन में इस उपलब्धि का बीज बुन गयी। वह भी एक विचित्र घटना है !

बात करते-करते कब दिन डूब गया, शाम हो आयी, रात बीत गयी उसकी आहट तक नहीं मिली।

उसी रात को सुललित के मुँह से उस दिन की घटना सुनी। याद आया मैं जिस दिन चौक में जाकर केसर बाई के घर के सामने मनुष्यों की भीड़ के एक किनारे खड़े होकर भ्रमित हुआ था, उस समय भी जानता नहीं था कि उस घर के भीतर तब एक और वियोगान्त नाटक का अभिनय हो रहा था।

शुरू हुआ था शाम से ही।

केसर बाई के महावीरजी के मन्दिर में चले जाने के बाद ही लजवन्तिया गिलास में जैसे रोज दूध ले जाती, उस दिन भी उसी तरह ले गयी थी।

लजवन्तिया को देखकर सुललित बोल उठा—फिर क्यों दूध लायी हो लजवन्तिया—मैंने तो कह दिया है कुछ पियूँगा नहीं मैं—इसे तुम ले जाओ...

रजवन्तिया बोली—बाईजी साहिबा आपको दूध देने को कह गयी हैं बाबूजी, थोड़ा-सा दूध पी लीजिए···

सुललित बोल उठा—नहीं, मैं नहीं पियूँगा, आरती कहे या जो भी कहे, मैं उसे किसी तरह नहीं पियूँगा—तुम अभी ले जाओ, न ले जाने पर मैं लेकिन फिर गिलास उठाकर फेंक दूँगा···

लेकिन रजवन्तिया के दूध रखकर जाते ही सुललित उठा। उठकर दूध का गिलास हाथ में लेकर जोर से फेंकने जा रहा था, लेकिन अकस्मात् किसी को सामने देखकर चौंक उठा।

कुछ क्षण उसके मुँह से और कोई बात नहीं निकली।

—यह क्या, आरती! तुम? मन्दिर से अभी लौट आयी क्या?

आरती चुपचाप खड़ी होकर एक निगाह से थोड़ी देर सुललित के मुँह की तरफ ताकती रही। सुललित का चेहरा देखकर उसकी दोनों आँखें छलछला उठीं।

बोली—यह तुम्हारा कैसा चेहरा हो गया है सुललित दादा?

सुललित आरती के गले का स्वर सुनकर जाने कैसा हतवाक् हो गया था।

आरती बोली—कितने दिनों बाद तुम्हें देखा, कितने बरसों के बाद, कितने काल के बाद, लेकिन तुम इस तरह अपना सर्वनाश क्यों कर रहे हो?

सुललित और भी हतवाक् हो गया आरती की बात सुनकर। बोला—क्यों, तुम तो मुझे रोज ही देखती हो, आज क्या तुम मुझे नया देख रही हो? यही थोड़े पहले ही तो तुम कह गयी कि तुम महावीरजी के मन्दिर में जा रही हो—कह गयी कि तुम जाओगी और चली जाओगी, ज्यादा देर नहीं करोगी···

आरती गम्भीर गले से बोली—तुम जिसकी बात कह रहे हो वह मैं नहीं हूँ···

सुललित स्तम्भित, बोला—इसके माने?

—इसके माने आज ही मैं पहले-पहल इस घर में आयी। वही एक दिन तुम्हारे विलासपुर के घर में गयी थी, और आज फिर इतने दिनों के बाद यहाँ तुम्हारे पास आयी···

सुललित बोला—तुम बोल क्या रही हो?

आरती बोली—हाँ, ठीक ही बोल रही हूँ। आज ही डाक्टर कोठारी से तुम्हारी सब बात सुनी, सुनते ही तुम्हारे पास दौड़कर चली आयी।

सुललित अवाक्, विस्मय से तब हतबुद्धि हो गया था।

आरती फिर बोली—आज स्वीकार करती हूँ सुललित दादा, तुम्हारी इस हालत के लिए मैं ही जिम्मेदार हूँ। मुझे तुम आज जितना कर सको अपमान करो, मुझे तुम उस दिन के समान मेरे गाल में जितना मार सको चाँटे मारो।

में कोई आपत्ति नहीं करूँगी। आज मैं तुम्हारा सब अपमान सिर झुकाकर सहने आयी हूँ। करो अपमान, करो, मुझे गालियाँ दो, मुझे फिर चाँटे मारो सुललित दादा, तुम्हारे दोनों पैरों पड़ती हूँ सुललित दादा, मुझे तुम प्राण भरकर गालियाँ दो एक बार···

सुललित तो भी जरा भी डिगा नहीं, पत्थर बनकर अपनी जगह में खड़ा रहा।

आरती बोली—क्यों, तुम मुझसे कुछ बोल क्यों नहीं रहे ?

आरती सुललित के और भी सामने जाकर उसके शरीर को घिसकर खड़ी हुई।

बोली—क्यों, तुम मुझसे कुछ बोलोगे नहीं ? मुझे थोड़ा जैसे भी हो शास्ति दो तुम। तुम्हारे शास्ति न देने पर जो मेरे और किसी अपराध का प्रायश्चित्त नहीं होगा ? तो फिर जो मैं अनन्तकाल तक नरक में सड़ूँगी ? क्या हुआ ? मेरी बात सुन नहीं पा रहे हो तुम ?

सुललित उस समय भी पत्थर के समान ठण्डा !

हठात् आरती एक काण्ड कर बैठी। सुललित की छाती पर अपना सिर घिस-घिसकर फफक-फफककर रोने लगी।

सुललित ने दोनों हाथों से उसे दूर ठेलकर सरकाकर अलग हटा दिया। बोला—छि:···

आरती ने गिरते-गिरते अपने को सँभाल लिया। बोली—अच्छा किया है सुललित दादा, अच्छा किया। मुझे और भी मारो, और मारो मुझे सुललित दादा, मेरे सब अपराध धुलकर मिट जायें···

सुललित के मुँह से इतनी देर के बाद बात फूटी। बोला—मैं तुम्हारी बात कुछ समझ नहीं पा रहा, तो फिर इतने दिनों जिसे मैं आरती समझता आया हूँ, वह कौन है ?

—वह केसरबाई है, मेरी दीदी, मेरी रानूदि, जिसकी बात मैंने तुमसे कही थी, और मैं वही मिस्टर बैनर्जी की स्त्री हूँ, आरती, जिसके कारण तुम्हारी यह दुर्दशा है, जिसके लिए तुमने कोर्ट में खड़े होकर जीवन में पहली बार झूठ बात कही है, जिसके लिए तुमने सारे अपराध अपने सिर पर उठा लिये हैं, जिसके कारण तुमने शराब पीकर अपना सर्वस्व नष्ट किया है—चरित्र नष्ट किया है, धर्म नष्ट किया है।

सुललित हारा हुआ-सा थोड़ी देर चुपचाप खड़ा रहा। उसके मुँह से उस समय कोई बात नहीं निकली।

आरती ने सुललित के दोनों हाथ पकड़े इस बार। बोली—तुम मेरी एक बात याद रखो सुललित दादा, तुम अब इस तरह अपने को नष्ट होने मत देना,

तुम मेरे पास चलो…

—तुम्हारे पास माने ?

—माने मेरे घर में।

—यह कैसे हो सकता है ? मिस्टर बैनर्जी कुछ बोलेंगे नहीं ?

आरती बोली—मैं क्या मिस्टर बैनर्जी की नौकरानी हूँ जो वे जो हुक्म देंगे वही मुझे तामील करना होगा ? मेरा भी तो उस घर में बराबर का अधिकार है। मैं उनकी स्त्री हूँ, इससे क्या मेरे निजी मन का भी कोई दाम नहीं है ? अपने स्वाधीन मत के नाम पर कुछ नहीं रहता ?

सुललित बोला—लेकिन एक दिन तो तुम अपने इन्हीं पति को बचाने के लिए ही मेरे दरवाज़े पर आयी थी ! मुझे तो तुमने अपना सर्वस्व देना चाहा था !

आरती बोली—अपने उस पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए ही तो आज तुम्हारे पास आयी हूँ सुललित दादा, नहीं तो क्या आज यहाँ इस नरक में मैं आती ?

सुललित बोला—इसे अगर नरक कहो तो किसने तुमसे इस नरक में आने को कहा था ? मैंने तो नरक में ही जो सुख हो सकता है, पाया है। यह नरक था इसीलिए तो मैं अब तक बचा हूँ—लेकिन तुम अपने सुख का संसार छोड़कर क्यों इस नरक में आ पहुँची ? मैंने तो तुम्हें यहाँ आने के लिए सिर की कसम खिलायी नहीं…

आरती रोने लगी। बोली—लेकिन सुललित दादा, तुम मेरी बात एक बार सोचते नहीं हो, मैं खुद भी क्या सुख में हूँ सोचते हो—मैं भी तो अपने संसार में नरक की यन्त्रणा भोग रही हूँ…

सुललित अवाक् हो गया। बोला—नरक ? बोल क्या रही हो तुम ? एक दिन जिस संसार के लिए तुमने मेरा जीवन नष्ट कर दिया था, अब वह संसार ही तुम्हारे लिए नरक हो गया ?

आरती बोली—नरक नहीं है ? नरक नहीं कहूँगी तो क्या कहूँगी उसे ? जानते हो, जिस गाड़ी से धक्का खाकर तुम्हें सिर फुड़वाकर अस्पताल में जाना पड़ा था वह गाड़ी किसकी है ?

—किसकी ?

—वह मेरे पति की गाड़ी है। बाद को मेरे पति पकड़ न लिये जायँ, इसलिए उस गाड़ी का नम्बर तक पुलिस के रिकार्ड से मिटा दिया गया। मिस्टर बैनर्जी ने जिस तरह एक दिन मुझे तुम्हारे पास भेजकर तुम्हारा सर्वनाश किया है, उसी प्रकार आज मेरा जीवन भी उन्होंने नष्ट कर दिया है ठीक उसी तरह हमारी गवर्नमेंट का सर्वनाश करते आ रहे हैं। तिस पर भी उसका कोई प्रतिकार नहीं है, प्रतिविधान नहीं है उसके लिए कहीं, किसी दिशा में उनका विरोध

भी नहीं है।

सुललित बोला—लेकिन मैंने तो तुम्हारे सुख के लिए ही उस दिन अपना सर्वनाश किया था, तो भी तुम सुखी नहीं हुई !

आरती बोली—सुख ? सुख मेरे भाग्य में नहीं है सुललित दादा। होता तो ऐसे आदमी के साथ मेरा विवाह न होता, सुख होता तो अन्तस् की लाज पचा-पीकर तुम्हारे पास इस तरह यहाँ मुझे आना न पड़ता। तुम मेरे पास चलो सुललित दादा, तुम्हें ले जाने के लिए मैं अपनी गाड़ी लायी हूँ, चलो—जितने दिनों तुम अच्छे न हो जाओ उतने दिनों मेरे पास रहना, मैं तुम्हारी सेवा करूँगी, मैं तुम्हें अच्छा कर दूंगी, मैं अपने सब पापों का प्रायश्चित्त करूँगी—चलो···

—लेकिन तुम्हारे पास जाने से तुम मुझे शराब पीने को दोगी ?

—शराब ?

—हाँ, शराब पीने को न पाने पर मैं मर जो जाऊँगा आरती !

आरती बोली—लेकिन डाक्टर कोठारी ने जो तुमको सिर्फ दूध पीने को कहा है। उन्होंने जो कहा है कि दूध पीने से ही तुम फिर अच्छे हो जाओगे···

सुललित बोला—लेकिन मैं अच्छा होकर क्या करूँगा बोलो तो ? मैं अच्छा होकर क्या करूँगा बोलो तो ? मै अच्छा होऊँगा किसलिए ? किसके लिए ? मेरा कौन है ?

आरती बोली—क्यों ! मैं हूँ सुललित दादा, मेरे लिए आखिर तुम जीवित रहो···

सुललित बोला—लेकिन तुम तो दूसरे की स्त्री हो आरती। तुम मेरी कौन हो बोलो न, जो तुम मेरे लिए इतना करने जाओगी ?

आरती बोली—मैं एक दिन दूसरे की स्त्री क्यों न रही होऊँ, आज से न हो मैं तुम्हारी ही होऊँगी, तुम-हम दूसरे एक देश में चले जायेंगे, दूसरे एक घर में हम लोग एक साथ रहेंगे···

—लेकिन तुम्हारे पति ? मिस्टर बैनर्जी ? वे क्या यह सह लेंगे ?

—वे यह सह सकेंगे या नहीं, यह सोचने की मुझे क्या पड़ी है, मैं ही उन्हें अब सह नहीं पा रही हूँ ! मैं जो और उस संसार में रहने पर मर जाऊँगी। मेरी बात भी क्या एक बार तुम नहीं सोचोगे ? मैं आत्मघाती होऊँ, यही क्या तुम चाहते हो ?

—लेकिन शराब न पीने पर मैं क्या बचूंगा ?

आरती बोली—शराब जो लोग नहीं पीते वे क्या जीवित नहीं हैं ? मैं तुम्हें बचा लूंगी सुललित दादा। तुम्हें भी बचा लूंगी और मैं खुद भी बच जाऊँगी। हम दोनों ही बच जायेंगे सुललित दादा, जितने दिनों डाक्टर तुम्हें दूध पीने को कहेंगे, उतने दिनों मैं भी न हो तुम्हारे साथ दूध ही पियूँगी···

उसके बाद टेबिल के ऊपर का दूध का गिलास उठाकर मुललित के मुँह के पास ले गयी। बोली—लो, दूध तुम पी लो मेरे अच्छे दादा, मेरी बात रक्खो, पियो···

मुललित बोला—तो फिर पहले तुम पियो···

—मैं दूध पियूं ? तो तुम अगर कहो तो मैं तुम्हारे लिए विष भी पी सकती हूँ मुललित दादा। लेकिन मेरे पीने पर तुम भी पियोगे वचन दो···

मुललित बोला—वचन देता हूँ पियूंगा, तुम पहले पियो···

—लेकिन तुम्हारा दूध ?

मुललित बोला—मैं अभी लजवन्तिया को और एक गिलास दूध लाने को कहता हूँ···

कहकर लजवन्तिया को बुलाया—लजवन्तिया···

पुलिस अफसर के हिसाब से खण्डेलवाल पक्का आदमी है। लखनऊ शहर में खण्डेलवाल के पहले तमाम पुलिस के आे० सी० आये हैं और चले गये हैं। लेकिन खण्डेलवाल के समान ऐसा चौकस अफसर पहले और कभी किसी ने देखा नहीं। खण्डेलवाल जहां जैसा होना चाहिए वहां वैसा ही है। सरकारी समाज में अफसर के हिसाब से खण्डेलवाल का सुनाम दिल्ली के आई० जी० के पास तक पहुँच गया था। तिस पर मिस्टर बैनर्जी के समान जबरेल अफसर भी जानते थे कि जब तक खण्डेलवाल है तब तक उनके सात खून माफ हैं। मेरी गाड़ी के नीचे अगर कोई दब जाये तो उससे कोई भी हरजा नहीं है। खण्डेलवाल है। उसे एक दिन घर में बुलाकर स्कॉच-ह्विस्की पिला देने से ही काम चल जायेगा !

और रुपया ! रुपया तो हम लोगों के लिए तुच्छ चीज है। हमारे पास जो रुपया है उसे जिस तरह खण्डेलवाल जानते हैं उसी तरह जानते हैं उसके एम०पी०, उसी तरह जानते हैं उसके आई०जी०। और रुपया होना ही तो दुनिया में सबकुछ होना है। इसलिए और भी जोर से गाड़ी चलाओ रघुवीर। बीस से तीस, तीस से चालीस, चालीस से पचास-साठ-सत्तर-अस्सी-नब्बे मील की स्पीड से गाड़ी चलाओ। और जरा जल्दी चलो रघुवीर···

सो उस दिन भी खण्डेलवाल अपने आफिस में बैठा था। थाना गरम।

अकस्मात् एक पागल कमरे में घुसा। मैले कपड़े, पूरे मुँह में झोप-झोप दाढ़ी-मूँछें।

जरूर भिखारी है, भीख माँगने आया है।

खण्डेलवाल बोले—मेरे पास तो इस वक्त पैसा नहीं है, मेरी कोठी में चलो,

ख़ण्डेलवाल को दया-माया है, कहना होगा। नहीं तो एक पागल भिखारी को पैसा देने के लिए कोई आदमी उसे अपने घर ले जाता है ?

उसके बाद फिर क्या हुआ कोई नहीं जानता। खण्डेलवाल साहब जीपगाड़ी लेकर खुद ही निकले। लेकिन कहाँ जो गये, यह जाते वक्त और किसी से बोल नहीं गये।

और उसके बाद जब रात बहुत गम्भीर हो गयी थी तब बैनर्जी साहब के मकान में टेलिफोन की घंटी बज उठी—हलो···

—बैनर्जी साहब हैं ?

लगता है मिस्टर बैनर्जी के चपरासी या खानसामा किसी ने टेलिफोन उठाया।

—जी, साहब कोठी में नहीं हैं···

'नहीं हैं' सुनकर खण्डेलवाल साहब ने रिसीवर रख दिया। उस दिन थाने के कान्स्टेबिल-अर्दली किसी को सोने की फ़ुसरत नहीं मिली। खण्डेलवाल साहब यहाँ-वहाँ तमाम जगहों में टेलिफोन करने लगे। एक बार बड़े अस्पताल के डाक्टर को, और कभी म्युनिसिपैलिटी का एम्बुलेन्स मँगाने के लिए।

थोड़ी देर के बाद फिर मिस्टर बैनर्जी के बंगले में टेलिफोन किया।

—बैनर्जी साहब कोठी में हैं ?

उस बार भी मिस्टर बैनर्जी के चपरासी या खानसामा ने टेलिफोन उठाया।

—जी, साहब कोठी में नहीं हैं···

जितने बार भी टेलिफोन करते उतने बार ही वही एक ही जवाब मिलता—साहब कोठी में नहीं हैं···

अन्त में रात बीतने पर मिले मिस्टर बैनर्जी।

—मिस्टर बैनर्जी, मैं खण्डेलवाल बोल रहा हूँ, आप कहाँ गये थे ? मैं सारी रात आपको टेलिफोन करता रहा और आपको पा नहीं सका।

मिस्टर बैनर्जी बोले—मैं कानपुर गया था, लेकिन मामला क्या है ?

खण्डेलवाल इधर से बोले—मिसेज बैनर्जी घर में हैं ?

मिस्टर बैनर्जी के गले का सुर भरकर वह उठा—क्यों बताइए तो ? सुनता हूँ शाम को रामदीन को लेकर बाहर चली गयीं। कहाँ गयी हैं, जानते हैं क्या आप ?

—हाँ जानता हूँ। यही यहाँ चौक में—मैं इस चौक से ही आपको टेलिफोन कर रहा हूँ···

—चौक में ? बोल क्या रहे हैं आप ? मिसेज बैनर्जी रात को चौक क्या करने गयीं ?

—आपको सब बताऊँगा। आप अभी चले आइए।

—कहाँ ?

—कहा तो, मैं चौक में टेलिफोन कर रहा हूँ, चौक के केसर बाई के मकान से। आपके आने पर मैं सब बताऊँगा—अभी चले आइए, देर मत कीजियेगा···

कहकर खण्डेलवाल ने टेलिफोन रख दिया।

लेकिन बैनर्जी साहब रिसीवर रख देने के बाद भी निश्चिन्त नहीं हो सके। मन-ही-मन गुस्से से गरजते रहे। मिस्टर बैनर्जी का क्लास-वन-गजेटेड खून उबलने लगा। वे डिसिप्लिन के भक्त हैं। मिसेज बैनर्जी की डिसिप्लिन की यह गफलत उनके लिए असह्य हो उठी। जरूर इसके पीछे कोई राज है, कोई षड्यन्त्र है।

उन्होंने फिर देर नहीं की। अपनी स्टील की आलमारी खोलकर उन्होंने लॉकर से एक बाक्स निकाला। उसके बाद उसे पाकेट में रखकर, उसे लेकर वे निकल गये। बाहर आकर उन्होंने पुकारा—रघुवीर, गाड़ी निकालो···

साथ-ही-साथ रघुवीर ने फिर गाड़ी निकाली। मिस्टर बैनर्जी गाड़ी में जाकर बैठ गये। बोले—चौक चलो, जरा जल्दी चलाओ···

मरते से पहले मनुष्य क्या सोचता है ? कौन-सी बात उसके मन में उदय होती है ? वह क्या फिर नये सिरे से जिन्दा रहना चाहता है ? वह क्या फिर शुरू से शुरू करना चाहता है अपना जीवन ? वह क्या फिर अपना यौवन लौटाकर पाना चाहता है ? जो दुःख, जो शोक, जो यन्त्रणा वह सारे जीवन भोग करता आया है वही दुःख, वही शोक-यन्त्रणा भोग करने के लिए क्या फिर वह नये सिरे से जीवन की परिक्रमा करने को राजी होता है ?

उस अँधेरी रात में खण्डेलवाल साहब की जीप आकर केसर बाई के घर के सामने रुकी। उसके साथ-साथ ही कई-एक कान्स्टेबिल उतरे। उतरते ही भीतर घुस पड़े।

घुसने के मुँह पर ही सदर में सरदार अली रोज की तरह अफीम खाकर ऊँघ रहा था। हठात् कुछ पुलिसवाले घर के भीतर घुस रहे हैं, देखकर मानो चटका उसका टूट गया।

रुँधे गले से उसने पूछा—कौन है ?

लेकिन नशेखोर की बात का जवाब देने की खण्डेलवाल साहब को क्या पड़ी थी !

बोलने से पहले ही एक कान्स्टेबिल ने उसे पकड़ लिया। और

ण्डेलवाल साहब उस वक्त बगल के रसोईघर में घुस पड़े दलबल लेकर।
केन कहाँ कौन है ? उस्तादजी कहाँ गये ? भाग गये क्या ? समूचे कमरे
ां तरफ खोजकर भी वे कहीं दिखायी नहीं पड़े। कहाँ गये तो फिर ?
अकस्मात् एक आदमी देख पाया। एक ताख की आड़ में तब छिप गये थे
दजी।

देख पाते ही कान्स्टेबिल चिल्ला उठा—पकड़ो साले को, पकड़ो···

खण्डेलवाल खुद उस वक्त सीढ़ियों से ऊपर चढ़ने को थे। एकदम आमने-
ने भेंट हो गयी लजवन्तिया से। नीचे कोई गोलमाल सुनकर वह बंगाली बाबू
। दूध देकर ही जल्दी-जल्दी सीढ़ियों से नीचे उतर रही थी। लेकिन पुलिस
खते ही वह थमककर खड़ी होकर फिर ऊपर की तरफ दौड़कर चढ़ने को
ुई···

लेकिन खण्डेलवाल साहब ने उसे भी रिहाई नहीं दी। उस्तादजी के समान उसके हाथों में भी हथकड़ी लगा दी गयी।

इसके बाद ही दुतल्ला। केसर बाई के रहने के कमरे में।

केसर बाई हर दिन के समान उस दिन भी महावीरजी के मन्दिर से लौटी। गाड़ी से उतरते ही वह अवाक्। यह क्या हुआ ? इतनी भीड़ क्यों है उसके घर के सामने ? पुलिस की गाड़ी यहाँ क्यों ? क्या हुआ है उसके घर के भीतर ?

भीड़ के भीतर से घर में घुसना भी आफत है। कोई-कोई केसर बाई
पहचान गये। तमाम लोगों की अनदेखी स्त्री आज उन सबके सामने खड़ी।

—हटो, हटो—हट जाओ···

जो लोग पहचान गये, उन लोगों ने खुद ही भीड़ हटाकर रास्ता कर दि
गरद की लाल पाड़ की साड़ी पहने है, माथे पर सिन्दूर की टिकुली है। ह
महावीरजी का प्रसाद।

सदर में घुसने जाते ही पुलिस ने बाधा डाली। कोई घर से निक
सकेगा, कोई घुस भी नहीं सकेगा घर के भीतर। उनको कड़ा हुकुम है खण
साहब का।

केसर बाई शुरू से ही चौंधिया गयी थी—यह कैसा काण्ड है ! अ
घर के भीतर भी वह घुस नहीं सकेगी ?

पहरावाला बोला—नहीं जी, आर्डर नहीं है···

रास्ते के एक आदमी ने चिल्लाकर बता दिता—अरे भाई, ये के
हैं, यह कोठी इनकी ही है—इन्हें जाने दो···

सिपाहीजी लेकिन अटल। उसे आर्डर नहीं है किसी को भी
का।

ऊपर कमरे के भीतर सुललित उस समय पागल के समान चिल्ला रहा था। दोनों हाथों से आरती के दोनों कन्धे पकड़े उसे झकझोर रहा है—आरती—आरती—क्या हुआ तुम्हें आरती ?

आरती की उस समय ढुलककर गिर जाने की हालत थी। वह मानो उस समय अच्छी तरह बात नहीं कर पा रही थी।

सुललित फिर उसे झकझोरकर चीत्कार करके बुलाने लगा—आरती, आरती, क्या हुआ तुम्हें ! ऐसा क्यों कर रही हो ? बात करो···

आरती की बात का स्वर रुँधा जा रहा था। वह बड़ी तकलीफ से बोलने लगी—तुमने तब कहा था, मैंने विश्वास नहीं किया, मैं उस समय तुम्हारी बात सुनकर हँसी, मैंने ही तुमसे झूठ बात बुलवायी है, मैंने ही तुम्हारा सर्वनाश किया है, मेरे उस पाप का प्रायश्चित्त क्या आज हुआ ? बोलो सुललित दादा, मेरे उस अपराध को क्या तुमने क्षमा किया, बोलो, तुमने वह अपराध···

सुललित तब भी उसे पकड़कर चिल्ला रहा है—ना आरती, तुम्हारा कोई दोष नहीं है, मैंने ही तुम्हारा खून किया, हाँ, मैंने ही आज तुम्हारा खून किया, मैंने ही तुम्हारा सर्वनाश किया, मैंने ही आज तुम्हारी हत्या की, क्यों मैंने तुम्हें विष पीने को दिया···

आरती कहने लगी—नहीं सुललित दादा, तुम नहीं हो, तुम्हारा कोई दोष नहीं है, यह मेरे भाग्य का दोष है, यह मेरे पाप का फल है, यह मेरे···

कहते-कहते उसके मुँह में मानो बात अटक गयी।

सुललित उसके मुँह की तरफ ताकता हुआ चीत्कार करके बुलाने लगा—आरती—आरती···

साथ-ही-साथ तूफान की गति से कुन्दनलाल दलबल लेकर घर में घुसा। सुललित उस समय भी आरती को जकड़कर पकड़े हुए था। घर के भीतर पुलिस का दलबल घुसते देखकर वह अवाक् होकर देखता रहा।

अकस्मात् उन लोगों के बीच से कोई एक आदमी बोल उठा—चैटर्जी···

सुललित गले की आवाज सुनकर अवाक् हो गया। किसने उसे चैटर्जी कहकर पुकारा ?

—मैं कुन्दनलाल हूँ, चैटर्जी !

—कुन्दनलाल ?

सुललित की आँखों के सामने उस समय सबकुछ धुँधला-सा लग रहा था ! यही वह कुन्दनलाल है ! लेकिन यह कैसा चेहरा हो गया है उसका ! कहाँ गयी उसकी वे दाढ़ी-मूँछें ! कोट-पैंट-टाई पहने हुए यह कौन कुन्दनलाल है !

कुन्दनलाल ने घर में घुसते ही दूध का गिलास हाथ में उठा लिया था। लेकिन खाली गिलास देखकर चौंक उठा।

बोला—इस गिलास का दूध किसने पिया है ?

सुललित बोला—आरती ने—इसी आरती ने पिया है···

कुन्दनलाल बोला—यह क्यों, इसमें तो विष था ! किसने उसे पीने को कहा ?

सुललित बोला—मैंने। मैं कुछ भी नहीं जानता था कुन्दनलाल। मैंने आरती से कहा था वह पियेगी तो मैं भी पियूंगा, इसीलिए उसने पिया है। अब क्या होगा ?

इतने में खण्डेलवाल कमरे में घुसे। पीछे कान्स्टेबिल के साथ हाथ में हथकड़ी लगाये हुए सरदार अली, उस्तादजी, और लजवन्तिया।

कुन्दनलाल बोल उठा—सर, सर्वनाश हो गया है !

—क्या हुआ ?

—सर, मेरे आने में थोड़ी देर हो गयी। हमारे आने के पहले ही मिसेज बैनर्जी ने विष-मिला दूध पी लिया है।

—यह क्या हो गया !

ठीक उसी समय केसर बाई कमरे में घुसकर अवाक् !

—आरती, तू ? क्या हुआ तुझे ? चारों तरफ इतनी पुलिस क्यों है ? यहाँ क्या मामला हुआ है ? लजवन्तिया, सरदार अली—इन लोगों के हाथ में हथकड़ियाँ क्यों लगायी गयी हैं ? इन लोगों ने क्या किया है ? आप लोग मेरे घर के भीतर घुसे क्यों ?

और भी न जाने क्या कहने जा रही थी केसर बाईजी। लेकिन उसकी बात के बीच में ही कुन्दनलाल आकर सामने खड़ा हुआ।

बोला—मुझे पहचान पा रही हैं केसर बाईजी ? मैं कुन्दनलाल हूँ, कुन्दन-लाल बाजपेयी···

—कुन्दनलाल ? लेकिन···

—हाँ, केसर बाईजी, इतने दिनों आप लोग मुझे पहचान नहीं पायीं। मैं पुलिस का आदमी हूँ, इस लखनऊ शहर में स्मगलिंग केस होने के कारण मत-वार और पागल सजकर घूमता फिरता था, आपका उस्तादजी भी एक स्मगलर है। उसके खिलाफ स्मगलिंग का केस भी है। मैं बहुत दिनों से उसे पकड़ने की कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन अखीर में रक्षा हो नहीं सकी केसर बाईजी ! मैंने बंगाली बाबू को बचा दिया, लेकिन अपनी थोड़ी-सी देर की वजह से मैं आपकी बहन को बचा न सका···

खण्डेलवाल इस बार आगे बढ़ आये।

—आपका टेलिफोन कहाँ है बाईजी साहिबा ? मैं एक बार अभी अस्पताल में टेलिफोन करूंगा···

—टेलिफोन ? वही तो, उस कमरे में है—आइए···

खण्डेलवाल फिर वहाँ खड़े नहीं हुए। बगल के घर में घुसते ही उन्हें टेलिफोन दिखायी पड़ा। एक-एक करके अस्पताल, म्युनिसिपैलिटी आफिस में एम्बुलेंस के लिए टेलिफोन करने लगे। अन्त में बैनर्जी साहब के बंगले में।

पूछा—बैनर्जी साहब हैं ?

—जी नहीं, साहब कोठी में नहीं हैं···

—कहाँ गये हैं साहब ?

—कानपुर में। ड्यूटी में···

—साहब कब लौटेंगे ?

खानसामा बोला—बड़ी रात होगी लौटने में। रात दो-तीन बज जायेंगे···

खण्डेलवाल ने अपनी रिस्टवाच की तरफ नजर डालकर देखा। इस वक्त रात के साढ़े ग्यारह बजे हैं। अब भी बड़ी देर है। तब फिर अस्पताल को टेलिफोन करने लगे। फिर म्युनिसिपैलिटी के आफिस में। नाइट-ड्यूटी में सभी सो गये हैं। कोई ड्यूटी नहीं कर रहा मन लगाकर।

अन्त में अकस्मात् और एक टेलिफोन करते ही मिस्टर बैनर्जी मिल गये।

—मिस्टर बैनर्जी, मैं खण्डेलवाल बोल रहा हूँ। आप कहाँ गये थे ? मैं सारी रात आपको टेलिफोन करता रहा और आपको पा नहीं रहा था ! आपके खानसामा ने बताया, आपको लौटने में रात के दो-तीन बजेंगे···

मिस्टर बैनर्जी ने कहा—हाँ, यही बात थी, लेकिन मैं थोड़ा पहले ही लौट आया, मेरा काम जल्दी हो गया इसीसे—लेकिन मामला क्या है ?

खण्डेलवाल ने पूछा—मिसेज बैनर्जी क्या घर में हैं ?

मिस्टर बैनर्जी के गले में इस बार उद्वेग का सुर भर उठा—क्यों, बोलिए तो ? वे तो सुनता हूँ रामदीन को लेकर बाहर चली गयी हैं। कहाँ गयी हैं जानते हैं क्या आप ?

—हाँ जानता हूँ, यहाँ आयी हैं, चौक में। मैं इसी चौक से टेलिफोन कर रहा हूँ···

—चौक में ? क्या बोल रहे हैं आप ? मिसेज बैनर्जी चौक में क्या करने गयीं ?

—खण्डेलवाल बोले—आपको सब बताऊँगा, आप अभी चले आइए···

—कहाँ ? कहाँ आऊँगा ?

—बोला तो, मैं चौक से ही आपको टेलिफोन कर रहा हूँ, चौक की मेमर बाई के घर से। आपके आने पर आपको खोलकर बताऊँगा। आप चले आइए, देर मत कीजियेगा, अभी···

कहकर खण्डेलवाल ने रिसीवर रख दिया।

बोला—इस गिलास का दूध ...

सुललित बोला—आरती ने—इसी आरती ने पिया है···

कुन्दनलाल बोला—यह क्यों, इसमें तो विष था ! किसने उसे पीने को कहा ?

सुललित बोला—मैंने। मैं कुछ भी नहीं जानता था कुन्दनलाल। मैंने आरती से कहा था वह पियेगी तो मैं भी पियूंगा, इसीलिए उसने पिया है। अब क्या होगा ?

इतने में खण्डेलवाल कमरे में घुसे। पीछे कान्स्टेबिल के साथ हाथ में हथकड़ी लगाये हुए सरदार अली, उस्तादजी, और लजवन्तिया।

कुन्दनलाल बोल उठा—सर, सर्वनाश हो गया है !

—क्या हुआ ?

—सर, मेरे आने में थोड़ी देर हो गयी। हमारे आने के पहले ही मिसेज बैनर्जी ने विष-मिला दूध पी लिया है।

—यह क्या हो गया !

ठीक उसी समय केसर बाई कमरे में घुसकर अवाक् !

—आरती, तू ? क्या हुआ तुझे ? चारों तरफ इतनी पुलिस क्यों है ? यहाँ क्या मामला हुआ है ? लजवन्तिया, सरदार अली—इन लोगों के हाथ में हथकड़ियाँ क्यों लगायी गयी हैं ? इन लोगों ने क्या किया है ? आप लोग मेरे घर के भीतर घुसे क्यों ?

और भी न जाने क्या कहने जा रही थी केसर बाईजी। लेकिन उसकी बात के बीच में ही कुन्दनलाल आकर सामने खड़ा हुआ।

बोला—मुझे पहचान पा रही हैं केसर बाईजी ? मैं कुन्दनलाल हूँ, कुन्दनलाल वाजपेयी···

—कुन्दनलाल ? लेकिन···

—हाँ, केसर बाईजी, इतने दिनों आप लोग मुझे पहचान नहीं पायीं। मैं पुलिस का आदमी हूँ, इस लखनऊ शहर में स्मगलिंग केस होने के कारण मतवार और पागल सजकर घूमता फिरता था, आपका उस्तादजी भी एक स्मगलर है। उसके खिलाफ स्मगलिंग का केस भी है। मैं बहुत दिनों से उसे पकड़ने की कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन अखीर में रक्षा हो नहीं सकी केसर बाईजी ! मैंने बंगाली बाबू को बचा दिया, लेकिन अपनी थोड़ी-सी देर की वजह से मैं आपकी बहन को बचा न सका···

खण्डेलवाल इस बार आगे बढ़ आये।

—आपका टेलिफोन कहाँ है बाईजी साहिबा ? मैं एक बार अभी अस्पताल में टेलिफोन करूँगा···

—टेलिफोन ? वहाँ तो, उस कमरे में है—आइए···

खण्डेलवाल फिर वहाँ खड़े नहीं हुए। बगल के घर में घुसते ही उन्हें टेलिफोन दिखायी पड़ा। एक-एक करके अस्पताल, म्युनिसिपैलिटी आफिस में एम्बुलेंस के लिए टेलिफोन करने लगे। अन्त में बैनर्जी साहब के बंगले में।

पूछा—बैनर्जी साहब हैं ?

—जी नहीं, साहब कोठी में नहीं हैं···

—कहाँ गये हैं साहब ?

—कानपुर में। ड्यूटी में···

—साहब कब लौटेंगे ?

खानसामा बोला—बड़ी रात होगी लौटने में। रात दो-तीन बज जायेंगे···

खण्डेलवाल ने अपनी रिस्टवाच की तरफ नजर डालकर देखा। इस वक्त रात के साढ़े ग्यारह बजे हैं। अब भी बड़ी देर है। तब फिर अस्पताल को टेलिफोन करने लगे। फिर म्युनिसिपैलिटी के आफिस में। नाइट-ड्यूटी में सभी सो गये हैं। कोई ड्यूटी नहीं कर रहा मन लगाकर।

अन्त में अकस्मात् और एक टेलिफोन करते ही मिस्टर बैनर्जी मिल गये।

—मिस्टर बैनर्जी, मैं खण्डेलवाल बोल रहा हूँ। आप कहाँ गये थे ? मैं सारी रात आपको टेलिफोन करता रहा और आपको पा नहीं रहा था ! आपके खानसामा ने बताया, आपको लौटने में रात के दो-तीन बजेंगे···

मिस्टर बैनर्जी ने कहा—हाँ, यही बात थी, लेकिन मैं थोड़ा पहले ही लौट आया, मेरा काम जल्दी हो गया इसीसे—लेकिन मामला क्या है ?

खण्डेलवाल ने पूछा—मिसेज बैनर्जी क्या घर में हैं ?

मिस्टर बैनर्जी के गले में इस बार उद्वेग का सुर भर उठा—क्यों, बोलिए तो ? मैं तो सुनता हूँ रामदीन को लेकर बाहर चली गयी हैं। कहाँ गयी हैं जानते हैं क्या आप ?

—हाँ जानता हूँ, यहाँ आयी हैं, चौक में। मैं इसी चौक से टेलिफोन कर रहा हूँ···

—चौक में ? क्या बोल रहे हैं आप ? मिसेज बैनर्जी चौक में क्या करने गयीं ?

—खण्डेलवाल बोले—आपको सब बताऊँगा, आप अभी चले आइए···

—कहाँ ? कहाँ आऊँगा ?

—बोला तो, मैं चौक से ही आपको टेलिफोन कर रहा हूँ, चौक की केसर बाई के घर से। आपके आने पर आपको खोलकर बताऊँगा। आप चले आइए, देर मत कीजियेगा, अभी···

कहकर खण्डेलवाल ने रिसीवर रख दिया।

सिविल लाइन्स से चौक गाड़ी से बहुत दूर का रास्ता नहीं है। लेकिन मिस्टर बैनर्जी को मन में ऐसा लगा मानो चौक पहुँचने में उन्हें अनन्तकाल लगेगा।

उन्होंने फिर ताकीद की—रघुवीर, जरा जल्दी चलाओ न···

लेकिन उस दिन उस आधी रात में केसर बाई के घर में तब जीवन-मृत्यु का और एक भयंकर दृश्य शुरू हुआ था।

आरती को उस समय दोनों हाथों से पकड़े था सुललित। और आरती उस समय सुललित से क्षमा माँग रही थी। आरती बोल रही थी—क्यों, बोलो तुमने मुझे क्षमा किया, बोलो तुम। जाने के पहले मैं तुम्हारे मुँह से सुन जाऊँ कि तुमने मेरे सब अपराध क्षमा कर दिये हैं···

सुललित कुन्दनलाल की तरफ देखकर बोला—कुन्दनलाल, तुम एक डाक्टर के पास अभी खबर भेजो, कोशिश करने पर अभी भी आरती को बचाया जा सकता है, खबर भेजो···

खण्डेलवाल बोले—मैंने बड़े अस्पताल को खबर भेजी है—एम्बुलेन्स भी आ रहा है···

केसर बाई इतनी देर तक पत्थर के समान बगल में अचल होकर खड़ी थी। आरती सरकते-सरकते उसकी तरफ जा रही थी।

सुललित उसे पकड़े रहा दोनों हाथों से। बोला—ना, तुम चलो मत, गिर पड़ोगी, तुम सो जाओ, इस बिछौने पर सो जाओ···

आरती सिर हिलाने लगी। बोली—ना ना ना, मैं सोऊँगी नहीं, मुझसे सोने को मत कहो, रानूदि को मैंने कितने दिनों के बाद देखा है, मैं सिर्फ रानूदि से दो बातें कहूँगी—मुझे बाधा मत डालो···

उसके बाद रानूदि की तरफ देखकर आरती बोलने लगी—रानूदि, जाने से पहले तुमसे मैं एक अनुरोध करती हूँ, तुम मेरे सुललित दादा को देखना रानूदि, इतने दिनों से तुम देखती आयी हो, इसके बाद जितने दिनों तुम जीवित रहो उतने दिनों देखना, तुम अपने यत्न से, अपनी सहानुभूति से सुललित दादा को जीवित रखकर मेरे सब पाप सब अपराध पोंछ देना। तुम खुद मेरी होकर मेरे पाप का प्रायश्चित्त करो—तुमसे मेरा यही अनुरोध है रानूदि···

सुललित फिर आरती से बोला—तुम सो जाओ आरती, सो जाओ···

हठात् नीचे गाड़ी का एक हार्न बज उठा। कड़ा हार्न। चौक के बदनाम मुहल्ले में इस तरह का कड़ा हार्न बजानेवाली राजा-महाराजाओं की गाड़ियाँ हमेशा ही आती हैं। यह ऐसी कुछ नयी घटना नहीं है। खण्डेलवाल की जीप पुलिस की गाड़ी है। वह भी एक किनारे खड़ी थी। लेकिन उसकी दूसरी तरफ खड़ी थी मिसेज बैनर्जी की गाड़ी। मेमसाहब को उतारकर उस समय रामदीन

ने नींद में ढुलना शुरू किया था। बैनर्जी साहब की गाड़ी का हार्न सुनते ही उसका ढुलना रुक गया।

रामदीन ने देखा, बैनर्जी साहब गाड़ी से उतरे। भीड़ के बीच से होकर घर के भीतर घुसे। बैनर्जी साहब के गाड़ी से उतरते ही रामदीन मेम साहब की गाड़ी से उतरा। उसके बाद रघुवीर की गाड़ी के पास गया। दोनों ही बैनर्जी साहब का नमक खाते हैं।

रामदीन ने पूछा—क्या भइया, साहब यहाँ क्यों आये हैं? उसने उल्ट-कर पूछा—मेम साहब ही यहाँ क्यों आयी हैं? यह तो बाईजी का घर है?

सिर्फ इतना ही नहीं। इतने आदमियों की भीड़, पुलिस-पहरा देखकर भी दोनों अवाक् हो गये थे। मामूली आदमी हैं वे, तनखा पाते हैं और हुकुम तामील करके ही उनका काम खलास। वे लोग अदरक के व्यापारी हैं, जहाज की खबर रखने की उन्हें दरकार ही नहीं हुई कभी। लेकिन इस बार दोनों को ही कौतूहल हुआ है। इस बार इसीसे दोनों ही गाड़ी से उतरकर सबसे पूछ रहे हैं—यहाँ क्या हुआ है भइया?

कोई एक आदमी बोला—एक बाईजी का खून हुआ है…

—बाईजी? केसर बाईजी?

बाईजी के घर में बाईजी का खून होना भी स्वाभाविक है। और यह जब केसर बाईजी का घर है, इस घर में जब केसर बाईजी ही रहती हैं तब केसर बाई को छोड़कर और किसका खून होगा यहाँ? लेकिन उसके लिए मेम साहब क्यों आयीं यहाँ? साहब भी इतनी जगह रहते यहाँ क्यों आये?

घर के भीतर मिस्टर बैनर्जी के घुसते ही पुलिस पहरेवाले रोकने जा रहे थे। लेकिन खण्डेलवाल ने ऊपर से हुकुम भेज दिया कि मिस्टर बैनर्जी के आते ही उन्हें भीतर घुसने दिया जाये। मेरा हुकुम है।

उन्हें तुरन्त जाने दिया गया।

मिस्टर बैनर्जी सीढ़ियों के ऊपर चढ़ने लगे। तिमंजिला मकान। जीवन में वे तमाम औरतों के सम्पर्क में आये हैं, लेकिन इस तरह की लाइसेन्स पायी हुई औरत के घर में पहले कभी नहीं आये। उन्होंने सुना था कि इस मुहल्ले में बाईजी लोग रहती हैं। वे कभी इस मुहल्ले के भीतर घुसे ही नहीं। दुतल्ले में चढ़ते ही बगल के कमरे में उन्होंने तमाम लोगों के गले की आवाज सुनी। समझे कि यहीं खण्डेलवाल हैं।

खण्डेलवाल उन्हें भीतर से देख पाते ही सामने बढ़ आये हैं।

बोले—आइए मिस्टर बैनर्जी, आइए…

सबके मुँह की तरफ आँखें फिराते-फिराते हठात् उनकी नजर आरती के चेहरे की तरफ पड़ी। आरती को देखते ही उनका क्लाम-बन-मजेंटेड खून सिर

—तुम ? तुम यहाँ क्यों ? ह्वाई ?

आरती के कोई जवाब देने के पहले ही अकस्मात् फिर उनकी नजर पड़ी सुललित की तरफ। वही आदमी, जिसने उन्हें महामान्य कोर्ट के कठघरे में खड़ा किया था ! दैट स्काउंड्रेल ! वही स्काउंड्रेल आरती को दोनों हाथों से जकड़कर पकड़े हुए है। उनकी स्त्री के शरीर में उसी स्काउंड्रेल ने हाथ लगाया है ? यह तो दुस्साहस है ! यह तो बड़ी एडासिटी है !

मिस्टर बैनर्जी सुललित की तरफ देखकर चीत्कार कर उठे—रास्केल, तुमने मेरी स्त्री के शरीर में हाथ लगाया है ! इतनी बड़ी एडासिटी तुम्हारी ? छोड़ो, छोड़ दो उसे···

सुललित न जाने क्या उत्तर देने जा रहा था, लेकिन उसके पहले ही आरती ही रुँधे हुए गले से बोल उठी—रास्केल ? रास्केल तुम किसको कह रहे हो ? तुम्हें शर्म नहीं आती गाली-गलौज करने में ?

—शट अप !

गुस्से से फट पड़े मिस्टर बैनर्जी। बोले—तुम चुप रहो, मैं इस स्काउंड्रेल से बात कर रहा हूँ, तुम क्यों मेरी बात के बीच में बात कर रही हो···

खण्डेलवाल इस बार आगे बढ़ आये मिस्टर बैनर्जी की तरफ। बोले—आप चुप रहिए मिस्टर बैनर्जी, मिसेज बैनर्जी अभी अस्वस्थ हैं, उन्हें अस्पताल में पहुँचाने का इन्तजाम कर रहा हूँ। अभी एम्बुलेंस आ रही है···

—अस्वस्थ ? सिक ? अस्वस्थ होने पर मैरिड वाइफ होकर कोई इतनी रात में घर छोड़कर इस बाईजी-घर में आता है ?

आरती उनकी बात के बीच में बोल उठी—हाँ आता है। तुम्हारे समान एक घूसखोर गवर्नमेंट आफिसर के साथ जिनका विवाह होता है वे ही आते हैं···

कुन्दनलाल ने इस बार मिसेज बैनर्जी की तरफ देखकर कहा—आप ज्यादा बात मत कीजिए मिसेज बैनर्जी, प्लीज, आप चुप रहिए···

उसके बाद मिस्टर बैनर्जी की तरफ देखकर बोला—मिस्टर बैनर्जी, आप एक्साइटेड मत होइए। मिसेज बैनर्जी सचमुच अस्वस्थ हैं ! उन्होंने अकस्मात् विष पी लिया है···

—विष ?

—हाँ, विष, इस दूध के साथ विष मिला दिया था इन लोगों ने। यह देख रहे हैं, इन लोगों ने···

बोलकर हथकड़ी लगे उस्तादजी, लजवन्तिया और सरदार अली को दिखा दिया।

उसके बाद बोला—इन लोगों को मैंने एरेस्ट किया है···

मिस्टर बैनर्जी ने कुन्दनलाल को सिर से पैर तक देख लेने के बाद पूछा—हू आर यू ? आप कौन हैं ?

खण्डेलवाल बोले—ये कुन्दनलाल वाजपेयी हैं, हमारे एंटि-स्मगलिंग स्क्वाड के इंटेलिजेन्स अफसर, इन लोगों को पकड़ने के लिए बहुत दिनों से इन्होंने जाल फैलाया था। लेकिन थोड़ी देर हो गयी इनको आने में, इसीलिए मिसेज बैनर्जी को फिर बचाया नहीं जा सका···

—लेकिन मिसेज बैनर्जी को विष पिलाने से उन लोगों का फायदा ?

खण्डेलवाल बोले—बाद को वह सब डिटेल्स आप सुनियेगा, सब आपको बताऊँगा। असल में उन लोगों का मतलब इन बैनर्जी का खून करना था। लेकिन उसके बदले मिसेज बैनर्जी ने अनजाने में वह दूध पी लिया···

मिस्टर बैनर्जी बोले—लेकिन मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि इतनी जगह रहते हुए मिसेज बैनर्जी आखिर यहाँ आयी ही क्यों ?

कहकर ही उन्होंने आरती से पूछा—तो तुम इस स्काउंड्रेल के पास आयी ही क्यों ? तुम जानती हो कि एक दिन इस रास्केल ने ही मुझे कोर्ट के कठघरे में खड़ा किया था ? तुम जानती हो कि उसके लिए ही ··

आरती शरीर की पूरी ताकत से चिल्ला उठी—स्काउंड्रेल वह है, या तुम हो ?

—आरती, तुम बहुत ज्यादा बढ़ी जा रही हो !

आरती बोली—हाँ यह जानती हूँ, लेकिन तुम जो किस तरह के मनुष्य हो, यह मेरी बनिस्बत और कोई अच्छी तरह नहीं जानता···

—वह बात रहने दो, पहले तुम मेरी बात का जवाब दो, बोलो, तुम मुझे बताये बिना यहाँ क्यों आयी ?

आरती बोली—आयी थी तुम्हारे और अपने पाप का प्रायश्चित्त करने···

—पाप ? काहे का पाप ? काहे का प्रायश्चित्त ? क्या सब ऊल-जुलूल बात कर रही हो ?

—ऊल-जुलूल बात ? जानते हो, तुमने सुललित दादा का क्या सर्वनाश किया है ? तुम्हारे समान एक घूसखोर गवर्नमेंट अफसर को बचाने के लिए मैंने सुललित दादा से झूठ बात बुलवायी है ! वह आदमी जीवन [illegible] कभी झूठ बात नहीं बोला, उससे झूठ बुलवाकर तुम्हारे समान एक स्काउंड्रेल को मैं जेल से छुड़वाकर ले आयी हूँ ! इतने बड़े पाप का प्रायश्चित्त नहीं करना होगा ?

सुललित आरती के मुँह की तरफ देखकर बोला—तुम ज्यादा बात मत करो आरती, चुप रहो···

आरती बोल उठी—क्यों चुप रहूँगी ? और कितने दिनों चुप रहूँगी ? चुप रह-रहकर तो इतने दिन मेरे कटे हैं, अब मरने के समय अगर चुप रह जाऊँ तो अपने विधातापुरुष के पास जाकर मैं कौन-सी जवाबदेही दूँगी ? मैं वहाँ जाकर किस तरह भगवान को मुँह दिखाऊँगी ?

सुललित फिर बोला—वे सब बातें अभी रहने दो आरती, मैं कहता हूँ तुम अभी चुप रहो···

आरती बोली—ना सुललित दादा, मुझे बोलने दो, आज अगर सब बातें न बोल जाऊँ तो कब बोलने का सुयोग पाऊँगी बोलो तो ? इस आदमी के साथ मैंने किस तरह इतने बरस एक कमरे में एक बिछौने पर रातें काटी हैं, मैं सिर्फ यही सोचती हूँ···

कुन्दनलाल बोला—अभी अपनी घरू बातें रहने दीजिए मिसेज बैनर्जी, यहाँ बहुत-से बाहर के लोग हैं···

सुललित भी बोला—हाँ, कुन्दनलाल ने ठीक ही कहा है, अभी वे सब बातें रहने दो आरती···

आरती बोली—तुम भी ? तुम भी मुझे बोलने नहीं दोगे सुललित दादा ? लेकिन मैं अगर आज सब बातें न बोलूँ तो कौन वे सब बातें बोलेगा ? मुझे छोड़कर और कौन जानता है वे सब बातें ? जानते हो, मर्चेंट लोगों के पास से घूस लेकर इन्होंने कितने लाख रुपयों की बेनामी सम्पत्ति बनायी है ? जानते हो, कितने लाख रुपयों के इनकमटैक्स का धोखा किया है ? इनके मकान की फर्श खोदने पर कितने लाख रुपयों के हीरे मिलेंगे, यह जानते हो ? जानते हो कितने आदमी इनकी गाड़ी के नीचे दबे-मरे हैं ?

उसके बाद थोड़ा दम लेकर फिर बोलने लगी—तुम्हें भी गाड़ी में दबाकर खून करना चाहा था, यह क्या तुम जानते हो सुललित दादा ? लेकिन इनका तो कहीं कुछ भी नहीं हुआ ! इनका कुछ होगा भी नहीं किसी दिन ! तुमने क्या सोचा है उसके लिए कभी इन्हें सजा मिलेगी ? किसी दिन ये जेल काटेंगे ? नहीं। कुछ भी नहीं होगा इनका। सजा मिलेगी सिर्फ तुम्हारे और मेरे समान लोगों को। जो लोग सिर्फ मरने के लिए ही पैदा हुए हैं ! मरना हो तो सिर्फ तुम और हम मरेंगे···

मिस्टर बैनर्जी बोल उठे—मैंने बहुत सहा है आरती, लेकिन अब इट इज टू मच—बहुत ज्यादा बात बढ़ी जा रही है···

—बात बढ़ा रही हूँ ? फिर कहते हो मैं बात बढ़ा रही हूँ ? बात इतने दिनों अगर नहीं बढ़ायी तो सिर्फ तुम्हारे लड़के-लड़कियों का मुँह देखकर ही। लेकिन जब सहने की सीमा एकदम पार हो गयी, तभी मैं यहाँ चली आयी। सोचा था यहाँ से अब मैं लौटूँगी नहीं, लेकिन यह अच्छा ही हुआ कि तुम्हारे

घर में भी अब मुझे जाना नहीं होगा, यहाँ भी अब मुझे रहना नहीं होगा। इस बार मैं अब ऐसी जगह में चली जा रही हूँ जहाँ जाने पर फिर तुम्हारा मुँह मुझे देखना नहीं पड़ेगा, यही मेरी थोड़ी-बहुत सान्त्वना है···

मिस्टर बैनर्जी बोले—लेकिन मैंने क्या तुम्हें कुछ भी नहीं दिया? तुम्हें गाड़ी नहीं दी? तुम्हें साड़ी नहीं दी? तुम्हें गहना नहीं दिया? तुम्हारा जो कुछ अभाव था उसे मैंने मिटाया नहीं कहना चाहती हो?

—मिटाया है, लेकिन वह क्या मेरे लिए—या अपनी निजी इज्जत बचाने के लिए! मुझे साड़ी-गाड़ी-गहना देकर न सजाने पर तुम्हारी इज्जत में जो धक्का लगता इसीसे तुमने मुझे गाड़ी साड़ी गहने दिये हैं! तुमने क्या समझा है मैं ऐसी मूर्ख हूँ कि वह सब पाकर मैं भूल जाऊँगी? साड़ी-गाड़ी-गहने पाने पर मैं समझूँगी कि तुम मुझे प्यार करते हो? समझूँगी कि वह सब तुम्हारे प्रेम का दान है? तुमने मुझे क्या ऐसी ही मूरख लड़की समझा है?

मिस्टर बैनर्जी बोले—इतनी ही अगर चालाक लड़की हो तुम तो फिर तुम्हारी बहन जिस तरह वेश्या बनकर घर से निकल आयी थी, उसी तरह तुम भी मेरा घर छोड़कर चली जा सकती थी! किसने तुम्हें अटका रखा था?

इस बार केसर बाई आगे आयी।

बोली—थोड़ी भलमनसाहत से बात कीजिए मिस्टर बैनर्जी—जो कहा वह दूसरी बार मेरे घर में बैठकर आपको उच्चारण करने नहीं दूँगी, यह मैं कहे रखती हूँ···

—आप कौन है?

केसर बाई बोली—आपकी स्त्री की जो बहन बाईजी बनकर घर छोड़कर चली आयी थी, मैं ही उसकी वह बहन हूँ। मैं ही वह केसरबाई हूँ···

—यही कहिए, तो फिर आप ही मेरी स्त्री को यहाँ बुला ले आयी हैं? आपकी वजह से ही मेरी स्त्री की आज यह दुर्दशा है? आप ही आरती को इस रास्ते में उतारना चाहती हैं? आप ही वह बाजार की बाईजी हैं?

केसर बाई बोली—मैं फिर आपको सावधान कर देती हूँ मिस्टर बैनर्जी, भलमनसाहत से बात न करने पर मैं आपका गला पकड़कर आपको अपने घर से बाहर कर दूँगी···

—ह्वाट? जानती हैं मैं कौन हूँ?

केसर बाई बोली—जानती हूँ, थोड़ा पहले आपकी स्त्री ने ही आपका वह परिचय दिया है। आप घूसखोर, लम्पट, मतवार हैं, आप एक दागी आसामी हैं। घूस लेने के अपराध में एक बार आपको आसामी के कठघरे में खड़े होना पड़ा था···

—आपका तो देखता हूँ तेज कम नहीं है?

—मेरा तेज अभी आपने कितना-सा देखा है ? मैं अगर आरती होती तो कव की आपके समान स्काउंड्रेल को जूते मारकर ठण्डा कर देती !

मिस्टर वैनर्जी चीत्कार कर उठे—स्टाप दैट। आई से स्टाप···

केसरवाई ने अपना गला तेज कर दिया—ठहरूँ ? क्यों ठहरूँ ? आपके डर से ? मैं क्या आपकी नौकर हूँ जो नौकरी चले जाने के डर से मैं आपकी गाली-गलौज हजम करूँगी ! जो लोग आपके अंडर में नौकरी करते हैं उन्हें आप लाल आँखें दिखाइए जाकर, मैं आपकी लाल आँखों की केयर नहीं करती···

—अगर केयर नहीं करतीं तो आपकी भी उसकी-सी हालत होगी। वह आदमी जो सामने चुपचाप खड़ा है···

कहकर सुललित की तरफ उँगली से दिखा दिया।

उसके वाद उसी सुर से वोलने लगे—एक दिन इस आदमी ने भी मुझे फाँसना चाहा था, मेरी स्त्री का भोग करने के लिए मुझे जेल में भेजना चाहा था—सो वह कर सका ?

—क्या वोले ? क्या वोले तुम ?

आरती सुललित का हाथ छोड़कर घिसटते-घिसटते सामने की तरफ वढ़ने लगी, लेकिन सुललित ने उसे रोका। वोला—आरती—आरती···

आरती वोली—नहीं, तुम छोड़ो मुझे, मुझे वोलने दो···

उसके वाद पति की तरफ देखकर वोली—क्या वोले—क्या वोले तुम ? जिस मनुष्य ने तुम्हें वचाने के लिए तुम्हारे सव अपराध अपने कन्धे पर उठा लिये, जिसने मेरा मुँह देखकर अपना चरम सर्वनाश किया, उसके नाम पर तुमने इतना वड़ा लांछन लगाया ? इतने वड़े लायर, इतने वड़े हिपोक्रैट हो तुम ? तुम इतने वड़े नीच हो ? इतनी वड़ी झूठ वात कही तुमने कि तुम्हें नरक में भी जगह नहीं मिलेगी···

मिस्टर वैनर्जी वोले—ऐसा क्या ? तो नरक अगर ऐसी ही खराव जगह हो तो तुम क्यों इस नरक में आयीं ? इस आदमी के साथ आनन्द-उपभोग करने के लिए ?

आरती चीत्कार कर उठी—फिर—फिर तुम गाली-गलौज कर रहे हो सुललित दादा को ? इतने से भी तुम्हें शिक्षा नहीं मिली ?

खण्डेलवाल इस वार मिसेज वैनर्जी के सामने वढ़ आये। वोले—मिसेज वैनर्जी, आप क्यों वात कर रही हैं ? आप चुप होइए, अभी एम्वुलेंस आयेगी, तव तक आप लेट जाइए···

—आप ठहरिए···

कहकर आरती ने खण्डेलवाल का हाथ सामने से हटा दिया। वोली—आप ठहरिए, आप कुछ मत कीजिए, आप लोगों की वजह से ही तो आज इसकी

इतनी हिम्मत बढ़ गयी है ! आपको ही तो इसने ह्विस्की पिलाकर अपने हाथ में किया है ! कितने लोगों को जो इसने गाड़ी से दबाया है, उसके लिए कभी इसको पकड़ा है आपने ? इन सुललित दादा को भी तो यह रास्ते में गाड़ी का धक्का देकर गिराकर भाग गया था, उसके लिए क्या आपने इसके नाम में केस किया है ? बोलिए, मेरी बात का जवाब दीजिए ? इसके रुपयों से आपने कितनी बोतल ह्विस्की पी है, बोलिए ?

उसके बाद थोड़ा दम लेकर फिर कहने लगी—और आज आये हैं मुझे बचाने ? मेरे चुप रहने पर शायद आप लोगों के पाप सबलोगों की निगाहों से छिपे पड़े रहेंगे, उनकी जलांजलि हो जायेगी ? यह नहीं होगा, मैं यह होने नहीं दूँगी, मरने के पहले मैं आप लोगों की सब कीर्ति का पर्दाफाश करके छोड़ जाऊँगी। एक भला आदमी हार जाये और आप सब जीत जायें यह मैं किसी तरह होने नहीं दूँगी। इतने दिनों मैं सब मुँह बन्द करके सहती आयी हूँ, लेकिन अब मैं सहनशक्ति की आखिरी सीमा पर पहुँच गयी हूँ। आज मैं गला फाड़कर बोल जाऊँगी कि यह एक मनुष्य ही सत् है, और आप सब लोग ठग हैं, सब जुआखोर हैं, सब झूठे हैं, इसीलिए इसे शराब पिलाकर मतवार बनाकर, इसे मिथ्यावादी प्रमाणित करके, इसे छोटा बनाकर आप लोग साधु का मुखौटा पहनना चाहते हैं···। ये सब बातें आज ही मुझे बोल जानी होंगी—बोल न जाने पर मैं मर जाने पर भी शान्ति नहीं पाऊँगी···

बोलकर सुललित की तरफ मुँह उठाकर देखा।

बोली—सुललित दादा, आज मैं चली जा रही हूँ लेकिन तुम गवाह रहे, यह पृथिवी गवाह रही, यह मेरी रात्रि गवाह रही, तुम लोग जान रक्खो, मैं कहे जा रही हूँ कि जिन लोगों को इन्होंने हथकड़ियाँ पहनाकर बाँध दिया है, जिन लोगों ने मुझे विष पिलाया है, वे असल अपराधी नहीं हैं. असल अपराधी हुए ये, यही ये···यही ये···

कहकर सबकी तरफ हाथ से दिखाने लगी आरती।

सुललित उसे पकड़कर शान्त करने लगा—आरती, तुम क्यों इतनी बातें कर रही हो, चुप तो रहो···

यह दृश्य मिस्टर बैनर्जी की आँखों को खराब लगा। वे आरती की तरफ बढ़ गये। जाकर उन्होंने आरती को पकड़ा।

बोले—आरती, मैं कहता हूँ तुम इतनी बातें मत करो···

आरती ने एक धक्का देकर मिस्टर बैनर्जी का हाथ दूर हटा दिया—छोड़ो, तुम मुझे मत छुओ, मेरे पास से हट जाओ तुम—जाओ···

बोलकर सुललित की तरफ और भी शरीर घिसकर खड़ी हुई।

सुललित मिस्टर बैनर्जी की तरफ देखकर बोला—मिस्टर बैनर्जी, आप हट

जाइए, हट जाइए आप, आरती जब चाहती नहीं तब क्यों आप उसके शरीर में हाथ लगाते हैं ?

—ह्वाट ?

मिस्टर बैनर्जी का क्लास-वन-गजेटेड खून फिर गरम हो उठा। बोले—मैं उसका हस्बैंड हूं, आरती मेरी स्त्री है, मुझसे तुम हट जाने को कहते हो ?

आरती मरण-चीत्कार कर उठी—ना-ना, मैं आज से तुम्हारी स्त्री नहीं हूँ, मैं किसी की स्त्री नहीं हूँ, तुम भी मेरे हस्बैंड नहीं हो आज से, तुम हट जाओ···

सुललित बोला—मिस्टर बैनर्जी, देख रहे हैं मिसेज बैनर्जी कितनी एक्साइ-टेड हो गयी हैं, आप हट जाइए—क्यों आप उन्हें तंग कर रहे हैं ?

—मैं हट जाऊँ ? मैं उसे तंग कर रहा हूँ ? ह्वाट डू यू मीन ?

बोलकर पाकेट से जो चीज उन्होंने निकाली उसे देखकर सब चौंक उठे। एक रिवाल्वर। रिवाल्वर का मुंह सुललित की तरफ करके उन्होंने हाथ सामने बढ़ा दिया।

सुललित एक निगाह से देखता रहा मिस्टर बैनर्जी की तरफ। बोला—आप डर दिखा रहे हैं मुझे ?

वह चीज आरती देख पायी। देख पाने के साथ-ही-साथ एक प्रचण्ड आवाज से सारी आबहवा प्रतिध्वनित हो उठी। लेकिन उसके पहले ही आरती चीत्कार करके मिस्टर बैनर्जी के ऊपर कूदकर जा गिरी—कर क्या रहे हो तुम ? क्या कर रहे हो···

बाहर से कोई मानो पुकार उठे—बाबू, बाबू···

धरमपुरा के सुललित के छोटे मकान के भीतर बैठकर बातें सुनते-सुनते कब जो सवेरा हो गया, हम दोनों जान नहीं सके। खिड़की के बाहर हमने ताककर देखा, आकाश का रंग पतला नीला हो आया है।

सुललित पुकार सुनकर ही बाहर चला गया। उसके बाद उन लोगों से जाने कौन-सी बात करके वह फिर लौट आया घर के भीतर। बोला—मुझे भाई, अभी एक बार निकलना होगा, पास के गाँव में फिर उनके दोनों दलों में मार-काट शुरू हुई है, मुझे वहाँ जाकर फैसला करके आना होगा···

मैं बोला—लेकिन उसके बाद ? उसके बाद क्या हुआ बोलो ?

सुललित बोला—बताऊँगा, लेकिन लौटकर बताऊँगा, तुम आज मेरे यहाँ ठहर जाओ न···

मैं बोला—आज मेरा आफिस जो है। आज तो और मैं ठहर नहीं सकूँगा···

—तो।, ।।-

मैं बोला—कल तो मेरे नागपुर चले आने की बात है, वहाँ जाकर फिर वहाँ के आफिस के आउटर काम में भिड़ पड़ूँगा—उसके बाद और फिर कब यहाँ आऊँगा, नहीं जानता···

सचमुच उस दिन फिर सुललित के पास समय नहीं था। उस थोड़े समय में ही मैंने जो कुछ सुना है, उतना ही अब बार-बार याद आता है। याद आता है कि सुललित को हम लोग छुटपन से देखते आये हैं, उसके जीवन का सबकुछ जानने के बाद मनुष्य के जीवन के सम्बन्ध में ही हमें एक नयी जानकारी हुई है। देखा कि सुललित बराबर जो बातें कहता आया है, वे सब बातें उस समय उसके लिए मानो झूठ हो गयी थी!

वह बोला—देखो, कलकत्ता में वह जो मैं था, उसके बाद मेरे जीवन पर कितना आँधी-तूफान बह गया है। तब सोचता था जीवन की सबसे बड़ी सार्थकता है सचाई में। लेकिन आज मैं समझा हूँ कि मेरी वह उस दिन की सचाई में एक बड़ा भारी धोखा छिपा हुआ था। वह मेरी आँखों से उस समय पकड़ाई नहीं दिया। उस दिन सचाई की उच्चतम सीमा दिखाने के लिए मैंने अपने पिता की सब सम्पत्ति का अंश छोड़ जरूर दिया था। लेकिन भोग और लोभ की लालसा से उस समय भी मैं मुक्त नहीं हो सका। मेरे जीवन में आरती का आविर्भाव ही हुआ सबसे बड़ा पदस्खलन। आरती जिस दिन से कलकत्ता में आयी उसी दिन से मैं पथभ्रष्ट हो गया। मैंने तुम लोगों का क्लब छोड़ दिया, तब से ही लगा आरती मेरे लिए ही जन्मी हुई है और मैं भी आरती के लिए जन्मा हूँ। मन में आया कि संसार में रुपया-पैसा, शक्ति-सामर्थ्य सबकुछ मेरे चाहने की चीज है, सबकुछ मेरे भोग की चीज है। उन सब भोगों में ही मनुष्य के जीवन की सार्थकता है।

लेकिन उस दिन लखनऊ की केसर बाई के घर के भीतर उस आधी रात को जो दुर्घटना घटी, उसके बाद से ही मेरा चैतन्य हुआ। एक दिन बिलासपुर में आरती के आकस्मिक आविर्भाव से मैंने शराब पीने की आदत डाली ली, और लखनऊ की केसर बाई के घर में आरती के आकस्मिक आविर्भाव से एक दिन शराब छोड़ दी··

सुललित की बात मैं समझ नहीं सका।

पूछा—कैसे?

सुललित उस समय बाहर जाने के लिए तैयार हो रहा था। तैयार होते-होते ही अपने जीवन के अन्तिम परिच्छेद की, अपने जीवन की चरम दुर्घटना की बात बताने लगा। सुललित की बातें सुनते-सुनते मुझे लगा कि मैं मानो फिर से सशरीर उस जगह में हाजिर हुआ हूँ। वही चौक, वही केसर बाई का घर, वही आधी

रात, वही खण्डेलवाल, वही कुन्दनलाल, वही केसर वाई और वही आरती।

रास्ते की भीड़ में हठात् एक एम्बुलेंस गाड़ी आ पहुँची। रामदीन और रघुवीर दोनों ने उस समय दो बीड़ियाँ सुलगायी थीं।

एम्बुलेंस देखकर भीड़ के लोग जैसे अचम्भे में पड़ गये, रामदीन और रघुवीर भी उसी प्रकार चकित हो गये।

—भीतर क्या हुआ भइया ?

एक आदमी बोला—मैंने तो कहा कोई खून हो गया है, उनको अस्पताल में ले जाने के लिए एम्बुलेंस आयी···

लेकिन सवाल तो वह नहीं है, सवाल यह है कि किसका खून हुआ है और किसने खून किया है !

एम्बुलेंस से स्ट्रेचर उतरा। स्ट्रेचर लेकर दो-तीन आदमी गाड़ी से उतरे। लेकिन उसके पीछे-पीछे और एक गाड़ी आ पहुँची। उस गाड़ी से और एक आदमी उतरा।

रामदीन और रघुवीर दोनों उसे पहचान गये।

—डाक्टर कोठारी। डाक्टर कोठारी साहब आ गये।

डाक्टर कोठारी किसी तरफ नजर किये विना तुरन्त सदर की सीढ़ियों से एकदम सीधे ऊपर चढ़ गये। ऊपर पहुँचते ही अवाक्। उन्होंने आने के पहले समझा था केसर वाई के बंगाली पेशेंट सुललित चैटर्जी को लगता है कुछ हुआ है।

उन्होंने टेलफोन पर पूछा था—कौन हैं आप ?

पुरुष का गला। उसने कहा था—मैं चौक की केसर वाई के घर से टेलिफोन कर रहा हूँ, अभी एक वार आइए डाक्टर वावू···

—कल सवेरे जाने से नहीं चलेगा ?

—नहीं, खूव जरूरी केस है।

—क्या हुआ है ? कौन बीमार है ? वही बंगाली वावू मिस्टर चैटर्जी ?

कुन्दनलाल वोला—जी हाँ···

कहकर कुन्दनलाल ने फिर देर नहीं की। देर करने से ही रत्ती-रत्ती तमाम वातें वतानी होंगी। उसने तुरन्त टेलिफोन का रिसीवर रख दिया। लेकिन उस रिसीवर को रखते ही वगल के कमरे की एक विकट आवाज से कुन्दनलाल चौंक उठा। साथ-ही-साथ उस कमरे में दौड़कर पहुँचते ही देखा, सर्वनाश ! मिसेज वैनर्जी चैटर्जी की छाती पर ढुलक गयी हैं, और चैटर्जी ने उसे दोनों हाथों से जकड़कर पकड़ रक्खा है। और मिसेज वैनर्जी की साड़ी खून से सरावोर हुई जा रही है···

कुन्दनलाल दौड़कर गया मिसेज वैनर्जी के पास···

पूछा—मिसेज बैनर्जी, क्या हुआ आपको ? यह क्या हुआ ?

उसके बाद मिस्टर बैनर्जी की तरफ देखकर बोला—आपने मिसेज बैनर्जी का खून किया ?

खण्डेलवाल उस समय हैरान होकर बगल के कमरे में टेलिफोन करने जा रहे थे।

बोले—कुन्दनलाल, तुम देखो इधर, मैं डाक्टर कोठारी को एक बार टेलिफोन कर आऊँ···

कुन्दनलाल बोला—ना सर, टेलिफोन अब नहीं करना होगा, मैं यहाँ अभी डाक्टर कोठारी को टेलिफोन करके ही आया हूँ, वे अभी आ जायेंगे···

केसर बाई घटना की आकस्मिकता से अब तक विह्वल हो उठी थी, इस बार वह दौड़ी गयी आरती के पास···

बोली—क्या हुआ, आरती, क्या हुआ तुझे ?

उसके बाद जब देखा, उसकी साड़ी में खून बहकर जम गया है तब फिर स्थिर न रह सकी। आरती को उसी हालत में पकड़े मिस्टर बैनर्जी की तरफ देखकर बोली—आप पिशाच हैं या जानवर ? आपने आरती के पति होकर खुद अपनी स्त्री का खून किया ?

उसके बाद मिस्टर खण्डेलवाल की तरफ देखकर बोली—आप मिस्टर बैनर्जी को एरेस्ट कीजिए खण्डेलवाल। हम लोग सब गवाह हैं, आप खुद भी गवाह रहें, मिस्टर बैनर्जी एक मर्डरर है, मिस्टर बैनर्जी ने खुद रिवाल्वर से मेरी बहन का खून किया है, यहाँ जितने लोग हैं, सबने देखा है···

आरती को लगता है तब भी मामूली होश था।

वह कहने लगी—ना दीदी, मेरी मौत के लिए कोई ज़िम्मेदार नहीं है, किसी का कोई दोष नहीं है, दोष मेरा निजी है, दोष मेरे भाग्य का है, दोष मेरे विधातापुरुष का है, मैंने सब पाकर भी कुछ भी नहीं पाया, सब रहते हुए भी मैंने सब खोया, मुझे यह दण्ड नहीं मिलेगा तो किसे मिलेगा ? तुमसे सिर्फ एक अनुरोध कर जाती हूँ दीदी, तुम इसे देखो, इस सुललित दादा को मैं तुम्हारे हाथ में दे जाती हूँ, तुम देखो दीदी, सुललित दादा को जिससे कोई कष्ट न हो जीवन में सुललित दादा का मानो कोई नुकसान न हो। सुललित दादा का कोई नुकसान होने पर मैं स्वर्ग में जाकर भी कोई सुख नहीं पाऊँगी···

बोलते-बोलते आरती के मुँह की बात अटक गयी। सिर लुढ़क पड़ा [illegible] की छाती पर। सुललित उस समय भी आरती को उसी [illegible] जकड़कर पकड़े हुए था। मानो वह गिर न जाये, मानो अनन्तकाल [illegible] हृदय पर ही सिर रखकर सोयी रहे···

ऐसे समय तूफान की-सी तेजी से डाक्टर कोठारी कमरे में [illegible]

आरती को उस खून से लथपथ हालत में देखकर वोले—इन्हें सुला दीजिए, मैं जाँचकर देखूं···

सुललित वोला—अव जाँच करने से क्या होगा डाक्टर···

लेकिन डाक्टर कोठारी ने तव भी छोड़ा नहीं। हाथ से मिसेज वैनर्जी को छुआ। देखा पूरा शरीर ठण्डा—हिम। कान में स्टेथेस्कोप लगाकर मिसेज वैनर्जी के हृदय में लगाया।

उसके वाद उसे कान से उतार लिया। उनका मुँह और भी गम्भीर हो गया। उसके वाद वोले—शी हैज एक्सपायर्ड···

उस दिन धरमपुरा से लौटने के रास्ते में सुललित की अन्तिम वातें वार वार याद आ रही थीं। सत्यधर चाटुज्जे के अन्तिम वंशधर सुललित चैटर्जी ने मानो अपनी निजी सत्ता फिर लौटाकर फिर से पा ली है, ऐसा लगा।

उसने कहा था—आरती की मौत ही फिर मुझे नये रूप से पुनर्जीवन दे गयी भाई। मेरे मन में आया, मरने के पहले मनुष्य क्या सोचता है? कौन-सी वात उसके मन में उदय होती है। वह क्या फिर नये सिरे से जीवित रहना चाहता है? वह क्या शुरू से नये रूप से शुरू करना चाहता है अपना जीवन? वह क्या फिर नये रूप से अपना यौवन लौटाकर पाना चाहता है?

लेकिन इन सव वातों का उत्तर जो दे पाता सो तो चला गया। इसका जवाव अव किसी दिन नहीं पाऊँगा। तो भी इस वात का ही जवाव वह दूसरी तरह से मुझे दे गयी है। वह जवाव ही अव मेरे जीवन का सर्वश्रेष्ठ सम्पद है। आरती ही अपनी मृत्यु के जरिये मुझे वता गयी है कि जो मनुष्य अपना जीवन संसार के लिए उत्सर्ग कर सकेगा वही जीवित रहेगा। जो अपने भोग के लिए लालायित होकर सवकुछ अपनी तरफ नहीं खींचेगा, इस संसार में उसी की जय होगी। इस दान का नाम ही हुआ अमृत और लेने का नाम ही हुआ मृत्यु।

—और केसर वाई?

—केसर वाई उसी रात को अपना घर छोड़कर जो कहाँ चली गयी उसका फिर कोई पता नहीं पा सका। उसने भी लगता है आरती की मौत से जीवन की चरम चरितार्थता खोजकर पा ली थी। नहीं तो वह भी क्यों अपना सवकुछ मुझे दान करके चली गयी? उसने भी लगता है सवकुछ पाकर कुछ भी नहीं पाया, इसीलिए सवकुछ देकर ही वह सर्वस्व पा गयी है। अपना जमा किया हुआ सव रुपया-पैसा-गहना-सम्पत्ति जो कुछ उसका था, सव मुझे देकर चली गयी। लेकिन यह सव लेकर मैं क्या करूँगा? मैं फिर यह सव किसे दूँगा?

किसको देकर मैं मौत के हाथ से मुक्ति पाऊँगा ? किस पर बैनर्जी साहब ? उनका तो कुछ भी नहीं हुआ ! लगता है बैनर्जी साहब को सजा दे सके ऐसी किसी भी शक्ति का आज भी आविष्कार नहीं हुआ । सो न हो, उससे कोई नुकसान नहीं है । अँधेरा न होने पर प्रकाश की कीमत देंगे क्यों ? अहं न होने पर अहंकारत्याग कैसे करेंगे ? इसीलिए आज इस मध्यप्रदेश के बस्तर जिले में इन आदिवासियों के बीच आकर, इन लोगों के सुख-दुःख में शरीक होकर मैं जीवन की चरम चरितार्थता खोज ले सका हूँ । आज अब मुझे कोई दुःख नहीं है । भारती के खून की कीमत देकर मैंने आज यह शान्ति खरीदी है । बहुत कीमती है यह शान्ति । यह शान्ति पृथिवी का कोई कोटिपति अपने कोटि-कोटि डालर खर्च करने पर भी खरीद नहीं सकेगा । संसार की हिसाबी बुद्धि की तराजू लेकर वजन करके इसका दाम आँका नहीं जा सकेगा···

सिर्फ एक बात अन्त में कहूँ । उस दिन सब जब घर से चले गये, जब भारती की लाश लेकर वे लोग चले गये, तब भी मैं अभिभूत होकर उसी एक जगह खम्भे की तरह खड़ा रहा ।

अकस्मात् कुन्दनलाल के गले की आवाज सुनकर चौंक उठा ।

—यार···

सुललित ने सामने ताककर देखा, कुन्दनलाल है । कुन्दनलाल ने पॉकेट से निकालकर सुललित की तरफ हीरे की अँगूठी बढ़ा दी ।

बोला—इसे लो यार···

—क्या है यह ?

कुन्दनलाल बोला—यह तुम्हारी माँ की वही हीरे की अँगूठी है, जो तुमने मुझे दी थी केसर बाई को देने के लिए । उसे मैंने अपने पास ही इतने दिनों रख लिया था, इस बार तुम्हें लौटा दे रहा हूँ ।

उसके बाद केसरबाई की तरफ एक बण्डल नोट बढ़ाकर बोला—आप भी ये रुपये लीजिए, इसमें तीन सौ रुपये हैं । ये रुपये एक दिन आपने ही मुझे दिये थे मिस्टर बैनर्जी को देने के लिए···

सुललित ने यन्त्र के समान हाथ बढ़ाकर उसे लिया । केसर बाई ने भी अपना हाथ बढ़ा दिया । लेकिन कोई अनुभूति फिर उन दोनों को अभिभूत नहीं कर सकी । उस समय भी उन लोगों की, दोनों की आँखों के सामने भारती की वे अन्तिम बातें बज रही थीं—मैं चली जा रही हूँ, मेरी मौत के लिए कोई जिम्मेदार नहीं है दीदी, किसी का कोई भी दोष नहीं है, दोष मेरे निज का है, दोष मेरे अपने भाग्य का है, दोष मेरे विचारशून्यता का है, मैंने सब पाकर भी कुछ भी नहीं पाया, मैंने सोना फेंककर आँचल में गाँठ लगाया था, इसीलिए सब रहते हुए भी मैंने सब खोया । मुझे यह सजा नहीं मिलेगी तो किसे मिलेगी ? सुनते सिर्फ

एक अनुरोध किये जाती हूँ दीदी, तुम इसे देखो, इस सुललित दादा को मैं तुम्हारे हाथों में दिये जा रही हूँ, दीदी, तुम देखना जिससे सुललित दादा को कोई भी कष्ट न हो, जिससे जीवन में सुललित दादा का कोई नुकसान न हो। सुललित दादा का कोई नुकसान होने पर मैं स्वर्ग में जाकर भी कोई सुख नहीं पाऊँगी···

बातें कहकर सुललित फिर खड़ा नहीं हुआ। उसे उस समय देर हो गयी थी। वह आदिवासियों के साथ कहीं किसी गाँव की तरफ रवाना हो गया। उसके बाद सुललित से फिर मेरी भेंट नहीं हुई।